ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 73 ❖ अंक : 12 ❖ मार्च 2024

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE Listed Journal

वर्ष : 73 **अंक : 12** **मार्च, 2024**

परामर्श मंडल

श्री भारतभूषण महंत
कार्याध्यक्ष, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी (असम)

डॉ. किरण हाजरिका
सम कुलपति, इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय
नयी दिल्ली-68

प्रो. आर.एस. सर्राजु
सम कुलपति, हैदराबाद विश्वविद्यालय
तेलंगाना-500046

प्रो. प्रदीप के शर्मा
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक, सिक्किम - 737101

डॉ. दीपक प्रकाश त्यागी
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

डॉ. दिलीप कुमार मेधि
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अच्युत शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

संपादक

प्रो. मोहन
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-1

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद
प्रभारी साहित्य सचिव
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32
फोन : 9101541395, 9101541380
ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

आवरण पृष्ठ : इंटरनेट से साभार

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा.लि., इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
	हिंदी विभाग		
	संपादकीय		*5*
1.	भारत की सामासिक संस्कृति के विकास में राजभाषा हिंदी की भूमिका	✍ डॉ. जे. आत्माराम	7
2.	तिब्बत में स्त्री-पुरुष संबंध : विवाह (राहुल सांकृत्यायन के यात्रा-वृत्तांत से)	✍ डॉ. आकाश वर्मा	11
3.	त्रिपुरा की जनजातीय व्यथा-कथा एवं 'रुङ' उपन्यास	✍ डॉ. मिलन रानी जमातिया	16
4.	विज्ञान कथा के विकास में तमिल लेखक जयमोहन का योगदान	✍ डॉ. एम. शाहुल हमीद	21
5.	समकालीन स्त्री आत्मकथाओं में अभिव्यक्त लैंगिक विभेद	✍ डॉ. भारती	28
6.	स्त्री विमर्श के केंद्र में प्रो. वीर भारत तलवार की दृष्टि ('पगहा जोरी-जोरी रे घाटो' कहानी के विशेष संदर्भ में)	✍ डॉ. पूजा नेओग	34
7.	लैंगिक असमानता में पिसता किन्नरों का जीवन ('अस्तित्व की तलाश में सिमरन' उपन्यास के विशेष संदर्भ में)	✍ मनोज कुमार श्रीवास्तव ✍ डॉ. परिस्मिता बरदलै	37
8.	सीमांत के यथार्थ की कथा-शिल्पी चित्रा मुद्गल	✍ डॉ. प्रोमिला	42
9.	अलका सरावगी की कहानियों का तात्विक विवेचन	✍ मोनमी गायन ✍ डॉ. अनुज कुमार	48
10.	भारत के स्वाधीनता आंदोलन में असम की महिलाओं का योगदान	✍ सबनम भुजेल	55
11.	दलित समस्याओं को उजागर करता रमेशचंद्र शाह का उपन्यास साहित्य	✍ अनिता मीणा	59
12.	हिंदी बाल कहानियों की कथानक रूढ़ियां एवं भाषा संरचना	✍ एस. साधना चनु	64
13.	हम लेना नहीं देना भी जानते हैं...!	✍ देवा बासफोर	70
14.	सुधा अरोड़ा की कविताओं में स्त्री	✍ शिप्रा देवी	75
15.	कृष्णदास अधिकारी के काव्य में लोकतत्व	✍ डॉली गुप्ता	81

অসমীয়া বিভাগ

16. হোমেন বৰগোহাঞিৰ উপন্যাস 'মৎস্যগন্ধা'ত নাৰী মনস্তত্ত্ব ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন — ✍ ড° হিৰুমণি কলিতা — 90

17. সাধুকথাত নাৰী চৰিত্ৰৰ বৈপৰীত্য ঃ এটি চমু আলোচনা (লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ 'বুঢ়ী আইৰ সাধু'ৰ আলমত) — ✍ শিখা শর্মা — 94

18. অসমৰ চীন তিব্বতীয় ভাষাত সুৰ ঃ এটি পৰিচয়মূলক আলোচনা — ✍ প্ৰীতম তালুকদাৰ, ✍ বিকাশ দাস — 98

19. লিংগ অধ্যয়নৰ নাৰীবাদতত্ত্বৰ আধাৰত অসমীয়া আখ্যানমূলক গীতৰ বিচাৰ-বিশ্লেষণ — ✍ দীক্ষিতা খাটনিয়াৰ, ✍ ড° গীতাঞ্জলি হাজৰিকা — 103

20. গ্ৰাম্য মহিলাৰ জীৱন আৰু জীৱিকাত ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযানৰ প্ৰভাৱ — ✍ অমৃত জ্যোতি লেখাৰু, ✍ ড° ৰামা চন্দ্ৰ পাৰিদা — 113

21. ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ অধ্যয়ন আৰু প্ৰসংগ বিচাৰ — ✍ অংকনা বৰগোঁহাই — 118

22. লিম্বু জনগোষ্ঠীৰ বিবাহ পদ্ধতি ঃ এক চমু আলোচনা — ✍ মায়া দেৰী চুব্বা, ✍ ড° নিভা ৰাণী ফুকন — 125

23. মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক-আখ্যান ঃ এক অধ্যয়ন — ✍ অসীম শইকীয়া, ✍ ফেঞ্চী চুতীয়া — 132

24. অসমৰ কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ ওপৰত এক অধ্যয়ন — ✍ উদ্দীপনা তালুকদাৰ, ✍ ড° প্ৰণৱ শইকীয়া — 140

25. প্ৰেমচন্দৰ 'প্ৰতিজ্ঞা' উপন্যাসত প্ৰতিফলিত নাৰী বিমৰ্ষ আৰু সমাজ সচেতনতা — ✍ পাপৰি ডেকা, ✍ ড° ইন্দ্ৰাণী ডেকা — 149

26. ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটকত ব্যৱহৃত আকাৰ-ইংগিত — ✍ নীলাক্ষি ডেকা, ✍ ড° গীতাঞ্জলি হাজৰিকা — 157

❑ ❑ ❑

संपादकीय

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस का इतिहास

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस (International Women's Day) की शुरुआत उत्तरी अमेरिका में एक श्रमिक आंदोलन के रूप में हुई थी और अब इसे संयुक्त राष्ट्र द्वारा मान्यताप्राप्त वार्षिक उत्सव के रूप में मनाया जाता है। 1910 में महिला अधिकारों की पैरोकार क्लारा ज़ेटकिन ने डेनमार्क के कोपेनहेगन में कामकाजी महिलाओं के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में महिलाओं के अधिकारों की अपनी मांग को आगे बढ़ाने के लिए एक ज़ोरदार आवाज़ देने के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस का प्रस्ताव रखा।

इसे फिनलैंड की पहली तीन महिला सांसदों सहित 17 देशों की महिला प्रतिनिधि द्वारा सर्वसम्मति से अपनाया गया था। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पहली बार मार्च 1911 में मनाया गया था, और 1913 में इसकी तिथि 8 मार्च निर्धारित की गई थी। संयुक्त राष्ट्र ने इसे पहली बार 1975 में मनाया और 1996 में इसने अपना पहला वार्षिक थीम घोषित किया– 'अतीत का जश्न मनाना, भविष्य की तैयारी करना।'

2011 में शताब्दी वर्षगांठ पर, तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने मार्च को महिला इतिहास माह घोषित किया। राष्ट्रपति ओबामा ने कहा, 'इतिहास दर्शाता है कि जब महिलाओं और लड़कियों को अवसर मिलते हैं, तो समाज अधिक न्यायपूर्ण होते हैं, अर्थव्यवस्थाओं के समृद्ध होने की संभावना अधिक होती है और सरकारें अपने सभी लोगों की ज़रूरतों को पूरा करने की अधिक संभावना रखती हैं।'

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस इस बात का जश्न मनाने का अवसर है कि समाज, राजनीति और अर्थव्यवस्था में महिलाओं ने कितनी प्रगति की है, साथ ही चल रही असमानताओं के बारे में जागरूकता भी बढ़ाई है। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस महिलाओं की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक उपलब्धियों का विश्वव्यापी उत्सव है। यह दिन लैंगिक असमानता से निपटने के लिए वैश्विक कार्यवाही के समर्थन में भी मनाया जाता है।

विभिन्न स्तरों की संस्थाएं मिलकर यह प्रदर्शित करती हैं कि आज के समाज में महिलाएँ कितनी महत्वपूर्ण हैं। इसी तरह, दुनिया भर की महिलाओं के लिए उपलब्ध छात्रवृत्तियों पर संसाधनों का पता लगाकर समुदाय में महिलाओं की सहायता करने के प्रयास किए जाते हैं ताकि उन्हें अपने पंख फैलाने और ऊंची उड़ान भरने में सहायता मिल सके। यहाँ कुछ उदाहरण दिए गए हैं –

शिक्षा और कौशल विकास : शिक्षा और कौशल विकास कार्यक्रम महिलाओं को सशक्त बना सकते हैं और उन्हें अपने सपनों को पूरा करने और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक ज्ञान और कौशल प्रदान कर सकते हैं।

मेंटरशिप और नेटवर्किंग : महिलाएं मेंटरशिप और नेटवर्किंग अवसरों से लाभ उठा सकती हैं, जिससे उन्हें अपने क्षेत्र के अन्य पेशेवरों से जुड़ने और उद्योग के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्राप्त करने में मदद मिल सकती है।

वित्त तक पहुँच : वित्त तक पहुँच उन महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण है, जो अपना खुद का व्यवसाय शुरू करना चाहती हैं या उद्यमशील उपक्रमों को आगे बढ़ाना चाहती हैं। माइक्रोलोन या अनुदान जैसे वित्तीय सहायता प्रदान करने से महिलाओं को उन वित्तीय बाधाओं को दूर करने में मदद मिल सकती है, जो उन्हें अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने से रोकती हैं।

कानून और नीति परिवर्तन : वकालत और नीति परिवर्तन महिलाओं के लिए अधिक न्यायसंगत वातावरण बनाने में मदद कर सकते हैं। इसमें महिलाओं के अधिकारों का समर्थन करने वाले कानूनों और नीतियों में बदलाव के लिए पैरवी करना और महिलाओं को प्रभावित करने वाले मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाना शामिल हो सकता है।

सामुदायिक सहायता : महिलाओं के लिए एक सहायक समुदाय का निर्माण करके उन्हें अपनेपन और सशक्तिकरण की भावना प्रदान की जा सकती है। इसमें ऐसे स्थान बनाना शामिल हो सकता है जहाँ महिलाएँ अपने अनुभव साझा करने, एक-दूसरे से सीखने और एक-दूसरे का समर्थन करने के लिए एक साथ आ सकें।

कई देश अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस को राष्ट्रीय अवकाश के रूप में मनाते हैं, जिसमें रूस भी शामिल है, जहाँ 8 मार्च के आस-पास के तीन या चार दिनों में फूलों की बिक्री दोगुनी हो जाती है। स्टेट काउंसिल के अनुसार, चीन में कई महिलाओं को 8 मार्च को काम से आधे दिन की छुट्टी दी जाती है। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस या ला फेस्टा डेला डोना, इटली में मिमोसा फूलों के वितरण के साथ मनाया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में मार्च महिला इतिहास का महीना है। भारत में, जबकि 13 फरवरी को राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मान्यता प्राप्त है, 8 मार्च को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस भी पूरे देश में व्यापक रूप से मनाया जाता है।

रंगां का विशेष महत्व : बैंगनी, हरा और सफ़ेद महिला दिवस से जुड़े तीन मुख्य रंग हैं। बैंगनी न्याय और गरिमा को दर्शाता है, हरा आशावाद का प्रतिनिधित्व करता है, और सफ़ेद शुद्धता का प्रतिनिधित्व करता है। इन रंगों का उपयोग 1908 में यूनाइटेड किंगडम में महिला सामाजिक और राजनीतिक संघ (WSPU) द्वारा शुरू किया गया था।

गौरतलब है कि रंगों का इस्तेमाल लैंगिक समानता और वैश्विक स्तर पर महिलाओं के अधिकारों को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न स्वरूपों में किया जाता है। इन रंगों का इस्तेमाल कुछ इस प्रकार किया जाता है -

सोशल मीडिया ग्राफिक्स : अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर, दुनिया भर के लोग फेसबुक, इंस्टाग्राम और ट्विटर जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का उपयोग करके महिला अधिकारों के समर्थन में संदेश साझा करते हैं। इन संदेशों के साथ अक्सर अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस इन रंगों जैसे बैंगनी, हरा और सफेद का उपयोग करने वाले ग्राफिक्स होते हैं।

कपड़े और सहायक उपकरण : बहुत से लोग 8 मार्च को महिला दिवस के रंगों को शामिल करने वाले कपड़े और सहायक उपकरण पहनते हैं। उदाहरण के लिए, वे महिलाओं के अधिकारों के लिए अपना समर्थन दिखाने के लिए बैंगनी शर्ट, हरा दुपट्टा या सफेद टोपी पहन सकते हैं।

पोस्टर और बैनर : लैंगिक समानता और महिला अधिकारों को बढ़ावा देने वाले पोस्टर और बैनर अक्सर अपने संदेश पर ध्यान आकर्षित करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रंगों का उपयोग करते हैं। इन पोस्टर और बैनर को सार्वजनिक स्थानों, जैसे कि सड़कों, पार्कों और सामुदायिक केंद्रों में प्रदर्शित किया जा सकता है।

वर्चुअल बैकग्राउंड : वर्चुअल मीटिंग और इवेंट के दौर में, कई लोग महिलाओं के अधिकारों के लिए अपना समर्थन दिखाने के लिए इन तीन रंगों को शामिल करने वाले वर्चुअल बैकग्राउंड का इस्तेमाल करते हैं। इन बैकग्राउंड का इस्तेमाल वर्चुअल मीटिंग, वेबिनार और अन्य ऑनलाइन इवेंट में किया जा सकता है।

जैसा कि हम जानते हैं कि इस बार पूरी दुनिया अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस - 2024 को संयुक्त राष्ट्र के साथ मिलकर **'महिलाओं में निवेश करें, प्रगति में तेजी लाएं'** थीम के तहत मनाई है।

इसकी खास वजह यह है कि इन दिनों दुनिया कई संकटों का सामना कर रही है, जिसमें भू-राजनीतिक संघर्षों से लेकर बढ़ती गरीबी के स्तर और जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभाव शामिल हैं। इन संकटों को केवल उन प्रयासों से ही समाधान से ही किया जा सकता है जो महिलाओं को सशक्त बनाते हैं। अत: महिलाओं में निवेश करके, हम बदलाव ला सकते हैं और सभी के लिए एक स्वस्थ और सुरक्षित दुनिया कायम हो सकती है।

संतोष व हर्ष की बात यह है कि वर्तमान में भारत सरकार और राज्य सरकारें भी महिलाओं के सशक्तिकरण एवं सुरक्षा हेतु 'बेटी पढ़ाओ, बेटी बचाओ', 'लाड़ली बहना', 'लखपति दीदी' जैसी अनेक महत्वाकांक्षी योजनाएं शुरू की हैं, जिसके सकारात्मक परिणाम भी मिल रहे हैं। आइए, महिला दिवस पर हम संकल्प लें कि आधी आबादी की तरक्की में कोई बाधा न आए और महिलाएँ हर क्षेत्र में अपना स्थान सुनिश्चित कर सकें। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

भारत की सामासिक संस्कृति के विकास में राजभाषा हिंदी की भूमिका

डॉ. जे. आत्माराम

सहायक प्रोफेसर
हिंदी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद-500046
9440947501
atmaram@uohyd.ac.in

भारत की संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। इसे विश्ववारा संस्कृति[1], लोकोपयोगी संस्कृति, उत्सव-धर्मी संस्कृति, पर्यावरण-मित्र संस्कृति, गंगा-यमुनी संस्कृति, विश्व-बंधुत्व एवं मानवीय मूल्यों पर आधारित संस्कृति आदि कई नामों से अभिहित किया जाता है। संविधान में भारतीय संस्कृति को अभिवर्णित करते हुए जिस विशेष पद का प्रयोग किया गया है, वह है - 'सामासिक संस्कृति'। संविधान में अनुच्छेद 51क(घ) में भारतीय नागरिकों के मूल-कर्तव्यों की चर्चा करते हुए कहा गया कि ''हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझें और उसका परिरक्षण करें।'' इसी प्रकार अनुच्छेद 351, जो कि राजभाषा हिंदी के विकास की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, में भी इस पद का उल्लेख बड़े महत्व के साथ किया गया है, यह अनुच्छेद इस प्रकार है : ''हिंदी भाषा की प्रसार-वृद्धि करना, उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके, तथा उसकी आत्मीयता में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावली को आत्मसात करते हुए जहाँ आवश्यक हो वहाँ उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से तथा गौणत: अन्य भारतीय भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करना संघ का कर्तव्य होगा।'' इस प्रकार हमारे संविधान में एकाधिक संदर्भों में न केवल 'सामासिक संस्कृति' पद का उपयोग किया गया है, अपितु इसके परिरक्षण, संवर्द्धन एवं विकास पर विशेष बल दिया गया है। और बड़े हर्ष एवं गौरव का विषय है कि हिंदी भाषा विगत सात दशकों से राजभाषा के रूप में भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की समृद्धि में महती भूमिका निभाती आ रही है। राजभाषा हिंदी किन-किन स्तरों पर भारत की सामासिक-संस्कृति के संवर्द्धन में अपना योग दे रही है, इस पर प्रस्तुत आलेख में विचार करने का प्रयास किया जा रहा है।

'सामासिक संस्कृति' पद अंग्रेजी के 'कंपोजिट कल्चर' का हिंदी रूपांतरण है। इसे कुछ लोग भ्रमवश 'समन्वित संस्कृति' समझ बैठते हैं। किंतु इन दोनों पदों में

पर्याप्त अंतर है, जिसे स्पष्ट करते हुए केंद्रीय हिंदी संस्थान के पूर्व निदेशक श्री गोपाल शर्मा ने लिखा है : ''किसी भी राष्ट्र की बहुधर्मी संस्कृति में सामान्य तत्वों के आधार पर समन्वित संस्कृति की धारणा स्थिर की जाती है और सामान्य तत्वों के साथ-साथ भिन्न तत्वों को यथावत् स्वीकार करते हुए कालांतर में परस्पर आदान-प्रदान की आकांक्षा से उत्तरोत्तर समन्वय की एक कल्पित रूपरेखा तैयार की जाती है, जिसे कि हम सामासिक संस्कृति कह सकते हैं। सामासिक संस्कृति और समन्वित संस्कृति में मूलत: भेद इस बात में है कि एक सामासिक लयात्मक उपलब्धि है, तथ्य है और दूसरी लौकिक स्तर पर पर्याप्त समानता के अंतराल में घटक समुदायों की विशिष्टताओं के सहअस्तित्व की स्वीकृति है। यदि परस्पर लय की कोई भावना भी निहित हो तो उसे परिस्थिति, इतिहास, सामाजिक क्रिया-प्रतिक्रिया और काल-प्रवाह के परिणामों पर छोड़ दिया जाता है।''[2]

सामासिक-संस्कृति में दो या दो से अधिक संस्कृतियों के सम्मिलन में एक दूसरे के मध्य सहयोग, आपसी-समावेश, संरक्षण और संवर्द्धन का भाव निहित है। भारत वैदिक-युग से ही सामासिक-संस्कृति को संवर्द्धन एवं विकास का प्रतिरूप रहा है, जो यहाँ की कलाओं, भाषाओं, संगीत, संप्रदाय आदि संस्कृति के सभी तत्वों में निक्षिप्त है। पर इसका प्रकटीकरण भाषाओं में अधिक स्पष्ट रूप में होता हुआ नजर आता है। ''यह तो सर्वविदित है कि संस्कृति और भाषा का संबंध अटूट होता है और संस्कृतियाँ आज के युग में भी बहुत हद तक धर्मों और संप्रदायों से अनुशासित होती रहती हैं। आधुनिक भाषाशास्त्री एडवर्ड सेपीर का मत है कि भाषा का शब्द-भंडार उस समाज के भौतिक और सामाजिक परिवेश का परिचायक होता है। बेंजमिन वूर्फ का विचार था कि जहाँ संस्कृति और भाषा साथ-साथ विकसित होती हैं, उसके पारस्परिक संबंध व्याकरण में सामान्य रूप से प्रकट होने लगते हैं। इन विचारों की दृष्टि से भारत की प्रत्येक समृद्ध साहित्यिक भाषा का वर्तमान कलेवर उस प्रदेश की सामाजिक संस्कृति का द्योतक है। उदाहरणार्थ -तमिल, मलयालम, तेलुगु, बंगला, मराठी अपने क्षेत्र में हिंदू, मुस्लिम, क्रिश्चियन, बौद्ध या जैन या जनजातीय संस्कृतियों को आत्मसात किए हुए हैं। इन प्रदेशों के निवासी मूलत: इन्हीं भाषाओं में बोलते, लिखते या व्यवहार करते हैं। उनके धार्मिक और धर्म-स्तोत्रों से प्राप्त शब्द अनुकूलित रूपों में उन भाषाओं के शब्दभंडार में सम्मिलित हो गए हैं।''[3]

जहाँ तक हिंदी भाषा का प्रश्न है, हिंदी भाषा और साहित्य का स्वरूप बहुत व्यापक है। हिंदी साहित्य में ही नहीं, हिंदी की वर्णमाला, शब्दावली, अभिव्यक्तियों, शैलियों और मुहावरों आदि में भी सामासिक संस्कृति के प्रमाण मिलते हैं । हिंदी की वर्णमाला के कई वर्ण एवं ध्वनियों में प्रदेशिक एवं विदेशी भाषाओं के तत्व समाविष्ट हैं, यथा - क़, ग़, ज़, फ़, ऑ आदि । इसी प्रकार हिंदी शब्दावली के स्रोत (तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी आदि) भी हमें यही बताते हैं कि इसकी शब्दावली सामासिक-संस्कृति के तत्वों से समृद्ध है। यही बात हम हिंदी की अभिव्यक्तियों एवं मुहावरों में भी पाते हैं।

राजभाषा हिंदी का भाषा-स्वरूप भी भारत की सामासिक-संस्कृति का ही प्रतिरूप है । राजभाषा हिंदी का समृद्ध शब्द-भंडार अनेक भारतीय एवं विदेशी भाषाओं के शब्दों से निर्मित है। इसके प्रमाण हमें हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली, अभिव्यक्तियों और मुहावरों आदि में भी दीखते

हैं, जिसे हम निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर समझने का प्रयास करेंगे।

राजभाषा हिंदी की शब्दावली और सामासिक-संस्कृति:

राजभाषा हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली का स्रोत बहुत व्यापक है। इसमें हिंदी और हिंदीतर भाषाओं के साथ-साथ अंग्रेजी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, लैटिन, रूसी आदि विदेशी भाषाओं के अनेक शब्दों को भी स्वीकार किया गया है। उदाहरण के लिए फाइल, गजट, बजट, टिकट, सिगनल, पेंशन, पुलिस, ब्यूरो, फीडबैक, रेलवे, बर्थ, डीलक्स आदि ऐसे सैकड़ों शब्द हैं । ये शब्द हिंदी की शब्दावली में इस तरह घुल-मिल गए हैं कि हिंदी की अभिव्यक्तियों में इनका प्रयोग आज बहुत ही सहजता के साथ होता है।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली द्वारा प्रस्तुत हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के सिद्धांतों में, एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है : ''सभी भारतीय भाषाओं के शब्दों में यथासंभव अधिकाधिक एकरूपता लाने के उद्देश्य से ऐसे शब्द अपनाने चाहिए, जो अधिक से अधिक क्षेत्रीय भाषाओं में प्रयुक्त होते हों और संस्कृत धातुओं पर आधारित हों।''[4] वस्तुत: यह सिद्धांत भी शब्दावली निर्माण के माध्यम से भारत की सामासिक संस्कृति को समृद्ध करने पर ही बल देता है।

राजभाषा हिंदी शब्दावली में ऐसे कई शब्द हैं, जो कि क्षेत्रीय भाषाओं से लिए गए हैं, जो भारतीय भाषाओं के मध्य विद्यमान सामासिक-समरसता को उद्घटित करते हैं । यह भारत की वास्तविक भाषाई शक्ति भी है। उदाहरण के लिए राजभाषा हिंदी की प्रशासनिक शब्दावली में बहु-प्रयुक्त शब्दों को देखा जा सकता है : आवक-जावक (in ward-out ward - मराठी), जुड़नार (fixtures - मराठी), नामे डालना (debt - मारवाड़ी) पुनश्चर्या (refresher - कन्नड) निवल (net - कन्नड), पूर्वव्यापी (retrospective - कन्नड़), बाध्यक (binding - तेलुगु), मीनक्षेत्र (fishery तमिल), पंचाठ (कश्मीरी) आदि। ये शब्द राजभाषा हिंदी की शब्दावली में इस तरह घुल-मिल गए हैं और इनका प्रयोग बहुत ही सहजता से राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन में हो रहा है ।

यद्यपि आज इन शब्दों की संख्या राजभाषा हिंदी की शब्दावली में सीमित है, किंतु जिस तरह से वर्तमान समय में भारतीय भाषाओं के महत्व को पुनरोद्घाटित किया जा रहा है, इसे देखते हुए विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि हिंदी की शब्दावली में क्षेत्रीय भाषाओं से शब्दों को ग्रहण करने की इस प्रक्रिया में तेजी लाई जाएगी, क्योंकि जितनी अधिक संख्या में क्षेत्रीय-भाषाओं के शब्द राजभाषा हिंदी की शब्दावली में होंगे, राजभाषा हिंदी की स्थिति उतनी ही अधित मजबूत एवं समृद्ध होगी। प्रमाण स्वरूप इसका एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जा सकता है : अंग्रेजी का एक शब्द है - young , जो कि पुरुष एवं महिलाओं के लिए समान रूप से प्रयुक्त हो सकता है। उसके लिए हिंदी में 'युवा' शब्द का प्रयोग मिलता है, जो कि पुरषों के लिए है, यदि इसके लिए तेलुगु भाषा में प्रयुक्त 'युवजन' शब्द का प्रयोग किया जा सकता है। इससे हिंदी को एक नया शब्द तो मिलेगा ही, इसकी संप्रेषणीयता और प्रसार में भी विस्तार होगा ।

राजभाषा हिंदी की अभिव्यक्तियाँ/मुहावरे और सामासिक संस्कृति :

राजभाषा हिंदी की अभिव्यक्तियों की भी लगभग यही स्थिति है। हिंदी में ऐसी कई अभिव्यक्तियाँ एवं मुहावरे प्रचलित हैं, जो भारत की सामासिक संस्कृति के अच्छे उदाहरण हैं। नई शिक्षा नीति, 2020 के आलोक में भारतीय भाषाओं के मुहावरों, शैलियों, अभिव्यक्तियों में विद्यमान सामासिक संस्कृति के तत्वों को पहचानने और उन्हें उद्घाटित करने की परम आवश्यकता है, जो हमारी राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता को नि:शब्दता के साथ अपार-शक्ति प्रदान कर रहे हैं। उदाहरण के लिए ''हिंदी का एक मुहावरा है 'आटे-दाल का भाव मालूम होना' इसमें आटा द्रविड़ मूल का शब्द है। 'अट्ट' धातु का अर्थ 'पसीना' है, उसका संस्कृत पर्याय 'चूर्ण' है। हिंदी में आटे का पर्याय 'चून' भी है। पर हमने किसी से 'चून-दाल' का भाव नहीं सुना है। कोई बोलेगा तो खटकेगा ही। शायद यहाँ आटे का अर्थ चून नहीं पिसा हुआ या दला हुआ है।''(शर्मा, 1968 : 119)[5]

इस संदर्भ में एक निवेदन यह है कि शब्दावलियों एवं अभिव्यक्तियों के निर्माण में कृत्रिम पद्धति को अपनाने से बचना चाहिए । कृतिमता भाषा के निष्प्राण एवं निरुपयोगी बना देती है। यदि प्रयोगकर्ता को किसी शब्द के प्रयोग में असहजता व दुरूहता प्रतीत होती है तो उसका एक प्रमुख कारण उनकी कृत्रिमता हो सकती है।

शब्दावली निर्माण की चुनौतियाँ :

सामासिक-संस्कृति के संवर्द्धन के नाम पर किन्हीं दो भाषाओं के शब्दों या पदों को मन चाहे ढंग से मिश्रित कर नए शब्दों, पदों अथवा अभिव्यक्तियों का निर्माण नहीं किया जा सकता है। यदि ऐसे शब्द या पद गढ़ भी लिए जाएँ तो भी उन्हें लोक की स्वीकृति नहीं मिल पाती है। क्योंकि ''किसी भी भाषा की 'आत्मता' या 'मूलप्रकृति' उसके व्याकरण उसके मूलभूत शब्दभंडार और उनमें निहित संभावनाओं में व्यक्त होती है । लिंग, वचन, कारक, क्रियापद, काल, तद्धित कृदंत, समाज, वाक्य-रचना (विविध) इत्यादि का रूप और ताना-बाना हर भाषा का अपना होता है। उदाहरण के लिए - हिंदी में 'संघर्ष-ए-संस्वतंत्रता' समास नहीं बनता और उर्दू में 'तालीमालय' स्वाभाविक नहीं होती। हिंदी में लोग 'कागजातों' (कारक-युक्त बहुवचन) का प्रयोग करते हैं । 'अनेक तरह की मददें दीं' कह सकते हैं, उर्दू में 'परिवर्तनात' नहीं कहेंगे 'तब्दीलियाँ' ही करेंगे। इतना सब होते हुए भी भारोपीय, हिंदार्य भाषाओं में भौगोलिक परिवेश और सामाजिक संपर्क से उत्पन्न अनेक द्रविड़, मुंडा, तिब्बती-बर्मी तत्व मिलते हैं, जिनका उल्लेख फ्रेंकलिन सी साउथवर्ड ने 'इंटरनेशनल जनरल ऑफ द्रविड़ियन लिंग्विस्टिक्स' (जुलाई 1974) में प्रकाशित एक निबंध में किया है । (साउथवर्ड : 201-222)।''[6]

इसी प्रकार शब्दावली के निर्माण में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। राजभाषा हिंदी में अनेक शब्दों के निर्माण अनुवाद के सहारे हुआ है। किंतु यहाँ एक विषय का ध्यान रखना आवश्यक है, हिंदी में नए शब्दों का निर्माण करते समय यह भी देखना चाहिए कि वे शब्द प्रयोगकर्ता को कहीं संभ्रम की स्थिति में तो नहीं डाल रहे हैं? उदाहरण के लिए wireless के लिए हिंदी में वितंतु शब्द का प्रयोग भ्रामक है, क्योंकि दक्षिण की कुछ भाषाओं (विशेषकर तेलुगु भाषा में) वितंतु शब्द का प्रयोग widow के लिए होता है, इसके लिए तेलुगु भाषा में प्रयुक्त शब्द 'निस्तंत्री'[7] किया जा सकता है।

निष्कर्ष :

संविधान के अनुच्छेद 351 में दिए गए निर्देशों के अनुरूप राजभाषा हिंदी के विकास के निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। विगत छह-सात दशकों से वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, केंद्रीय हिंदी निदेशालय जैसी संस्थाओं द्वारा हिंदी की शब्दावली और अभिव्यक्ति के निर्माण एवं प्रचार-प्रसार की दिशा में किए जा रहे प्रयास इस बात का विश्वास दिलाते हैं कि इनसे भारत की सामासिक-सांस्कृति के सभी तत्वों के विकास में बड़ी शक्ति मिल रही है। अब जरूरत बस इस बात की है कि इनमें प्रांतीय भाषाओं के शब्दों एवं अभिव्यक्तियों की संख्या को और अधिक बढ़ाया जाए और उनका अधिक से अधिक प्रयोग सरकारी-तंत्र में ही नहीं, सोशल मीडिया, इंटरनेट आदि प्रचार-प्रसार के आधुनिक माध्यमों में भी किया जाए। ❑

संदर्भ :

1. नाचता अध्यात्म, हृदयनारायण दीक्षित, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2021, पृ. 207
2. हिंदी का सामाजिक संदर्भ, संपादक : रवींद्रनाथ श्रीवास्तव, रमानाथ सहाय, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, चतुर्थ संस्करण, 2008 पृ. 199
3. वही, पृ. 198
4. मूलभूत प्रशासनिक शब्दावली, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली, 2008, पृ. xiii
5. हिंदी का सामाजिक संदर्भ, संपादक : रवींद्रनाथ श्रीवास्तव, रमानाथ सहाय, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, चतुर्थ संस्करण, 2008 पृ. 205
6. वही, पृ.201
7. हिंदी : विविध व्यवहार की भाषा, सुवास कुमार, वाणी प्रकाशन, द्वितीय संस्करण, 2007 पृ. 27

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

तिब्बत में स्त्री-पुरुष संबंध : विवाह

(राहुल सांकृत्यायन के यात्रा-वृत्तांत से)

डॉ. आकाश वर्मा

प्राध्यापक, हिंदी विभाग
असम विश्वविद्यालय, सिलचर
असम-988011
06002112256
hindiakash@gmail.com

तिब्बत के बारे में प्राचीन मान्यता है कि यह देश जादू, तंत्र-मंत्र और रहस्यपरक गतिविधियों से भरा है। प्राचीन तिब्बत पुस्तक की भूमिका में रामकृष्ण सिन्हा लिखते हैं कि हिमालय की गोदी में छिपा हुआ तिब्बत अब भी विचित्रताओं का भंडार है। खड़ाऊँ पहनकर नदी की धार पर चलने वाले, बात ही बात में सैकड़ों मील पहुँचाने वाले और कोसों दूर पर बैठे हुए मनुष्य को अपनी बात सुनाने वाले सिद्ध अब भी वहाँ बड़ी संख्या में पाए जाते हैं।[1] इस प्रकार की बाते कितनी सही हैं अथवा नहीं, इसका अनुमान लगाया जा सकता है। लेकिन हिमालय के बीच में बसा तिब्बत इसी प्रकार की चर्चाओं से प्राय: पूरे विश्व को रहस्यमयी लगता है । हालाँकि यह संकेत किया जा सकता है कि इस प्रकार की चर्चा बौद्ध धर्म के प्रवेश और उसकी साधना पद्धति के प्रभावों के कारण ही रही होगी। हम देख सकते हैं कि दूसरी-तीसरी शताब्दी के बाद बौद्ध धर्म का विस्तार जहाँ तक हुआ उसमें तिब्बत ही ऐसा देश है, जहाँ बर्फीले पहाड़ और तंत्र और ज्ञान साधना के लिए पर्याप्त एकांतिक स्थान हैं। इस कारण से भी ऐसी अवधारणाएँ विकसित हुई होंगी। इस प्रकार के रहस्यों से भरे तिब्बत की यात्रा अनेक लोगों ने की- नोटविच (रूस, नोटविच का उल्लेख मैथिलीशरण गुप्त अपनी पुस्तक भारत भरती में करते हैं, हालाँकि इसका अन्यत्र उल्लेख नहीं मिलता), इकाई कावागुची (जापान, पुस्तक-थ्री ईयर्स इन तिब्बत), हेनरी हैरर (जर्मनी, सेवेन ईयर्स इन तिब्बत), एलेक्जांड्रा डेविड निल (फ्रांस, इनकी तिब्बत पर आधा दर्जन से अधिक पुस्तकें हैं), राहुल सांकृत्यायन (भारत) इत्यादि। प्राय: सबका उद्देश्य तिब्बत को जानना, बौद्ध धर्म संबंधी जानकारी और सामान्य रूप से यात्रा करना भी रहा, ऐसा माना जा सकता है ।

बौद्ध धर्म से प्रेरित केदारनाथ पांडेय, राहुल सांस्कृत्यायन बनकर अपने बौद्ध धर्म संबंधी ज्ञान और भ्रमणशील मनोवृत्ति के चलते कई देशों की यात्रा करते हैं, जिनमें तिब्बत प्रमुख है। तिब्बत की उन्होंने कुल चार बार यात्रा की। निश्चय ही बौद्ध धर्म से संबंधित, भारत की अनेक प्राचीन पुस्तकों की तलाश में तिब्बत जाने की आवश्यकता पड़ी है । वे कहते हैं- मेरी यह यात्रा भूगोल संबंधी अन्वेषण या

मनोरंजन के लिए नहीं हुई है, बल्कि यह यहाँ के साहित्य के अच्छे प्रकार अध्ययन तथा उसमें भारतीय तथा बौद्ध-धर्म संबंधी ऐतिहासिक तथा धार्मिक एकत्र करने के लिए हुई है।[2] इस लिहाज से तिब्बत की यात्रा केवल भ्रमण भर नहीं रहती, बल्कि उस देश को जानने-समझने तथा भारतीय दृष्टि से पहाड़ों (हिमालय) के उस पार के अज्ञात देश का परिचय प्राप्त करना- कराना भी माना जा सकता है । तिब्बत के मुख्य शहर ल्हासा तक के लिए महीनों की गई पैदल यात्रा का रोमांचक वर्णन- यात्रा की कठिनाइयों के साथ तिब्बत के लोक, लोक-स्वभाव, खानपान, रहन-सहन, धार्मिक अनुष्ठान, मान्यताओं, सामाजिक-पारिवारिक वर्णनों तथा बीच-बीच में ऐतिहासिक जानकारियों आदि तक विस्तार पाता है। वैसे तो प्राचीन समय से ही लद्दाख, नेपाल, वर्तमान सिक्किम (भूटान देश भी) की ओर से आवागमन रहा है, लेकिन दुर्गम रास्तों के चलते गहरा संपर्क नहीं था । इसी कारण तिब्बत के बारे में किसी भारतीय द्वारा इस प्रकार का कोई विशेष चित्रण नहीं प्राप्त होता । इन अवस्थाओं में यह राहुल सांकृत्यायन का ही देय माना जाएगा कि हिंदी में हमें तिब्बत के बारे में विस्तृत ज्ञान मिलता है। हाँ, कुछ अन्य यात्रियों की भी तिब्बत संबंधी पुस्तकें हिंदी में अनूदित हुई हैं ।

तिब्बत में सवा बरस, राहुल सांस्कृत्यायन की पहली तिब्बत यात्रा का वर्णन है । इसके बाद उन्होंने वहाँ की तीन और यात्राएँ कीं। कावागुची की तिब्बत यात्रा का अनुवाद- तिब्बत में तीन बरस, की भूमिका में पारसनाथ सिंह संकेत करते हैं कि प्राचीन काल से ही तिब्बत का संबंध भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति से रहा है, किंतु पिछले डेढ़ हजार वर्ष में क्रमशः कुछ ऐसा होने लगा कि तिब्बत ने बाहरी दुनिया से अपना संपर्क धीरे-धीरे समेट लिया और पूरी तरह अपने आप तक में लीन हो गया । ऐसे में एक बड़ा अंतराल निर्मित हो जाता है । आगे आने वाले समय में वह चीन और नेपाल को छोड़कर शेष विश्व के लिए पहेली बन गया । जब से तिब्बत ने अपने को सीमित करना आरंभ किया, वैसे ही संसार ने उसे जानने समझने की कोशिश की- कावागुची की तिब्बत यात्रा, तिब्बत को समझने की इसी प्रकार की आरंभिक यात्रा थी।[3] राहुल सांकृत्यायन अपनी पुस्तक तिब्बत में सवा बरस, तिब्बत की अपनी जानकारी के लिए कावागुची की यात्रा का जिक्र करते हैं । कह सकते हैं कि प्राचीन भारत के इस संबंध और संभवतः तिब्बत जाकर बौद्ध-धर्म संबंधी अपनी ज्ञान-पिपासा को शांत करने की प्रेरणा वहीं से प्राप्त होती है। जैसा कि हमने संकेत किया है तिब्बत की उनकी यात्रा तिब्बत के जन-जीवन, रीति-रिवाज, स्वभाव, धार्मिक, प्राकृतिक सौंदर्य इत्यादि का भी विवरण भी प्रस्तुत करते हैं । इन सबकी बहुत विस्तार से चर्चा की जा सकती है। हमारा मुख्य उद्देश्य समाज के मुख्य तत्व स्त्री-पुरुष संबंध की मुख्य कड़ी विवाह पर है, जो राहुल सांकृत्यायन ने तिब्बत की प्रत्येक यात्रा में अनुभव किया । समय के साथ वहाँ निश्चित रूप से आज बदलाव आए होंगे, लेकिन 1930 के आसपास, तिब्बत के स्त्री-पुरुष और परिवार की मुख्य अवधारणाएँ इनके वर्णन से दिखाई पड़ती हैं । इन सबमें सबसे पहले राहुल सांकृत्यायन संकेत करते हैं कि सदैव उन्हें बच-बचाकर रहना पड़ा, क्योंकि भले ही भोट देश के साथ प्राचीन और व्यापक संबंध रहें हों, किंतु अब वह स्थिति नहीं रही। वे इस पुस्तक में दर्जनों स्थान पर अपने को लद्दाखी कहके परिचित करवाया ताकि अधिकारी और लोग पहचान न सकें।[4]

निश्चित रूप से हम जानते हैं कि किसी भी समाज की संरचना परिवार की संरचना पर केंद्रित होकर विस्तार प्राप्त करती है। क्रमशः उस अवधारणा को सामाजिक स्वरूप मिल जाता है। परिवार के निर्माण के लिए अज्ञात आनुबंधिक स्वरूप आदिम काल से चला आ रहा है । तिब्बत में भी एक प्रकार का अनबंध काम करता है, जो राहुल सांकृत्यायन के लिए रोचक और विचित्र अनुभव रहता है। वे लिखते हैं- भोट में सभी भाइयों के बीच एक ही स्त्री होती है, इसलिए सभी लड़कियों को पति नहीं मिल सकते और कितनी ही लड़कियाँ बाल कटा कर अनी (भिक्षुणी) बन या तो गुम्बा (मठ) में चली जाती हैं या घर में ही रह जाती हैं।[5] यहीं से संकेत मिलता है कि परिवार में कई भाइयों में किसी एक भाई का ही विवाह होता है, उसमें भी जो सबसे बड़ा है उसी को विवाह करने का अधिकार होता है। उसी की पत्नी बाकी सभी भाइयों की पत्नी बनती है । यह तथ्य वाकई रोचक माना जा सकता है । इसका तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार लगभग

प्रत्येक देश की प्रत्येक प्रजाति में एक स्त्री और एक पुरुष के बीच में सामान्यतया प्रेम पनपता है, वहाँ उसको विशेष रूप से सामाजिक अवधारणा में रखा ही नहीं गया है । राहुल सांकृत्यायन ने अपनी प्रत्येक तिब्बत यात्रा में इस तथ्य को महसूस किया तथा अनेक स्थानों पर उल्लेख भी किया है। हालाँकि उनकी इस संबंध में उनकी सारी चर्चाएँ बिखरी हुई हैं, एक स्थान पर नहीं हैं।

इस तथ्य पर बात करें तो इसका अर्थ यह भी नहीं था तिब्बत में नवयुवतियों की कमी होती जा रही थी । हमारे यहाँ महाभारत में द्रौपदी के पंचपति का उल्लेख है, लेकिन तिब्बत में ऐसा हर परिवार में है । यही नहीं, द्रौपदी के सभी पतियों की अपनी अन्य पत्नियाँ भी थीं । तिब्बत में किसी अन्य भाई को ऐसा करने का अधिकार नहीं हैं । यदि वह ऐसा करता है तो उसे परिवार से निकाल दिया जाता है तथा समाज में उसको सही नजर से नहीं देखा जाता । यदि वह व्यक्ति आर्थिक रूप से मजबूत हुआ तो ठीक है और वह अपना जीवन यापन कर सकता है, भले ही समाज में उसको स्थान न मिले। यात्रा के दौरान ऐसे ही किसी गृहस्वामी (रात्रि में यात्री निवास की तरह घर में स्थान देने वाला) की चर्चा राहुल सांकृत्यायन करते हैं, जो तिब्बत की सेना में रह चुका था और वह अपनी पत्नी की चाह रखता था- ''हमारा गृहस्वामी पहले सैनिक रह चुका था। तिब्बत में छोटे भाई शादी नहीं करते, लेकिन उसने अपनी अलग शादी कर ली थी, जिससे भाइयों ने उसे घर से निकाल दिया था। अभी एक छोटा सा नया घर बना कर वह अपनी स्त्री के साथ रह रहा था।''[6] ऐसा करने वाले को परिवार की संपत्ति में कोई हिस्सेदारी नहीं मिलती। ऐसा प्रतीत होता है कि यह सारा कुछ आर्थिक तथा संपत्ति केंद्रित ही था ।

खैर, इस आधार पर विचार करें तो स्त्री-पुरुष के भीतर माधुर्य तथा रागात्मक संबंध भी नहीं पनप सकता या यह भी कह सकते हैं कि उसके पनपने का कोई स्थान ही नहीं । भले ही यह परिवार की आर्थिक सुदृढ़ता की दृष्टि से उचित मान लिया गया होगा, किंतु प्रेम के धरातल पर यह न तो स्त्री के पक्ष में जाता जाता है और न पुरुष के पक्ष में। अत: इस सामूहिक रिश्ते में रागात्मकता की कल्पना इतनी सहज नहीं । वैश्विक स्त्री-पुरुष संबंधों के बीच रागात्मक संबंधों की बात करें तो प्रेम केवल शारीरिक आवश्कताओं भर के लिए तो नहीं होता । इस स्थिति में विचारणीय है कि क्या यह परंपरा केवल शारीरिक आवश्यकता तक ही सीमित थी- इसका सहज अंदाजा नहीं लगाया जा सकता, लेकिन यह स्वरूप विकसित हुआ और लोग इसका पालन करते हुए पाए गए। ऊपर के एक उद्धरण में हम देख सकते हैं कि अनेक युवतियों को पति की प्राप्ति नहीं होती

जैसा कि राहुल सांकृत्यायन उल्लेख करते हैं- कितनी ही लड़कियों को पति नहीं मिल सकते थे और वे भिक्षुणी बनकर घर में बैठी रहती हैं या मठों में चली जाती हैं। यह बात केवल यहीं तक सीमित नहीं रहती। इस अवस्था के चलते समाज में विकसित होने वाले अवैध संबंध निर्मित होते हैं । निश्चित रूप से यह केवल पति अथवा पत्नी की प्राप्ति भर नहीं हैं, यह स्त्री और पुरुष के शारीरिक और मानसिक अवस्थाओं का अवगुंठन भी है, जो इच्छाओं के बावजूद भी अधीकृत नहीं रखा गया । इसीलिए स्त्री-पुरुषों के अनुचित संबंध अधिक प्रकट हैं। रास्ते चलते-चलते भी आदमी पड़ाव पर स्त्रियों को पास जा सकता है। कुमारियाँ और बाल कटा कर घर में बैठी बहुत स्वतंत्र होती हैं। मेरा यह मतलब नहीं है कि भोट में दूसरे देशों से व्यभिचार अधिक है । मेरी तो यह धारणा है कि यदि सभी गुप्त और प्रकट व्यभिचारों का जोड़ लगाया जाए को सभी देशों में बहुत ही कम अंतर पड़ेगा।[7]

विचारणीय है कि यह स्त्री-पुरुष के बीच सामान्य अवस्था नहीं है । प्रेम और काम की प्राकृतिक आवश्यकताओं के लिए, अविवाहित रह जाने वाली अकेली युवतियाँ ऐसे कार्यों के लिए विवश भी हो सकती हैं और सामाजिक रूप से लाचार भी। बहुत आश्चर्यजनक प्रतीत होता है कि इसे जानते समझते हुए भी सहज रूप से स्वीकार भी किया गया है। इसको अन्यथा भी नहीं लिया जाता।

आगे राहुल सांकृत्यायन ऐसे परिवार के विवाहित स्त्री-पुरुष के रहन-सहन का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि- यदि पति अकेला एक ही भाई है तो प्राय: चुक्-टू के बोरे में दोनों साथ सोते हैं । इसमें वहाँ कोई संकोच नहीं माना जाता। लड़के की यदि बहू हुई तो वह पति-पत्नी भी एक ओर उसी प्रकार बे-तकल्लुफी से सो रहते हैं। यदि पति कई भाई है तो एक लिहाफ के अंदर प्राय: सभी अपनी अकेली भार्या को बीच में करके सो रहते हैं।[8] यह बड़ी विचित्र अवस्था प्रतीत होती है। यहीं वे संकेत करते हैं भोट देश में लज्जा और शर्म जैसी बहुत बड़ी कोई अवधारणा नहीं। इस बात को राहुल सांकृत्यायन के इस उल्लेख से भी महसूस कर सकते हैं कि भोट देश में स्त्री-पुरुष सभी नग्नावस्था में ही सोते हैं।[9] वे संकेत करना चाहते हैं कि सभी पति-पत्नी (माता-पिता और बेटे-बहू) आसपास ही सोते हैं ।

तिब्बत की प्रथम यात्रा में वापसी के समय राहुल सांकृत्यायन को एक नई बात देखने को मिली, वह यह कि एक परिवार में एक पति की दो पत्नियाँ थीं। जहाँ कई पतियों की एक पत्नी की परंपरा बनी हो वहाँ एक पति की दो पत्नियाँ उनके लिए रोमांचकारी दृश्य रहा होगा । वे इस बात की पड़ताल करके बताते हैं कि यह बहुत ही विशेष परिस्थिति का रिवाज के चलते है । अगर पिता के कोई पुत्र नहीं होता है तो निश्चय ही लड़कियों को विवाह के पश्चात अपने पति के घर जाना होगा अथवा भिक्षुणी बनकर अविवाहित ही पिता के घर रहना होता है। इस अवस्था में विवाह करना हो तो उन्हें बाहर से पति लाना होगा। बाहर से पति लाने का अर्थ घरजमाई बनाने से है। अगर कोई पुरुष ऐसा करने के लिए तैयार होता है तो इस अवस्था में वह परंपरा उलट जाएगी, जो पुरुषों के लिए बनाई गई है ।

बाद की तिब्बत यात्राओं में कुछ अधिक जाँच-पड़ताल के बाद उन्हें वास्तविक कारण ज्ञात होता है कि- तिब्बत जहाँ जीवनोपयोगी साधन बहुत कम हैं। ऐसी अवस्था में परिवार की संख्या बढ़ाने तथा अधिक संतान उत्पन्न करने की स्थिति हितकारी नहीं है। इस स्थिति के चलते कुछ इस प्रकार की परंपराएँ निर्मित हो गईं, जिससे घर-परिवार एकजुट बना रहे । प्रत्येक भाई के विवाह होने के पश्चात घर अलग होता है, संपत्ति में बँटवारा होता है और परिवार में भेद पनपता है। हालाँकि इस तथ्य का औचित्य विचारणीय माना जा सकता है। चार पुत्र एक घर में रहने से जैसे घर-बाँटन रुक सकते हैं, वैसे ही सिर्फ लड़कियों के रहने पर घर जमाई के लिए भी वही नियम[10] रखा गया। यहाँ समझा सकता है कि तिब्बत के लोग बहु-विवाह में क्यों विश्वास रखते हैं। लेकिन इसके अनेक विकृत परिणाम भी रेखाँकित किए जा सकते हैं। इसमें भी कोई दो राय नहीं, मसलन- अवैध संबंधों का विकास, हीन भावना का निर्माण, अनेक प्रकार की मनोवैज्ञानिक समस्याएँ। हालाँकि मेरी तिब्बत यात्रा नामक पुस्तक में राहुल सांकृत्यायन इस विवाह के कुछ अपवादों की भी चर्चा करते हैं, लेकिन ये अपवाद

राजपरिवार[11] के हैं । किंतु यह सही है कि जितने अलग-अलग भाइयों का विवाह हुआ- संपत्ति और बँटवारा उतना ही हुआ, जैसा कि हमारे देश में होता है ।

इस स्त्री-पुरुष संबंध के एक और स्वरूप की चर्चा देखी जा सकती है । रा-लुङ् की तेरहवीं शताब्दी के एक मठ की चर्चा करते हुए राहुल सांकृत्यायन कहते हैं कि इस मठ की विशेषता यह है कि यहाँ भिक्षु और भिक्षुणियाँ दोनों एक साथ रहते हैं और दोनों अधिकतर इसी मठ में पैदा हुए हैं। कौन किसका पुरुष और कौन किसकी स्त्री इसका कोई कड़ा नियम नहीं है। भिक्षु 70 के करीब होंगे और भिक्षुणियाँ सौ से अधिक।[12] इससे समझा जा सकता है कि स्त्री-पुरुष संबंध के नियम बहुत जटिल और कठोर नहीं हैं। सभी स्वतंत्र हैं तथा सामाजिक जीवन जीने वाले सामान्य लोगों की तरह भिक्षु और भिक्षुणी भी शारीरिक संबंध स्थापित कर सकते हैं । जीवन यापन तथा सहजता के साथ बना लिए गए सभी संबंध स्वीकार कर लिए जाते हैं, लेकिन विवाह करने का सामाजिक स्वरूप वही है। हालाँकि स्त्री-पुरुष संबंधों का यह स्वरूप भले ही स्त्री-पुरुष के प्रेम में समर्पण, आत्म से आत्म का संबंध न बन पाता हो, लेकिन राहुल सांकृत्यायन उसके सकारात्मक स्वरूप की ओर भी संकेत अवश्य करते हैं। हालाँकि यह कितना सकारात्मक है, यह भी कहना अत्यंत मुश्किल है । वे कहते हैं- इसका कारण मैं समझता हूँ तिब्बत में बहुत सी जगहों में मनुष्य- संख्या कम हुई है। आजकल संसार के बड़े-बड़े अर्थशास्त्री जनवृद्धि रोकने की चिंता में हैं, किंतु तिब्बती लोगों ने कई सौ वर्ष पूर्व ही यह सवाल बहुपति- विवाह के रूप में हल कर दिया है।[13] एक बात और जोड़ी जा सकती है कि इसमें छोटे भाइयों को विवाह करने का कोई अधिकार नहीं था। घर की संपत्ति न बँटे इसलिए केवल बड़े भाई का ही विवाह होता, लेकिन ऐसी भी स्थिति होती कि छोटे भाई ने अलग शादी कर ली। घर में झगड़ा लग गया।[14]

अंत में गौर करने वाली बात है कि समय के साथ तिब्बत के समाज में अवश्य ही बदलाव आया होगा, लेकिन अगर यह परंपरा जब तक है इसमें स्त्री-पुरुष के प्रेम का कोई सार्थक स्वरूप नहीं दिखाई देता । हाँ, इसका एक ही सकारात्मक पक्ष देखा जा सकता है कि ऐसे में संतानोत्पत्ति अधिक न करके मात्र एक ही संतान तक सीमित रहा जाए, जिससे जनसंख्या वृद्धि भी न होगी। यह परंपरा भी रह सकती है और स्त्री-पुरुष के बीच का प्रेम भी जीवित रह पाएगा। ❑

संदर्भ सूची :

1. भूमिका, प्राचीन तिब्बत- रामकृष्ण सिन्हा, प्रकाशन वर्ष का उल्लेख नहीं, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग
2. तिब्बत में सवा बरस- राहुल सांकृत्यायन, पृष्ठ- 190 प्रथम संस्करण- 1990 (संवत्), प्रकाशक- शारदा मंदिर, नई दिल्ली
3. भूमिका, तिब्बत में तीन वर्ष (मूल लेखक- इकाई कावागुची, अनुवादक- गुलजारीलाल चतुर्वेदी), प्रथम संस्करण- 1979 (संवत्), प्रकाशक- हिंदी पुस्तक एजेंसी, हरिसन रोड, कलकत्ता
4. तिब्बत में सवा बरस, पृष्ठ- 132
5. तदेव, पृष्ठ- 133
6. तदेव, पृष्ठ- 142-43
7. तदेव, पृष्ठ- 149-50
8. तदेव, पृष्ठ- 171
9. तदेव, 171
10. तदेव, पृष्ठ- 358 से 360 तक
11. मेरी तिब्बत यात्रा, राहुल सांकृत्यायन, पृष्ठ- 113, प्रकाशक- छात्रहितकारी पुस्तकमाला, दारागंज, प्रयाग, प्रथम संस्करण- 1937 (ईस्वी)
12. तदेव, पृष्ठ- 51
13. तदेव, पृष्ठ- 167
14. यात्रा के पत्रे, राहुल सांकृत्यायन, पृष्ठ- 58, साहित्य सदन प्रकाशन, देहरादून, प्रथम संस्करण- अक्टूबर 1952 (ईस्वी)

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

संस्कृति

त्रिपुरा की जनजातीय व्यथा-कथा एवं 'रुङ' उपन्यास

डॉ. मिलन रानी जमातिया

सहायक प्राध्यापिका, हिंदी विभाग
त्रिपुरा विश्वविद्यालय
सूर्यमणिनगर, अगरतला
त्रिपुरा-799022
91-8974009245
milanrani08@gmail.com

'काकबरक' त्रिपुरा की प्रमुख जनजातीय बोली है। बंगला भाषी के अतिरिक्त इस राज्य के अन्य सभी जनजातीय समुदाय एक-दूसरे से संवाद करने के लिए संप्रेषण भाषा के रूप में कॉकबरक भाषा का ही इस्तेमाल करते हैं। यह तिब्बती-बर्मी भाषा-परिवार से व्युत्पन्न पूर्वोत्तर की भाषाओं, यथा, बोड़ो, गारो, डिमासा, कोच आदि की सहोदरा भाषा है।

एक विकसित भाषा के साथ नजदीकी संबद्धता होने और सदियों से उपेक्षा के दंश झेलने के बाद भी कॉकबरक भाषा में स्वयं को राज्य की सामान्य भाषा के रूप में बनाए रखने की क्षमता है। इतना ही नहीं, यह अब विकसित होकर साहित्य की भाषा भी बन गई है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण है, इस भाषा में रचित 13 (तेरह) मौलिक उपन्यास हैं। उपन्यासों का उदय कॉकबरक साहित्य में एक ऐतिहासिक महत्व रखता है। इससे समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं राजनीतिक आंदोलनों की गतिविधि की जानकारी आमजन को मिली, साथ ही नए समाज के गठन की दिशा का मार्गदर्शन भी हुआ। कॉकबरक के कथाकारों ने अपनी लेखनी द्वारा कॉकबरक-कथा साहित्य को एक गंभीर साहित्य के रूप में न केवल प्रतिष्ठित किया, बल्कि अपनी अद्‌भुत शैली द्वारा कॉकबरक साहित्य के पाठकों की रुचियों का संस्कार कर असंख्य कॉकबरक पाठकों का भी निर्माण किया है। कॉकबरक गद्य-भाषा को उन्होंने जो शक्ति और क्षमता प्रदान की, उससे निश्चित रूप से कॉकबरक का उज्ज्वल भविष्य का निर्माण हुआ है। अब तक लिखे गए प्रमुख कॉकबरक उपन्यासों के नाम इस प्रकार हैं- हाचुक खुरिवो (पहाड़ की गोद में)- सुधन्य देबबर्मा, 1987, खङ (सीमा-रेखा)- श्यामलाल देबबर्मा, 1996, रुङ (नौका)- नंदकुमार देबबर्मा, 2001, मोनाकनि पोहर (रोशनी की किरण)- कुंजबिहारी देबबर्मा, 2002, लाङमानि रुकुङ (जीवन-संघर्ष)- सुनील देबबर्मा, 2003, 1980- डॉ. अतुल देबबर्मा, 2005, तङथाई नायतुगोई (आसरे की तलाश में)- श्यामलाल देबबर्मा, 2007, दलाई तोयमा नारो (दलाई नदी के तट पर)- बिजय देबबर्मा, 2008, लखोपति- शेफाली देबबर्मा, 2010 और चेथुवाङ, सुधन्य देबबर्मा, 2017 आदि। ये उपन्यास आज तक किसी विमर्श का हिस्सा नहीं बने, यहाँ क्या घटा, उसने आमजन पर क्या प्रभाव डाला, उनका संघर्ष क्या है, यहाँ की रचनाओं में समय और यथार्थ की अभिव्यक्ति किस प्रकार से की जा रही है,

खासियत क्या है? कभी चर्चा का विषय नहीं बन पाया। यहाँ तक कि कॉकबरक भाषा के स्थापित लेखकों एवं समीक्षाकों ने भी इन उपन्यासों को अपनी पुस्तकों में एक पैराग्राफ से ज्यादा जगह नहीं दी। हम सभी हिंदी के उपन्यासकारों – प्रेमचंद, अज्ञेय, वृंदावनलाल वर्मा, यशपाल, उपेन्द्रनाथ अश्क, नागार्जुन, अमृतलाल नागर, श्रीलाल शुक्ल, निर्मल वर्मा आदि को भलीभाँति जानते हैं। उनकी रचनाओं की चर्चा सभी शिक्षण संस्थाओं एवं संगोष्ठियों में होती है। लेकिन उनके अलावा भी अन्य रचनाकारों ने यथार्थ जीवन-समाज एवं घटनाओं को आधार बनाकर लेखन किया है। मैं यहाँ यथार्थ घटना पर आधारित 'रुङ' नामक कॉकबरक उपन्यास की चर्चा करूँगी। और बात को यहाँ से शुरू करना चाहूँगी- यह मत पूछो कि क्या हाल है मेरा तेरे आगे, ये देख कि क्या रंग है तेरा मेरे आगे....। 'रुङ' उपन्यास के लेखक नंद कुमार देबबर्मा जी हैं। वे कॉकबरक भाषा-साहित्य के नामचीन साहित्यकार हैं। वे मूलत: कवि हैं किंतु कॉकबरक साहित्य की अन्य विधाओं जैसे- उपन्यास, कहानी, निबंध, नाटक, यात्रा वृत्तांत आदि में भी उन्होंने अपनी लेखनी चलाई है। उनकी रचनाओं में जहाँ कॉकबरक साहित्य संबंधी नवीन विषयों का ग्रहण हुआ, वहीं पुरानी परंपरा का संरक्षण भी- भाव एवं शिल्प दोनों क्षेत्रों में। उन्होंने जनजातीय-समाज में प्रचलित कुसंस्कारों, छल-कपट, अमीरों की स्वार्थपरता, नेताओं और कर्मचारियों की लूट-खसोट, अदालतों में प्रचलित अन्याय-अनीति, कॉकबरक भाषा के प्रति सरकार का पक्षपातपूर्ण व्यवहार, देश-विदेश की सामान्य दुरावस्था, तत्कालीन शासन के आर्थिक शोषण आदि नए विषयों को लेखन का आधार बनाया। इनकी रचनाओं में प्राचीन जनजातीय जीवन पद्धति 'झूमकृषि' के प्रति मोह एवं उसे बनाए रखने की उद्दत लालसा की अभिव्यक्ति देखी जा सकती है।

'रुङ'[1] (सन 2001 ई.) उनके द्वारा रचित प्रसिद्ध कॉकबरक उपन्यास है। उपन्यास का समय 1950 ई. से 1970 ई. तक का है, जिसकी कथा का मूल आधार दुम्बूर बाँध निर्माण के क्रम में राइमा-सरमा[2] नदी के किनारे बसे बरक समुदाय[3] के विस्थापन से उत्पन्न दुख-दर्द, गरीबी, निरक्षरता, बेरोजगारी और भूमिहीनता है। दूसरे शब्दों में कहें तो बरक समुदाय विकास के नाम पर किस तरह व्यवस्था द्वारा ठगा गया, उसका खुलासा उपन्यास में किया गया है।

तत्कालीन त्रिपुरा सरकार द्वारा आधुनिकता एवं विकास के नाम पर राइमा एवं सरमा नदियों के संगम स्थल पर Dumbur Hydro-Electric Project के तहत बाँध बनाया गया, जिसे स्थानीय भाषा में दुम्बूर प्रोजेक्ट या बाँध कहा जाता है। विडंबना यह है कि प्रोजेक्ट आरंभ होने से पहले या जब प्रोजेक्ट-योजना बनाई जा रही थी, तब वहाँ बसी हुई जनजातियों से एक बार भी नहीं पूछा गया था, न ही उन्हें इस योजना की जानकारी दी गई थी। नतीजा यह हुआ कि जब बाँध बनकर तैयार हुआ तो एक-एक करके आस-पास के गाँव पानी में डूबते चले गए और वहाँ बसे लोगों को रातों-रात विस्थापित होना पड़ा। राइमा-सरमा से विस्थापित होकर वे और घने जंगलों एवं पहाड़ों में चले जाते हैं और यहीं से शुरू होती है उनके जीवन की करुण गाथा। साथ ही राइमा-सरमा की गोद से जन्म लेता है भुवन रुवाजा जैसा चरित्र।

पुरखों की जमीन से विस्थापित भुवन रुवाजा, जिसने अभी-अभी गृहस्थ-जीवन में कदम रखा था, उसकी आँखों में यौवन के सपने थे। उसने प्रेयसी के साथ मिलकर भविष्य के सुंदर ख्वाब बुने थे, जिसके लिए राइमा-सरमा केवल नदियाँ ही नहीं, संस्कृति की स्रोत थीं। जीवन के प्रत्येक पहलुओं से जुड़ी हुई एवं जनजातीय जीवन के आधार, इतिहास, मूल्यों, सभ्यता-संस्कृति, अस्तित्व और पहचान के प्रतीक थीं। अब वह राइमा-सरमा नहीं रहीं, बल्कि कुछ और हो गई थीं, इसीलिए वह इस दुख और सदमा को सह नहीं पाता और पागल हो जाता है।

त्रासदी यह है कि अब भुवन रुवाजा को कोई नहीं पहचानता है। उसके अपने रिश्तेदार, गाँव के लोग यहाँ तक कि दूर-दराज गाँवों में रहने वाले लोग भी उसे पागल ही कहते हैं। आज उसका परिचय केवल एक शब्द में सिमटकर रह गया 'भुवन कबर'[4]। लेखक के शब्दों में- ''जब छोटे-छोटे नावों को खेते हुए लोग भुवन रुवाजा के गाँव के किनारे से रोजमर्रा की जरूरतों को लेने बाजार-

हाट के लिए निकलते थे और साँझ को धरती जब स्वर्णिम किरणों में रंग जाती थी, सूरज गाभिन बिल्ली की तरह जब सुस्ताता था तो दूसरी तरफ पहाड़ी गाँव के परित्यक्त झूमखेत में किसी विधवा स्त्री के आँसुओं में डूबकर गेंदे का फूल जब खिलता था। मामिता पूजा के इंतजार में तिल का पौधा जब सूख जाता था, भावी भविष्य के सपने बुनती हुई युवतियाँ जब रिसा[5] की कसीदेकारी भूल जाती थी, ऋतुओं के संधिकाल में कोहरे से ढका हुआ जलसागर जब आकाश से बातें करता था...पानी के किनारों की पहाड़ियों पर जब खुम रुङखु[6] की कलियाँ खुशबू बिखेरती थीं, तब भुवन रुवाजा का पागलपन और बढ़ जाता था।'[7]

वह छाती पीट-पीटकर रोता, रोते-रोते साधना में लीन जलसागर को गाली देता, उसकी ओर देखकर थूकता, फिर अचानक घर के भीतर से एक लंबी दाव निकालकर लाता और चिल्ला कर कहता- 'इस जलसागर को आज मैं टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा।'[8] आगे भुवन रुवाजा के पागलपन को और विस्तार देते हुए लेखक कहता है कि 'भुवन रुवाजा जब जब रोता है, साथ में हवाएँ रोती हैं, फूल, कलियाँ, पत्ते रोते हैं, आसमान रोता है, झरने-नदियाँ रोते हैं, भोर की ओस की बूँदें रोती हैं, बरक समाज के सभ्यता-संस्कृति को निगलने वाला जलसागर भी रोता है...।'[9]

पढ़े-लिखे सभ्य लोगों की नजर में दुम्बूर बाँध निर्माण समाज एवं जाति उत्थान के लिए था। यह बरक जनजाति का पुनर्जन्म या नया सूर्योदय एवं नई रोशनी था। भुवन रुवाजा पढ़ा-लिखा और समझदार नहीं था, इसलिए उसे ये बातें समझमें नहीं आती थीं। उसे बस इतना ही पता था कि पूर्वजों की भूमि उसे अब वापस नहीं मिलेगी। वह जिंदगी द्वारा ठगे गए, जादूनि लाङमानि बुमूल अर्थात जीवन के अनचिह्नें कसीदेकारी अब स्मृति या यादों का हिस्सा है। रात और दिन कुछ भी नहीं बदले, वही हवाएँ, वही प्रकाश, वही धरती और आकाश हैं। सब पहले जैसा है। आज भी साल भर गाँवों में लोकोत्सव मनाए जाते हैं। ऋतुएँ आती हैं और चुपचाप चली जाती हैं, लेकिन बरसात के दिनों में टूटे छप्पर से जैसे लगातार पानी टपकता है, उसी तरह भुवन रुवाजा की आँखों से निरंतर पानी बहता है। साथ ही वह ध्यान मग्न जलसागर से कहता है-'मेरे गाँव और हूक[10] को तुम कहाँ ले गए, मुझे मेरे गायरिंग[11] और चखा[12] लौटा दो।'

विवेच्य उपन्यास में भुवन रुवाजा के माध्यम से जहाँ विस्थापन के बाद उत्पन्न हुए बरक जनजाति की असीम वेदना एवं अस्तित्व-संघर्ष की कथा कही गई, वहीं लेखक अतीत के कुछ सुंदर दृश्य को भी प्रस्तुत करते हैं। भुवन रुवाजा के गाँव का वर्णन लेखक ने कुछ इस तरह से किया- 'चारों तरफ पानी से घिरे हुए छोटे-छोटे पहाड़ी टीलों के बीच बसे हुए भुवन रुवाजा के गाँव में आसमान कुछ गहरे नीला रंग में डूबा रहता था। चाँदनी की ठंडक रात की शोभा बढ़ाती थी। गाँव में प्रत्येक दिन सामाजिक अनुष्ठान एवं उत्सव होते थे। लोकानंद से भरपूर था लोगों का जीवन। युवक-युवतियों के हाथों से दाङदू[14] और चङग्रेङ[15] कभी अलग नहीं होते थे। युवतियों की नखरें और चेहरों पर थिरकती मुस्कान उनके मन के उल्लास को अभिव्यक्त करते थे। प्रेमी द्वारा बुइसू[16] में दिए गए 'रिसा'[17] अर्थात प्रेम-भेंट उनके गोरे रंग एवं शरीर की

सुंदरता को और बढ़ाती थी।'[18]

इसी तरह बरक जनजाति की जीवन-पद्धति का भी विस्तार से वर्णन करते हुए उपन्यासकार कहता है कि- ''राइमा-सरमा नदी के किनारों के टीलों पर चारों तरफ हूक (झूमखेत) और परित्यक्त झूम खेत हैं। जनजाति पुरुष एवं महिलाएँ उसे लगातार अपने श्रम से सींचते हैं, किंतु उनके चेहरों पर कोई थकान नहीं, निराशा नहीं बल्कि वे तो जीवन का पूरा आनंद उठाते हुए उमंग एवं उत्साह से काम करते हैं। वे अपने आनंद एवं खुशी की अभिव्यक्ति कभी चडग्रेङ;[19] दाडद्रू,[20] सुमूई[21] की तान छेड़कर तो कभी गॉरिया एवं हजाइगिरि नृत्य के माध्यम से करते हैं।''[22]

उपन्यास में बिदु बाबू जैसे नेताओं के चरित्र पर भी व्यंग्य किया गया है। जो केवल वोट बैंक बढ़ाने के लिए बार-बार भोली-भाली जनता को ठगते हैं। उनसे बड़े-बड़े वायदे करते हैं, सपने दिखाते हैं, लेकिन अपना उल्लू सीधा होते ही तुरंत गाँव वालों को भूल जाते हैं। उपन्यास में जब आम जनता कई समस्याओं से जूझ रही थी, तब बिदू बाबू जैसे नेता कहीं भी नहीं थे। इनमें केवल बाहर के ही लोग नहीं थे, कुछ स्थानीय लोग भी शामिल थे। एक तरफ इस तरह की विषम स्थितियाँ थीं तो दूसरी तरफ बरक समुदाय के अधिकाँश पढ़े-लिखे यानी शिक्षित वर्ग, जिसने दुनिया देखी हुई है, जो समझदार कहलाते हैं वे इन समस्याओं एवं विषमताओं को आँख खोलकर देखना नहीं चाहते थे। उनके आचार-विचार भी समाज को दिशाहीन बना रहे थे।

उपन्यास में बिमल और जुगेस जैसे चरित्र भी हैं, जिनमें जातीय एवं सांस्कृतिक चेतना अभी शेष हैं। वे जनजाति समुदाय को जगाना चाहते हैं, उनमें शैक्षणिक चेतना का संचार करना चाहते हैं। इस बात को वे अपने अन्य शिक्षक दोस्तों के सामने भी रखते हैं, लेकिन कोई भी उनका साथ नहीं देता। किंतु बिमल चुपचाप बैठने वालों में से नहीं था। उसे अहसास है कि बरक जनजाति अपनी भाषा-संस्कृति, अपने जीवन मूल्यों के प्रति अभी सचेत हुए ही नहीं कि एक नई समस्या उनके जीवन में काल बनकर आ गई। ऐसे में इन्हें राह न दिखाई जाए, इनकी रक्षा न की जाए तो वह दिन दूर नहीं तमाम गाँवों की तरह उनकी सभ्य-संस्कृति भी इसी पानी में डूबकर हमेशा-हमेशा के लिए मौन हो जाएगी। इसलिए वह आस-पास के गाँवों के चकद्री[23] को बुलाकर बातचीत करता है। उनकी समस्याओं को सुनता है और उन्हें जमीन जायदाद के कागजात बनवाने के लिए प्रेरित करता है।

एक दिन गाँव वालों की बैठक में वह यही समझा रहा था कि जिसके पास जमीन-जायदाद के कागजात नहीं हैं, वे जल्दी बनवा लें अन्यथा उन्हें सरकार से जमीन की क्षतिपूर्ति नहीं मिलेगी। इसी बीच एक आदमी खड़ा होकर प्रश्न पूछता है- ''हमारे पास जमीन-जायदाद संबंधित कागजात नहीं हैं, इसलिए हमें क्षतिपूर्ति भी नहीं मिलेगी, हमारा भविष्य अंधकार में है, यह हमें दिख रहा है लेकिन ये जमीन हमारी है, हम पीढ़ी दर पीढ़ी यही रहते आए हैं, केवल कागज के टुकड़े हमारे पास नहीं हैं, इसलिए भेड़-बकरियों की तरह हमें खदेड़ा जा रहा है...मानते हैं कि हम पढ़े-लिखे नहीं हैं, इसलिए हमारे पास खुद की जमीन के भी कागजात नहीं हैं, लेकिन सरकार को तो सारी जानकारी है? केवल हमारा ही दोष नहीं है, सरकार का भी उतना ही दोष है।''[24]

सबकी बात सुनने के बाद नारायण मंडल भी अपनी बात सबके सामने रखता है- ''मैं भी कॉकबरक में ही बोलूँगा, अभी-अभी हमने जो योजना बनाई कि आने वाले सप्ताह में बिदू बाबू से मिलकर बात करेंगे, मैं उससे सहमत हूँ। यह जातीय समस्या न होकर हम सबकी समस्या है। मातृभूमि से अलग होने का दर्द क्या है, वह हम अच्छी तरह जानते हैं, क्योंकि हम ऐसे लोग हैं, जिन्हें अपनी ही जन्मभूमि से खदेड़ा गया। उस दुख को अभी हम भूल भी नहीं पाए कि दुबारा वही समस्या काले बादल बनकर जीवन में आ गई। यद्यपि हमारे पास जमीन के कागजात हैं, किंतु दुख तो दुख ही होता है, हम तुम्हारे साथ हैं।''[25] बांग्ला भाषी समुदाय के लोग भी जनजातियों की इन समस्याओं, दुख एवं पीड़ा में शामिल हैं। यह वह समय था, जहाँ सामान्य मनुष्य अपने सारे शिकवे-गिले भुलाकर एक हो जाते हैं और सुख-दुख में एक-दूसरे का साथ देते हैं। बिमल के सारे जातीय एवं समाज उत्थान कार्यों में

जुगेस साथ देता है। उसके लिए बिमल एक आदर्श शिक्षक एवं नेता है। बरक समाज को ऐसे ही मार्गदर्शक की आवश्यता है, इसलिए वह भी उसके नक्शे कदमों पर चल पड़ता है। वह जब-जब विश्व के अन्य भाषा-भाषी समुदाय के इतिहास को पढ़ता है या समाज में क्रांति लाने वाले चिंतक कार्ल मार्क्स, हूचि मिन (Huchi Min) एवं माउत्सेतुंग आदि के विचारों को पढ़ता है तो वह भीतर से आहत होता है।

जनजातियों के निरंतर पिछड़ने के कारणों को भी उपन्यास में परत-दर-परत उघाड़ते हुए उपन्यासकार ने कई 'राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक संबंधी महत्वपूर्ण सवाल खड़े किए हैं। स्वतंत्रता के बाद देश में अनेक परिवर्तन हुए, बहुसंख्यक जनजाति अल्पसंख्यक हो गई, भूमि पुत्र अब शरणार्थियों-सा जीवन जी रहा है। उनकी आर्थिक, सामाजिक, शिक्षा एवं संस्कृति के विकास के लिए कोई भी स्वतंत्र पथ नहीं है, तथापि जाति-उपजातियों के विकास के लिए संविधान में अनेक लिखित नियम हैं।

अंतत: यह कहा जा सकता है कि विवेच्य उपन्यास आधुनिक समाज के विकास संबंधी मॉडल को स्वीकार नहीं करता है। यह विकास और प्रगति किसके लिए हैं और किस कीमत पर किया जा रहा है। विकास के नाम पर क्यों जनजातियों को उनके भूगोल और इतिहास से वंचित किया जाता है आदि अनेक सवालों से यह उपन्यास बार-बार टकराता है। चूँकि लेखक मूलत: कवि है, इसलिए उपन्यास की भाषा काव्य-भाषा के अत्यंत करीब है, किंतु इससे उपन्यास के भाव एवं विचार को समझने में कोई बाधा नहीं आती है। ❑

संदर्भ :

1. नौका
2. सरमा नदी को अन्य स्थानीय भाषा में साइमा नदी भी कहा जाता है।
3. बरक जनजाति के अंतर्गत त्रिपुरा की आठ मुख्य जनजातियाँ आती हैं, यथा, त्रिपुरी/देबबर्मा, रियांग, जमातिया, नोवातिया, मूरासिंह, रुपिनी, कलाई एवं उचई।
4. पागल भुवन
5. पारंपरिक पोशाक
6. फूल का नाम
7. नंदकुमार देबबर्मा : रुंङ; पेज 10
8. वही, पेज 10
9. वही, पेज 11
10. झूमखेत
11. मचान
12. चर्खा
13. देबबर्मा, नंदकुमार : रुंङ; पेज 11
14. लोक वाद्य
15. लोक वाद्य
16. त्योहार का नाम
17. पारंपरिक पोशाक
18. वही, पेज 9
19. लोक वाद्य
20. लोक वाद्य
21. बाँसूरी
22. भूमिका से
23. मुखिया
24. देबबर्मा, नंदकुमार : रुंङ; पेज 47
25. वही, पेज 48

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

विज्ञान कथा के विकास में तमिल लेखक जयमोहन का योगदान

डॉ. एम. शाहुल हमीद

प्राध्यापक, हिंदी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय
अलीगढ़, उत्तर प्रदेश-202002
07895226554
majeedshahulhameed@gmail.com

विज्ञान कथा में समय यात्रा, भविष्य में अंतरिक्ष यात्रा होने की परिकल्पना, विज्ञान और तकनीकी में प्रगति के परिणामों से निपटना जैसी कथा-वस्तु का विस्तार है। शुरुआती विज्ञान कथा में साइंस-फिक्शन के कुछ तत्व पाए जाते हैं। इनमें विज्ञान अथवा तकनीकी की प्रगति की परिकल्पना पाई जाती है। ओविड़ कृत 'मेटमॉरफसिस' (8वीं ई.), अंग्रेजी महाकाव्य 'बियोल्फ' (8-11वीं ई.), जर्मन महाकाव्य 'निबेलंगेनलैड' (1230 ई.) आदि इसके उदाहरण हैं। 4 से 5वीं सदी ईसा पूर्व के रामायण में 'विमान' का उल्लेख है, जो अंतरिक्ष में या पानी में बहुत दूर यात्रा करता है। ऋग्वेद के संस्कृत श्लोकों में 'यांत्रिक पक्षियों' का उल्लेख है । 9 से 8वीं सदी ईसा पूर्व में लिखित महाभारत में ककुद्म महाराज ब्रह्मा जी से मिलने स्वर्ग की यात्रा करते हैं। उनके सफर में कई युग बीत जाने का पता चला तो हैरान हो जाते हैं। इससे समय यात्रा (टाइम ट्रावल) की अवधारणा प्रतीत होती है।

ईस्वीं की दूसरी सदी में सिरियन-ग्रीक भाषा में समोसटा के लूसियन लिखित हास्य-व्यंग्यात्मक कृति 'ट्रू हिस्ट्री' में अंतरिक्ष यात्रा, एलियन से आमना-सामना, अंतर्ग्रहीय युद्ध, ग्रहीय साम्राज्यवाद, वृहताकार मानव प्राद्यौगिकी से उत्पन्न जीव, प्रत्यावर्ती भौतिक नीतियों पर कार्यरत लोकों, अन्वेषण और रोमांच में नायक की रुचि आदि साइंस फिक्शन तत्व पाए जाते हैं।

खाड़ी देशों में प्रचलित ईस्वीं की 8-10वीं सदी की कृति 'अरेबियन नाइट्स' में कुछ साइंस फिक्शन तत्व झलकते हैं। इसमें जिन्न, जलपरियों, बोलने वाले साँप, बोलनेवाले पेड़ और अन्य जीवों का वर्णन है। ईस्वीं की 17वीं और 18वीं सदी को 'एज ऑफ रीजन' (कारण युग) कहा जाता है। जोहांस केपलर का 'सोमनियम', फ्रांसिस गॉडविन का 'द मैन इन द मून', सिरनो डे बेरजरक का 'कॉमिकल हिस्ट्री ऑफ द स्टेट्स एंड एम्पैयर्स ऑफ द मून' और वोलटैर का 'माइक्रोमेगस' आदि उल्लेखनीय हैं। उन्नीसवीं सदी में विज्ञान कथा को बढ़ावा दिया गया। मेरी शेल्ली का 'फ्रांकनस्टाइन', अलैक्जेंडर वेल्टमैन का 'प्रेडकी कलिमेरोसा : अलैक्जेंडर फिलिप्पोविच माकेडोनस्की', विक्टर ह्यूगो का 'द लेजेंड ऑफ द सेंचुरीस' आदि

विख्यात थे। विज्ञान कथा को पूर्ण रूप देने का श्रेय जूल्स वर्ने और हेच.जी.वेल्स को जाता है। ह्यूगो गर्नस्बैक द्वारा प्रकाशित मैगजीन 'साइंस फिक्शन' से साइंस फिक्शन लेखकों को प्रोत्साहन मिला। आज श्रेष्ठ विज्ञान विषयक रचनाओं को ह्यूगो अवार्ड से पुरस्कृत किया जाता है।

विज्ञान कथा, हिंदी साहित्य में पूर्ण रूप से सफल नहीं है। जूल्स वर्ने के 'ए जर्नी टू द सेंटर ऑफ अर्थ' से प्रेरित अंबिकादत्त व्यास का उपन्यास 'आश्चर्य वृत्तांत' विज्ञान कथा का सर्वप्रथम प्रयास माना जाता है । जूल्स वर्ने के 'फ्रॉम द अर्थ टू द मून' से प्रेरित केशव प्रसाद सिंह की कथा 'चंद्रलोक की यात्रा' भी प्रेरित है। 1908 में 'सरस्वती' में प्रकाशित कहानी सत्यदेव परिव्राजक की 'आश्चर्यजनक घंटी' हिंदी विज्ञान कथा का मौलिक प्रयास माना जाता है । 'चंद्रकांता' के रचनाकार देवकीनंदन खत्री के बेटे दुर्गा प्रसाद खत्री ने 'सुवर्ण रेखा', 'स्वर्गपुरी', 'सागर सम्राट', 'साकेत', 'प्रतिशोध', 'लाल पंजा', 'रक्त मण्डल', 'सफेद शैतान', आदि विज्ञान कथाएँ लिखी हैं। राहुल सांकृत्यायन की 'बाइसवीं सदी', यमुना दत्त वैष्णव की 'अशोक की रचनाएँ', 'अस्थिपंजर', 'शैलगाथा', 'श्रेष्ठ वैज्ञानिक कहानियाँ' और 'पुरस्कृत विज्ञान कथा साहित्य', डॉ. संपूर्णानंद की 'पृथ्वी के सप्तर्षि मंडल', नवल बिहारी मिश्र के 'अधूरा आविष्कार', 'सत्य और मिथ्या' आदि विज्ञान रचनाओं ने हिंदी साहित्य को समृद्ध बनाया है।

डॉ. ओमप्रकाश शर्मा, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, रमेश वर्मा, रमेश दत्त शर्मा, कैलाश शाह, माया प्रसाद त्रिपाठी, राजेश्वर गंगवार, प्रेमानंद चंदोना जैसे रचनाकारों ने इस परंपरा को आगे बढ़ाया। वर्तमान में शुकदेव प्रसाद, डॉ. अरविंद मिश्र, देवेन्द्र मेवाड़ी, राजीव रंजन उपाध्याय, हरीश गोयल, जीशान हैदर जैदी, मनीष मोहन गोरे, विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी जैसे रचनाकारों के नाम उल्लेखनीय हैं।

तमिल में सुब्रमण्य भारती की रचना 'काक्कै पारलिमेन्ट' में विज्ञान कथा के अंश हैं। विज्ञान कथा लेखन को तमिल लेखक सुजाता ने अलग विधा का रूप दिया है। तमिल के समसामयिक सुप्रसिद्ध लेखक जयमोहन विज्ञान कहानियों को लिखने के कारण लोकप्रिय हैं। पाठकगण को इन कहानियों के माध्यम से तमिल वातावरण और तमिल परंपराओं से जुड़ा महसूस कराना ही जयमोहन का लक्ष्य है। 'विसुम्बु' नामक कहानी संकलन में विशेषत: अपनी विज्ञान कहानियों को संकलित किया है। सभी कहानियाँ 'तिण्णै' नामक वेब पत्रिका में प्रकाशित हैं। 'ऐंदावदु मरुंदु' (पाँचवीं दवा) कहानी तलवाय राजा द्वारा एड्स की दवाई ढूंढ़ निकालने की प्रक्रिया पर आधारित है। कहानी में प्रताप और उसका दोस्त दोनों अच्चनकुलम गाँव के तलवाय राजा से मिलते हैं। राजा को उनके दादा के बड़े भाई से लिखित पत्र (ताम्र पत्र) में पुराने वैद्य पद्धति की जानकारी मिलती है। ''अलोपति, कीटाणु, कीड़े जैसे रोग के कारण को शरीर के बाहर ढूँढ़ता है। सिद्ध वैद्य परंपरा के अनुसार रोग बदन में ही निहित है। शरीर का आंतरिक संतुलन खोना ही रोग है। अर्थात रोग के प्रतिकूल शरीर को तैयार करना ही सिद्ध चिकित्सा है, कीटाणु को मारना नहीं।''[1]

राजा सिद्ध चिकित्सा पद्धति के आधार पर एड्स की दवाई खोज लेता है। ''सिद्ध चिकित्सा में पेड़-पौधों से निसृत दवाइयों को अजीव, पशु-पक्षियों से निसृत दवाइयों को जीव तथा अन्य नमक, धातुओं से बनी दवाइयों को रसायन मानते हैं।''[2] पहले अजीव दवाई, फिर जीव दवाई तत्पश्चात रसायन दवाई से उपचार खोज लेता है - ''पेनसिलिन जैसे औषधि अजीव, वैक्सीन जीव और अन्य रसायन दवाई है। एड्स वायरस इन तीन दवाइयों को पार कर चुका है। इसलिए इसमें चौथे प्रकार को अपनाना है। चौथे प्रकार की दवाई है लेजर जैसी किरणें। सिद्ध चिकित्सा में 'रसकट्टु' पद्धति से पारा को दृढ़ वस्तु बनाते हैं। अर्थात उसके मूल तत्व को बदलते हैं, जिससे हल्के किरणपात होते हैं। पुराने जीव, अजीव और रसायन दवाई में किरणपात होने से नई दवा मिलती है। रसकट्टु के नीचे रखे गए जीव रसायन दवा से किरणपात होता है, जो कोशिकाओं में

विकिरण करता है। विकिरण को हमारे शरीर की गर्मी से ऊर्जा प्राप्त होता है। वह विकिरण हमारे शरीर को हानि नहीं पहुँचाता, बैक्टीरिया को नुकसान नहीं करता, सिर्फ वायरस को नष्ट करता है।''[3]

राजा अपनी दवा से एड्स से पीड़ित ओमनकुट्टी और थामस का उपचार करता है। वे तंदुरुस्त नजर आते हैं। पर राजा उतना खुश नहीं था। उसका मानना है कि वायरस विकसित-परिणमित होता रहता है। उसकी दवाई से पार होकर परिणमित हो गया तो उसे काबू में लाने के लिए पाँचवीं दवाई की जरूरत पड़ेगी। इसलिए हमें उसके साथ जीना सीखना जरूरी है।

'इंगे इंगेये' (यहाँ यहीं) कहानी, इतर ग्रहों से पृथ्वी को आने-वाले उड़नखटोले पर यकीन नहीं करने वाले तर्क विवेकशील अंतरिक्ष शोधकर्ता के निजी अनुभव की कथा है। डॉ. पद्मनाभन को नारायणन पहाड़ की ऊँची चोटी पर ले जाते हैं, जहाँ 8 फुट चौड़ा 3 फुट गहरी एक धारा और बीस फुट की दूरी पर एक और धारा देखते हैं। पद्मनाभन इन धाराओं को अंतरिक्ष वाहन के पहिये जैसे नहीं मानते हैं।-''अगर अंतरिक्ष वाहन का सख्त चट्टान पर निशान है तो उस वाहन का वजन बहुत भारी होगा। जैसे चिकनी मिट्टी पर लोहे का निशान हो। ऐसे भारी धातु न धरती पर हैं और न ही अंतरिक्ष से, न अन्य ग्रहों से, न धूमकेतु से प्राप्त नमूनों में उपलब्ध हैं।''[4]

वहीं रहने वाले जनजातीय आदमी तोरप्पन के साथ पहाड़ के ऊपर जाते हैं। तोरप्पन पहाड़ के ऊपर 'कल्लन सामी' की पूजा करता है, जो पहाड़ के ऊपर एक चपाट पत्थर के ऊपर रखा हुआ एक और पत्थर है। दोपहर के सूरज की किरण पड़ने पर कल्लन सामी पन्ना के जैसे हरा और उसके कोनों में गहरा नीला रंग चमकते हैं।

'विसुम्बु' का अर्थ है, आकाश अथवा स्वर्ग। इस कहानी के प्रमुख पात्र नंजुण्डराव पक्षियों के प्रवास पर शोध करता है। उसकी पत्नी नागरत्तिनम मछलियों पर शोध करती है। नंजुण्डराव, एक अहम बात खोज निकालते हैं कि बहुत दूर उड़कर आने वाले पक्षी रास्ता तय करने के लिए उनके किसी अवयव के सहारे भूमि के चुंबकीय क्षेत्र को महसूस करते हैं। कुछ पक्षियों के कान के पीछे दिमाग का एक भाग है, जिससे लघु लहर (शार्ट वेव) और परा बैंगनी किरणों (ultraviolet rays) को ग्रहण करने की शक्ति होती है। भूमि के हर भाग पर चुंबकीय क्षेत्र उपस्थित है। उनके कंपन जगह-जगह बदलते हैं। इस कंपन के आधार पर पक्षियाँ हवा, धूल, धुआँ या बादलों से अबाधित नक्शा, अपना खाका (layout) बनाते हैं।

डॉ. नंजुण्डराव बीस सालों से इन्हीं किरणों का अध्ययन करते हैं। डॉ. नंजुण्डराव के पिता करुणागर राव कहते हैं- ''पक्षियाँ विमान की तरह यंत्र नहीं। अब जो खोज निकाले हो वह पक्षियों का एक स्वभाव है। तुम्हारी यह खोज 18वीं सदी में फ्रैंसिस बेकन का सिद्धांत है। उसके अनुसार हरेक अवधारणा को तोड़ कर, अलगाव करके अन्वेषण करना है। इसी को तुम विज्ञान कहते हो। इससे ब्रह्मांड के अंश को ही जान सकते हो। ब्रह्मांड एक संपूर्णता है। उसे संपूर्णता के साथ जानने की कोशिश करो। आकाश में करोड़ों पंछियाँ उड़ते हैं। एक पंछी और दूसरी पंछी के बीच क्या रिश्ता है? उस पंछी के समूह से दूसरी पंछियों से क्या रिश्ता? भूमि के अन्य जीव-जंतुओं का उन पंछियों से क्या रिश्ता? यह तुमको कैसे समझ में आयेगा? वहाँ साइबेरिया पंछियों के रवाना होते समय यहाँ उनके खाद्य कीड़े-मछलियाँ भी प्रजनन शुरू करते हैं। ब्रह्मांड एक संपूर्णता है। धरती उस संपूर्णता का अंश है। इसे मत भूलना।''[5]

विसुम्बु कथा संकलन की कहानी 'पूर्णम्' दिमाग की शक्ति पर एक शोध है। डॉ. विनोद भट्टाचार्य एक स्नायु-विशेषज्ञ, दिमाग का शोध करते हैं। ''दिमाग एक अद्भुत यंत्र है। इसे हम पूरी तरह उपयोग में नहीं लाते। तीस सालों से मैं दिमाग की शक्तिवर्द्धक दवाओं पर शोध करता हूँ। अभी संज्ञानवर्द्धक दवाइयाँ (cognitive enhancers) हैडरजिन, पिरासेटम, अनिरासेटम, मिनाप्रिन (Hydengine, Priacetam, Aniracetam, Minaprine) बाजार में उपलब्ध हैं। ये स्मरण शक्ति बढ़ाने और अधिक समय ध्यान लगाने के लिए उपयोग की जाती हैं। शरीर या मस्तिष्क को आपातकाल में अचानक तेजी से काम करना पड़ता है। तब उस शक्ति को उत्पन्न करने के लिए हमारे शरीर में कुछ जैविक रसायन स्रावित होते हैं। तब शरीर के आवश्यक अवयव के अलावा अन्य

अवयवों का कार्यचालन तत्काल रोक दिया जाता है। आवश्यक अवयवों को अधिक रक्त स्राव और विद्युत प्रवाह दिया जाता है।''[6] 1980 में रिचर्ड वुर्टमैन ने खोज निकाला कि टैरोसिन (tyrosine) को किसी उकसाने वाली दवा के साथ प्रयोग करने पर दिमाग में विद्युत प्रवाह बढ़ाने वाले डोपामिन, नोरपैनफ्रैन, एपिनफ्रैन (Dopamine, Norepinephrine, Epinephrine) जैसे रसायन अधिक मात्रा में स्रावित होते हैं।

डॉक्टर कई गुणा समृद्ध बनाए टैरोसिन के साथ चीनी औषधि 'मा ह्वांग' (Ma huang) जोड़ते हैं। इसके साथ वे एक ऐसोटोप से विद्युत प्रवाह बढ़ाए रखते हैं। इस उपचार से दिमाग में विद्युत प्रवाह कई गुणा तीव्र करता है। इंद्रियों की ग्रहणशीलता 20 गुणा बढ़ती है। दिमाग का हर कोना उपयोग किया जाता है। उस दिमाग को नींद की जरूरत नहीं होती, याददाश्त नहीं खोती है।

डॉक्टर इस दवा को अपने गोरखा जंग बहादुर पर प्रयोग करते हैं। उसे एक जंगल में रहने का इंतजाम करते हैं। डॉक्टर अपनी हार मानते हैं कि एक हद के बाद वे उसकी जाँच नहीं कर पाते। उसकी भाषा कौशल बढ़ने पर वह पक्षियों-कीड़ों की आवाजें अलग-अलग पहचानने लगता है। जंग बहादुर वहाँ से भाग जाता है।

अगले दिन डॉक्टर और पत्रकार मौन संन्यासी से मिलते हैं। ''उसके ऊपर गिलहरियाँ चढ़कर खेलती हैं। वह भी चट्टान या पेड़ों की तरह उस वातावरण का अंश था। मन रूपी लहरों के बिना मनुष्य।''[7] ''प्रकृति एक प्रचुर समता है। सभी विसंगति और उल्लंघन को वह समन्वय करती रहती है। यह इंसान एक अपवाद है।''[8]

डॉक्टर जंग बहादुर के छोटा भाई राम सिंह का भी परीक्षण करते हैं। जंग बहादुर के परीक्षण के विपरीत उसके भाई के मस्तिष्क में एक बिंदु को ही तीव्र करते हैं, जिससे राम सिंह के मस्तिष्क में अधिकार, स्वयं पहल करना, फलत: क्रूरता आदि भाव उत्पन्न होते हैं, उसमें प्रधानमंत्री जैसा भाव बना देता है।

'पित्तम', रस-विधा से जुड़ी कहानी है- ''रस-विधा को सिद्धों ने स्वर्ण-कला कहा। सोना अलग धातु नहीं है। उसमें दो मूल हैं-एक अग्नि, दूसरा चंद्र। भूमि पर अग्नि अंश वाले चीजें बहुत हैं। चंद्र अंश वाले धातु, रसायन भी भूमि पर कई हैं। कांस्य अग्नि है। चंद्र पारा है। दोनों को सही मिलाए तो सोना होगा। उन दोनों को के लिए मिलाने बर्तन चाहिए।''[9]

पण्डारम अपनी लड़की के लिए कपड़े लेते समय चेट्टियार से रस-विधा के बारे में पूछताछ करता है। एक दिन चेट्टियार की पत्नी उसे बुलाकर मृत चेट्टियार की सारी प्रयोग वाली चीजें उनके शरीर के साथ दाह-संस्कार में जलाने देती है। तीन दिन बाद पण्डारम जब अस्थियाँ बटोरता है, तब पण्डारम देखता है कि टूटे घड़े में शुद्ध सोना चमक रहा है। तब से पण्डारम रस-विधा में शोध करने लगता है। गाँव के धनी नल्लकुत्तालिंगम उस गाँव के मंदिर में काम करने वाले पण्डारम को कई बार पैसे देते हैं, ताकि पण्डारम अपने रस-विधा प्रयोग से लोहे को सोना बना पाए। परिणाम न निकलने के कारण वे पण्डारम को पैसे देने से इनकार करते हैं।

नल्लकुत्तालिंगम का बेटा कोलप्पन, पण्डारम से तर्क करता है कि सोना, कांस्य लोहा सभी एलीमेंट हैं। अर्थात एलीमेंट को बदल नहीं सकते। पण्डारम भी उसे जवाब देते हैं कि एलीमेंट अणु से बने हैं। कई सूक्ष्म चीजें मिलकर अणु बनते हैं। उसे विज्ञान में 'पार्टिकल' कहते हैं। कांस्य और स्वर्ण के पार्टिकल की गिनती में फर्क है। गिनती को बदल सकते हैं, तो कांस्य को सोना बना सकते हैं-... ''पार्टिकल एलीमेंट को छोड़कर बाहर भी जाता है, उसे रेडियेशन कहते हैं। तोरियम कैसे रेडियम बनता है, रेडियम कैसे पोलेनियम बनता है, वैसे ही।''[10] ''अभी फिरंगी रेडियेशन को खोज निकाले हैं। पर हमारे सिद्धों को उसका उपयोग मालूम था। चंद्रकांत पत्थर सुने होंगे। वह क्या है? स्वाभाविक रेडियेशन निहित पत्थर। तोरियम मिला हुआ पत्थर। आज हम उससे तोरियम अलग करके बेचते हैं। कई दवाइयाँ बनाने में सिद्धों ने उसका उपयोग किया। रसविधा में शक्तिपूर्ण चंद्रकांत पत्थर और पारा की आवश्यकता को सभी सिद्धों ने माना। चंद्रकांत पत्थर पारा पर असर कर उसे काला बना देता है। वह रेडियेशन से पार्टिकल की गिनती बढ़ाता है।''[11]

पण्डारम फाँसी लगाकर खुदकुशी कर लेता है। कोलप्पन

शक से पण्डारम की चप्पल के ऊपरी भाग को नोचता है। चप्पल के अंदर छिपे रसायन से लगे लोहे की कील का ऊपर का भाग, सोना बनकर चमकता है।

राबर्ट लूई स्टीवेनसन कृत 'डॉक्टर जेकिल एंड मिस्टर हाइड' में चित्रित ड्यूवल परसैनिलिटी डिसॉर्डर जयमोहन की कहानी 'उट्रु नोक्कुम परवै' (ध्यान से देखने वाले पंछी) में भी प्रतिपादित है। तिरुविदांगूर में स्थित अरुमनल्लूर राजा के पुलिस कर्मी मादेवन पिल्लै, किसी भी क्रूरता से नहीं डरते हैं। इसलिए उनका नाम कालन पुलिस रखा जाता है। मादेवन का मन उनकी अहिंसक क्रियाओं को सही ठहराकर सांत्वना देता है– ''यह मनोविकार की बहुत करीबी स्थिति है। कहने के लिए यह एक मानसिक दरार है। योग न जानने वाला डॉक्टर इसे भ्रांतचित्त मनोविकार (Paranoid Schizophrenia) मान लेंगे।''[12] ''कालन सामी ने उस स्थिति को पार करने का रास्ता खोज निकाला। काफी मनोविकार रोगी इस नतीजे पर पहुँचते हैं। मनोविकार को दोहरी शख्सियत में तब्दील करना ...''[13]

कालन सामी ध्यान में खुद को देखते हैं। वे एक खास मानवीय स्वभाव को पहचान कर – मन पृथक होकर हमेशा काम करता है। मादेवन एक हत्या के मामले में कुट्टनसामी के आश्रम जाते हैं। मादेवन को देखते ही कुट्टनसामी उपनिषद के वाक्य बोलते हैं– ''एक तोता फल खाता है, दूसरा देखता है।''[14] वे कुट्टनसामी को गुरु मानकर उनसे योग सीखते हैं।

कुट्टनसामी की झोंपड़ी में कालन सामी रहने लगते हैं। कुट्टनसामी की मृत्यु के बाद इनके चेले जमने लगते हैं। वे खुद को द्वात्मर कहते हैं। गाँव के उचित युवाओं से मिलकर अपने धर्म का प्रचार करते हैं। शक्तिशाली बन चुके द्वात्मर आस-पास के गाँवों को जब लूटने लगते हैं, तब द्वात्मर की अराजकता खत्म करने को ब्रिटिश रेसिडेंट मेजर एस.गल्लन तीन सौ सिपाहियों को भेजते हैं। सिपाहियों के कप्तान कैप्टन एडवर्ड वैटवुड उनको हरा देते हैं। किले के अंदर ध्यान कक्ष से एक द्वात्मर को जिंदा पकड़ते हैं । नरभागन, द्वात्मर का शरीर योद्धा के जैसा होता है। वह शांत चित्त का, कालन सामी की साधना पद्धति और पिछले चार सालों से राजयोग सीखा होता है। वह आश्रम का वर्णन करता है कि आश्रम में कालन सामी समेत 82 लोग थे। उनमें 41 लोग तपस्या करने वाले। अन्य सभी रक्षक थे। तपस्या करने वालों को शुक्लर और रक्षकों को श्यामर बुलाते थे। शुक्लरों को श्यामरों से जरूरी कामों के सिवा अधिक बात करना वर्जित था।

13 दिनों बाद अमावस की रात अचानक नरभागन की घोर चीख सुनाई देती है। नरभागन दरवाजे से सिर खपाकर तोड़ने लगता है। वह जानवर जैसी हरकतें करता है। अगले दिन कैप्टन के पूछताछ करने पर वह अपना नाम वागडन बताता है। वह आश्रम के श्यामरों में से एक था। बीस साल पहले लकड़हारा था। कालन सामी का चेला बना। वह आश्रम का रक्षक था, युद्ध प्रशिक्षण ले रहा था। दो दिन बाद उसके बचकर भागने की कोशिश करने पर कैप्टन उसे गोली मार देता है। मनोवैज्ञानिक डॉक्टर पंकजाक्षन तम्बि लोगों में मनोविज्ञान संबद्ध जागरूकता लाने की एक संस्था चलाते हैं। तम्बि के पूर्वज बलगुनन तम्बि द्वात्मर बने थे और आखिरी युद्ध में मारे गए। उनको संस्कृत का ज्ञान था। वेदांत मालिका नामक ग्रंथ लिखा था। उनकी कृतियाँ संभाल कर रखी गईं, जो विरासत में डॉक्टर को मिलती हैं। डॉक्टर तीस सालों से मनोविकार (schizophrenia) पर शोध करते हैं। वे टैरोसिन (tyrosine) के स्थान पर चक्रमूली (एक प्रकार की घृत कुमारी पौधा) का प्रयोग करने की गुंजाइश खोज निकालते हैं। चक्रमूली दिमाग में डोपामिन (Dopamine) अधिक मात्रा में स्रावित करता है। चक्रमूली के सहारे द्वात्मर ने योजनाबद्ध मनोविकार किया था।

डोपामिन अधिक होने पर दिमागी क्षमता कई गुणा बढ़ती है। वह शक्ति कई दिशाओं (कार्यों) में बिखरती है। उस बिखराव का दर्द सहने के लिए रोगी अपने मन को दो हिस्सों में बाँटते हैं। दोहरी शख्सियत को अपनाते समय उसके मन में कई अंतर्द्वंद्व खत्म होते हैं, जो एक प्रकार की रिहाई है। योग साधना के मनोविकारी स्थिति को पार करने के लिए कालन सामी ने इसी युक्ति को अपनाया था। कालन सामी खुद को शुक्लर और श्यामर में बाँटा। शुक्ल पक्ष में शुक्लर अर्थात सारी सद्भावनाओं का रूप

और श्याम पक्ष में श्यामर अर्थात सारी दुर्भावनाओं का रूप। श्यामर को काबू में लाने के लिए ध्यान-योग का प्रयोग किया। इसी पद्धति को कालन सामी ने द्वात्म पद्धति बनाकर एक संप्रदाय के रूप में फैलाया और धर्म बनाने की कोशिश की थी।

डॉक्टर समझाते हैं- ''धर्म के चंगुल से मनुष्य की रिहाई न हुई तो उसे बचा नहीं सकते। धर्म मनुष्य के अंदर स्थित विष है।....धर्म के द्वारा मन की गहराइयों में निर्मित छवियों और मानसिक आस्थाओं से रिहाई मिलना है।''[15]

तम्बि अभ्यासों के दौरान चक्रमूली का उपयोग करते थे। एक साल बाद उस संस्था में पुलिस हथियारों के साथ घुसती है।

'नम्बिक्कैयालन' (यकीन करने वाला/आस्थिक) कहानी में शक्तिशाली शस्त्रों से धरती पर जीवित सभी जीवों के खत्म होने का मंजर प्रस्तुत है। भूमि के अंदर का गुफा कहानी का घटनास्थल है। भूमिगत गुफाओं में आवश्यक खाना और पानी के साथ आस्थिकों को पनाह दिया जाता है। आस्थिकों और बाहरी दुनिया से संपर्क का एकमात्र जरिया उनका रेडियो होता है। उसमें मसाही भाषा में आने वाली खबरों को ही वहाँ मौजूद बुजुर्ग सुनने को तैयार होते हैं। दूसरी भाषाओं में सुनाई गईं खबरें उन्हें झूठी लगतीं।

खुदा-अला-समीश नामक संगठन आस्थिकों की तरफ से, नास्थिकों और पूँजीवादियों के खिलाफ लड़ता है। आस्थिक देशों को खास निशाना बनाकर शक्तिशाली बमों का विस्फोट किया जाता है। रेडियो में कहा जाता है कि ''हमारा कर्तव्य क्या है, बड़ा रहम करने वाला हमारा ईश्वर हमसे चाहते क्या हैं- इसका पता नहीं। इस युद्ध का एक ही नतीजा हो सकता है। हमारे ईश्वर का राज इस दुनिया में स्थापित करना। धरती को आखत-सुम-आव बनाना।''[16]

रेडियो में बाहर किरणपात (Radiation) फैलने की चेतावनी दी जाती है । 15 दिन बाहर न निकलने का सुझाव भी दिया जाता है। रेडियो में रिकॉर्ड की गई चेतावनी बार-बार चलाई जाती है। रेडियो के चैनल बदलने पर दो डॉक्टरों की चर्चा सुनाई देती है, ''अफ्रीका और एशिया की झोपड़ियों में रहने वाले पूरी तरह से मारे गए। अमेरिका में किरणपात का असर नहीं पड़ा। कीड़ों की तरह, करोड़ों में।... दुनिया की जनसंख्या 70 फीसदी नष्ट हो गई।''[17]

इस चर्चा को सुनने के बाद वह युवा और कई दिन गुफा में गुजारता है। फिर रेडियो को चलाने पर गाने बजते हैं। फिर वह युवा उत्सुक होकर दरवाजा खोलते हुए बाहर निकलता है। बाहर अँधेरा और सन्नाटा एक-सा छाया हुआ होता है। पूर्वी दिशा में हल्की लालिमा नजर आने लगती है। युवा अपने तमंचे को मुँह में घुसा कर खुद को मार लेता है।

'नाक्कु' (जीभ) कहानी में मानव के विचित्र खानपान की आदतों पर विचार प्रस्तुत है। स्वाद और भाषा दोनों का जबान से और अंतर्मन से सीधा संबंध है। मनुष्य के खानपान की आदतें छूटती नहीं। स्वाद जीभ में ही रहता है, उस स्वाद को जीभ ढूँढ़ती रहती है।

कृष्णन, अबू मुवफ्फक अद्दीन अब्दुल लतीफ अल बगदादी के बारे में बताते हैं। अब्दुल लतीफ अल बगदादी 12वीं सदी के चिकित्सक, दार्शनिक, रसायनशास्त्री, यात्री थे। ''वे हीब्रू समेत आठ भाषाएँ जानते थे। जिंदगी भर यात्रा करते रहे। उनकी प्रमुख रचना मानव शरीर के बनावट का वर्णन करती है। 16वीं सदी में यूरोप में महाविद्यालयों में यही सिखाया गया। असल में यूरोपीय चिकित्सा विज्ञान यूनान से अधिक अरब परंपरा का आभारी है।''[18]

कृष्णन, लतीफ के बारे में बताते हैं- ''लतीफ 1197 ई. में मिस्र आए। वहाँ के अजहर विद्यालय में अध्यापक थे। कैरो के अनुभवों को 'अल इबादा वल इक्तिबार' नामक किताब में लिखा है।[19] उस किताब में विचित्र घटना का उल्लेख है। 1200 ई. से 1203 ई. तक तीन साल नील नदी बिल्कूल सूख गई थी। मिस्र में अकाल पड़ा। भूख से मरे लोगों की संख्या सरकारी आँकड़ों के मुताबिक डेढ़ लाख थी। लोग खाने के लिए पागलों की तरह फिरते थे। आँखों से देखी हरियाली खाए। चोरी-डकैती की। जानवरों को खाया। कीड़ों को खाया । जब खाने के लिए और कुछ बचा नहीं तो नरभक्षी बने। पहले मृतकों को चोरी-छिपे भुनकर खाया। यह आदत धीरे-धीरे फैली। शुरुआती हिचकिचाहट हटने पर बड़े तादाद में खाने लगे। लाशें

खत्म होने पर शिकार करने लगे। बच्चों और बूढ़ों का अधिकतर शिकार करते थे। कुछ ही दिनों में नरमांस के स्वाद की आदत पड़ गई। तरह-तरह के व्यंजन बनाए। जरूरत से ज्यादा मिलने पर खाने को बेचने लगे। फिर वही धंधा बना। दुकानों में उबले नरमांस बेचे गए। तले हुए बच्चों को टोकरियों में बेचने लगे। नरमांस पर नमक लगाकर जाड़ियों में बेचे गए।

फिर दूसरे देशों से खाना आने पर अकाल कम होने लगा। कई लोग इसका स्वाद और इस धंधे को छोड़ नहीं पाए। फिर धीरे-धीरे यह आदत लुप्त हुई।

कृष्णन नरमांस खाने वालों की खोज में निकलता है। कई दिनों की खोज के बावजूद उसे कुछ नहीं मिलता। नासर 40 बोतल छाश तोहफे में कृष्णन के घर भेज देता है।

कृष्णन को विदा कर लौटते हुए नासर की गाड़ी में एक स्त्री लिफ्ट माँगती है। वह वांगाय समूह की थी। उसके नाखून लंबे थे। वह कहती है कि चार साल तक नाखूनों को उनके समूह वाले बढ़ाते हैं। फिर सभी नाखूनों को काटकर छह महीने एक मिश्रण में भिगाते है। नाखून पूरी तरह से घुल कर एक स्वादिष्ट शराब बन जाती है, जिसका नाम छाश है।

आधुनिक युग में विज्ञान और तकनीकी का असर प्रत्येक मानव के जीवन में दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। इसी का प्रभाव साहित्य में भी झलकता है। विज्ञान कथाओं को पढ़ने और जानने का उत्साह पाठकों में अधिक पाया जा रहा है। इसलिए विज्ञान कथा में दिलचस्पी और लोकप्रियता सहज है। जयमोहन कृत विज्ञान कहानियाँ दिलचस्प, मनोरंजक और ज्ञानवर्धक हैं। इनकी कहानियाँ विज्ञान से संबंधित सिद्ध चिकित्सा, अंतरिक्ष वाहन, प्रवासी पक्षी, दिमाग की शक्ति, रस विधा, दोहरी मानसिकता, युद्ध से विनाश और मानव की आदतों पर केंद्रित है, जिसमें विज्ञान तत्व - विशेषकर भविष्य में विज्ञान का विकास, विज्ञान का जीवन पर प्रभाव, समय यात्रा, अंतरिक्ष, भविष्य में विज्ञान की परिकल्पना, विज्ञान और तकनीकी में प्रगति, विज्ञान के परिणाम, विज्ञान से उत्पन्न विनाश और उससे निपटना, मनोविज्ञान आदि तमिल वातावरण और तमिल परंपराओं के साथ प्रस्तुत हैं। ❑

संदर्भ :

1. जयमोहन, ऐंदावदु मरुंदु, https://www.jeyamohan.in/65/, पृ.3
2. जयमोहन, ऐंदावदु मरुंदु, https://www.jeyamohan.in/65/, पृ.4
3. जयमोहन, ऐंदावदु मरुंदु, https://www.jeyamohan.in/65/, पृ.5
4. जयमोहन, इंगे इंगेये, https://www.jeyamohan.in/64/, पृ.5
5. जयमोहन, विसुम्बु, https://www.jeyamohan.in/62/, पृ.4
6. जयमोहन, पूर्णम्, https://.jeyamohan.in/61/ ,पृ.4
7. जयमोहन, पूर्णम् https://www.jeyamohan.in/61/, पृ.7
8. जयमोहन, पूर्णम्, https://www.jeyamohan.in/61/, पृ.8
9. जयमोहन, पित्तम, https://www.jeyamohan.in/58/, पृ 4
10. जयमोहन, पित्तम https://www.jeyamohan.in/58/, पृ. 6
11. जयमोहन, पित्तम https://www.jeyamohan.in/58/, पृ. 6
12. जयमोहन ,उद्रु नोक्कुम परवै, https://www.jeyamohan.in/57/, पृ. 9
13. जयमोहन ,उद्रु नोक्कुम परवै, https://www.jeyamohan.in/57/, पृ. 9
14. जयमोहन, उद्रु नोक्कुम परवै, https://www.jeyamohan.in/57/, पृ. 8
15. जयमोहन, उद्रु नोक्कुम परवै, https://www.jeyamohan.in/57/, पृ. 12
16. जयमोहन, नम्बिक्कैयालन, https://www.jeyamohan.in/55/, पृ. 3
17. जयमोहन, नम्बिक्कैयालन, https://www.jeyamohan.in/55/, पृ. 8
18. जयमोहन, नाक्कु, https://www.jeyamohan.in/53/, पृ. 1
19. जयमोहन, नाक्कु, https://www.jeyamohan.in/53/, पृ. 2

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

समकालीन स्त्री आत्मकथाओं में अभिव्यक्त लैंगिक विभेद

डॉ. भारती

पोस्ट डॉक्टरल फेलो
भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली-110094
8447474377
bharti 9206@gmail.com

शोध-सार :

स्त्री आत्मकथाकारों ने अपने जीवन में भोगे हुए यथार्थ को आत्मकथा के माध्यम से समाज के सामने रखा। समाज का असली रूप आत्मकथा नामक आईने से प्रतिबिंबित किया और स्त्री स्वतंत्रता के लिए स्वावलंबन का महत्व भी प्रस्तुत किया। स्त्री आत्मकथाकारों ने आत्मकथा के माध्यम से समाज की विडंबना, राजनीति की विद्रूपता, समाज में स्त्री का शोषण, साहित्यिक दुनिया का सत्य, प्रेम, समाज में व्याप्त अंधविश्वास आदि सामाजिक विषयों पर निर्भिकता के साथ अपनी कलम चलाई है। स्त्री आत्मकथाकारों द्वारा लिखित आत्मकथाओं का महत्व असाधारण है। उन्होंने आत्मकथा साहित्य के माध्यम से तटस्थ रहकर अपनी जीवन यात्रा का उद्घाटन किया है। वे किन परिस्थितियों से गुजरीं, किन हालातों में जीकर उन्होंने अपनी पहचान बनाई है, इन सभी का चित्रण उन्होंने अपनी आत्मकथा के माध्यम से किया है। उनके साहित्यकार बनने बनाने में प्रेरणा एवं प्रभाव को आत्मकथा के माध्यम से जाना जा सकता है।

बीज-शब्द :

आत्मकथा, समाज, स्त्री, लैंगिक विभेद, घर-परिवार, कार्यस्थल, मानसिकता, शोषण, राजनीतिक, परिस्थिति, भेदभाव।

भूमिका :

किसी भी सभ्य समाज की प्रगति को वहाँ की स्त्रियों की स्थिति को देखकर जाना जा सकता है। स्त्री आत्मकथाएँ समाज की उन रूढ़िवादी मानसिकता को व्यक्त करती हैं, जिन्हें आज भी हमारा समाज ढो रहा है और जिनमें रहने के लिए आज भी स्त्रियाँ अभिशप्त हैं। इस अध्ययन से भारतीय समाज की ऐतिहासिक विडंबना को समझने में मदद मिलेगी, जिसने सदियों से स्त्री को पराधीन बना रखा है। भारतीय समाज की उन मानसिकता को जानने में भी मदद मिलेगी, जिसके कारण समाज में लैंगिक विभेद की खाई लगातार बढ़ रही है।

मूल आलेख :

समाज में स्त्री की स्थिति दोयम दर्जे की रही है। घर-परिवार, समाज और कार्यस्थल सभी जगह स्त्रियों को इस दोयम दर्जे की स्थिति को झेलना पड़ता है। स्त्री आत्मकथाओं में अपनी इस दोयम दर्जे की स्थिति को लेखिकाओं ने बहुत ही संजीदगी के साथ प्रस्तुत किया है। समाज में कई स्तरों पर लैंगिक विभेद देखने को मिलता है, जिनको अपनी आत्मकथाओं में स्त्री लेखिकाओं ने बड़ी ही बेबाकी के साथ दर्ज किया है। हमारे समाज में बेटी और बेटे में अंतर किया जाता है। बेटे के जन्म लेने पर घर में खुशियाँ मनाई जाती हैं और बेटी के जन्म लेने पर मातम-सा छा जाता है। जो स्त्री बेटे को जन्म देती है उसके लिए घर में खास देखभाल की जाती है और जो स्त्री बेटी को जन्म देती है उसकी देखभाल पर कोई ध्यान भी नहीं देता। देखा जाए तो मातृत्व के समय स्त्री ही स्त्री का शोषण करती है। जब लेखिका की जेठानी ने बेटी को जन्म दिया और लेखिका ने बेटे को तो लेखिका की सास लेखिका से कहती है- 'बड़ी ने तो पहले एक बेटी जनी फिर एक बेटा हुआ था। उसके बाद तो बेटियों की लाइन ही लगा दी थी उसने। सबको ब्याहेगी, तब समझेगी वह। इसने तो आते ही हमे पोता दे दिया।'[1] वे ये सारी बातें इस प्रकार से कहती थीं मानो बेटी या बेटा पैदा करना स्त्री के वश में है। इस तरह के संकीर्ण विचार आशा आपराद की आत्मकथा 'दर्द जो सहा मैंने' में भी व्यक्त हुए हैं। लेखिका की सगी माँ की पाँच बेटियाँ पैदा हुईं। एक भी बेटा पैदा नहीं हुआ। लेकिन उनकी सगी माँ ही सारा दोष अपनी बेटी आशा पर निकालती है-'माँ हमेशा कोसती मेरी पीठ पर पाँच बेटियाँ हुईं, मेरे पेट से चार बेटियाँ पैदा हुईं, घर के किसी समारोह में मुझे इसलिए फटकने नहीं देते कि मैं बेटियों की माँ हूँ...ए बाजू हट, बेटा पैदा नहीं किया और आगे-आगे क्यों नखरे दिखाती हो?'[2]

रमणिका जी को बचपन से ही रंगमंच पर नाटक खेलना अच्छा लगता था। वह नाटक के क्षेत्र में अपना लक्ष्य बनाने का विचार करती है और खुले रंगमंच पर नायिका का रोल प्रदर्शित करती है। लेकिन लेखिका के पति को ये सब अच्छा नहीं लगता है, क्योंकि उस समय के समाज की सोच इतनी निम्न स्तर की थी कि अच्छे घराने की लड़कियाँ अगर खुले रंगमंच पर नायिका जैसे रोल करती हैं तो उसके चरित्र को गिरा हुआ मानते हैं। तभी तो प्रकाश रमणिका से कहता है- 'तुम हीरोइन का रोल क्यों करती हो? तुम्हें उस रोल में देखकर मुझे ईर्ष्या होती है। तुम माँ और बहन का रोल क्यों नहीं करती?'[3] जबकि प्रकाश अपनी भाभी के चरित्र को अच्छा मानता था जो कुशल गृहिणी, किफायत से घर चलाने वाली, बच्चों में मगन, नौकर की तरह, खुद खटने वाली, सवाल और बहस न करने वाली ऐसी आदर्श स्त्री थी, जिसे अपने आपके मनुष्य होने का आभास ही नहीं था। इससे जाहिर होता है कि पुरुष जाति शुरू से ही स्त्री को स्वतंत्र प्राणी न मानकर अपनी सेविका के रूप में देखता आया है।

राजनीतिक क्षेत्र में स्त्री को केवल भोग की वस्तु माना जाता रहा है। स्त्री अगर अपने बल पर इस क्षेत्र में आगे बढ़ना भी चाहती है तो पुरुष समाज अनेक प्रकार की गंदी गालियों के माध्यम से औरत को शिकार बनाने में लगा रहता है। जब रमणिका राजनीतिक क्षेत्र में पैर रखती हैं तो वह देखती हैं कि पुरुष जाति उन्हें कितनी संकीर्ण निगाहों से देखती है- 'वहाँ लोग स्त्री कार्यकर्ताओं को अपना कलेवा मानते थे, जिसे भूख लगने पर खाने का एक स्वार्जित जन्मसिद्ध अधिकार उन्होंने प्राप्त कर रखा था। उनकी नजर में बिना किसी पुरुष नेता-वृक्ष का सहारा लिए महिला नेता (लता) पनप और बढ़ नहीं सकती थी और मैं लता बनने को तैयार नहीं थी।'[4] आज का पुरुष समाज स्त्रियों के साहसिक कार्य को पूर्वाग्रह से ग्रस्त मानता है, जो उनके अहं पर बार-बार चोट पहुँचाता है। हर पुरुष स्त्री के समक्ष ऐसी ही हीन भावना से ग्रस्त होता है और वह उसकी भरपाई करने हेतु स्त्री पर हमला भी करता है। प्राय: सभी स्त्रियाँ अपने समाज की परंपराओं अथवा रूढ़ियों के विरुद्ध एवं परिवार की इच्छा के विपरीत कुछ भी करती और सोचती है तो वे तत्काल अपराध-बोध की ग्रंथि से ग्रसित हो जाती हैं। वे अपने आचरण को गलत मानकर खुद को दोषी मानती रहती हैं। इसी गलत का अहसास ही उन्हें असुरक्षित और भयभीत करता रहता है। तभी तो राजनीतिक क्षेत्र में रमणिका जी लोहियाजी की कही हुई बात लिखती हैं- 'किसी भी जात की औरत

हो, वह पिछड़ी ही होती है और कोई पुरुष उसको नेता मानने को तैयार नहीं होता।... चाहे औरत कितनी ही सक्षम, पढ़ी-लिखी क्यों न हो पर उसे पहले औरत ही समझा जाता।'[5] लेखिका बिहार क्षेत्र में बिलासपुरिया गाँव में लोगों की मदद के लिए जाती हैं तो वहाँ स्त्रियों की दशा निम्न स्तर की देखती हैं। वहाँ के लोग दारू पीते थे और जब दारू के लिए पैसे नहीं मिलते थे तो अपनी पत्नी तक को दाँव पर लगा देते थे। वहाँ स्त्रियों को 'डौकी' कहा जाता है। वहाँ के समाज में रूढ़िवादी प्रथा है कि जमीन के साथ-साथ पैसा होने पर एक नई डौकी (स्त्री) लाना गौरव की बात है। अपने दुश्मन को सबक सिखाने के लिए दुश्मन की डौकी को डायन करार कराना, डायन औरत को उत्पीड़ित, हत्या करना आदि प्रथाएँ वहाँ प्रचलन में हैं- 'जमीन के साथ-साथ पैसा होने पर एक नई 'डौकी' लाना भी इनमें गौरव की बात माना जाता था। 'डौकी' बदलकर लाना यानी खदान में खटने वाली 'डौकी' पुरानी हो गई, सुस्त हो गई या उम्रदराज हो गई तो उसे देश छोड़ आना और वहाँ से नई जवान 'डौकी' साथ में खटने के लिए ले आना, आम रिवाज था।'[6]

इनकी आत्मकथा से स्पष्ट होता है कि स्त्री चाहे कितनी ही साहसी हो समाज उसके गुणों को, अवगुणों को अपनी दृष्टि से देखकर उसके ऊपर चरित्रहीनता का आरोप लगा देता है। लेकिन वह यह नहीं देखता कि आज स्त्री चरित्रहीन मानी जा रही है तो पुरुष के कारण ही। फिर सारा दोष स्त्री पर ही क्यों लगाया जाता है? यह मान्यता प्राचीनकाल से ही चली आ रही है।

कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा 'लगता नहीं है दिल मेरा' एवं 'और... और... औरत' में लेखिका ने लैंगिक विभेद को अभिव्यक्त किया है। लेखिका की शादी लेखिका के पिता डिप्टी कलेक्टर से करते हैं और सोचते हैं कि बेटी सुखी रहेगी, लेकिन जब वह शादी के बाद ससुराल जाती हैं तो वहाँ प्रथम दिन से ही उनके पति सत्यदेव अग्निहोत्री रूखा-सा व्यवहार करते हैं। तब लेखिका के पति के रूप में जीवन साथी के साथ सँजोए गए सपने चूर-चूर हो जाते हैं। वह अपने पति के द्वारा कहे गए शब्दों को लिखती हैं- 'तू मेरी सहगामिनी नहीं, तू स्त्री नहीं, मेरे लिए विवाह मंत्रों के द्वारा खरीदी दासी है, जिसे केवल मेरे इशारों व मनमाने व्यवहार के सम्मुख सिर झुकाना है।'[7] इस समाज में विधवा, परित्यक्ता या अकेली जीवना यापन करने वाली स्त्री को हीन दृष्टि से देखा जाता है। लेखिका अपने पति के अत्याचारों से दुखी होकर अपने मायके चली आती हैं। मायके से भी भाई उन्हें घर से निकाल देता है- 'निकल जा कमीनी, कुत्ती, हरामजादी! तेरी जैसी औरत हमारे घर में नहीं रहनी चाहिए, जो अपने ससुराल को छोड़ आई है।'[8] लेखिका को उनके पिताजी के मित्र सहारा देते हैं, लेकिन खंडवा के कुछ संकीर्ण मनोवृत्ति वाले लोग लेखिका पर आरोप लगाते हैं- 'खंडवा के कुछ कस्बाई मनोवृत्ति वाले व्यक्तियों को मेरे निर्दोष सुख सहन नहीं होते थे, इसलिए मुझ तक किसी ने यह अफवाह बनाकर पहुँचाई थी कि मैं दोनों परिवारों की रखैल हूँ।'[9]

मन्नू भंडारी की आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' में मन्नू जी जब स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी सहभागिता देते हुए प्रभात फेरियाँ, हडतालें, जुलूस, भाषण में भाग लेती हैं तो संकीर्ण मानसिकता वाले लोग पिताजी के पास अपने दकियानूसी विचारों को व्यक्त करते हैं-'अरे उस मन्नू की तो मत मारी गई है भंडारी जी, पर आपको क्या हुआ? ठीक है, आपने लड़कियों को आजादी दी, पर देखते आप, जाने कैसे-कैसे उल्टे-सीधे लड़कों के साथ हड़तालें करवाती, हुड़दंग मचाती फिर रही है वह। हमारे-आपके घरों की लड़कियों को शोभा देता है यह सब? कोई मान-मर्यादा, इज्जत आबरू का खयाल भी रह गया है आपको या नहीं?'[10]

इससे स्पष्ट होता है कि पढ़े-लिखे व्यक्ति की सोच भी दकियानूसी प्रवृत्ति की होती है। विवाह के बाद एक बच्चे की देखभाल संबंधी कार्य पर स्त्री-पुरुष का बराबर कर्तव्य बनता है, लेकिन पुरुष प्रधान संस्कृति में पुरुष अपने आपको घर का मुखिया समझकर बच्चे संबंधी सारी जिम्मेदारी स्त्री पर डालता है।

प्रभा खेतान की आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' में समाज में व्याप्त लैंगिक विभेद की दृष्टि स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। पुरुष प्रधान समाज में पुरुष जाति स्त्री की बुद्धि को नगण्य मानता है। पुरुष की सोच स्त्री के घर-गृहस्थी

संभालने तक ही सीमित होती है। अगर कोई स्त्री अपनी प्रखर बुद्धि से कोई नया काम करती है तो उसकी बुद्धि को महत्व नहीं दिया जाता। प्रभा खेतान स्वयं का चमड़े का व्यापार करती थीं। वे अमेरिका में सैम्पल के लिए ढाई सौ डॉलर का बैग खरीदती हैं, तब डॉक्टर साहब खाकी कैनवास के ढाई सौ डॉलर देने से मना करते हैं और उनकी व्यापारिक बुद्धि को धिक्कारते हुए कहते हैं... 'व्यापारिक बुद्धि , तुम्हारे पास बुद्धि नाम की चीज भी है? गुस्से में उनका गोरा चेहरा लाल होता जा रहा था- तुम अपने आपको समझती क्या हो?'[11] लेखिका अमेरिका में ब्यूटी थेरेपी का कोर्स सीखने जाती हैं। वहाँ वे मिसेज डी की वार्डरोब मैनेजर बन कर कार्य करती हैं। एक बार मिसेज डी की व्यक्तिगत सचिव आईलिन लेखिका को डॉक्टर डी और क्लारा ब्राउन के प्रेम के बारे में बताती है। तब लेखिका आईलिन से कहती हैं- 'तब क्या तुम्हारे देश में भी औरतें त्रिशंकु होकर जी लेती हैं?' [12] आईलिन लेखिका को अमेरिका में स्त्री की वास्तविक स्थिति से रूबरू करवाते हुए कहती हैं- 'कहाँ नहीं जीती वे? दुनिया में ऐसा कोई कोना बताओ, जहाँ औरत के आँसू नहीं गिरे?'[13] हर स्थान पर स्त्री अपनी कोमलता के कारण पराजित होती है। पुरुष में ही वह सुरक्षा खोजती है। आईलिन लेखिका को मिसेज डी की दुख भरी जिंदगी के बारे में बताती है। लेखिका आईलिन से मिसेज डी को तलाक लेने की बात कहती है, तब आईलिन कहती हैं- 'तलाक देना आसान है, पर तलाकशुदा औरत की समाज में कोई हैसियत नहीं रह जाती।'[14] अमेरिका में रहकर ही लेखिका का भ्रम टूटता है कि ये अमेरिकी औरतें भी हम भारतीय औरतों की तरह असहाय हैं। केवल पेंट पहनने और मेकअप करने से औरत सबल नहीं हो पाती। इस अमेरिका में भी औरतों को अपने हक के लिए लड़ना पड़ रहा है। अमेरिकन स्त्रियों में असुरक्षा की भावना अधिक है। वहाँ स्त्री-पुरुष के रिश्ते जल्दी-जल्दी बदलते रहते हैं। सारी सुख-सुविधा के बावजूद स्त्री स्वयं को पुरुष की नजर में सुंदर दिखने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहती है और पुरुष प्राय: अपने रिश्ते बदलते रहते हैं। उपभोग के रूप में स्त्री की स्थिति को समझाते हुए कैथी प्रभा से कहती है-'औरत अभी मनुष्य श्रेणी में नहीं गिनी जाती और तुम अमीर-गरीब का सवाल उठा रही हो? तुम मुझे राष्ट्र का भेद समझा रही हो?... हम सब औरतें अर्ध-मानव हैं। पहले व्यक्ति तो बनो, उसके बाद बात करना।'[15]

सुशीला टाकभौरे की आत्मकथा 'शिकंजे का दर्द' को पढ़ने से आभास होता है कि समाज में बेटियों को पराया धन माना जाता है। पाल-पोसकर शादी करना, जिम्मेदारी से मुक्त होना है। फिर ससुराल में एक बहू की स्थिति देखती है, जो हमेशा पर्दे में रहकर ही जिंदगी बीता देती है। पुरुष प्रधान संस्कृति में पुरुष स्त्री के झगड़े में जब पुरुष की इच्छा हो, स्त्री से मारपीट करता है। वह हमेशा उसे अपना गुलाम या दासी ही समझता है- 'पुरुष कहते थे औरत पैरों की जूती है, पैरों में ही रहेगी।'[16] यही बात कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा 'लगता नहीं है दिल मेरा' में अभिव्यक्त हुई है। जब लेखिका की बुआ की शादी होती है तो ससुराल में उनके साथ दासी जैसा व्यवहार किया जाता है- 'उनकी सास बहुत सारा काम उनसे करवाती और खाने में झूठा परोस देती। जैसे-फूफा या उनके लड़के जो छोड़ते, वह बुआ को ही खाना पड़ता।'[17] वैवाहिक जीवन में स्त्री-पुरुष दोनों में से किसी की भी शारीरिक अक्षमता के कारण संतानोत्पत्ति में बाधा आती है तो यह समाज सारा दोष स्त्री के सिर मढ़ता है। स्त्रियों को ही ताने दिए जाते हैं- 'इमरती बहन को शादी के 6 साल होने तक बच्चे नहीं हुए। ससुराल में सब उसे ताना देते थे और जीजाजी से दूसरा विवाह करने के लिए कहते थे। बच्चा न होने पर ससुराल में बहुओं को जली कटी बातें सुनाई जाती थीं, कई घरों में उन्हें बाँझ कहकर बहुत तकलीफ दी जाती थी।'[18]

दलित समाज में स्त्रियों की दशा बहुत खराब होती है। दलित समाज में पत्नी पर तरह-तरह के अत्याचार करना आम बात मानी जाती है। इन्हें पति का अधिकार माना जाता है। छोटी-छोटी बातों पर नाराज होना, पति का गुण माना जाता है और इन्हीं गुणों से पुरुष दमदार और खुद्दार माना जाता है। जब कभी टाकभौरे जी नाराज होते तो लेखिका को सहनी पड़ी यातना के बारे में वे लिखती हैं- 'कभी-कभी वे स्पष्ट शब्दों में कहते, 'मेरे पैरों पर अपना सिर रखकर माफी माँग, तब मैं तेरी बात मानूँगा।'[19] जब

लेखिका की शादी होती है, तब उनकी उम्र बीस वर्ष थी और टाकभौरे जी की चालीस वर्ष। वर पक्ष ने अपनी उम्र को उजागर नहीं किया और माता-पिता ने पढ़ा-लिखा योग्य समझकर लेखिका की शादी कर दी। लेखिका अनाथालय में दूर के रिश्ते के देवर के लिए लड़की देखने गई तो वहाँ के व्यवस्थापक ने लड़के की उम्र पूछकर शादी करने से मना कर दिया, तब लेखिका टाकभौरेजी जैसे पुरुषों की झूठ के कारण स्त्री जाति की पीड़ा बताती हैं- 'यह एक स्त्री का दुख नहीं है, न जाने कितनी स्त्रियाँ मेरी तरह जिंदगी का संताप भोगती हैं। न शिकवा, न शिकायत ! जिंदगी का जहर चुपचाप पीते रहना, वे अपनी किस्मत मान लेती हैं।'[20] लेखिका पढ़-लिखकर स्वावलंबी बनती हैं और स्वयं के लिए आए पत्रों का जवाब स्वयं देने लगती हैं तो टाकभौरे जी को लगता है कि उनका अधिकार एवं वर्चस्व कम होता जा रहा है। टाकभौरेजी व्यंग्यात्मक रूप से लेखिका से कहते हैं- 'अब तो खुद को बहुत विद्वान समझने लगी है। अकल दो कौड़ी की नहीं है, अगर मुझसे पूछती तो मैं बताता, पत्र कैसा लिखते हैं? और पत्र में क्या-क्या लिखना।'[21]

मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा 'कस्तूरी कुण्डल बसै' में भी लैंगिक विभेद देखने को मिलता है। भारतीय समाज में स्त्रियों को सामाजिक बंधनों में बंध कर रहना पड़ता है अगर कोई स्त्री पर-पुरुष से बातचीत भी करती है तो उसके ऊपर अनेक प्रकार के लाँछन लगाए जाते हैं, लेकिन अगर कोई पुरुष पर-स्त्री से बातचीत करता है तो उस पर किसी प्रकार के लाँछन नहीं। कस्तूरी नम्बरदार जमींदार के साथ गंगा स्नान के लिए जाती है तो कस्तूरी का पति हीरालाल उस पर लाँछन लगाते हुए कहता है- 'समझते हैं। अपनी धरती को समझते हैं और गंगा को भी समझते हैं। चल, मैं गंगा का कोण बनाता हूँ, तू उसमें खड़ी होकर, सौगंध खा कि इस बनिया के बेटे से तेरा कोई संबंध नहीं?'[22] समाज की दृष्टि से अगर कोई स्त्री अपवित्र मान ली जाती है तो समाज उसे कड़ी सजा देता है, भले ही वह स्त्री पवित्र हो समाज के लोग उसका सिर मुंडा देते हैं। मुँह पर कालिख पोत देते हैं। जब कस्तूरी के खानदान की राधा भाभी किसी काम से गाँव के बाहर गई और रात हो जाने से सुबह लौटी। साथ में दूसरे गाँव का धोबी राधा भाभी को छोड़ने आया तो राधा भाभी की सास ने राधा भाभी को जो सजा दी, उन यातनाओं के बारे में लेखिका लिखती हैं- 'मगर सास का मन कर रहा था, उस हरजाई की जान ले लें। चलो जीभ पर गर्म चिमटा दागकर छोड़ दिया। राधा भाभी महीनों तड़पती रहीं। बोल बंद हो गया और फिर मर गई।'[23] मैत्रेयी पहले बच्चे के रूप में बेटी को जन्म देती है तो पूरे घर में शोक छा जाता है। आसपास के मोहल्ले की औरतें भी मैत्रेयी को ताने देती हैं और साथ में डॉक्टर साहब के मन में बेटी जन्म का दुख होता है, तब मैत्रेयी बेटियों के बारे में समाज की सोच को व्यक्त करते हुए कहती है- 'औरतों को चिड़ियों की तरह किसी भी डाल पर, किसी भी पेड़ पर, किसी बाग में मनमानी जगह नहीं मिला करती। उनका जीवन चिड़ियों जैसा सरल नहीं होता। मनुष्य के रूप में अगर सबसे कठिन, चुनौतीभरी जिंदगी को पाया है तो स्त्री ने। या कुदरत को ही उससे बैर था? या कि सृष्टि के कर्ता-धर्ता की ही कोई साजिश... मादा बनने के बाद, मादा होने की सजा का नाम औरत धर दिया।'[24] आधुनिक और सभ्य समाजों में तो परिवार नियोजन का रूप है- दो बेटे एक बेटी या एक बेटी एक बेटा। अगर दो बेटे हों तो कोई फर्क नहीं पड़ता, लेकिन जैसे ही लड़कियों की संख्या दो हो जाती है, लड़के की पुकार तेज हो जाती है। उस स्त्री को सभी लोग हीन दृष्टि से देखते हैं। वे लिखती हैं- 'न यकीन हो तो जो सिर्फ लड़कियों के माता-पिता हैं, उनके लिए समाज का नजरिया देख लो। अपने विकास वैभव के बाद भी वे 'निस्संतान माता-पिता' की तरह देखे जाते हैं। चिढ़ाए जाते हैं। छोड़े नहीं जाते, जब तक की कुंठित न हो जाएँ। यहाँ वह गाँव का मुहावरा चलता है-बेटी सौ साठ, तबहुँ बबा की नाठ।'[25]

कस्तूरी अपनी बेटी मैत्रेयी के लिए वर की तलाश करती है, लेकिन उसे अंतिम निर्णय लेने के लिए पुरुष पर निर्भर रहना पड़ता है, क्योंकि हमारी समाज व्यवस्था में विवाह जैसे पवित्र कार्य में पुरुषों की सहभागिता अनिवार्य होती है। कस्तूरी केवल लड़के को देखने का काम करती है, जबकि लेन-देन की सारी बातें भगवान दास और गाँव के अन्य पंच करते हैं। कस्तूरी को अपनी बेटी के रिश्ते को पक्का करने के लिए पाठक के घर दो-चार चक्कर

लगाने पड़ते हैं, तब कस्तूरी समाज व्यवस्था में विवाह के संदर्भ में रूढ़िवादी प्रथा का उल्लेख करते हुए लिखती है- 'पुरुषों जैसे काम करने से पुरुष जैसी नहीं मान ली जाती स्त्री। सामाजिक कामों के चलते उसे किसी पुरुष की जरूरत होती है भले वह पाँच या दो साल का हो।'[26] कस्तूरी के पति जिस समय मरे, उस समय विधवा-विवाह का प्रचलन नहीं था। विधवा स्त्री को अकेले रहकर ही जीवन निर्वाह करना पड़ता था, जबकि पुरुष को एक से ज्यादा विवाह करने का अधिकार था। कस्तूरी अपनी बेटी मैत्रेयी को विवाह संबंधी मान्यता बताती है, 'तूने किसी विधुर को विधवा की तरह रहते देखा है?'[27] इससे उस समय की समाज व्यवस्था में विधवा स्त्री और विधुर पुरुष के विवाह संबंधी नियमों का पता चलता है। समाज में व्याप्त इस लैंगिक विभेद को रेखांकित करते हुए कुमुद शर्मा अपनी पुस्तक 'आधी दुनिया का सच' में लिखती हैं- 'लड़कियों पर मानसिक, शारीरिक और आर्थिक अत्याचार की कहानियाँ सबसे पहले घर से ही शुरू होती हैं। पहले तो भ्रूण-हत्या के जरिए वे माँ की कोख में ही हिंसा की शिकार हो जाती हैं। कोख से निकलकर यदि गोद में आ भी गईं तो अनेक मामलों में माँ का आंचल उन्हें पूरी तरह सुरक्षा नहीं दे पाता। वे घर पर ही खान-पान, रहन-सहन, शिक्षा और चिकित्सा के मामले में लैंगिक भेद-भाव का शिकार होती हैं।[28]

निष्कर्ष :

वस्तुत: समाज में स्त्रियाँ जिन शोषण, पीड़ा और लैंगिक विभेद से गुजरती हैं, उन्हें समझने के लिए हमें स्त्रियों की आत्मकथाओं को पढ़ने की जरूरत है, क्योंकि इन आत्मकथाओं में लेखिकाओं ने समाज में व्याप्त विभिन्न स्तरों पर लैंगिक विभेद को अभिव्यक्त किया है। ❑

संदर्भ सूची :

1. गुप्ता, रमणिका, आपहुदरी, सामयिक बुक्स, 2016, पृ. 244
2. आपराद, आशा, दर्द जो सहा मैंने, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. 269
3. गुप्ता, रमणिका, आपहुदरी, पृ. 248
4. गुप्ता, रमणिका, हादसे, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ. 27
5. वही, पृ. 56
6. गुप्ता, रमणिका, हादसे, पृ. 69
7. अग्निहोत्री, कृष्णा, लगता नहीं है दिल मेरा, सामयिक बुक्स, 2010, पृ. 100
8. अग्निहोत्री, कृष्णा, लगता नहीं है दिल मेरा, पृ. 224
9. वही, पृ. 80
10. भंडारी, मन्नू, एक कहानी यह भी,राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 24
11. खेतान, प्रभा, अन्या से अनन्या, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 6-7
12. वही, पृ. 130
13. वही, पृ. 130
14. वही, पृ. 142
15. खेतान, प्रभा, अन्या से अनन्या, पृ.157
16. टाकभौरे, सुशीला, शिकंजे का दर्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, पृ. 90
17. अग्निहोत्री, कृष्णा, लगता नहीं दिल मेरा, पृ. 26
18. टाकभौरे, सुशीला, शिकंजे का दर्द,पृ. 124
19. टाकभौरे, सुशीला, शिकंजे का दर्द, पृ. 144
20. वही, पृ. 205
21. वही, पृ. 206
22. पुष्पा, मैत्रेयी, कस्तूरी कुंडल बसै, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृ. 23
23. वही, पृ. 24
24. वही पृ. 309
25. पुष्पा, मैत्रेयी, गुड़िया भीतर गुड़िया, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 95
26. पुष्पा, मैत्रेयी, कस्तूरी कुंडल बसै, पृ. 72
27. वही, पृ. 64
28. शर्मा, कुमुद, आधी दुनिया का सच, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 16

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

स्त्री विमर्श के केंद्र में प्रो. वीर भारत तलवार की दृष्टि

('पगहा जोरी-जोरी रे घाटो' कहानी के विशेष संदर्भ में)

डॉ. पूजा नेओग

शोधार्थी, हिंदी विभाग
राजीव गांधी विश्वविद्यालय
अरुणाचल प्रदेश-791112
8837289263
pujaneog36@gmail.com

प्रस्तावना :

हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि प्रमुख रूप से तत्वकालीन परिवेश में अपने सामाजिक राजनीतिक मुद्दों को लेकर पूर्ण ऊर्जा के साथ गति पकड़ रहा है । इन विमर्शों की दुनिया में सबकी अपनी एक अलग-अलग मौलिक पहचान और समस्या रही है। इन विमर्शों का उन्मेष तथाकथित सु-संस्कृत सामाजिक व्यवस्था से हुआ है, जहाँ वे अपने होने की प्रस्तुति जाहिर करने हेतु साहित्य को अपना माध्यम बनाया है। स्त्री विमर्श की यदि बात करें तो यह विमर्श लिंग के आधार पर पितृ सत्तात्मक व्यवस्था द्वारा पुरुषों के हितों को ध्यान में रखकर जो नियम बनाए गए हैं, यह उसके विरोध में है। यह विमर्श मूल रूप से पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की राजनीतिक, सामाजिक और शैक्षिक समानता के अधिकार का मांग है ।

बीज शब्द : स्त्री, शिक्षा, व्यवस्था, परंपरा, संघर्ष, अधिकार ।

मूल लेख :

स्त्री अस्मिता की अगर बात करें तो भारत में इसका प्रश्न आधुनिक युग की देन है। गुजरते समय के साथ स्त्री अपनी पहचान को लेकर, अपने अस्मिता-अस्तित्व को दुनिया के सामने उजागर करने की कोशिश में है। स्त्री के संबंध में हिंदी के कई विचारकों ने अपने विचार प्रकट किए हैं। इन विचारकों में प्रो. वीर भारत तलवार हिंदी आलोचना जगत में ख्याति प्राप्त आलोचक हैं। उनकी आलोचना के केंद्र में हिंदी नवजागरण, प्रेमचंद, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श के साथ स्त्री विमर्श आदि विषय प्रमुख हैं। वर्तमान में उन्होंने हिंदी साहित्य में बारह के करीब आलोचनात्मक पुस्तकों की रचना की हैं और इसी के साथ उनके कई महत्वपूर्ण लेख भी प्रकाशित हो चुके हैं। उन्होंने स्त्री विषय पर भारतेंदु युग से लेकर वर्तमान तक कई अनछुए पहलुओं पर अपनी पैनी नजर रखकर स्त्री संबंधी मूल्यों पर नवीन दृष्टि के तहत विचार किया है।

स्त्री की इस पहचान के मुद्दे को लेकर आलोचक प्रो. वीर भारत तलवार लिखते हैं, ''दुनिया में पहचान के जितने भी सवाल हैं उनमें सबसे पुराना और जटिल

सवाल स्त्री की पहचान का है। स्त्री की पहचान का सवाल होने के कारण ही यह इतना जटिल है। स्त्री को मनुष्य के रूप में उस तरह नहीं पहचाना जाता, जिस तरह पुरुष को पहचाना जाता है। खुद स्त्री अपने आप को मनुष्य के रूप में पहचान नहीं पाती। समाज ने यही व्यवस्था कर रखी है।''[1] वर्तमान में कई स्त्रियों ने अपने मनोभावों को जाहिर करने के लिए साहित्य को माध्यम बनाया है। इसमें वे सफल भी हुई हैं, परंतु महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्हें अब तक जो पहचान मिली है, वह सिर्फ कहने भर की ही है। उन्हें सराहा तो गया है, पर उस रूप में नहीं, जिस रूप में वास्तविक में सराहा जाना चाहिए ।

स्त्री के उत्थान की अगर हम बात करें तो उसमें स्त्री शिक्षा का विषय ही सबसे प्रमुख है। स्त्री को अपनी पहचान एवं अधिकार का बोध शिक्षा से ही मिलता है। उनके साथ हो रहे अन्याय का बोध भी उन्हें ज्ञान से मिलता है। जब-जब स्त्री ज्ञान से दूर रही है, तब-तब रूढ़िवादी प्रथाओं में जोड़कर उन्हें देवी सजाकर उनके वास्तविक व्यक्तिव पर पर्दा डाल दिया गया है, साथ ही उनको ज्ञान से दूर रखा गया है। इसीलिए उनके समस्त उन्नयन अथवा उत्थान के लिए शिक्षा एक अहम भूमिका निभाती है ।

रोज केरकेट्टा को हिंदी आदिवासी साहित्यकारों में प्रमुख रूप में गिना जाता है। रोज केरकेट्टा का जन्म झारखंड के सिमडेगा के कइसरा सुंदरा टोली गाँव में खड़िया आदिवासी समुदाय में हुआ। उनके पिता प्यारा केरकेट्टा जिन्हें लोग 'प्यारा मास्टर' के नाम से जानते हैं और झारखंड में अपने जीवन, समाज, शिक्षा, राजनीति आदि क्षेत्र में उनका एक विशेष नाम है। बचपन से ही पिता के समाज सुधारक, दूरदर्शी राजनीतिज्ञ तथा सफल लेखक आदि गुणों का प्रभाव तथा अपनी बौद्धिक सृजनात्मकता के बल पर रोज केरकेट्टा हमारे सामने खड़िया और हिंदी भाषा की एक प्रमुख लेखिका, शिक्षाविद, आंदोलनकारी और मानवाताधिकारी कर्मी के रूप में आती हैं ।

रोज केरकेट्टा की लेखनी की अगर बात करें तो उन्होंने 'खड़िया लोक कथाओं का साहित्यिक और सांस्कृतिक अध्ययन' की रचना की है, जो कि शोध ग्रंथ के अंतर्गत आता है। उन्होंने प्रेमचंद की कहानियों का खड़िया में अनुवाद किया है। साथ ही 'स्त्री महागाथा महज एक पंक्ति' नामक वैचारिक निबंध संग्रह की भी रचना की है। इनके अतिरिक्त 'सिंकोय सुलोओ' (खड़िया कहानी संग्रह) तथा अनेक खड़िया विश्वास के मंत्र का संपादन किया है। उन्होंने अपने पिता प्यारा केरकेट्टा के ऊपर 'प्यारा मास्टर' नाम से एक जीवनी लिखी है और साथ ही कई हिंदी कहानियाँ भी लिखी हैं ।

'पगहा जोरी-जोरी रे घाटो' उनका हिंदी कहानी संग्रह है। लेखिका के कहानी संग्रह की आखिरी कहानी 'पगहा जोरी-जोरी रे घाटो' को यदि हम देखें तो यह कहानी 'दया' नाम की एक आदिवासी लड़की की जीवन-संघर्ष की कहानी है। कहानी में दया आर्थिक रूप से कमजोर एक आदिवासी परिवार की लड़की है, जिसे परिस्थिति के चलते चरवाहा का काम करना पड़ता है । उसे पढ़ने-लिखने की बाौी इच्छा होती है, इसलिए वह हमेशा जानवरों को चराने के बहाने से स्कूल की खिड़की के पीछे खड़ी हो जाती है। ध्यान देने वाली बात यह है कि उसी स्कूल में दया का बड़ा भाई और दो छोटे भाई भी पढ़ते थे, परंतु दया को पढ़ने की इजाजत नहीं दी गई, क्योंकि दया के माता-पिता के आदेश अनुसार उसे विवाह के बाद दूसरे के घर की रसोई जो संभालनी थी। जब दया पढ़ने की जिद करती थी तब माँ बोलती थी - ''पढ़के क्या करोगी। विवाह होगा तो ससुराल में भी चूल्हा फूँकोगी। काम सीखो बेटी। सिखलाही बहू को सास भी प्यार नहीं करती है । सास को तो कमनी बहू चाहिए। पागल मत बनो।''[2] दया की माँ द्वारा कही गई यह बात हमारी उस व्यवस्था की देन है, जिसमें समाज स्त्री से सिर्फ यही अपेक्षाएँ रखता है कि स्त्री विवाह के पहले अपने माँ-पिता के घर वालों की और विवाह के बाद पति के घर वालों की सेवा करे ताकि उसका जीवन सुखमय हो। इसी व्यवस्थित परंपरा के चलते स्त्री अपनी पूरी जिंदगी अपेक्षाओं का बोझ लिए फिरती है । स्त्री के प्रति समाज में

रहने वाली इस प्रकार की धारणा पर प्रो. तलवार यह प्रश्न करते हैं, ''क्यों हम समाज की ऐसी व्यवस्था मंजूर नहीं कर पाते, जिसमें जिस तरह एक विवाहित पुरुष खुद पर आर्थिक रूप से निर्भर करने वाले पारिवारिक सदस्यों की देखभाल करता है, उसी तरह कमाने वाली एक विवाहित स्त्री भी अपने ऊपर निर्भर सदस्यों की देखभाल कर सके? इस मामले में हमें परंपरा से चले आ रहे नजरिए और संस्कारों को बदलने की सख्त जरूरत है।''[3]

दया बड़ी स्वाभिमानी लड़की थी। अपने माँ की इस बात से घायल होकर दया ने आगे जाकर जिद पकड़ ली और घर का काम करना बंद कर दिया, साथ ही अपने सखियों से भी बात करनी बंद कर दी । दया के इस व्यवहार को देखकर उसका मन बहलाने के लिए पिता ने दया के नाम खेत लिख देने की बात कही, परंतु दया अपनी पढ़ाई को दाँव में लगाकर किसी भी समझौते के लिए राजी नहीं हुई। दया विवश होकर अपने पिता से यही कहती रही कि ''मुझे स्कूल जाना है, बाबा मैं पढ़ना चाहती हूँ ।''[4] दया का यह कथन इस कहानी का सबसे मार्मिक और विचार उत्तेजक कथन है।

इसी प्रकार दिन बीतता गए और दया पहले की तरह स्कूल की खिड़की के पीछे खड़ी होकर पढ़ाई करती रही और उसी बीच उसने सौ तक गिनती सीख ली और पहाड़े याद कर लिए। एक दिन मास्टर जी ने स्कूल के मैदान पर स्कूल में जो कुछ सिखाया था वह सब सुंदर-सुंदर अक्षरों में लिखा हुआ पाया और वह बड़े खुश हुए । मास्टर जी को जानने की इच्छा हुई कि आखिरकार वह लिखा किसने था और जब मास्टर जी को पता चला कि वह सब दया ने लिखा है, तब उन्हें खुद पर ग्लानि हुई कि उन्होंने भी दया को स्कूल से भगाया था। यह घटना हमें यह समझने पर मजबूर कर देती है कि इतनी कठिनाइयों के बावजूद दया ने पढ़ाई के आगे किसी दूसरे विकल्प को चुना नहीं। उसकी जिद और निश्चय से शिक्षित बनने का संकल्प ही आगे जाकर उसकी सफलता की कारण बनी। आगे मास्टर जी के प्रयास से दया अपनी पढ़ाई पूरी करती है । हाईस्कूल की पढ़ाई के दौरान आदिम जाति सेवा मंडल के छात्रावास में खाना बनाने का काम भी करती है, साथ ही अपनी स्कुल की पढ़ाई भी जारी रखती है ।

कहानी में दया एक उदाहरण है उसकी जैसी लड़कियों का, जिनके परिवार गरीबी के चलते या पितृ सत्तात्मक व्यवस्था के चलते अपने ही बेटी को पढ़ाई से दूर रखकर घर-गृहस्थी में निपुण बनाने की कोशिश करते हैं। गौर करने वाली बात यह है कि लड़कियों पर अपने ही परिवार द्वारा की गई इस तरीके की तमाम कोशिशें मर्यादाओं के नाम पर थोपी जाती हैं। इस संदर्भ में प्रो. तलवार लिखते हैं, ''अगर ये मर्यादाएँ इतनी अच्छी और जरूरी हैं तो फिर इनको पुरुषों पर भी इतनी ही कट्टरता से क्यों लागू नहीं किया जाता?''[5]

कहानी में दया ने बड़ी दृढ़ता से अपने सपनों को साकार करने के लिए अपने ही माँ-पिता से भिड़ जाती है और स्कूल के शिक्षक से भी, जिसने उसे कई बार स्कूल के आँगन से भगाया था। वह बच्ची अपने माँ-पिता से सवाल करती है कि पढ़ाई का अधिकार क्यों सिर्फ उसके दो भाइयों के हिस्से में ही है? यह सवाल एक साधारण बच्ची का ही सवाल नहीं है, यह सवाल दया ने उस संस्कृति से भी की है, जो पारंपरिक व्यवस्था के चलते पुरुष के साथ खुद स्त्रियाँ भी यह सोचती हैं कि शिक्षा का भाग सिर्फ पुरुष के लिए ही है। दया का यह सवाल हमें सोचने पर मजबूर कर देता है कि आखिरकार ये नियम जिस व्यवस्था ने बनाई है, क्या वह व्यवस्था दया के इन सवालों का जवाब दे पाएगी! ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. तलवार, वीर भारत, सामना, वाणी प्रकाशन, दिल्ली-2005, पृ. 242
2. केरकेट्टा, रोज, पगहा जोरी-जोरी रे घाटो, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-2019, पृ.146
3. तलवार, वीर भारत, सामना, वाणी प्रकाशन, दिल्ली-2005, पृ. 245
4. केरकेट्टा, रोज, पगहा जोरी-जोरी रे घाटो, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-2019, पृ.147
5. तलवार, वीर भारत, सामना, वाणी प्रकाशन, दिल्ली-2005, पृ. 250

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

यथार्थ

लैंगिक असमानता में पिसता किन्नरों का जीवन

('अस्तित्व की तलाश में सिमरन' उपन्यास के विशेष संदर्भ में)

मनोज कुमार श्रीवास्तव
शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी
9706133408
kumar.manojsrivastav46@gmail.com

डॉ. परिस्मिता बरदलै
सहायक प्राध्यापिका, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी

सार संक्षेप :

इक्कीसवीं सदी विमर्श साहित्य का वितान है, जिसमें विभिन्न प्रकार के विमर्शों का दौर गतिमान दिखलाई पड़ता है। वर्षों से समाज में विविध विषयों एवं संदर्भों में संघर्ष गतिमान है और जब यह प्रश्न-चिन्ह हमारे समक्ष खड़ा हुआ, तब विमर्श की बात हमारे सामने आई। स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, आदिवासी-विमर्श, बाल-विमर्श, वृद्ध-विमर्श, दिव्यांग-विमर्श के साथ समाज से दूर जीने के लिए मजबूर तीसरी सत्ता के संघर्ष से किन्नर-विमर्श का प्रादुर्भाव हुआ।

हमारे समाज में स्त्री-पुरुष वर्ग के अलावा एक वर्ग ऐसा भी है, जो न तो स्त्री है और न ही पुरुष। ईश्वर द्वारा प्रदत्त यह वर्ग हमेशा समाज का अभिन्न अंग रहा है, जिसे किन्नर, मंगलामुखी, हिजड़ा, थर्ड जेंडर आदि कई नामों से अभिहित किया जाता रहा है। इन्हें समाज में वर्षों से उपेक्षित रहकर जीवन यापन करना पड़ा है, जो कि आधुनिक भारतीय समाज के लिए बेहद निंदनीय है। इनकी देह का ऊपरी आवरण भले ही सजा-सँवरा, हँसता हुआ दिखाई देता है, परंतु उनकी मन: स्थिति अंतर्द्वंद्व, संघर्ष-चेतना तथा उनके हृदय के मर्म को समझना बहुत कठिन है। अत: समाज का तीसरा पक्ष कहे जाने वाले किन्नरों की इन्हीं समस्याओं को अस्तित्व की तलाश में सिमरन उपन्यास में यथार्थ के धरातल पर शब्द देकर उकेरा गया है। इसमें उपन्यासकार ने किन्नरों के छुए-अनछुए पहलुओं की ओर समाज का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है।

प्रस्तावना :

स्त्री- पुरुष के अलावा समाज में एक तीसरा वर्ग भी है, जो वर्षों से तिरस्कृत होता रहा है। इस वर्ग के लोगों को थर्ड-जेंडर, किन्नर, तृतीय लिंगी, छक्का, खोजा आदि कई नामों से संबोधित किया जाता है। हमारा समाज लिंगविहीनों और इतरलिंगियों को बर्दाश्त नहीं करता। सबल सदा दुर्बल पर अत्याचार करता रहा है। इस जुल्म का शिकार दलित, आदिवासी, स्त्री के साथ ही अस्मिता की रक्षा के लिए संघर्ष करता किन्नर वर्ग भी होता रहा है। ''किन्नर का अर्थ होता है- वह नर जो नर

होते हुए भी नर नहीं है, नारी देह तो है, लेकिन पूर्ण रूप से नारी नहीं है। लोगों को लगता है कि हम लोगों की जिंदगी बहुत मौज-मस्ती और आरामदायक होती है, परंतु ऐसा कुछ भी नहीं है। लोग हमारा दर्द और पीड़ा समझ ही नहीं पाते।''(देवी.09.2019)

इस वर्ग के सदस्यों को उनके जन्मदाता माता-पिता तो घर से निकाल ही देते हैं, समाज भी इनके साथ बुरा व्यवहार करता है। इस अवस्था में समाज का संवेदनशील समुदाय जो भी प्रश्न करता है, वे अनुत्तरित रह जाते हैं। ऐसे अनेक प्रश्नों का उत्तर खोजते 'अस्तित्व की तलाश में सिमरन' उपन्यास 'सिमरन' की कथा के माध्यम से उसकी अनोखी दुनिया में ले जाता है। अस्तित्व की तलाश करती कथा-नायिका 'सिमरन' उपन्यासकार के माध्यम से कुछ आप-बीती कुछ जग-बीती बयान करती जाती है और पाठक मंत्र-मुग्ध होकर कथा प्रवाह में अवगाहन करने लगता है। आधुनिक दौर में उपजे विमर्श और अस्मिताओं के आंदोलन से प्रभावित किन्नरों की स्थिति का यथार्थ चित्र है यह उपन्यास। हमारे समाज में जेंडर के सामाजीकरण की प्रक्रिया अब तीव्र होती जा रही है। ऐसे समय में 'अस्तित्व की तलाश में सिमरन' उपन्यास किन्नरों के जीवन का यथार्थ दर्पण व चित्रण है। किन्नर समाज के नियम, कायदे, रूढ़ियाँ, बंधन, रीति-रीवाज आदि को जग-जाहिर करती यह रचना किन्नर विमर्श और उनके सशक्तिकरण की दिशा में एक नई पहल है।

डॉ. मोनिका देवी द्वारा लिखित उपन्यास अस्तित्व की तलाश में सिमरन (2019) नाम के अनुरूप ही केंद्रीय किन्नर पात्र सिमरन के संघर्षमय जीवन में अस्मिता और अस्तित्व के अन्वेषण का आख्यान है। सिमरन का जन्म एक मध्य-निम्न वर्ग में बिहार प्रांत के मधुबनी जिला के अंतर्गत ग्राम सोना में हुआ, किंतु परवरिश महाराष्ट्र के ठाणे में हुई। नानाजी ने उसका नाम शत्रोघन रखा था। शत्रोघन का अर्थ शत्रु का विनाश करने वाला होता है, लेकिन उसे क्या मालूम था कि उसकी असलियत जानकर पूरा परिवार उसे शत्रु मान लेगा। यही शत्रघन आगे चलकर शत्रुघन से सिमरन बन जाता है। सिमरन का बचपन माता-पिता की स्नेह छाया में बीता तथा सामान्य संतानों की तरह वह भी बड़ी होती जा रही थी। उसके शरीर में आए बदलाव और किन्नर-स्वभाव को देखकर परिवार सन्न रह गया। अबोध संतान की मन: स्थिति को समझने-संभालने के बजाए वे उसकी कोमल भावनाओं को आहत करने लगे। उसके साथ पशुओं से भी बुरा व्यवहार किया जाने लगा। उपन्यासकार ने मनौवैज्ञानिक तरीके से दोनों पक्षों का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। अपने जन्माए बच्चे के साथ कोई ऐसा क्रूरता भरा व्यवहार कैसे कर सकता है, यह सिमरन और हमारे समाज के पत्थर दिल होने का प्रमाण है। उपन्यासकार सूक्ष्म निरीक्षण करती हैं कि कल तक जो परिवार बच्चे की उपस्थिति व क्रियाकलाप से प्रसन्न था, वह आज एकदम से कैसे जल्लाद हो गया। बच्चे की देह को देखकर दुखी होना तो आता है, लेकिन उसकी कोमल भावनाओं को समझकर द्रवित होना या व्यथित होना नहीं आता है। विडंबना यह है कि ऐसी संतान को बहिष्कृत करके भी परिवार अपनी प्रतिष्ठा बनाए हुए है। किंतु उस अबोध संतान को, जिसकी कोई गलती नहीं होती जीते-जी नरक में डालने की सजा दी जाती है। होना तो यह चाहिए था माता-पिता या अभिभावक को कटघरे में खड़ा करना चाहिए। परंपरा के नाम पर और मान-मर्यादा की झूठी शान रखने वाले इन अत्याचारियों को समाज कब तक माफ करता रहेगा?

असामाजिक, क्रूरता एवं संकीर्ण मानसिकता :

किन्नर इसी समाज की ऊपज हैं, किंतु यही समाज इन्हें अपने से अलग कर निर्ममता का परिचय देता है। समाज में स्त्रियों की स्थिति दोयम दर्जे की है, वहीं किन्नर समुदाय के लोगों को तो मनुष्य ही समझा नहीं जाता। सोचने की बात यह है कि इनका जीवन कितना दुष्कर एवं कष्टमय होगा। लोग इन्हें अपने आस-पास देखना भी पसंद नहीं करते और अपने घरों में रखना तो बहुत दूर की बात है। समाज का कोई भी व्यक्ति इनसे सामाजिक संपर्क बनाना नहीं चाहता। जब भी इनके अधिकारों की बात आती है तो मानो हमारे सभी मानवीय धर्म इनके लिए निद्रा के आगोश में डूब जाते हैं। इनकी स्थिति जानवरों से भी बदतर होती है, क्योंकि हमारे सामाज में जानवरों को रहने के लिए घर, खाना सब कुछ मुहैया करवाया जाता है, किंतु किन्नरों को यह भी नसीब नहीं होता है।

अस्तित्व की तलाश में सिमरन उपन्यास में लेखिका ने सभ्य कहे जाने वाले समाज की असामाजिक, क्रूर एवं संकीर्ण मानसिकता का बड़ा ही हृदय विदारक चित्र प्रस्तुत किया है। एक दिन की घटना है सिमरन के पड़ोस के एक अंकल उसके घर आए हुए थे। जाते समय उन्होंने उसके पिताजी से कहा कि आप अपने बेटे अर्थात सिमरन को मेरे साथ भेज दें, घर पर कुछ सामान भिजवाना है। सिमरन के पिताजी ने उसे तुरंत जाने का आदेश दे दिया। सिमरन भी चल पड़ी। उन्होंने सिमरन को अपने कारखाने के अंदर ले जाकर दरवाजा बंद कर लिया, फिर वे सिमरन के साथ अश्लील व्यवहार करने लगे। सिमरन के बार-बार मना करने के बावजूद उस अंकल ने उसके साथ अश्लील हरकत करनी जारी रखी। अब यह सिलसिला रोज का हो चला था। माता-पिता भी उसकी बातों पर यकीन नहीं करते थे। ऐसी स्थिति में वह अपनी पीड़ा किसके समक्ष उजागर करे। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि उसे अब सार्वजनिक शौचालयों में जाने में भी डर लगता था, सिमरन को लगता कि कोई उसका पीछा कर रहा होगा। कभी-कभी कुछ मनचले लड़के उसका पीछा करते हुए वहाँ आ भी जाया करते थे। सबसे ज्यादा यौन शोषण किन्नरों का ही होता है। किन्नर दर्द सहते-सहते ही बड़े हो जाते हैं। उनकी इस पीड़ा का पता निम्नलिखित पंक्तियों में अत्यंत यथार्थ रूप में चलता है-

''एक दिन अचानक खबर मिली कि प्लास्टिक कारखाने वाले अंकल चल बसे। मुझे बहुत खुशी मिली, सोचा अब सुकून में जीवन यापन कर सकूँगी। असली मुसीबत अब आने वाली थी, जिसका मुझे आभास भी नहीं था। किन्नर का जीवन सरल नहीं होता, जीते भी हैं रो-रोकर। आँसू ही सहारा बन जाते हैं, लेकिन अपना कहने के लिए कोई हाथ आगे नहीं बढ़ाता। हिजड़ा एक भावना है। अंतरात्मा की एक पुकार है, जो एक शरीर से आती है, पर दुख की बात है कि आम जनमानस इसे दो जांघों के मध्य खोजते हैं। यही सबसे बड़ा दुर्भाग्य है।'' (देवी.23,2019)

समाज से उपेक्षित :

स्त्री और पुरुष समाज की उत्पत्ति के दो प्रमुख घटक हैं। इन दोनों के अभाव में हम समाज के विकास की कल्पना नहीं कर सकते हैं। समाज में इन दोनों वर्गों का हमेशा से अपना विशेष महत्व रहा है। इस संसार को चलाने के लिए ये दोनों वर्ग विशेष रूप से उत्तरदायी रहा है। किंतु इन दो वर्गों के अतिरिक्त एक और भी वर्ग भी है, जो इनके साथ ही चलता रहा है, किंतु इस वर्ग को समाज ने कभी स्वीकार नहीं किया। वह वर्ग किन्नरों का है और उन्हें सदा से ही उपेक्षित रहना पड़ा है।

आलोच्य उपन्यास अस्तित्व की तलाश में सिमरन उपन्यास में सिमरन के किन्नर होने के कारण किस प्रकार उसे स्वयं के घर से उपेक्षित एवं तिरस्कृत होकर जीवन यापन करने के लिए बाध्य किया जाता है, उसका चित्रण उपन्यासकार ने अत्यंत यथार्थ रूप में किया है। किन्नरता से अभिशप्त सिमरन घुट-घुट कर जीने के लिए बाध्य थी। वह केवल घर-परिवार की छत के लिए जिल्लत भरी जिंदगी को अपनाए, घर की डिमांड को पूरा करने हेतु अपने को खपाए, शोषण के साये में जीवन गुजार रही थी। जब तक घरवालों के अनुसार स्वार्थ सधा, तब तक वह अपने ही घर में किराएदार की तरह रही और जब उनकी असीमित इच्छाओं की पूर्ति में अक्षम रही, तब उसे घर से बेदखल कर दिया गया।

अब महीने भर की पगार बंद हो गई। बस इस बात से पिताजी तिलमिला उठे, भाई और पापा ने मिलकर मेरी खूब बेइज्जती की। दोनों ने मिलकर मुझे घर से बाहर निकाल दिया। (देवी.2019,44)

वस्तुत: किन्नर को समाज का अंग मानने से लोग कतराते हैं। जब तक सिमरन से उसके परिवार का स्वार्थ सधता रहा उसे किराएदार की तरह रखकर उसका उपयोग करते रहे, लेकिन जैसे ही वह मुसीबत में आ गई, उसे बाहर का रास्ता दिखा दिया गया। सिमरन अनुभव करती है कि जब अपने लोग ही स्वार्थी और कृतघ्न हैं तो दूसरों से क्या उम्मीद रखें। लोग बिल्ली-कुत्ते पाल लेते हैं, किंतु किन्नरों की अवस्था उनसे भी बदतर है।

मानव समाज की विडंबना :

मानव समाज की विडंबना देखिए कि उसे शारीरिक

विकलांगता का दंड सर्वप्रथम उसका अपना परिवार देता है। अपनी झूठी सामाजिक मान-मर्यादा तथा संकीर्ण मानिसकता के चलते उसका अपना ही परिवार उसकी उपेक्षा करने लगता है। अस्तित्व की तलाश में सिमरन उपन्यास में लेखिका ने एक हिजड़ा बच्चे के प्रति परिवार की लुप्त होती आत्मीयता का चित्रण अत्यंत मार्मिक ढंग से किया है। यह मानव समाज की कैसी विडंबना है, जहाँ कुत्ते-बिल्लियों को घर के सदस्य की भाँति सभी प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध करवाई जाती हैं, वहाँ मानव की कोख से जन्मे किन्नरों को संपूर्ण रूप से बहिष्कृत कर दिया जाता है। शारीरिक अपंगता के कारण उन्हें यह बहिष्कार झेलना पड़ता है, किंतु उसकी इस अपंगता में उसका कोई हाथ नहीं होता, बल्कि यह तो माता-पिता का दोष है, जो उसे इस दुनिया में लेकर आते हैं और किन्नर रूप में जन्म लेने पर उसे उठाकर बाहर फेंक देते हैं। ऐसे में यदि किसी को दंड मिलना चाहिए तो वह उस माता-पिता को मिलना चाहिए, जो उसे जन्म देकर बाहर दर-दर की ठोकरें खाने के लिए छोड़ देते हैं।

आखिर कब तक उन्हें यह सजा भोगनी पड़ेगी, जो गलती उन्होंने की नहीं? आखिर कब तक झूठे सभ्य कहे जाने वाले लोगों की गलतियों की सजा उन्हें भुगतनी पड़ेगी! आखिर कब तक उन्हें अन्याय की दहलीज पर बैठकर रोते हुए, तड़पते हुए पीड़ा भरी जीवन गुजारनी पड़ेगी? आज हमें नए सिरे से इनके विषय में सोचने की आवश्यकता है। इनके प्रति गलत धारणा को बदलने हेतु समाज के नजरिए को बदलने की आवश्यकता है। विशेष तौर पर उन माता-पिता की सोच में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है, जो इन्हें जन्म देकर घुट-घुट कर जीने के लिए रास्ते पर छोड़ जाते हैं।

लिंग से विकलांग होना या स्त्री-पुरुष होना प्रकृति पर निर्भर करता है, फिर भी लिंग के आधार पर मानवता का बँटवारा क्यों? क्या इनका दर्द, इनकी कठिनाइयाँ मानवता के दायरे से बाहर हैं, यदि नहीं है तो लिंग दोषियों के साथ अमानवीय व्यवहार क्यों? आखिर हैं तो वे भी मनुष्य ही। यहाँ सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है कि उनके साथ हो रहे अन्याय का दोषी कौन है? आलोच्य उपन्यास में सिमरन की इसी समस्या को चित्रित कर उसके साथ हो रहे अन्याय व शोषण से आम जनता को अवगत करा कर समाज में जागृति लाना ही लेखिका का मुख्य उद्देश्य है।

संवेदनहीनता :

वर्तमान समय में देखा जाए तो किन्नरों के प्रति मानव समाज का रवैया असंवेदनशील प्रतीत होता है। पुरुष और स्त्री से इतर किन्नरों के प्रति हमारे हृदय में संवेदनहीनता के भाव वर्षों से उजागर होते आ रहे हैं। स्त्री-पुरुष के पश्चात ही किन्नरों का जन्म होता है, अर्थात किन्नर स्त्री-पुरुष ही होते हैं, किंतु जन्म के कुछ वर्षों के पश्चात उसी माता-पिता और समाज द्वारा उस बच्चे को त्याग देना हमारे समाज की संवेदनहीनता को दर्शाता है। यही सभ्य कहा जाने वाला समाज किन्नरों को हवस मिटाने का साधन मात्र समझता है, उसकी पीड़ा, अभावमय जीवन के बारे में कभी सोचने-समझने का प्रयास नहीं करता है- ''हमको भी भगवान ने अनमोल बनाया। मानव देह दी है, लेकिन आधे-अधूरे क्यों बनाया । क्या इसलिए बनाया कि लोग अपनी हवस को हम जैसों से पूरा करें?'' (देवी.2019.पृ-35) जहाँ किन्नरों को समाज से सहयोग और अपनेपन की आवश्यकता होती है, वहाँ मानव समाज अपने संवेदनहीनता का परिचय देते हुए उसके साथ अमानवीय व्यवहार करता है।

प्रस्तुत उपन्यास में भी घर और समाज सिमरन के साथ संवेदनहीन व्यवहार करते हैं। निम्न मध्यम वर्ग में जन्मी सिमरन को घुट-घुट कर जीने के लिए विवश किया जाता है। वह अपने परिवार से अत्यंत प्रेम करती है। उनकी जरूरतों को पूरा रकने के लिए हर संभव प्रयास करती है। किंतु उनका परिवार उसके साथ सदैव मार-पीट करता है, जिसके फलस्वरूप उसे घर छोड़कर जाने के लिए विवश होना पड़ता है। किन्नरों को कोई काम देने को तैयार नहीं होता। सभी उसे हेय दृष्टि से देखते हैं। सिमरन का एक मित्र किन्नर होता है , जिसका नाम रहता है बॉबी। बॉबी उसे समझाते और वास्तविकता से आभास कराते हुए कहता है- ''यह समाज तुमको समझने वाला नहीं है। यहाँ कितनी भी मेहनत से काम कर लो, उसके बाद भी तुम्हारी पहचान

वही रहेगी जो तुम हो।'' (देवी.2019.पृ-70)

किन्नरों की सहायता करने के बजाए उन्हें देखकर हँसने वाले, छेड़खानी करने व फब्तियाँ कसने वाले लोगों की हमारे समाज में भरमार है। ऐसे में जब तक इन किन्नरों के प्रति हमारे हृदय में संवेदना और समानता के भाव जागृत नहीं होंगे, तब तक इन किन्नरों का जीवन सरल व सामान्य नहीं होगा। अत: इसके लिए जरूरी है कि इनके प्रति समाज में फैले संवेदनहीनता के भाव को समाप्त कर प्रेम अपनेपन एवं भाईचारे की भावना को कायम करना होगा तभी इनका जीवन सफल एवं सुदृढ़ होगा।

असामाजिक तत्वों के हाथ की कठपुतली :

अनचाही स्थितियों के परिणामस्वरूप जब एक बच्चे को अपना समाज छोड़कर किन्नर समाज का हिस्सा बनना पड़ता है तो जीवन की यह दौड़ उसके लिए अत्यंत दुखद होता है, जिसमें उसे किन्नर समुदाय के पेशे एवं चाल-चलन के अनुसार स्वयं को ढालना पड़ता है तथा अस्वीकृति प्रकट करने पर प्रताड़ना झेलनी पड़ती है। किन्नर समाज अपने जैसे व्यक्ति पर जन्मसिद्ध अधिकार समझकर उसे जबर्दस्ती उसके परिवार से छीनकर अपने समुदाय में सम्मिलित करने के लिए उत्सुक रहता है। वही बाद में उससे जो व्यवहार करते हैं, वह अत्यंत अमानवीय होता है। किन्नर के साथ हो रहे अन्याय में किन्नर सरदारों की भी बड़ी भूमिका रही है। किन्नर समाज के मुखिया अपने समूह में सम्मिलित सभी को अपने तौर-तरीके पर चलाने के लिए कुछ भौड़ी किस्म की हरकतों से प्रशिक्षित करते हैं, जो प्रत्येक को स्वीकार नहीं होता। किंतु न चाहते हुए भी उन्हें वह सब करना पड़ता है, जो किन्नरों का मुखिया चाहता है। आलोच्य उपन्यास की नायिका सिमरन को भी अपने किन्नर गुरु से इसी प्रकार का शोषण झेलना पड़ा।

''चाहे मैं ट्रेन में भीख माँगू या ना माँगू मुझे अपने गुरु को पाँच हजार रुपए देने ही पड़ते थे। शुरू में ही मुझे ट्रेन में भीख माँगना अच्छा नहीं लगता था। मैंने गुरु को कहा भी कि मुझे भीख नहीं माँगनी । कोई और काम दिला दो । मैं मेहनत करके जीना चाहती हूँ । भीख माँगकर नहीं। मेरी गुरु दुष्ट प्रवृत्ति की निकली। उसने कहा कि तू कुछ भी कर। किसी के साथ रात भर सोकर पैसा कमा कर ला, मुझे तो बस पैसा चाहिए। मेरी मजबूरी का वह फायदा उठाने लगी।'' (देवी.76-77,2019)

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सभ्य कहे जाने वाले समाज के साथ-साथ किन्नरों के सरदार भी किन्नरों का शोषण करने में पीछे नहीं हैं। अत: किन्नर असामाजिक तत्वों की कठपुतली बनकर रह गई है।

उपसंहार :

अस्तित्व की तलाश में सिमरन उपन्यास किन्नर वर्ग की जिजीविषा तथा उनकी अस्मिता को लेकर प्रश्न करता मार्मिक दस्तावेज है, जिसकी जीवंतता एवं प्रासंगिकता अद्यतन समय में विशेष रूपेण दर्शनीय है। किन्नर समाज में पहले की तुलना में अधुनातन विचारों व जागृति का संचार बहुत धीमा है। राजनैतिक-सामाजिक स्तरों के प्रयासों व आम जनमानस के सतत् योगों से ही किन्नर वर्ग, समाज की मुख्यधारा में सम्मिलित हो पाएगा। किन्नर वर्ग सामाजिक सहयोग से अपने अस्तित्व व अधिकारों को क्या शीघ्र प्राप्त कर पाएगा? यह विचार का विषय है कि कब तक इन्हें इसी प्रकार संवेदनहीन होकर जीवन व्यतीत करना होगा। ❑

मूल ग्रंथ :

1. मोनिका देवी, अस्तित्व की तलाश में सिमरन, माया प्रकाशन, कानपुर, संस्करण-2019

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1.डॉ. विजेन्द्र प्रताप सिंह, हिन्दी उपन्यासों के आइने में थर्ड जेंडर, अमन प्रकाशन, कानपुर संस्करण-2017
2. डॉ. रेखा दुबे (संपा.), इक्कीसवीं सदी का नव्य विमर्श किन्नर-विमर्श, भावना प्रकाशन, संस्करण-2021
3. जी.पी. वर्मा, बंद गली से आगे, विकास प्रकाशन, संस्करण-2022
4. डॉ. एम. फिरोज खान (सम्पा), थर्ड जेंडर और साहित्य, विकास प्रकाशन, कानपुर, संस्करण-2022
5. डॉ. एम. फिरोज खान (सम्पा), थर्ड जेंडर अतीत और वर्तमान, विकास प्रकाशन ,कानपुर, संस्करण-2021

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आकलन

सीमांत के यथार्थ की कथा-शिल्पी चित्रा मुद्गल

डॉ. प्रोमिला

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद-500007
8977961191
promila.du@gmail.com

शोध सार :

चित्रा मुद्गल हमारे दौर की सुप्रसिद्ध एवं सफल कथाकार हैं। इनकी कहानियाँ जीवन के छोटे-छोटे प्रसंगों को आधार बना उनमें व्याप्त तनाव को परख, उन्हें सामाजिकता के व्यापक धरातल पर ला खड़ा करती हैं। मुट्ठी-भर लोगों द्वारा रचे गए व्यूह में अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करते विशाल जनसमूह की यथार्थ मुखाकृति इनमें प्रस्तुत होती है। ये कहानियाँ युगबोध-विसंगतियों, जो प्रत्यक्षतया राजनीति में काफी स्पष्ट होती हैं और अप्रत्यक्षतया संस्कृति में छिपी रहती हैं, के मध्य मानवीय संस्कृति और जीवन-विवेक से लिखी गई हैं। इनमें असामान्यता या असाधारणता उतनी नहीं, पर सांकेतिकता के कई स्तर गुंथे हैं, जिससे कहानी का परिवेश पाठक का अपना परिवेश बन जाता है। अकथनीय को कथनीय बनाने की प्रतिभा चित्रा जी की बड़ी विशिष्टता है। इनकी कहानियों के जरिए समाज के आंतरिक चरित्र के तमाम पेचोखम को समझा जा सकता है। प्रस्तुत लेख में उनकी कहानियों का इसी संदर्भ में विवेचन-विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द :

रचनाकार, संस्कृति, भूख, राजनीति, वर्ग, सामंती परिवेश, अनुभूत यथार्थ, अजनबीपन, सांप्रदायिकता।

विश्लेषण :

समकालीन हिंदी कहानी की बेहद सजग, गंभीर और बकोल स्वयं 'मजदूर लेखिका' चित्रा मुद्गल की कहानियों में उन बातों की पड़ताल आवश्यक है, जो उन्हें इतना महत्वपूर्ण कहानीकार बनाती हैं। वस्तुत: प्रत्येक रचनाकार और रचना का अपना एक नेपथ्य होता है, जिसे बेशक आज कई विद्वान उपेक्षणीय, रचना-विश्लेषण की दृष्टि से अहितकर ठहराते हैं। विशेषकर उत्तर आधुनिकता के समय में उछाले गए 'लेखक का अंत' नारे से यह पक्ष प्रबल हुआ दिखता है, परंतु नेपथ्य रचना की समझ का उपयोगी 'टूल' है और चित्रा मुद्गल की कहानियों के संदर्भ में यह इसलिए भी अनुपेक्ष्य है कि कहानियाँ ही ऐसी हैं- उनके रचना-विधान में नेपथ्य थपकी देता चलता है। कल्पित कलात्मक रूपांतरण (रूप) को तोड़ यथार्थ-

वस्तु की ओर गमन करता है। अनावश्यक विवरणों से बचाकर विवेक और सूक्ष्म अंतर्दृष्टि पर खड़ा कथा-संसार उन्हें अपने समकालीनों में अलग मंच देता है।

चित्रा मुद्गल निम्नवर्गीय जीवन-विषमता की क्षुब्ध पर ऐसी परिपक्व रचनाकार ठहरती हैं, जिन्होंने बाल्यकाल से ही निर्बलों, शोषितओं के प्रति होने वाले अमानवीय व्यवहार को अनुभव किया। ट्रेड यूनियनों से जुड़ी कर्मठ सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में निम्नवर्गीय समाज को समझा-विचारा। मजदूर, कामगार स्त्री, पुरुषों की गहरी आत्मीयता अर्जित की और आत्मीयता दी। वे कहती हैं, 'मेरा हाड़-मांस का जन्म निहाल सिंह के खानदान में जरूर हुआ लेकिन मानसिक जन्म भूख, बदहाली, तंगी, रोगों में जी रहे लोगों के बीच हुआ।'[1] चित्रा जी का यह नेपथ्य सारभूत और निर्णायक बना है। इससे उनके चिंतन को आकार तथा संवेदना को एक तेवर प्राप्त हुआ है, करुणा और विक्षोभ भी, जिसने उन्हें कभी आत्मग्लानि और कभी भरोसे से भर दिया है तथा कथा-शिल्प को चिटका दिया है। अन्य रचनाकारों में भी यह प्रवृत्ति लक्षित है, परंतु लेखिका का तेवर संवेदन को एक अन्य आयाम देते हुए वस्तु को पाठक का आत्मीय, विश्वसनीय बना उसे उसके निजी अनुभव में शामिल कर देता है। उनकी 1964 में 'सफ़ेद सेनारा' से लेकर 2020 में छपे कहानी संग्रह 'हथियार' तक की लेखन-यात्रा का अपना स्वर, स्वभाव अंकित होता है।

किंतु चित्रा मुद्गल के इस स्वभाव, संवेदन और वर्णन-विवरण पर आलोचकों में मतैक्य नहीं वरन् एक फाँक-सी दिखती है। बेशक किसी रचना, रचनाकार पर किसी आलोचक के निर्णय, मूल्य-निर्णय को अंतिम नहीं स्वीकारा जा सकता। न ही आलोचना कोई न्यायिक प्रक्रिया है। पर जहाँ एक ओर चित्रा जी की कहानियों के विषय में मधुरेश मानते हैं कि 'क्लब, दोस्तों की सोसाइटी, ताश और पेग या फिर एक सुनिश्चित दूरी से देखी गई निम्नवर्ग की जिंदगी से संबंधित कहानियाँ एक निश्चित ढर्रे को तो बेशक तोड़ती हैं, लेकिन उनकी संवेदना प्राय: ही पत्रकारिता की सतह और काम चलाओ तफसीलों में ढल जाती हैं।'[2] शंभु गुप्त लिखते हैं, 'बहुत सारी चीजों को एक साथ समेटकर चलने की कोशिश करती हैं। इन बहुत सारी चीजों में कुछ एक-दूसरे की धुर विरोधी और कुचालक भी होती हैं। दुर्भाग्यवश वे इनकी छँटनी करना भूल जाती हैं या कई बार ऐसा भी होता है कि जानते-बूझते उन्हें वे अपने साथ लगाए-लगाए फिरती हैं कि शायद इनके बिना वे सत्ता-विहीन हो जाएँगी!'[3] वहीं दूसरी ओर विश्वनाथ त्रिपाठी चित्रा जी को 'माननीय करुणा की प्रगतिशील भावभूमि पर स्थित कथाकार' बताते हुए कहते हैं, 'इन कहानियों को पढ़ना, चित्रा जी की और उनके पात्रों की जिंदगी को पढ़ना है। इस अर्थ में ये कहानियाँ किताब नहीं हैं-रचनाएँ हैं, क्योंकि इनमें जिंदगी और अपने समय को रचा गया है।'[4] कृष्णदत्त पालीवाल का मत है, 'दरअसल उनकी कहानियों में समस्या की सीटी बजती रहती है। भीतर का ताप अपनी ताकत से थर्राहट भरता रहता है। कहना न होगा कि यह रूपवाद-कलावाद के सांचे में ढली कहानियाँ नहीं हैं।'[5] इन आलोचकीय दृष्टिकोणों से यहाँ यह प्रश्न सहज आकार पाता है कि क्या सचमुच चित्रा मुद्गल की लेखकीय परिसीमा की कोई खाई है और यदि है तो कितनी अपटनीय और कितनी गहरी ? या फिर वे एक निर्द्वंद्व कहानीकार हैं।

मानव-सभ्यता के इतिहास में मनुष्य की पहली अभिलाषा जिजीविषा बनी है और जीने की पहली शर्त रही- रोटी। आज यह बात मान लेने की है कि भूख में निर्णयायक ताकत है। भूखा व्यक्ति संबंधों और संवेदनाओं

से छूट जाता है। सामाजिक ढाँचे की संरचना में अपने देखे-परखे जनों के मध्य से जीवन की इस विद्रूप परिस्थिति को चित्रा मुद्गल ने कालजयी कहानी 'भूख' में मिस्त्री पति की काम पर असामयिक मृत्यु के पश्चात पेट की ज्वाल से जूझती लक्ष्मा और उसके बच्चों द्वारा अभिव्यक्त किया है। मुंबई महानगर की झुग्गी-झोपड़ी में तीन बच्चों की विवश माँ 'बच्चे बच सकते हैं', की आशा में सबसे छोटे बच्चे छोटू को यह सोचकर भिखारिन जग्गूबाई के हवाले कर देती है कि बच्चे को दूध-बिस्कुट मिलेगा और साथ ही हर रोज दो रुपए भी आ जाएँगे। अभाव और हताशा से जड़ीभूत लक्ष्मा को अंत तक आभास नहीं हो पाता कि बच्चे का पेट खाली है। डॉक्टर कहता है, 'बच्चा भूख से मर गया उसकी आँतें सूखकर चिपक गई थीं।' (भूख, पृ.25) पाठक भीतरी झिंझोड़ का अनुभव करता है। आलोचक कहानी की अंतर्वस्तु ममत्व नहीं और भूख भी एक सीमा तक ही कहानी में वस्तु बनती है, जैसी टिप्पणियों के साथ स्वीकारते हैं कि यह कहानी गरीबी, लाचारी, अमानवीयता, शोषणजन्य हत्या को केंद्र बना भीतर तक हिला देती है। 'जिनावर' में निर्धनता के समक्ष मनुष्य की बेबसी से घटते प्रेम पर बढ़ते लालच के समीकरण उजागर होते हैं। परिवार के भरण-पोषण के लिए असलम बीमार घोड़ी से न केवल तांगा चलवाता है, बल्कि मुआवजे के फेर में उसे एक कार से टकरवा भी देता है। सरवरी हर्जाने के तौर पर मालिक को दो हजार दिलवा टूटी टांग के दर्द के साथ तड़प-तड़प कर मर जाती है। असलम क्षोभ, आत्माधिक्कार के स्वर में कहता है, 'ये नोट, नोट नहीं, मेरी सरवरी की बोटियाँ हैं।' (चित्रा मुद्गल, आदि-अनादि (3), सामयिक प्रकाशन 2009, पृ.52) और परिस्थितियों के समक्ष एक सामान्य व्यक्ति की रितती मानवीय संवेदना का चीत्कार प्रस्तुत होता है। इसी प्रकार 'चेहरे' कहानी 'एक चवन्नी अठन्नी सा'ब! बच्चे के दूध वास्ते! सुब्बू से भूखा है, दया करना सा'ब!' (आदि-अनादि (2), पृ.110) कहते हुए अपने दूध मुहें बच्चे की क्षुधा बुझाने हेतु रेलवे स्टेशन पर भीख माँगती भिखारिन और, 'दम है तो हाथ लगा! बुला बड़े बाबू को!... यह जागा मेरी है...काय को नईं बैठेगी...पकड़ेंगे मेरे को, रात यारड में ले जा के...।' (आदि-अनादि (2), पृ.116) की ललकार के साथ भीड़ को उसकी चुनौती में, इस तबके के शारीरिक उत्पीड़न का मार्मिक बयान बनती है। किंतु पाप-पुण्य, नैतिकता-अनैतिकता को यहाँ प्रश्रय नहीं मिलता, सामाजिक यथार्थ की पारदर्शी जमीन लक्षित होती है। मुख्यधारा में रहते हुए भी लोग उपेक्षित जीवन जीते हैं। इनके प्रति समाज की कोई जवाबदेही नहीं। देश की आजादी में सामान्य मनुष्य का अस्तित्व संकटग्रस्त है, जिजीविषा खतरे में है, मान-स्वाभिमान, लालसा-अभिलाषा तो बहुत दूर की बात रोटी तक ठीक से उपलब्ध नहीं, ऐसे में उसके लिए कौन-सी नैतिकता कामयाब होगी? मानव-जीवन की बुनियादी शर्त पर टिकी अपनी कहानियों में लेखिका इसी मर्म को पकड़ने का सफलतम प्रयास करती हैं।

चित्रा मुद्गल स्वीकारती हैं कि 'मार्क्सवादी विचारधारा की रोशनी में आप सर्वहारा को बहुत अच्छी तरह से समझ सकते हैं। मार्क्स का ज्यादा नहीं, पर थोड़ा मैंने अध्ययन किया जो किताबें मुझे उपलब्ध हुईं और उन्होंने मुझ पर गहरा असर किया। अत: मैं मार्क्सवादी विचारधारा में विश्वास रखती हूँ।'[6] और 'मामला आगे बढ़ेगा अभी' कहानी वर्गीय संबंधों के गहन छोर को उकेरती है। अथाह मानवीय पीड़ा को चित्रित करती है तथा उत्पीड़ित मनुष्य के माध्यम से उसकी मानसिकता, समाज में व्याप्त संवेदनहीनता तथा प्रतिरोध की चेतना को आकार देती है। निम्न वर्ग के साथ संपन्न वर्ग और व्यवस्था का यही व्यवहार है कि वह उसे अपने खपत की वस्तु बनाए रखना चाहता है। उसका मंतव्य है कि बिना कुछ किए वह उसे अपना खून पसीना पिला कर पुष्ट करता रहे और अपनी आजादी के बारे में सोचे तक नहीं। कहानी शोर सुनकर चौकीदार तावड़े द्वारा घटनास्थल पर पहुँच मोट्या को सफेद गाड़ी पर प्रहार करते देखने, स्मृति रूप में मोट्या के नाना द्वारा सक्सेना साहब के यहाँ उसकी नौकरी लगवाने, मोट्या के मेमसाहब के प्रति ममत्व भाव रखने और अंत में मेमसाहब द्वारा सरिया छीनकर निहत्थे मोट्या की पिटाई का संकेत देने के बिंदुओं पर विकसित होती है। वह मेमसाहब के छल को ना समझकर उसकी नरमी को आत्मीयता मान तन-मन से सेवा में लग जाता है, पर बीमारी के दिनों में वेतन-कटौती

और पिटाई मोट्या की आँखें खोल देती है। उसका आक्रोश अंत में समाजवादी-मानवीय-ऐतिहासिक-सौंदर्यबोध प्राप्त कर लेता है। सुधीश पचौरी का मत कि 'समकालीन कथाकारों में चरित्र नई कहानी वाला 'विडंबनामूलक' चरित्र नहीं रह जाता और न ही वे अकहानी की तरह उसका विरोध करते हैं, बल्कि वे एक कमाल का काम करते हैं कि चरित्र को यथार्थ का वाहक न बनाकर, यथार्थ को 'दर्पण' बना देते हैं।... अखिल हिंदी क्षेत्र में सामाजिक तनाव और परिवर्तन की जारी एक व्यापक प्रक्रिया को समझना इस दौर के नए कथा लेखकों की मौलिक चिंता रही है।'[7] चित्रा मुद्गल पर सटीक बैठता है।

यद्यपि स्त्री-जीवन संदर्भों पर चित्रा जी की दृष्टि अधिक केंद्रित रही है तदापि वहाँ भी नारी-मुक्ति का स्वर ही सब कुछ वाली परिधि नहीं रचता, बल्कि वे इस जीवन को यथार्थ-निरूपण के रूप में ऐसे आयत्त करती हैं कि व्यापक विमर्श आकार ले लेता है। निम्नवर्गीय अशिक्षित नारी के साथ निम्न मध्यवर्गीय कामकाजी/नौकरीपेशा स्त्री-विवाहिता, अविवाहिता, विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता-के घर-परिवार और कार्यालय की दोहरी जिम्मेदारियों के बोझ और द्वंद्व के भिन्न-भिन्न आयाम- परिवार के सदस्यों की इच्छाएँ, बच्चों की देख-रेख, पति का दृष्टिकोण, कार्यालयों में पुरुष-सहयोगियों की यौन-विकृति और अश्लीलता, मासिक धर्म की पीड़ा आदि 'दरमियान', 'ट्रेन छूटने तक', 'बावजूद इसके', 'मुआवजे', 'लिफाफा', 'नतीजा' जैसी कई उल्लेखनीय कहानियों में आते हैं। 'स्टेपनी' की आभा अनुभूत करती है, 'शायद कोई विकल्प नहीं है उसके हिस्से। गृहस्थी और आत्मनिर्भरता के मध्य अपने 'स्व' का संतुलन खोजते हुए कब वह अपने ही घर के लिए स्टेपनी हो गयी और बताशा मुख्य चक्का-कौन जाने।' (जिनावर संग्रह, पृ.85) 'इस हमाम में' सुखी होने का मुखौटा लगाए घूमती सौमेश की पढ़ी लिखी पत्नी और दो पतियों को छोड़कर तीसरे पति के साथ जीवन जी रही फ्लैटों का कचरा उठाने वाली अनुजा के मध्य के अंतर में स्त्री के मानसिक उत्पीड़न और आर्थिक विपन्नता को चित्रित करते हुए चित्रा मुद्गल कहती हैं, 'आदमी और जगह बदल देने से जिंदगी थोड़े ही बदल जाती है।' (इस हमाम में, पृ.99) परिवार व्यवस्था से लेकर दफ्तरों तक में पुरुष-वर्चस्वता ने प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में स्त्री की व्यक्तित्व-हीनता को जन्म दिया है। स्त्री पुरानी श्रेणियों के साथ नए अर्थों में साधन-संपत्ति बन गई है और इसके कारण चेतना-संबंधों से अधिक पूँजीवाद-उत्पादन-संबंधों में हैं। अलगाव, अजनबीपन स्त्री के समस्त अस्तित्व को आच्छादित किए हुए हैं।

फ्रांसीसी थियोफिल गोतिये ने यह कहते हुए कि 'मैं एक ऐसा आदमी हूँ, जिसके लिए प्रत्यक्ष जगत का अस्तित्व है।' लेखक और वास्तविकता के पारस्परिक संबंध को उद्घाटित किया।[8] भारतीय जनजीवन के तलछट से लेकर शिखर तक चित्रा मुद्गल की रेंज व्यापक है, प्रत्यक्ष जगत की प्रातिनिधिक, चित्र और चरित्र बहुल। इनकी 'लकड़बग्घा', 'बलि, 'दशरथ का वनवास', 'प्रेतयोनि' जैसी कहानियाँ जीवन की जटिल स्थितियों, निकट संबंधों के पेचीदा ताने-बाने को देखने की अपेक्षाकृत परिपक्व और अवगाह दृष्टि देती हैं। पछांहवाली विधवा स्त्री अपनी बेटी के भविष्य की सोचकर जब लंबरदार से अपना हक माँगती है तो साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे की तर्ज पर उसका काम तमाम कर, सुबह कह दिया जाता है कि उसे 'लकड़बग्घा' उठाकर ले गया। ठाकुर बालभद्र सिंह संपत्ति के बँटवारे को लेकर जब सगे फुफेरे भाई की ही 'बलि' चढ़ा देता है तो संबंधों की संवेदना सूख जाती है। प्रसंग विशेष में आने वाले व्यक्तियों के पारस्परिक संबंधों में चित्रा जी समाज और व्यक्ति के संबंधों को भी व्याख्यायित करती चलती हैं। मनुष्य की चारित्रिक असंगतियों के चित्रण में व्यक्ति की जटिलताएँ सामने लाती हैं और इस प्रक्रिया में सामान्य विचार और मूल्य व्यक्त होते हैं। 'दशरथ का वनवास' की प्रतीकात्मकता में सामंती परिवेश के बीच, रूढ़िवादी सोच से संचालित कठोर व्यवहार वाले पिता के प्रति पुत्र के मन की खटास संबंध विघटन की त्रासद अनुगूँज बनती है। चित्रा जैसे यहाँ एक कहानी भी कह रही हैं और एक समस्या से भी जूझ रही हैं। उनके अपने जीवन से, पिता के साथ अपने रिश्ते से जुड़ी एक समस्या है, इसलिए कहानी भी है। और यदि सामने प्रश्न पुत्र का न होकर पुत्री का हो तो अन्य आयाम

भी गुंफित हो जाते हैं। ऊपरी आधुनिकता का दिखावा करता पिता यौन शुचिता के दुराग्रहों, लोकापवादों से कितना बंधा है, यह टैक्सी ड्राइवर द्वारा बलात्कार के प्रयास से लड़-भिड़कर सही-सलामत लौटी बेटी की शारीरिक चोटों को सहलाने के बावजूद सामाजिक लोक-लाज से उसे कमरे में कैद कर मानसिक आघात पहुँचाते परिवार की सशक्त कहानी 'प्रेतयोनि' में प्रतिबिंबित होता है। अनीता गुप्ता कहती है, ''मैं किसी को फोन नहीं कर सकती।' उसने अपने भीतर प्रतिवाद किया, 'हिलने-डुलने, साँस लेने के लिए मुझे तुम्हारी अनुमति चाहिए।'' (प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.105) इन कहानियों के विवरण केवल वर्णन नहीं हैं। '...चित्रा की कहानियाँ, उपन्यास जिंदगी के इसी आवां में पककर निकली हैं। इसलिए उनकी कथा-स्थितियाँ जब तब दृश्य की तरह आँखों के सामने आ जाती हैं। चित्रा के लिए लेखन बुद्धि-विलास नहीं है, जिंदा रहने का विस्तारण है।'[9]

चित्रा मुद्गल के सामाजिक सरोकार बहुत व्यापक हैं। विलियम फॉकनर ने माना कि 'लेखक को तीन चीजों की आवश्यकता होती है- अनुभूत यथार्थ, निरीक्षण क्षमता और कल्पनाशीलता। सामान्यतया कहानी का आरंभ एक विचार या एक स्मृति या एक मानसिक चित्र से होता है।'[10] लेखिका की सजग दृष्टि चहुँओर फिरती रहती है तथा प्रत्येक असंगति-संगति को धैर्य के साथ कहानी का रूप दे देती है। 1947 तक सांप्रदायिकता राजनीतिक लामबंदी हुआ करती थी, पर आज वह संस्कृति का अंग बन चुकी है। समाज में मूल्य तेजी से बदले और खंडित हुए हैं। इसने बहुसंख्यक समाज में अपनी सर्वग्राही पकड़ को दृढ़ कर लिया है, जिसके पहलुओं की परख, पड़ताल हालांकि समय-समय पर 'पार्टीशन' (स्वयं प्रकाश) से लेकर 'यूटोपिया' (वंदना राग) जैसी कहानियों में होती रही है, पर चित्रा मुद्गल की 'लपटें' धार्मिक स्तर से इतर, प्रादेशिक पहचान विशेष के अन्य स्तर पर सियासत और सांप्रदायिकता की जुगलबंदी को आँकती है। आहिस्ता से बताती है कि राजनीति के कुचक्र में फँसा किसी छोटे शहर का नहीं, बल्कि मुंबई जैसे महानगर का सामान्य नागरिक सांप्रदायिकता और असुरक्षा के चलते कितना कुछ सहता रहता है। नेता समाज को जाति, धर्म और संप्रदाय में बाँटकर अपनी रोटियाँ सेकते हैं। स्थानीय स्तर पर भलाई का हवाला देते हुए दलालों को भेजकर चंदा उगाहते हैं और अपने ही लोगों को आग के हवाले कर देते हैं, 'मुनुआ को उन लोगों ने लपटों में नहीं झोंका... जहरा चूड़ी वाली बता रही थी...टीवी वाले की दुकान लूटने के बाद सत्तार चाली के छोकरों को मनवा को दबोच लपटों में झोंकते देखा है।' (लपटें, संग्रह, पृ.64) यह कहानी सामान्य मानव की विवशता का आईना बनती है कि सांप्रदायिकता यदा-कदा, अचानक घटित घटना नहीं, नेताओं द्वारा क्षुद्र स्वार्थों के परवश वर्तमान में असुरक्षा के माहौल के पीछे रची गई सतत प्रक्रिया का स्वरूप ग्रहण कर चुकी है। एक अन्य कहानी 'बाघ' धर्मनिरपेक्षता का ढोंग करते मध्यवर्ग का चित्रण करती है। सांप्रदायिकता के साथ आर्थिक समीकरणों की ऐसी नई पेचीदगियों की क्रोनोलॉजी समझाती है, जो दिल्ली के मोहल्लों से लेकर मेरठ की गलियों तक में आज का जाना-पहचाना यथार्थ बनी हुई है। पिछले दंगे के आतंक से अपना मकान बेचने की इच्छा रखने वाले धर्म विशेष के व्यक्ति को दंगों का भय दिखाकर उसका मकान औने-पौने दाम में खरीद लेने की सलाह में छिपा किसी की विवशता से लाभ उठाने का अमानवीय, अनैतिक भाव अनावृत होता है। सांप्रदायिक उन्माद अलगाव की मानसिकता पैदा कर केवल पात्र को नहीं, बल्कि एक समुदाय को शिकार बनाता है, उसकी भावनाओं, रिश्तों, रोजी-रोटी आदि को भी।

इतना ही नहीं, राजनीतिक विसंगतियों, विकृतियों ने संपूर्ण व्यवस्था, सामाजिक संरचना और जनसामान्य के जीवन को जिस तरह ढाला, प्रभावित किया है, गहन पर्यवेक्षण के साथ संचित विक्षोभ में समय-संवेदन का परिणाम बनी चित्रा मुद्गल की कहानियाँ उससे भी बेखबर नहीं रहतीं। स्वतंत्र भारत की राजनीतिक विसंगतियों तथा सत्ता के साथ अपराध के मौजूदा गठजोड़ के उत्स-केंद्रों की ठोस और प्रतिनिधि खोज 1987 में रची 'जगदंबा बाबू गांव आ रहे हैं' बनती है। लोगों को परिवर्तन की उम्मीद है पर यह उम्मीद खोखली साबित होती है, क्योंकि निरीह व्यक्तियों की योजनाओं में भ्रष्टाचार व्याप्त है। भूतपूर्व

स्वास्थ्य मंत्री जगदंबा बाबू के हाथों दलित विधवा सुक्खन भौजी के विकलांग पुत्र ललौना को गाड़ी तो मिल जाती है, पर बाद में ठाकुर सुमेर सिंह यह कहते हुए गाड़ी उठा ले जाता है कि 'जो गाड़ी ललौना को भेंट की गई है, वापस चाहिए... एकाध रोज में ललौना के लिए मजबूत बैसाखियाँ बनवा देंगे।' (आदि-अनादि (2), पृ.168) ''जगदंबा बाबू...' ठेठ प्रगतिशील विचारधारा की कहानी है। सामंतवाद-पूँजीवाद के तहत अभावग्रस्त जनता को धोखा देने और वंचित रखने की।''[11] नेतागण निज स्वार्थपूर्ति और येन-केन-प्रकारेण सत्ता प्राप्ति से संचालित भारतीय राजनीति के चेहरे हैं। आमजन की बुनियादी जरूरतों से मुँह फेरे वे समाज-सेवा के नाम पर 'पाठ' कहानी के नेता की भाँति स्कूल के गरीब गंदे, नंगे बच्चों को साबुन और खादी के कपड़े बाँटकर उनके माता-पिता के वोटों पर दावेदारी जताते हैं। किंतु विश्व गुरु बनते भारत की वास्तविकता बच्चे के कथन कि 'माई कहत रही... बट्टी अऊर अंगौछा के दाम से दू रोज का पिसान आएगा... तू नहाएगा कि रोटी खाएगा।' (आदि-अनादि (3), पृ.231) में प्रकट हो जाती है। यहाँ राजनेता और राजनीति दोनों के विघटित यथार्थ में जारी दु:स्वपनों की महीन परख मिलती है। ये समाज के वे तुच्छ, तिरस्कृत हिस्से हैं, जिन्हें सत्ता और सुविधा भोग में अघाई हुई प्रजातियाँ देखकर भी नहीं देखतीं।

बावजूद इसके ये कहानियाँ पाठक को अवसन्न नहीं करतीं, बल्कि संघर्ष का एक रास्ता खोले रखती हैं। चित्रा मुद्गल बड़ी बारीकी से विवरणों के जरिए परिस्थितियों और मन:स्थितियों को भावजगत के चित्रण के साथ जीवंत अनुभव बना देती हैं। पात्र के स्वाभाविक जीवन बोध को खंडित किए बिना मंतव्य को संप्रेषित करना उन्होंने साध लिया है। नामवर सिंह ने कहानी पर लिखते हुए कहा है, 'एक समर्थ कहानीकार किस प्रकार जीवन की छोटी-से-छोटी घटना में अर्थ के स्तर-स्तर उद्घाटित करता हुआ उसकी व्याप्ति को मानवीय सत्य की सीमा तक पहुँचा देता है। ऐसे अर्थगर्भत्व को मैं सार्थक समझता हूँ।'[12] लेखिका की कहानियाँ निम्नवर्ग के आख्यान में इसी मानवीय सत्य की सीमा तक पहुँच का नाम हैं और इसी कारण वे नि:संदेह हमारे समय की महत्वपूर्ण कहानीकार हैं। ❑

संदर्भ :

1. नवभारत टाइम्स, 18 दिसंबर, 1994
2. आलोचना पत्रिका, जुलाई-सितंबर, 1988, पृ.87
3. लेख-सत्ता और विमर्श के अंतर्संबंधों की रवायत (चित्रा मुद्गल की कहानियों का पुनराकलन), स्त्रीकाल, 13 फरवरी, 2017
4. त्रिपाठी, विश्वनाथ, कहानी के साथ-साथ, वाणी प्रकाशन, प्र. सं. 2016, पृ.140,141
5. मुद्गल, चित्रा, जिनावर के फ्लैप पर कृष्णदत्त पालीवाल का कथन, किताबघर, 1996
6. मुद्गल, चित्रा से साक्षात्कार, http://lib.unipune.ac.in, 27 जून 2004
7. पचौरी, सुधीश, उत्तरयथार्थवाद, वाणी प्रकाशन, प्र.स.2004. पृ. 76
8. फॉक्स, रैल्फ, उपन्यास और लोकजीवन, अनुवादक-नरोत्तम नागर, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 1957, पृ.20
9. कालिया, ममता, कल परसों के बरसों, वाणी प्रकाशन, 2011, पृ. 123
10. राइकेन, लेलैंड, (संपा.) द क्रिश्चियन इमैजिनेशन : द प्रैक्टिस ऑफ फैत्थइन लिटरेचर एंड राइटिंग, सं.-2002, पृ.112
11. त्रिपाठी, विश्वनाथ, वही, पृ. 142
12. सिंह, नामवर, कहानी : नई कहानी, लोकभारती प्रकाशन, सं. 2009, पृ. 26

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आकलन

अलका सरावगी की कहानियों का तात्विक विवेचन

मोनमी गायन
शोधार्थी, हिंदी विभाग
नगालैंड विश्वविद्यालय
कोहिमा-797004
9435390386
gayanmonmee@gmail.com

डॉ. अनुज कुमार
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
नगालैंड विश्वविद्यालय
कोहिमा-797004
7903367410

शोध सार :

वर्तमान समय में कहानी की बदलती प्रवृत्ति और नएपन के संदर्भ में बड़ी गंभीरता से विश्लेषण किया जा रहा है। यह नयापन व्यक्ति की बदलती चेतना और परिस्थितियों के दबाव से आया है। परिणामस्वरूप रचनाकार अलका सरावगी की एक नई जीवन-दृष्टि और विचाराधारा विकसित हुई, जो कहानी में कथ्य और शिल्प के विविध स्तर पर दिखाई देती है। युवा पीढ़ी की बहुचर्चित लेखिका अलका सरावगी की कहानियों में बदलाव का यह नयापन स्पष्ट दिखाई पड़ता है। इस उत्तर-आधुनिक समय में बदलते सामाजिक मूल्य व अछूते यथार्थ को उद्घाटित करने के लिए उन्होंने अपनी रचना-धर्मिता में कथ्य एवं शिल्प के अनके नवीन प्रयोग किए हैं। इस पत्र के माध्यम से अलका सरावगी की कहानी-संग्रहों पर तात्विक विवेचन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इस लेख हेतु उनकी 'कहानी की तलाश में' और 'दूसरी कहानी' नामक दो कहानी-संग्रहों पर विचार किया गया है।

बीज-शब्द :

स्त्री-जीवन, अस्मिता बोध, जीवन मर्म, सामाजिक मूल्य, यथार्थपरक, कहानी-संग्रह इत्यादि।

मूल आलेख :

अलका सरावगी की कहानियों का कथ्य वैविध्य से भरपूर और व्यापक फलक वाला है, जिसमें उन्होंने वर्तमान समय की नई संवेदना व मानवीय चेतना को अनेक रूपों में रूपायित किया है। अपने कहानी-कथ्य में लेखिका अछूते यथार्थ, नए मानव मूल्य, नए परिवेश तथा नैतिक प्रतिमानों की स्थापना करती हैं।

''युग की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार सोचना और उसे कार्यरूप देना ही आधुनिकता है। आधुनिकता से हमें उन रूढ़ियों को नकारने में मदद मिलती है, जो हमारे विकास में बाधक बनती है। इससे नई मान्यताओं में भी मदद मिलती है, जो हमारे समाज को गति देने के लिए आवश्यक होती है।''[1] अलका सरावगी की कहानियों में आधुनिकता बोध एवं आधुनिक जीवन की विडंबनाओं से उत्पन्न

जीवन का यथार्थ चित्रण हुआ है। 'हर शै बदलती है', 'बीज', 'वाइल्ड फ्लावर हॉल' और 'दूसरी कहानी' आदि कहानियों में लेखिका जीवन सौंदर्य, जीवन के मर्म और जीवन के प्रति आस्था को नए व विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करती है। इन सभी कहानियों में लेखिका जीवन सत्य पर अधिक बल देती है और कल्पना से दूर रहकर यथार्थ जीवन में दबे सौंदर्य की खोज करती है।

'हर शै बदलती है' में लेखिका जीवन का लघु चित्र प्रस्तुत करती है, लेकिन वह जीवन की समष्टि और व्यापकता का बोध कराता है। यह कहानी जिजीविषा- जीवन के प्रति आस्था की मनौवैज्ञानिक जमीन पर खड़ी है। कहानी में पात्र शुरू से लेकर अंत तक अपनी मन: स्थितियों और मानवीय स्वभाव की कमजोरियों का बयान करती है। ''अचानक ऐसा क्यों हो जाता है कि कोई बिल्कुल असहाय हो जाता है। बरसों तक हम जिन बातों को अनदेखा करते रहे हैं वे अचानक इतनी बड़ी क्यों हो जाती हैं कि लगने लगता है कि मरें चाहें जीएँ पर आगे साथ नहीं चला जा सकता?''[2] 'मैं' पात्र जीवन में निराशा देखने लगती है, इसी कारण वह अपनी प्रिय मित्र मीनाक्षी और अपने परिचित प्रशंसनीय कवि श्रीवास्तव जी से बेवजह संबंध तोड़ लेती है। लेकिन दूसरी ही तरफ उसे अपने जीवन की अपूर्णता और निरर्थकता का बोध होता है, और वह अपने जीवन की पुरानी गलतियों को सुधारकर सप्ताह के नए दिन सोमवार से अपनी जिंदगी की पुन: नई शुरुआत करती है- ''चलो, आज सोमवार है और मुझे लग रहा है कि आज से जिंदगी की एक नई शुरूआत की जा सकती है। जिंदगी फिर नई हो जाती है। देखो, मेरी उदासी गायब हो गई है और मेरे मन में कोई खुन्नस भी नहीं तुम्हारे प्रति, कि तुमने कहा कि सब जानते हैं कि मेरा स्वभाव कितना खराब है। मैं भी यह जानती हूँ और फिर आज सोमवार भी है।''[3]

'बीज' भी जीवन-बोध व जीवन के प्रति आस्था-जिजीविषा की कहानी है। 'बीज' की 'वह' पात्र तीन महीने से बीमार रहती है, जिसके कारण उसका स्वभाव चिड़चिड़ा और उकताया हुआ हो जाता है। पति अविनाश उससे बहुत प्रेम करता है और उसके स्वास्थ्य को लेकर हमेशा चिंतित रहता है फिर भी वह अविनाश के प्रति संदेहशील हो जाती है। जो वस्तुएँ उसे पहले सुख देती थीं, उनके प्रति वह नकारात्मक सोचने लगती है। उसे अपनी माँ की कैंसर से और लीला मौसी की किडनी की वजह से हुई मौत व चचेरी बहन गीता का पागलपन याद आता है। इन सभी घटनाओं को याद कर वह सोचती है कि बचपन से ही हमारी पीढ़ी में पागलपन का 'बीज मौजूद है और वह जीवन के प्रति भयभीत हो जाती है। लेकिन इसी मृत्युबोध के बीच लेखिका जीवन सौंदर्य की खोज करती है। 'वह' पात्र में अचानक जीवन के प्रति ललक पैदा होती है और बंद कमरे से बाहर निकलकर खुले आसमान को देखती है, बॉलकनी में खड़ी होकर लोगों की भीड़ को निहारती है- ''उसके मुँह से अपने आप निकला- यह क्या हो गया? सारी दुनिया चल रही है। मुझे क्या हो गया? मैं कहाँ रह गई? मैं क्यों रुक गई? वह बार-बार नीचे चलती गाड़ियों और लोगों को देखती है और बार-बार उसके मन में यही प्रश्न घूमने लगता है। थोड़ी देर बाद वह अपने दोनों हाथ बाँधकर ऊँचे किए और गरदन उठाकर आसमान में दौड़ लगाते रूई जैसे बादलों को आँख-भर देखा। अनायास उसके होठों पर मुस्कुराहट आ गई।''[4] 'बीज' कहानी की वह पात्र यथार्थ जीवन के संत्रातों के बीच छुपे आनंदरूपी बीज की तलाश करती है और वह पुन: जीवन की तरफ लौट आती है। 'मिसेज डिसूजा के नाम' में

जीवन को नए रूप में देखने का नजरिया है। इसमें यह आधुनिकता बोध दर्शाया है कि किसी भी व्यक्ति के पास जीवन व्यतीत करने का स्थायी फॉर्मूला नहीं है। हर व्यक्ति अपनी इच्छानुसार अपने जीवन को जीता है। अत: किसी के भी जीवन पर अनुशासन-मर्यादा के नाम पर पाबंदी लगाना उचित नहीं है, क्योंकि जीवन का अंतिम उद्देश्य अनुशासन नहीं, बल्कि मनुष्यता है। आगे बढ़ने के लिए हमारे जीवन में जितना अनुशासन जरूरी है, उतना ही कुछ मात्रा में आलस्य, फुरसत और निकम्मापन का होना भी जरूरी है ताकि रुक कर हम अपने जीवन की दिशा और गति की सही पहचान कर सकें। कहानी की 'मैं' पात्र रेडियो की प्रसिद्ध संगीत कलाकार है और चीजों को नए दृष्टिकोण से देखने का उसका अपना आधुनिक नजरिया है। इसी कारण वह स्कूल की प्राध्यापिका मिसेज डिसूजा द्वारा उसकी छह साल की बेटी वंदिता की शिकायत करने पर उसके जीवन पर कोई पाबंदी नहीं लगाती है, क्योंकि वह जानती है कि बच्चों की चंचलता उनके बचपन का अंग है और इस पर रोक लगाकर वह अपनी बेटी के बचपन को नष्ट नहीं करना चाहती।

'वाइल्ड फ्लावर हॉल', 'कहानी की तलाश में', 'दूसरी कहानी' और 'मँहगी किताब' आदि कहानियों में लेखिका जीवन के आधुनिक बोध और जीवन सत्य को नए रूप में प्रस्तुत करती हैं। 'वाइल्ड फ्लावर हॉल' शिमला के एक हिल स्टेशन का नाम है, वहाँ नरेटर अपने सहयोगियों के साथ पिकनिक मनाने जाती है। वहाँ नरेटर को अपने पति अजय व सुमन भाभी का बात करना अखरता है। वह अपने जीवन और पति के रवैए को नकारात्मक ढंग से देखती है। नरेटर को लगता है कि अजय उसके प्रति सिर्फ औपचारिकता निभा रहा है और उसे अपनी अपूर्णता का बोध होता है। लेकिन 'वाइल्ड फ्लावर हॉल' पर नरेटर छोटी दीदी व सोम के आंतरिक प्रेम-संबंधों को पहचान कर अपने आपको तलाशने में सफल हो जाती है।'कहानी की तलाश' में भी जीवन की इसी पूर्णता और आत्मबोध को दर्शाया है।'मैं' पात्र अपने ऊँचे सरकारी पद के दंभ में रहता है, अपने दायरे से बाहर निकल कर जीवन को कभी नहीं देखता। अत: उसके जीवन की कोई अलग कहानी नहीं बन पाती है, जिसका अभाव उसे अपने रिटायरमेंट के बाद अखरता है- ''मैंने खुद बड़ी-बड़ी मूँछों और चश्मे से अपना चेहरा ढक रखा है। ऊपर से शायद रौब के लिए पाइप भी पीता हूँ। मुझे ऐसा क्यों लग रहा है कि मैंने जान बूझकर दुनिया से दूर रहने और दुनिया को दूर रखने के लिए अपने को इस तरह छुपा लिया है। यह भी तो हो सकता है कि मेरे जैसे आदमी इतने 'स्टीरियोटाइप्ड' हों कि मुझमें कोई नयापन नजर नहीं आता हो।''[5] अपने आस-पास के सभी लोगों के जीवन में नरेटर को कुछ नया नजर आता है। सबकी अलग-अलग कहानी बनी हुई है, लेकिन उसके जीवन की कोई कहानी नहीं है। अत: अपनी उम्र के अंतिम पड़ाव में अपनी कहानी तलाशने के लिए नए सिरे से सबके बीच रहकर पुन: अपने जीवन को प्रारंभ करता है।

'दूसरी कहानी' में जीवन मर्म, सौंदर्य और सार्थकता को नए रूप में प्रस्तुत करती है। जीवन स्थायी और तटस्थ नहीं रहता, बल्कि हर पल बदलता रहता है और इस बदलाव में ही जीवन की सार्थकता और सफलता निहित है। अपर्णा शारीरिक और मानसिक रूप से कमजोर अपने बेटे सुदर्शन के नौ वर्ष का होने पर अपने जीवन की एक कहानी लिखती है, जिसमें माँ व बेटा एक-दूसरे से बेहद प्रेम करते हैं। लेकिन फिर भी दोनों के मध्य एक दु:ख अनायास कायम रहता है। इन नौ वर्षों के अंतराल में अपर्णा सुदर्शन की जीवन-दशा सुधारने का अथक परिश्रम करती है, कभी निराश नहीं होती। अपर्णा की वही कहानी सुदर्शन के पंद्रह साल का होने पर अधूरी-सी प्रतीत होती है। पंद्रह साल का होने पर सुदर्शन सामान्य लोगों से ज्यादा समझदार और विवेकशील हो जाता है। ''पहले देखो मैं कितनी परवाह करता था कि कोई लड़का मुझे तुम्हारे हाथों से खाता देखेगा, तो मेरा मजाक बनाएगा। अब मुझे कोई परवाह नहीं है। देखे तो देखे। पहले मैं डरते-डरते क्लास में बोलता था- न जाने कहाँ अटक जाऊँ। सारे लड़के साँस रोककर सुनते थे। अब देखो, मेरा हकलाना काफी ठीक हो गया है। हमें लोगों की परवाह करना छोड़ना ही होगा।''[6] सुदर्शन में जीवन के प्रति नई ऊर्जा और नया आत्मविश्वास पैदा हो जाता है, जीवन के प्रति अपार

अलका सरावगी की कहानियों में स्त्री-जीवन की विडंबना और अस्मिता-बोध से जुड़े सभी पक्षों का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता और गहनता के साथ हुआ है। लेखिका ने स्त्री-जीवन की आशाओं, आकांक्षाओं, संघर्षों और स्वप्नों का यथार्थ चित्रण मुख्यतः दो तरह से किया है। प्रथमः उन्होंने भारतीय समाज की रूढ़िवादी व्यवस्था के बीच परंपरा व मर्यादा के नाम पर दयनीय व घुटन भरा जीवन व्यतीत करती स्त्री-जीवन की विडंबना को उठाया है- 'ये रहगुजर न होती' में नरेटर की दादी, माँ व अन्य स्त्रियाँ बाबा की तानाशाही के चलते अपने ही घर में पराधीनता का जीवन गुजारने को विवश हैं। ''उनसे बदला लेने के लिए आपने उनकी माँ को- अपनी औरत को तीन साल इस कमरे में कैद रखा, ताकि वह किसी से न मिल सके। वह तीन साल तक अपने कमरे में ले जाए जाने के लिए कहती रही, पर आपने उनकी एक नहीं सुनी।

संभावना वाले विचार सुनकर अपर्णा का सारा तनाव समाप्त हो जाता है, जो दुख दोनों के मध्य पहले अनायास ही घुस आया था, वह अब समाप्त हो जाता है। अलका सरावगी की यह कहानी वर्तमान जीवन की विसंगतियों के बीच जीवन के प्रति नया आत्मविश्वाास पैदा करती है कि जीवन का सौंदर्य समस्याओं से घबराकर डरने में नहीं, बल्कि समस्याओं का सामना करने में है जैसा कि अपर्णा ने किया।

'महँगी किताब' में इन्हीं आधुनिक जीवन की विसंगतियों और निरर्थकता को नए रूप में उद्घाटित किया है। कहानी की सुशीला पात्र बहुत ही कूटनीतिक गुणों से संपन्न महिला है, जो बनावटी आधुनिकीपन को बहुत महत्व देती है और दूसरे लोगों पर अपना प्रभाव जमाकर व्यक्तिगत स्वार्थों व कार्यों को पूरा करती है। वर्तमान समय की इसी आधुनिकता के बीच व्यक्ति के बनते इसी दोहरे चरित्र को लेखिका 'वह' लड़की पात्र के माध्यम से उजागर करती है। 'वह' पात्र प्रारंभ में सुशीला जी को अपना आदर्श मानकर उनका अनुकरण करती है। लेकिन उसके चरित्र की असलियत को पहचानकर 'वह' अलग हो जाती है- यही अपने समय को पहचानने का आधुनिकता-बोध इसमें दर्शाया है।

आज के कहानीकार के संदर्भ में रामदरश मिश्र लिखते हैं - ''आज का कहानीकार आज के पाठकों के लिए लिखता है, जो स्वयं सर्जक के साथ जीवन की जटिलताओं को समझने और सुलझाने में सचेष्ट है, जो कला के इस गहन दायित्व को समझते हैं कि कला जीवन के बुनियादी सत्यों को उद्घाटित कर जीवन को सही ढंग से समझने वाली दृष्टि का विकास करती है। वह केवल आनंद ही नहीं देती वरन् हमारी जीवन चेतना, हमारे जीवन-बोध को जाग्रत करती है, हमें आधुनिक बनाती है।''[7] इस दृष्टि से लेखिका की 'आक एगारसी', 'कनफेशन', 'पार्टनर', 'मन्नत' आदि कहानियाँ हमें अपने समय को समझने की नई दृष्टि देती हैं और हमारी चेतना को समकालीन आधुनिक भावबोध से जोड़ती हैं।

'कनफेशन' कहानी में लेखिका ने मीरा पात्र द्वारा यह दर्शाया है कि जीवन में अपराधों का बदला लेने से ज्यादा जरूरी है कि उन अपराधों का कनफेशन करना, लेकिन इस मानवीय जीवन में बहुत कुछ ऐसा घटता है कि अन्य लोगों को बाहरी रूप से तो वह बड़ा अपराध दिखाई पड़ता है, जबकि वास्तविक रूप में वह कोई अपराध नहीं होता है और न ही उनका कनफेशन किया जा सकता है। कहानी की पात्र 'मीरा' के पापा अपने मित्र की मृत्यु के बाद उसकी पत्नी नीता के साथ भावात्मक लगाव रखते हुए उसकी हर संभव मदद करते हैं। पापा के इस कर्तव्य बोध पर उनके परिवार में तनाव फैल जाता है। मीरा अपने पापा से हुए अपराधों के कनफेशन पर कहानी लिखना चाहती है, लेकिन उसे पूरा नहीं कर पाती है। पापा, मीरा की कहानी को पढ़कर उस पर टिप्पणी लिखते हैं- ''मैं कहना चाहता हूँ कि यह सच है कि जिंदगी में बहुत जगह बहुत घिनौनापन है। बुराई है। लेकिन अच्छा होता कि तुम्हारी

कहानी उन लोगों पर लिखी जाती जिनका अपराध सिर्फ इतना ही होता है कि वे समाज के दिए हुए, माने हुए रिश्तों के बाहर कुछ सुंदर पा लेते हैं। लेकिन सब लोग यानी सारी दुनिया उनसे कनफेशन कराना चाहती है, क्योंकि उसे शांति तभी मिलेगी जब वह उस रिश्ते को अपराध सिद्ध कर देगी। मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ कि ऐसा कोई कनफेशन हो ही नहीं सकता, क्योंकि न उनके लिए शब्द मिलेंगे और न ही वाक्य बनेगा।''[8] और यहीं पर मीरा की कहानी समाप्त हो जाती है। अलका सरावगी अछूते यथार्थ जीवन की श्रेष्ठ कथाकार हैं और जीवन सत्य पर अधिक बल देती हैं।

अलका सरावगी की कहानियों में समकालीन जीवन की विसंगतियों और अछूते सामाजिक यथार्थ का चित्रण सफलता के साथ हुआ है। अपनी कहानियों में लेखिका ने सामाजिक जीवन की स्थूल घटनाओं के साथ वर्तमान समय के अनकहे, अनदेखे क्षणों और पहलुओं को उजागर किया है। 'बहुत दूर है आसमान', 'टिफिन', 'आक एगारसी', 'आपकी हंसी' और 'एक और नमकहराम' आदि कहानियों में अपने समय का सही तथ्यान्वेषी यथार्थपरक अन्वेषण किया है। इन कहानियों में लेखिका ने जो समस्याएँ उठाई हैं, उनका संबंध आज की परिस्थितियों से है।

'बहुत दूर है आसमान' आधुनिक समय में समाज के नहीं बदल पाने की विडंबना और उसके फलस्वरूप परिवेश में पैदा होती असुरक्षित स्थितियों को उल्लेखित करती हैं। निखिल और उसकी पत्नी 'मैं' कलकत्ता शहर में बड़ी 'मल्टी-स्टोरिड' इमारत में अपनी चार साल की बेटी गुल्लू के साथ रहते हैं, कोई अनजान व्यक्ति उनके घर की दीवार पर 'गुल्लू' के बारे में अश्लील शब्द लिख देता है, जिसे पढ़कर 'मैं और निखिल' अपनी बेटी के जीवन को लेकर बहुत ही भयभीत हो जाते हैं, ''अनजाने डर, दबाई हुई आशंकाएँ, तरह-तरह के संदेह सब एक साथ चढ़कर उसका दम घोंटने लगते। एक विराट भय उसे सुन्न कर जाता। ... आखिर कौन है वह नीच जो इतना गंदा इरादा रखता है? कोई तो है, जो हमारे आस-पास ही मौजूद है, पर हम उसे नहीं पहचानते। एक आठ साल की बच्ची के लिए इतनी गंदी-गंदी बातें हमारे ही घर के बाहर लिखने की किसकी हिम्मत हो सकती है।''[9] 'मैं' पात्र चाहकर भी गुल्लू को घर के बाहर खेलने-कूदने की छूट नहीं देता, गुल्लू के जीवन की चंचलता और गति पर रोक लग जाती है। उन्हें अपने नजदीकी हर आदमी पर शक होने लगता है। इन दोनों पात्रों की मनोदशा द्वारा लेखिका स्पष्ट करती है कि एक तरफ हमें लगता है कि हमारा समय आधुनिक हो गया है, लेकिन दूसरी ही तरफ समाज में पनपतीं बुराइयाँ, विषमता और विद्रूपता को देखकर हमारी आधुनिकता हमें भद्दी नजर आती है, जहाँ व्यक्ति अपने परिवेश में ही सुरक्षित रहने से दूर है।

'टिफिन' कहानी में इसी सामाजिक विषमता के बदलते रूप को दूसरी तरह से दर्शाया है। सारिका अपनी दादी को बताती है कि स्कूल में विद्या कभी अपना टिफिन नहीं लाती है। उसे बहुत पॉकेट खर्च मिलता है, उसी से कुछ खरीदकर खा लेती है और हमेशा गुमसुम रहती है। विद्या का परिवार हमेशा अर्थ केंद्रित रहता है और विद्या को भरपूर पॉकेट खर्च देने में ही अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह मानते हैं, विद्या की मन: स्थिति में बढ़ते जा रहे अकेलेपन और घुटन की पीड़ा से उनको कोई सरोकार नहीं है। लेखिका विद्या के परिवार के माध्यम से स्पष्ट करती है कि पूँजीवादी व्यवस्था के चलते मूल्यों का ह्रास और संबंधों का विघटन हो रहा है, जिससे जीवन में घुटन, अंतर्विरोध और जटिलता बढ़ती जा रही है।

''आधुनिक कहानीकार की दृष्टि अनके अर्थों में व्यापक हुई है, फलत: उसकी कहानी कला में व्यक्ति, समाज तथा अन्य मानवीय संबंधों पर निश्चित विचार, स्पष्ट सहानुभूति तथा निर्णय देने की दृष्टि उलझ गई है। उसकी लक्ष्यात्मक दृष्टि से झिझक उत्पन्न हुई इसके स्थान पर कहानी में आत्मविश्लेषण, आत्मचिंतन और मानसिक ऊहापोह बड़ा और कहानी अपने समग्र रूप में अस्पष्ट और अस्थायी अवस्था में पूर्ण होने लगी।''[10]

'आपकी हँसी' मानवीय संवेदना की टूटती विडंबना और विसंगतियों को नए रूप में प्रकट करती है। नरेटर अपने कुछ शहरी मित्रों के साथ गाँव में नत्थू बाबू के घर

पिकनिक मनाने आते हैं। नत्थू बाबू के घर नरेटर एक ऐसे व्यक्ति को देखता है, जो बहुत ही सरल स्वभाव और भोली सूरत का है और उसकी पत्नी उसे छोड़कर किसी पराए व्यक्ति के साथ भाग जाती है। भोला व्यक्ति शहरातियों को अपने घर आया देखकर बहुत प्रसन्न होता है और उनकी नौकरों की तरह सेवा करता हुआ हर समय हँसता रहता है। शहरी लोग उससे बात करना पसंद नहीं करते और उसके हँसने की क्रिया को 'पागल' की संज्ञा देते हैं। पत्नी द्वारा छोड़कर चली जाने वाली घटना पर सभी शहरी ठहाका मार कर हँसते रहते हैं। ''मैंने आश्चर्यचकित होकर कहा- 'पगला'? वह क्या आपको पागल दिखता है? इस पर मेरे वे मित्र हँसते-हँसते दोहरे हो गए। ऐसे लगा जैसे उन्हें कोई दौरा पड़ गया हो... हँसी थमने पर बोले-' दरअसल आपकी ही तरह पागल है वह। इसीलिए आपको तो 'नार्मल' ही लगेगा न।' उन्होंने फिर एक जोरदार ठहाका लगाया और बोले- 'लेकिन पगले की बीवी बड़ी सुंदर थी। किसी यार के साथ भाग गई। अच्छा भला आप ही बताइए, बिना पागल हुए कोई इतना हँस सकता है? कहकर उन्हें फिर हँसी का दौर पड़ गया।''[11] शहरी पात्रों के माध्यम से लेखिका आधुनिक जीवन की विसंगतियों और संवेदनहीनता को उजागर करती है। 'हँसना' इस कहानी कथ्य के केंद्र में है, जो कहानी के फलक को अर्थ विस्तारित करता है और व्यक्ति के पतित होते नैतिक चरित्र और मानवीय मूल्य को उद्घाटित करता है। ग्रामीण युवक का हँसना, उसके सरल स्वभाव, सहृदयता और शहरी व्यक्तियों के प्रति उसकी आत्मीयता को दर्शाता है, जबकि शहरी व्यक्तियों का ग्रामीण युवक की दुखद घटना पर हँसना उनके स्खलित होते मानवीय मूल्य, संवेदनहीनता, उद्दंडता और निष्ठुरता को दर्शाता है।

'एक और नमकहराम' में भी इसी संवेदनहीनता को उजागर किया है। आज के आधुनिक समाज में प्रेम व भावात्मक लगाव जैसे मूल्यों का कोई मतलब नहीं रह गया है, हर रिश्तों व संबंधों की गहराइयों को पूँजी की संपन्नता की बराबरी से जोड़कर देखा जाता है। रमाकांत दरबान को तीनों बहनें प्रेम से 'सितार की खूंटी' कहती थीं और रमाकांत भी उन्हें अपनी बेटियों के समान प्रेम करता था। लेकिन उनका पापा अपने को ऊँचे दर्जे का मानता है इसलिए अपनी बेटियों को रमाकांत दरबान के साथ खेलने पर मना करता है और रमाकांत दरबान को डाँटता हुआ 'नमक हराम' बोलता है। होली के अवसर पर जब माँ अपनी बेटी रजनी को बैलून फुलाने पर डाँटती है तो छुटकी, छोटी बच्ची भी समझती है कि यह भी 'नमक हराम' है।

''कहानी के साथ समय का कुछ अजीब-सा संबंध है। कहानी शायद समय की कला है, समय के साथ कहानी अनेक प्रकार की कलाएँ दिखाती हैं। कभी वर्षों को समेटकर एक क्षण में बाँध देती है, कभी क्षण को खोलकर वर्षों में फैला देती है, कभी समय के दायरे को तोड़ती है तो कभी टुकड़ों को जोड़कर एक दायरा बनाती है।''[12] 'आपकी हँसी', 'आक एगारसी', 'न्यू ईयर्स ईव' आदि कहानियों में लेखिका ने अपने समय के समूचे तंतु-जाल को समेटने का प्रयास किया है। 'आक एगारसी' कहानी यथार्थ अन्वेषण की प्रक्रिया पर एक विमर्श है, जो व्यक्ति को अपने समय की सच्चाइयों से साक्षात्कार करवाती है। इस कहानी में आगे आने वाले समय की गंभीर समस्याओं पर चिंतन किया है। आक एगारसी एक पात्र का नाम है, जो अपने बारे में नरेटर को बताता है -''मैं आपकी पृथ्वी का ही वासी हूँ, किंतु आज की पृथ्वी का नहीं, भविष्य की पृथ्वी का वासी। मेरा समय आपसे सौ साल आगे है।''

बदलते समकालीन सामाजिक मूल्यों के संदर्भ में आज की हिंदी कहानी ने युगीन प्रवृत्तियों को किस तरह से व्यक्त किया है, इस संदर्भ में ऋषिकेश लिखते हैं- ''इसके लिए कथाकारों के मन में वे समस्याएँ अवश्य उठनी चाहिए, जो आने वाले कल का आभास दे सकें। किसी पुरानी इमारत को ढहते देखना सत्य का एक अंश है, पर पूर्ण सत्य वह तभी होगा, जब हम इसको देख सकें कि ढह जाने के बाद आखिर उस जगह की नींव कैसे खुदेगी और खड़े होने वाले ढाँचे का प्रारूप क्या होगा।'' अलका सरावगी 'दूसरे किले में औरत', 'एक और नमक हराम', 'रिपन स्ट्रीटेर परवीन अख्तर' आदि कहानियों में समकालीन जीवन में पनपती सामाजिक विषमता को उठाते हुए भविष्य के प्रति सजग रहने की चेष्टा करती हैं।

अलका सरावगी की कहानियों में स्त्री-जीवन की विडंबना और अस्मिता-बोध से जुड़े सभी पक्षों का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता और गहनता के साथ हुआ है। लेखिका ने स्त्री-जीवन की आशाओं, आकांक्षाओं, संघर्षों और स्वप्नों का यथार्थ चित्रण मुख्यत: दो तरह से किया है। प्रथम: उन्होंने भारतीय समाज की रूढ़िवादी व्यवस्था के बीच परंपरा व मर्यादा के नाम पर दयनीय व घुटन भरा जीवन व्यतीत करती स्त्री-जीवन की विडंबना को उठाया है- 'ये रहगुजर न होती' में नरेटर की दादी, माँ व अन्य स्त्रियाँ बाबा की तानाशाही के चलते अपने ही घर में पराधीनता का जीवन गुजारने को विवश हैं। ''उनसे बदला लेने के लिए आपने उनकी माँ को- अपनी औरत को तीन साल इस कमरे में कैद रखा, ताकि वह किसी से न मिल सके। वह तीन साल तक अपने कमरे में ले जाए जाने के लिए कहती रही, पर आपने उनकी एक नहीं सुनी।''[12] 'एक व्रत की कथा' और 'लाल मिट्टी की सड़क' कहानी में लेखिका एक बंद भारतीय समाज में स्त्री होने की विडंबना और उससे जुड़े अपमान को दर्शाती है। दोनों कहानी की 'मैं' पात्र बचपन से ही अपनी दादी व माँ के जीवन को पुरुषों की मर्जी के अनुसार चलता देखती है। उनके जीवन की कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं रहती है।

निष्कर्ष :

स्पष्ट है कि अलका सरावगी अपनी कहानियों की रचना-प्रक्रिया में प्रतीकों का सफल प्रयोग कर जीवन के आंतरिक सत्यों व अछूते यथार्थ को उजागर करती हैं। अलका सरावगी ने अपने उपन्यासों की रचना-प्रक्रिया में पारंपरिक कथा-शिल्प को तोड़ते हुए अनेक प्रकार की नवीन शिल्प प्रविधियों का प्रयोग किया है, जिससे उनके उपन्यासों में शिल्पगत वैशिष्ट्य देखने को मिलता है। ❑

संदर्भ :

1. बलराज पांडेय, कहानी आंदोलन की भूमिका, पृ.-92
2. अलका सरावगी, हर शै बदलती है- कहानी की तलाश में, पृ.-17
3. अलका सरावगी, हर शै बदलती है- कहानी की तलाश में, पृ.-18
4. अलका सरावगी, बीज- कहानी की तलाश में, पृ.-27
5. अलका सरावगी, कहानी की तलाश में, पृ.-11
6. अलका सरावगी, दूसरी कहानी, पृ.-26
7. रामदरश मिश्र, हिंदी कहानी : अंतरंग पहचान, पृ.-71
8. अलका सरावगी, कनफेशन- दूसरी कहानी, पृ.-176
9. अलका सरावगी, बहुत दूर है आसमान- कहानी की तलाश में, पृ.-42
10. लक्ष्मीनारायण लाल, आधुनिक हिंदी कहानी, पृ.-71
11. अलका सरावगी, आपकी हँसी- कहानी की तलाश में, पृ.-132
12. अलका सरावगी, लाल मिट्टी की सड़क- कहानी की तलाश में, पृ.-125

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

समन्वय

भारत के स्वाधीनता आंदोलन में असम की महिलाओं का योगदान

सबनम भुजेल

शोधार्थी, हिंदी विभाग
सिक्किम विश्वविद्यालय
गंगटोक, सिक्किम-737102
8945838846
sabnambhujel123@gmail.com

किसी भी देश को समृद्धि के उच्च शिखर तक पहुँचाने, उसे विकसित करने एवं स्वतंत्र बनाने में जिस तरह पुरुषों की भूमिका रहती है, उसी तरह स्त्रियों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। भारत के स्वतंत्र होने में उन महिलाओं का भी बलिदान एवं योगदान रहा, जिन्होंने देश को आजादी दिलाने में अपना जीवन समर्पित कर दिया। जिस आजादी की चाह भारत वासियों ने की थी, वह आजादी उन्हें मिली भी और 130 करोड़ जनसंख्या वाला देश भारत में ऐसा परिवर्तन मामूली नहीं भी था। जब भारत की स्वतंत्रता की बात की जाती है तो उसमें महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों के बलिदानों की चर्चा काफी होती है और इतिहास के पन्नों में भी उन्हीं के बारे में ज्यादा लिखा गया है। ऐसे में कई स्वतंत्रता सेनानी ओझल हो गए हैं, जिन्होंने स्वतंत्रता के लिए अपनी जान दी। राष्ट्र के निर्माण में जितना योगदान पुरुषों का है, उतना ही योगदान महिलाओं का भी रहा है। स्वतंत्रता संग्राम में पुरुष और महिलाओं की भूमिका समान होने के बावजूद तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और पारिवारिक संदर्भ में देखा जाए तो महिलाओं की भूमिका अग्रणी दिखाई देती है। महिलाएँ प्राचीन काल से ही संघर्ष करती आ रही हैं और अब भी वे संघर्षरत हैं। महिलाओं ने अपने ही देश में अपने ही हक के लिए सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक रूप से संघर्ष किया। यद्यपि हम देखते हैं कि भारतीय प्राचीन परंपरा में 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते तत्र रमन्ते देवता' अर्थात जहाँ नारी को पूजा जाता है, वहाँ भगवान का वास होता है। यानी कि नारी को पूजनीय दृष्टि से देखा जाना चाहिए ऐसी मान्यता रही है। भले ही वर्तमान समाज अब इन सबसे आगे बढ़ चुका है, इसलिए भी महिलाओं को उनके अधिकार देर से मिले। सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था में वह स्थान देर से मिला, जो स्थान प्रारंभ से ही पुरुषों को दिया गया। वे उन रूढ़-परंपरावादी समाज से बाहर निकलकर आगे आईं और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अपनी सहभागिता की, जिसके कारण स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं की भूमिका पुरुषों की अपेक्षा महत्वपूर्ण दिखाई देती है।

सन 1857 का वह महासंग्राम, जिसने स्वतंत्रता की लहर पैदा की, इतिहास में वह समय एक तरह से भारत का नया जन्म था। अंग्रेजी उपनिवेश से मुक्त होने की जो चाह भारतवासियों ने रखी थी, वह अब पूरी होती दिखाई पड़ी और उसी चाह

ने भारत को आजादी दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस विद्रोह में कई सेनानियों ने जम कर अंग्रेजी सेना का मुकाबला किया, जिनमें से एक नाम इतिहास के पन्नों में स्वर्ण अक्षरों में भी अंकित है। वह नाम है 'रानी लक्ष्मीबाई' का, जिनकी वीरता, पराक्रम और साहस की गाथाएँ हम बचपन से ही सुनते आ रहे हैं और जब भी उनकी कहानी हम सुनते हैं एक ऊर्जा हमारे हृदय में उत्पन्न होने लगती है। ऐसे ही कई अविस्मरणीय भारतीय स्वतंत्रता महिला सेनानी थीं, जिनकी देश भक्ति को देखकर आज भी भारत उन पर गर्व करता है। लेकिन भारत के इतिहास में वे नाम अब भी कहीं-न-कहीं धूमिल हैं, जिनके साहस, बहादुरी और आत्मविश्वास की वजह से भी भारत स्वतंत्रता का जश्न मानता है- वह है 'पूर्वोत्तर भारत की महिलाओं का योगदान'।

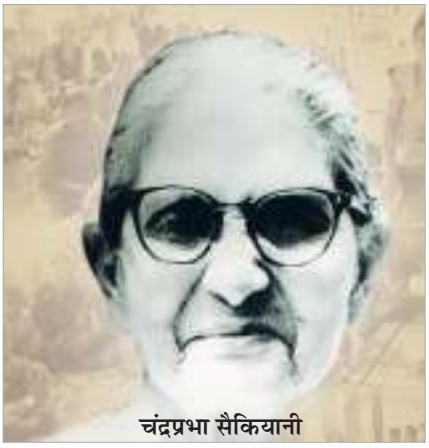
चंद्रप्रभा सैकियानी

भारत को स्वतंत्रता दिलाने में पूरे भारत में ऐसी होड़ मची थी कि जिसमें पुरुषों के साथ-साथ पूर्वोत्तर की स्त्रियों ने भी बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। उन्होंने न केवल भारत को आजाद बनाने में मदद की, बल्कि पूरे मानवीय कल्याण हेतु कार्य किए। उनके इसी त्याग और बलिदान के कारण आज भारत आजादी का जश्न मनाता है। महिलाओं का योगदान केवल घर के काम-काजों तक ही सीमित नहीं रहा है। उन्होंने घोड़े पर सवार होकर तलवारबाजी भी की। देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, विज्ञान एवं तकनीकी सभी क्षेत्रों में अपना विशेष योगदान दिया है। ऐसे में पूर्वोत्तर की महिलाएँ सक्रिय रूप से आजादी के लिए लड़ीं। उनमें से पूर्वोत्तर के विशाल राज्यों में 'असम' अपनी संस्कृति एवं बहुभाषी राज्य होने के कारण प्रसिद्ध तो है ही, साथ ही भारत को स्वतंत्रता दिलाने में यहाँ की महिलाएँ अन्य भारतीय महिलाओं से पीछे भी नहीं थीं। सामाजिक क्षेत्र हो या राजनीतिक- हर क्षेत्र में यहाँ की महिलाएँ आगे आईं और देश को समृद्ध बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

चंद्रप्रभा सइकियानी असम की एक स्वतंत्रता सेनानी थीं। असम में पर्दा प्रथा हटाने में उनकी अहम भूमिका रही। ''साल 1925 में असम के नगांव में साहित्य सभा की बैठक हो रही थी, तब वहाँ स्त्री और पुरुष दोनों मौजूद थे, लेकिन महिलाएँ बाँस से बने पर्दे के पीछे बैठी हुई थीं। तब उन्होंने कहा था, 'तुम पर्दे के पीछे क्यों बैठी हो' और महिलाओं को पर्दे से हटकर आगे आने को कहा।'' उन्होंने कम उम्र से ही लड़कियों की शिक्षा के लिए आवाज उठाने, 1918 में असम छात्र संघ द्वारा असम सत्र का निर्माण करने और समाज में फैल रहे अफीम के नकारात्मक प्रभावों को रोकने के लिए भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने जातिगत भेदभाव, धार्मिक अनुष्ठानों और स्थलों में महिलाओं के प्रवेश, 1925 में असम के नगांव में लैंगिक समानता और न्याय, महिला और पुरुष के बीच भेदभाव का विरोध, 1926 में असम प्रादेशिक महिला समिति की स्थापना कर पितृ सत्तात्मक समाज के विरुद्ध विद्रोह किया और महिला की शिक्षा और रोजगार के लिए लड़ीं। महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन का हिस्सा बन कर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में शामिल हुईं और अपने जीवन को देश के लिए समर्पित किया। असम की वीरांगना 'कनकलता बरुवा' भी स्वतंत्रता संग्राम में शामिल होने वाली एक सेनानी थीं। उनकी उम्र 18 वर्ष से ही बहुत कम थी, जब वे आजादी की लड़ाई में शामिल हुईं। उन्होंने 1942 भारत छोड़ो आंदोलन से जुड़कर गोहपुर पुलिस स्टेशन में ब्रिटिश सेना के खिलाफ आंदोलन किया। फिर अपने देश का झंडा फहराने हेतु आगे बढ़ीं तभी उस भीड़ में उन्हें भी गोली लगी और वे शहीद हो गईं। ''उनके बलिदान को याद करते हुए साल 1997 में कमीशन किए गए भारतीय तटरक्षक बल के फास्ट पेट्रोल वेसल ICGS को उनके नाम पर रखा गया है। गोहपुर में वर्ष 2011 को कनकलता की एक आदमकद प्रतिमा का अनावरण किया गया था। निर्देशक चंद्र मुदोई की फिल्म 'एपा फुलिल एपा जोरिल' में उनकी कहानी भी बताई गई।''

कहा जाता है कि असम से स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाली और असम की पहली शहीद महिला 'भोगेश्वरी फुकननी' थीं। वे देशभक्त एवं देश प्रेम की भावना रखने वाली महिला थीं। असम में स्वदेशी का संदेश देकर लोगों को स्वदेश के प्रति जागृत कराने में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। वे अपने लिए पहनने का वस्त्र भी खुद बुनती थीं। आजादी का चमन ऐसे उनके जीवन पर पड़ा, जिसके फलस्वरूप वे तिरंगा फहराने बरहमपुर जिले के पुलिस स्टेशन की ओर बढ़कर अंग्रेजी सेना का विरोध किया। 1921 के संग्राम में शामिल होने वाली 'द्वारिका दासी बरुवा' का योगदान भी अविस्मरणीय रहा है। वे अपने पति के साथ स्वतंत्रता आंदोलन में खड़ी रहीं। बचपन से ही वे बड़ी साहसी और देश प्रेम से सुसज्जित थीं। विवाह के बाद भी उनमें देश प्रेम की भावना बरकरार रही। पराधीन भारत में महिलाओं को उतनी आजादी नहीं मिलती थी, इसके बावजूद स्वाधीनता आंदोलन में महिलाओं ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। सामाजिक सुधार के लिए उन्होंने 1921 में शराब बंद का अभियान चलाया और भांग के खिलाफ असमवासियों को जागरूक किया। उन्होंने गर्भावस्था में भी अपने गाँव की महिलाओं का नेतृत्व किया, जिसके कारण वे गिरफ्तार हुईं। अपने परिवार एवं संतान से भी ज्यादा महत्व उन्होंने अपने देश को दिया और अपने कर्तव्य का निर्वाह किया। ऐसे ही देश प्रेम एवं सामाजिक उत्थान के लिए लड़ने वाली 'शहीद मालती' असम की बहादुर महिला थीं। उन्होंने असम के चाय बागानों में काम करने वाले लोगों के जीवन में भरे पीड़ा, शोषण, कुपोषण, अशिक्षा, दरिद्रता से निजात दिलाने हेतु कार्य किया। अन्य लोगों की तरह उन्हें भी शराब की लत थी, लेकिन मालिक का उनके ऊपर अत्याचार ने उनके दिल में एक आग लगा दी थी। तब से उन्होंने शराब बंद कर शराबमुक्त समाज बनाने का निर्णय लिया। भारत में दो वर्ग हैं-एक वर्ग ऐशो आराम की जिंदगी व्यतीत करता है तो वहीं दूसरा वर्ग मजदूर वर्ग है, जिसका सुनने वाला कोई नहीं होता था। इसलिए महात्मा गांधी जब तेजपुर आए थे तो उन्होंने महिलाओं के योगदान के बारे में चर्चाएँ कीं, जिसको सुनकर उन्होंने भी असहयोग आंदोलन में हिस्सा लिया और शराब छोड़कर शराब निवारण अभियान भी चलाया। उसके बाद उन्होंने लोगों को अंग्रेजों के खिलाफ आवाज उठाने के लिए प्रेरित किया और स्वतंत्रता की लड़ाई में वह शहीद हो गईं।

कनकलता बरुवा

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाली एवं असम जनसभा का नेतृत्व करनी वाली 'किरणबाला बोरा' का योगदान भी महत्वपूर्ण है। देश में स्त्री शिक्षा का अभाव होने के बावजूद वे बड़ी समझदार एवं साहसी महिला थीं। उन्होंने महिला समाज का नेतृत्व और महिलाओं के साथ मिलकर खादी उत्पादन पर जोर दिया। साथ ही वह अपने द्वारा बनाए गए वस्त्रों को कांग्रेस कमेटी को दान कर देती थीं। उन्होंने गुणेश्वरी देवी, मोहिनी गोहाईं, धर्मेश्वरी गोगोई के साथ गाँव-गाँव घूम कर महिलाओं को संगठित किया और स्वतंत्रता की चाह लोगों में भरी। 1919 में महिलाओं की जागृति हेतु भाषण भी दिया एवं 1931 में शराब निवारण और विदेशी वस्त्र बहिष्कार कर उसे जलाना भी शुरू किया। असम के ज्यादातर लोग उनसे प्रभावित भी हुए। स्वदेशी की भावना इतनी गहराई में बसी हुई थी कि स्वयं के पहने हुए गहने फेंक दिए और पूरा जीवन गरीबी में बिताया, फिर भी उनके देश प्रेम में कभी कमी नहीं आई। 'बुद्धेश्वरी सइकिया' भी एक स्वतंत्रता सेनानी थीं। वे निर्भीक और आत्मरक्षक थीं। उन्होंने एक शिक्षिका के रूप में अपनी भूमिका निभाई। बचपन से ही देश के लिए कुछ कर दिखाने का साहस उनके हृदय में था, इसलिए वे 1942 के आंदोलन में शामिल हुईं और एकाग्रचित होकर देश को आजाद कराने में अपना योगदान दिया। वे स्वयंसेविका भी थीं। उन्होंने गाँव-गाँव जाकर महिलाओं को संगठित किया और उनमें अंग्रेजी सेना के प्रति विद्रोह का भाव जागृत किया। महिला संग्रामियों के प्रशिक्षण और संगठन में जोर देने के साथ-साथ वे मृतवाहिनी की सदस्य भी रहीं। उनमें स्वदेशी की भावना व्याप्त थी, इसलिए स्वदेशी वस्त्र वृद्धि के लिए 'बुनकर संघ' की स्थापना भी

की और अशिक्षित महिलाओं को शिक्षा दिलाने हेतु कार्य किया। किरणबाला बोरा के साथ 'गुणेश्वरी देवी' का योगदान भी महत्वपूर्ण रहा है। वे भारतीय स्वतंत्रता सेनानी तो थीं, साथ ही समाज में शिक्षा के अभाव को कम करने में प्रयासरत रहीं। उनमें देश के लिए समर्पण का भाव समान रूप से समाया हुआ था। उन्होंने असम के नगांव जिले का नेतृत्व किया। विदेशी सामग्री का विरोध और फिर महिलाओं के बीच आंदोलन में जागरूकता लाने के लिए भी अवदान दिया। वे गाँव-गाँव जाकर स्वयंसेविका का चुनाव करती थीं ताकि समाज के लोग नशीले पदार्थों का बहिष्कार करें और आजादी की लड़ाई में शामिल हों। भगत सिंह और अन्य क्रांतिकारियों से प्रेरित पुष्पलता ने भी भारत के स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय रूप से भाग लिया और भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान युवाओं को प्रेरित किया।

इसी तरह असम की समाज सेविका 'मीना अग्रवाल' का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। इन्होंने अपने जीवन में सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में कार्य किया और जीवन भर महिलाओं की सुरक्षा एवं उनके अधिकारों के लिए प्रयासरत रहीं। जब वह असम के तेजपुर जिले के समाज कल्याण बोर्ड की अध्यक्ष बनीं तो उन्होंने अपने समाज के ग्रामीण महिलाओं के साथ-साथ तिब्बती शरणार्थियों को शरण दिलाने में भी मदद की। भारत को आजादी मिलने के बाद भी उन्होंने कई ऐसे सामाजिक कार्य किए। जब 1962 में चीन आक्रमण हुआ, तब उन्होंने चीनी सत्ता के खिलाफ राष्ट्रीय रक्षा कोष के लिए धन प्रबंध करने में सहायता की। इसके अतिरिक्त केवल हिंदू स्त्रियों के जीवन के बारे में नहीं सोचा, बल्कि अपने समाज की उन मुस्लिम महिलाओं के हक के लिए भी आवाज उठाई और मुस्लिम समाज में चल रहे तीन तलाक, मेहर और अक्षम रखरखाव के खिलाफ सख्त से सख्त कार्यवाई की। उस समय महिलाओं को स्वतंत्र रूप से शिक्षा का अधिकार भी नहीं दिया जाता था, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं के लिए शिक्षा के अवसर बहुत कम ही सुलभ होते थे। अत: समाज सेविका मीना अग्रवाल ने महिलाओं की सुरक्षा के साथ-साथ उनकी शिक्षा पर भी विशेष जोर दिया। इनके अतिरिक्त मुंगरी उर्फ मालती मेम, तिलेश्वरी बरुवा, रेबती लाहोन, खाहुली देवी, कुमाली देवी, पदुमी गोगोई, गोलापी सुतियानी लीला निओगिनी, थुनुकी दास, जालुकी कछरियानी, कोन सुतियानी जैसी कई महिलाएं भारत छोड़ो आंदोलन 1942 में शामिल होकर देश को आजादी दिलाने की होड़ में आगे बढ़ीं।

निष्कर्षत: भारत के स्वाधीनता संग्राम में असम की महिला सेनानियों की भूमिका अग्रणी रही है। उन्होंने देश को आजाद करने के लिए स्वतंत्रता की लड़ाई में जिस तरह अपना समर्पण दिया, वह अविस्मरणीय रहा है। उन्हें अपने देश के लिए, समाज के लिए लड़ने में न ही कोई पारिवारिक उलझनें रोक सकीं और न ही उनकी उम्र रोक पाई, बल्कि इसी बीच उन्होंने आजादी की लड़ाई बड़ी बहादुरी और साहस के साथ लड़ी। और भी कई असम के महिला स्वतंत्रता सेनानी थीं, जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से देश को आजादी दिलाने में अपनी भूमिका अदा की। इन स्वतंत्रता सेनानियों की बहादुरी और देश प्रेम की वजह से ही आज भारत एक स्वतंत्र देश बना है। उनके बलिदान अविस्मरणीय हैं, किंतु ऐसे वीरांगनाओं की चर्चा बहुत कम होती है। जिन महिलाओं ने पुरुषों की भाँति आजादी में सहभागिता की, उन महिलाओं की श्रेष्ठता, बहादुरी और साहस के किस्सों के बारे में बहुत ही कम लिखा गया। लेकिन यह सच है कि स्वतंत्रता के लिए असम की महिलाओं ने जो बलिदान दिया, जिस साहस के साथ अंग्रेजी सेना का मुकाबला किया, एक सच्चा देशभक्त ही ऐसा कर सकता है और ऐसी वीरांगनाओं के बारे में लिखा जाना भी चाहिए ताकि आने वाली पीढ़ी इनसे प्रेरणा ले सके। ❑

संदर्भ सूची :

1. चंद्रप्रभा सैकियानी : असम से पर्दा प्रथा हटाने में अहम भूमिका निभाने वाली महिला
   https://www.bbc.com/hindi/india-53816841
2. कनकलका बरुआ : तिरंगे के लिए छोटी-सी उम्र में शहीद होने वाली क्रांतिकारी
   https://hindi.feminisminidia.com/2022/08/12/kanaklata-barua-young-freedom-fighter-profile-hindi/

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

दलित समस्याओं को उजागर करता रमेशचंद्र शाह का उपन्यास साहित्य

अनिता मीणा

अध्यापिका, हिंदी
केंद्रीय विद्यालय
भारतीय तेल निगम, नूनमाटी
गुवाहाटी-781020, असम
मो. 8851230187
1983anitameena@gmail.com

भूमिका :

वर्तमान समय में संपूर्ण देश में दलित आंदोलन एवं दलित विमर्श की धूम मची हुई हैं। ऐसे में हमें बहुमुखी प्रतिभा के धनी एवं सामाजिक चिंतक रमेशचंद्र शाह की याद आती है। वे ऐसे साहित्यकार हैं, जिन्होंने समाज में व्याप्त समसामयिक समस्याओं को अपने लेखन का आधार बनाया, जिससे समाज का ध्यान उन समस्याओं की ओर आकर्षित कर सकें। उन्हीं समस्याओं में से एक समस्या दलित एवं जातिवाद की समस्या है। रमेशचंद्र शाह ने अपने उपन्यासों में दलित, पीड़ित और शोषित वर्ग की दयनीय स्थिति का यथार्थ व विविधांगी चित्रण प्रस्तुत किया है। माना की जाति-पाँति, भेदभाव की समस्या अब पहले जैसी नहीं रही है; परंतु पूरी तरह समाप्त भी नहीं हुई है। विशेषत: ग्रामीण क्षेत्रों में दलित समस्या अभी भी ज्यों-की-त्यों बनी हुई है।

बीज शब्द :

दलित, बहिष्कृत जातियाँ, विक्षिप्त मानसिकता, तिरस्कार, शूद्र, दुर्व्यवहार, स्वार्थसिद्धि।

मूल आलेख :

सामान्यत: 'दलित' शब्द का अर्थ उन जातियों या समुदायों के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जो समाज में सवर्ण जातियों के द्वारा उपेक्षित एवं शोषित होते आए हैं। 'हिंदी शब्दसागर' में दलित का अर्थ है -''मिड़ा हुआ, मसला हुआ, मुदित, रौंदा हुआ, कुचला हुआ, खंडित, टुकड़े-टुकड़े किया हुआ, विनिष्ट किया हुआ, जो दबा रखा गया हो, दबाया गया।''[1] 'मानक हिंदी कोश' में अर्थ दिया है- ''1- जिसका दलन हुआ हो। 2 - जो कुचला, दला, मसला या रौंदा गया हो । 3- टुकड़े-टुकड़े किया हुआ, चूर्णित। 4- जो दबा दिया गया हो अथवा जिसे पनपने या बढ़ने न दिया हो। हीन अवस्था में पड़ा हुआ। 5- ध्वस्त या नष्ट किया हुआ ।''[2]

उपर्युक्त अर्थों को देखने के उपरांत यह स्पष्ट होता है कि 'दलित' यानि जिसे

कुचला, रौंदा व जिसका दलन हुआ हो। जिसका सदियों से शोषण हो रहा हो वही दलित है। शरणकुमार लिंबाले ने 'दलित' की परिभाषा इस प्रकार दी है- ''दलित अर्थात केवल हरिजन या नवबौद्ध ही नहीं, बल्कि गाँव की सीमा से बाहर रहने वाली सभी अछूत जातियाँ, आदिवासी, भूमिहीन, खेत मजदूर, श्रमिक, दुखी जनता, भटकी बहिष्कृत जाति इन सभी का दलित शब्द की व्याख्या में समावेश होता हैं। 'दलित' शब्द की व्याख्या केवल अछूत जाति का उल्लेख करने से नहीं होगा। इसमें आर्थिक तौर पर पिछड़े हुए लोगों का भी समावेश करना चाहिए।''[3] इस परिभाषा से दलित शब्द का व्यापक अर्थ दृष्टिगोचर होता है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि 'दलित' शब्द का संदर्भित अर्थ बताते हुए लिखते हैं- ''दलित शब्द शक्ति के लिए प्रयोग होता है, जो समाज व्यवस्था के तहत सबसे निचले पायदान पर है। वर्ण व्यवस्था ने जिसे अछूत या अंत्यज श्रेणी में रखा है। जिसे संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया...।''[4] सभी विचारकों के मतों से स्पष्ट होता है कि वर्तमान में दलित केवल शूद्र जाति में जन्म लेने वाला व्यक्ति ही नहीं है, बल्कि व्यापक अर्थ में वे लोग भी दलित हैं, जिनकी कोई विशेष जाति नहीं होती । मनुष्य की दुरावस्था, आर्थिक अभाव, मानवीय अधिकारों से वंचित और सामाजिक तौर पर जिन्हें नकारा गया है, जिनका दलन हुआ है, चाहे वह सवर्ण जाति के ही क्यों न हों। इस विस्तृत अर्थ में किसान, आदिवासी, खेत मजदूर, श्रमिक, भूमिहीन, मजदूर, दुखी-पीड़ित जनता, गरीब, बहिष्कृत जातियाँ, आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोग और जो लोग समाज में इज्जत से नहीं रह सकते, वे सभी दलितों की श्रेणी में आ जाते हैं।

रमेशचंद्र शाह का 'किस्सा गुलाम' उपन्यास दलित समस्याओं पर केंद्रित है। यह उपन्यास 'नेशनल बुक ट्रस्ट' की आदान-प्रदान योजना के अंतर्गत आठ भारतीय भाषाओं में अनुदित हो चुका हैं । इसके आलावा गोबर गणेश, आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू, विनायक, पुर्नवास आदि उपन्यासों में दलितों की सामाजिक, आर्थिक समस्याओं और रहन-सहन का आंशिक चित्रण मिलता है। रमेशचंद्र शाह के 'गोबर गणेश' उपन्यास में दलित समाज का एक प्रसंग चित्रित है। 'नारायण डूम है' विनायक उच्च सवर्ण हिंदू परिवार का होकर भी उसका दोस्त नारायण शूद्र है। छोटे बच्चों में भी छुआछूत एवं जातिगत भदेभाव की बात देखने को मिलती है-''वो डूम है, चंदू बोला था, मास्साब ब्राह्मण हैं। डूम को कैसे छुएँगे ?' विनायक यह जानता भी नहीं है । डूम क्या होता है ? विनायक को याद आता है- 'विनायक हैरत में आ गया था - डूम क्या होता है, उसे मालूम था । उसने माँ को कई बार 'डूम-डूम कहते सुना था । माँ की बीमारी के समय में घर में काम करने एक औरत आती थी । माँ कई बार कहती थी, वह डूम है, उसने अपनी माँ को कई बार 'डूम-डूम' कहते सुना था। माँ की बीमारी के दिनों में कई दिनों तक बर्तन माँजने के लिए एक औरत उनके घर आती रही थी । वह भी माँ ने बतलाया था- डूम है । माँ यों तो उसके साथ बड़े प्रेम से बोलती थी... मगर उसे छूती नहीं थी। कोई रोटी, कपड़ा या रुपया-पैसा भी देना होता तो ऊपर से ही उसके फैले हुए हाथ या आँचल में डाल देती थी।''[5] भारतीय समाज में उच्च वर्ग के लोगों द्वारा दलितों को छूना भी पाप समझा जाता है।

बालक का मन कोमल होता है। बालपन में उसके साथ हुई कोई भी घटना उसका आजीवन पीछा नहीं छोड़ती है। 'किस्सा गुलाम' उपन्यास में बालमन पर पड़ने वाले जातिगत भेदभाव के प्रभाव का चित्रण भी लेखक द्वारा मार्मिक ढंग से किया गया है। कुंदन विद्यालय में होने वाले जातिगत दुर्व्यवहार से आहत है, इसलिए उसे अपने नाम के बाद लगने वाला जाति सूचक उपनाम पसंद नहीं हैं ?''कुंदन का अर्थ तो उसे नहीं मालूम। पर नाम बुरा नहीं लगता, अच्छा ही लगता है। बस उसके साथ चिपका हुआ यह 'टम्टा' अच्छा नहीं लगता। कुंदन जोशी होता, कुंदन सिंह पालनी होता तो कितना अच्छा रहता ?''[6] कुंदन डूम जाति का बालक है और जहाँ वह रहता है, उस मोहल्ले को 'डूमौड़ा का मोहल्ल' कहा जाता है । कुंदन पढ़ाई में होशियार है, लेकिन नीची जाति का होने के कारण उसे कक्षा में प्रथम स्थान नहीं दिया जाता है। विद्यालय में दलित बच्चों के साथ किए जाने वाले पक्षपात को कथानायक ने अपने कथन के माध्यम से चित्रित किया है ?''घरेलू परीक्षाओं में तो उसे इस संदेह से कभी छुटकारा नहीं था कि शिक्षक

लोग जान-बूझकर उसे एक नीची जात के लड़के को फर्स्ट नहीं आते देते । दूसरा, तीसरा कर देते हैं । पर बोर्ड की परीक्षा में ऐसा अन्याय होने की गुंजाइश ही नहीं थी। वहाँ तो परीक्षक के सामने सिर्फ रोल नंबर ही होता है, जो न डूम होता है न ब्राह्मण।''[7] कुंदन को अपने जाति सूचक उपनाम से नफरत होने लगती है। वर्तमान में जाति सूचक शब्दों के कारण, दलितों के साथ हो रहे भेदभाव के चलते, दलित समाज के लोगों ने अपने नाम के पीछे जाति सूचक शब्द लगाने का प्रचलन धीरे-धीरे कम कर दिया है।

बच्चे विद्यालय में निर्भय होकर शिक्षा ग्रहण करने जाते हैं; लेकिन वहाँ भी वे जाति के कारण डर-डरकर ही रहेंगे तो कैसे उनका शारीरिक और मानसिक विकास होगा। इस पर भी लेखक ने चिंता व्यक्त की है- ''कुंदन का जी घबराने लगा है। ड से जब 'डमरू' निकल आया तो 'डूम' निकलते क्या देर लगती है? जिस दिन से स्कूल में नाम लिखवाया, एक दिन ऐसा नहीं गया, जब किसी ने पीछे या आगे से डूम कह कर न चिढ़ाया हो।''[8]

भारतीय समाज में जातिगत भेदभाव के फलस्वरूप अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। आज भी अंतरजातीय विवाह को हमारे समाज में स्वीकृति प्रदान नहीं की जाती है। 'किस्सा गुलाम' उपन्यास में लेखक ने इस समस्या की त्रासदी को कई स्थानों पर गंभीरता से समाज के सामने रखा है। कुंदन भागीरथी नामक ब्राह्मण लड़की से प्रेम करता है, लेकिन भागीरथी के पिता ने विवाह के लिए इनकार कर दिया, क्योंकि एक शूद्र लड़के से ब्राह्मण लड़की का विवाह कैसे हो सकता है?-''उसे विश्वास हो गया है कि भागीरथी ने उसे शूद्र होने के कारण ही ठुकराया है । उसे विश्वास है कि उसका पिता भी अंतत: अपने शूद्र होने के आगे लाचार है और वह लाख कोशिश कर ले, लाख परतें चढ़ा ले अपने ऊपर, न तो खुद उबरेगा, न दूसरों को उबरने देगा।''[9] यदि कोई निम्न जाति का व्यक्ति , उच्च जाति में विवाह करना चाहे तो समाज इस बंधन के लिए बिल्कुल तैयार नहीं होता, जिसका परिणाम कई बार भयानक होता है- कर्नल एक ऊँची जाति का व्यक्ति है, जो अपने बेटे का विवाह नीची जाति की कन्या से करने के लिए तैयार नहीं होता है, जिसके फलस्वरूप दोनों खुदकुशी कर लेते हैं, क्योंकि उनके पास इसके आलावा कोई दूसरा विकल्प नहीं था- ''हरे राम! इस तरह जान देने की क्या जरूरत थी? भाग जाते, शादी कर लेते।' भाग जाते, नाबालिग थे। और कर्नल होने देता शादी अपने लड़के की एक डुमणी से। हुँह!''[10] इसी उपन्यास में चित्रण मिलता है, एक नवविवाहित जोड़ा अंतरजातीय विवाह करके अपने घर आता है। वहाँ समाज के लोग उसका तिरस्कार करते हैं। यहाँ तक की उन पर पत्थरों की बौछार की जाती है, गलियाँ दी जाती हैं। पुलिस वहाँ पहुँच जाती है। उनके द्वारा भी दंगा शांत करने के बजाए नवविवाहित जोड़े को ही धमकाया जाता है- ''तुम लोग आज ही यहाँ से दफा हो जाओ-समझे- थानेदार गरज रहा है-तुम बाहर निकले और किसी ने तुम पै पत्थर फेंक दिया, गोली मार दी तो ... ? दंगा भड़क जाएगा, दंगा। तुम साले यहाँ आये किसलिए? किसने कहा था आने को?''[11]

'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू' उपन्यास में लेखक ने बताया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में ही नहीं; बल्कि पढ़े-लिखे विक्षिप्त मानसिकता वाले लोग भी कार्यालयों में दलितों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार करते हैं। उपन्यास के चरितनायक विभूति बाबू के सहयोगी उनसे पूछते हैं- ''तो

आप किस कास्ट को बिलाँग करते हैं ?... अरे भाई, विभूति बाबू बोले- मैं तो अपने को ही बिलाँग नहीं करता। कास्ट-वास्ट क्या जानूँ ? फिर भी...वे अड़े रहे- इफ यू डोंट माइंड। विभूति बाबू ने महज पिंड छुड़ाने की गरज से कह दिया- वैल, आइ एम शिड्यूल कास्ट, इफ यू डोंट माइंड।''[12] 'किस्सा गुलाम' उपन्यास का कुंदन भी अपने कार्यालय में इस भेदभावपूर्ण रवैये को महसूस करता है । वह कहता है- ''लड़कपन में अपने कस्बे, अपने स्कूल की तो बात ही क्या ? लेक्चरर के रूप में भी मेरा अनुभव बड़ा कड़वा रहा था। मेरा ख्याल था कि जात-पाँत की भावना मेरे पिछड़े हुए कस्बे में जितनी है, उतनी और कहीं नहीं होगी। पर मैंने देखा कि अपने सहयोगियों के बीच भी मैं सहज नहीं हो सकता। मैं उनसे अलग हूँ- यह मुझे वे अपने हाव-भाव से, शब्दों के बीच ही खाली जगहों से जता ही देते हैं।''[13]

आधुनिक युग में राजनीतिक दल अपने फायदे के लिए दलितों को वोट बटोरने के लिए अपना मोहरा बना रहे हैं। जाति के नाम पर सामान्य जनता को भड़काया जाता है। 'किस्सा गुलाम' उपन्यास में सोशलिस्ट पार्टी के कुछ नेता नारायण राम को चुनाव में खड़े होने का आमंत्रण देते हैं, क्योंकि नारायण राम दलित है और उसके होने से दलितों के वोट उनकी पार्टी को मिले। नारायण राम अपनी पत्नी रामी से बातचीत के दौरान कहता है- ''बस यहीं पर तू गलती कर रही है रामी ! मेरी एक मात्र योग्यता यही है कि मैं शिड्यूल कास्ट हूँ, समझी ?... शिड्यूल कास्ट नहीं होता तो इतनी हायतोबा भी नहीं मचती। इतने बरस हो गए मुझे काम करते । कभी देखा तूने इन लोगों को मुझमें जरा भी दिलचस्पी लेते ?''[14] नारायण राम समझ गया था कि ये लोग मुझे बलि का बकरा बना रहे हैं। ये सोशलिस्टों की चाल है, शिड्यूल कास्ट को अपनी तरफ करने की। राजनीतिक पार्टियाँ अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए दलितों का शोषण करती हैं।

आज आए दिन महिलाओं के साथ दुर्व्यहार की घटनाएँ बढ़ती ही जा रही हैं। महिलाएँ हर जगह अपने आप को असुरक्षित महसूस करती हैं। रमेशचंद्र शाह ने अपने उपन्यासों में दलित महिलाओं के साथ होने वाली घटनाओं की ओर समाज का ध्यान आकर्षित करना चाहा है। उच्च वर्ग या आर्थिक रूप से संपन्न लोग अपने यहाँ काम करने वाली महिलाओं की मजबूरी का फायदा उठाते हैं । 'पूर्वापर' उपन्यास की रधिया बंटू के घर में नौकरानी का काम करती है। रधिया शादीशुदा है। बंटू उसकी निर्धनता का फायदा उठाता है और उसके साथ शारीरिक संबंध बनाता है। इसी उपन्यास में एक और चित्रण मिलता है कि बंशी की बहन जब अपनी माँ के बीमार पड़ने पर उनके स्थान पर लालू के घर में काम करने जाती है तो लालू का बड़ा भाई उसका शारीरिक शोषण करने की कोशिश करता है। बंशी की बहन इस विषय में बताती है-''लालू की अम्मा ने उसे लालू के बड़े भैया के कमरे में भेजा था चाय देकर आने के लिए। वह चाय का गिलास उसकी मेज पर रख के मुड़ी ही थी कि लालू के भैया ने दरवाजा अंदर से बंद कर लिया और उसे कसके बाँहों में जकड़ लिया। वह चिल्लाती-चीखती उसकी गिरफ्त से छूटने के लिए छटपटाती रही। फिर उसने पूरी ताकत से उसकी बाँह पर अपने दाँत गड़ा दिए और किसी तरह भाग कर, दरवाजा खोल के बाहर निकल आई।''[15] 'गोबर गणेश' उपन्यास में सरोज का पति गरीबों का शोषण करता है और अपने यहाँ काम करने वाले मजदूरों की लाचारी का फायदा उठाता है। वह मजदूर को काम के सिलसिले से बाहर भेजता है और पीछे से उसकी पत्नी के साथ शारीरिक संबंध बनाता है और सरोज के विरोध करने पर उसके साथ मार-पीट करता है।

'किस्सा गुलाम' उपन्यास का चरितनायक कुंदन आजीवन जातिवाद के इस दलदल से बाहर निकलने का प्रयास करता रहता है। वह समाज के जातिगत-भेदभाव की भावना से तिलमिला उठता है, वह सोचता है - ''मुझे एक घटना अक्सर याद आती है, जब भी याद आती है, मुझे एक डंक की तरह तिलमिला देती है। मैं आज तक नहीं उबर सका उससे। यह उन दिनों की बात है, जब काशी विश्वनाथ मंदिर में हरिजनों के प्रवेश को लेकर आंदोलन छिड़ा हुआ था और एक धार्मिक नेता ने— क्या नाम था उसका, करपात्री ?- हाँ, करपात्री ने कहा था कि 'मंदिर-प्रवेश करने से इन हरिजनों को क्या मिल जाएगा ? शास्त्रों में लिखा है कि एक सवर्ण को गर्भ-गृह में देवता के

दर्शन करने में जितना पुण्य प्राप्त होता है, उतना पुण्य तो शूद्र को केवल बाहर से मंदिर का कलश देख लेने से ही मिल जाता है।''[16] कुंदन सोचता है कि जातिगत दलदल से बाहर निकलने का केवल एक ही रास्ता है -''जैसे इस्लाम की बदौलत यहाँ दस करोड़ मुसलमान हो गए, वैसे ही ईसाइयत की बदौलत अगर दस करोड़ ईसाई भी हो जाते तो क्या बिगड़ जाता ? यह शूद्र नाम की चीज ही खत्म हो जाती कि नहीं ? जितने भी सवर्ण घेरे के बाहर के लोग हैं- सबके सब एक ही झटके में ईसाई बन जाते तो यह तमाशा देखने को मिल रहा है आज-हरिजनों को जिंदा जला दिया जाने का, बलात्कार और लूट-पाट का कम-से-कम यह तो देखने को नहीं मिलता। एकदम साफ-साफ तीन धड़े होते- हिंदू, मुसलमान और ईसाई।''[17] इन पंक्तियों से भलीभाँति स्पष्ट होता है कि हिंदू धर्म में जाति-पाँति की भावना और भेदभाव अन्य धर्मों के बजाय ज्यादा है। कुंदन को लगता है कि ईसाई धर्म उसके हिंदू धर्म से ज्यादा श्रेष्ठ है। इसलिए वह विदेश में एलिस नामक ईसाई लड़की से विवाह कर लेता है।

निष्कर्ष :

रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में दलित समाज के लोगों की समस्याओं एवं उनके कठिन संघर्षों का यथार्थ चित्रण हुआ है। इनके उपन्यास साहित्य में चित्रित दलित पात्र समाज में अपने अस्तित्व के लिए आजीवन संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं। इनके उपन्यासों में चित्रित दलित चरित्र जहाँ एक ओर अभावग्रस्त जीवन जीने को विवश दिखाई देते हैं, वही ये चरित्र सवर्णों व पूँजीपतियों की अमानवीयता, स्वार्थलिप्सा, अनुदारता एवं अवसरवादिता से असहनीय कष्ट झेलते दिखाई देते हैं। इनके 'किस्सा गुलाम' उपन्यास में कुंदन का जीवन संघर्षों के साथ शुरू होता है और संघर्ष करते हुए समाप्त हो जाता है। वे समाज में अपनी प्रतिष्ठा के लिए ही संघर्ष नहीं करते हैं; बल्कि अपनी दिनचर्या चलाने के लिए भी संघर्ष करते दिखाई देते हैं। इनके उपन्यासों में बड़े ही नहीं; बल्कि बच्चें भी घुटते, डरते और संघर्ष करते दिखाई देते हैं। रमेशचंद्र शाह ने अपने उपन्यासों में दलित की प्रत्येक समस्या की सीवन को उधेड़ कर रख दिया है। ❑

संदर्भ सूची :

1. श्यामसुंदर बी.ए,(सं.) हिंदी शब्दसागर, नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, चतुर्थ भाग, पृ. 2229
2. रामचंद्र वर्मा,(सं.) मानक हिंदी कोश, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तीसरा खंड, 1964, पृ. 35
3. राजेन्द्र यादव, (सं.) हंस (मासिक), जनवरी 1997, पृ. 53
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2005,पृ.13
5. रमेशचंद्र शाह, गोबर गणेश, राजकमल प्रकाशन पेपरबैक्स, प्रथम संस्करण, 2016, पृ. 55
6. रमेशचंद्र शाह, किस्सा गुलाम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम(वाणी) संस्करण, 2012, पृ. 57
7. वहीं, पृ. 149
8. वहीं, पृ. 56
9. वहीं, पृ. 189
10. वहीं, पृ. 70
11. वहीं, पृ. 77
12. रमेशचंद्र शाह, आप कही नहीं रहते विभूति बाबू, वाग्देवी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2001, पृ. 83
13. रमेशचंद्र शाह, किस्सा गुलाम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम (वाणी) संस्करण 2012, पृ. 222
14. वहीं, पृ. 119
15- रमेशचंद्र शाह, पूर्वापर, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा) लिमिटेड, संस्करण 2020, पृ. 57
16. रमेशचंद्र शाह, किस्सा गुलाम, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2012, पृ. 21-22
17. वहीं, पृ. 22

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आकलन

हिंदी बाल कहानियों की कथानक रूढ़ियां एवं भाषा संरचना

एस. साधना चनु

शोधार्थी, हिंदी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय
इंफाल-795003
8131070398
chanusadhana@gmail.com

ऐसा कहा जाता है कि आज का बालक ही कल का भविष्य है। हिंदी साहित्य लेखन के अलग-अलग क्षेत्रों में समृद्ध लेखन की परंपरा विद्यमान मिलती है। लेकिन बाल साहित्य लेखन रचनाकारों के लिए हमेशा से हाशिए का लेखन रहा है। सामान्य साहित्य की तरह बाल साहित्य लेखन में विभिन्न साहित्यिक विधाएँ हैं, जैस-बाल कविता, बाल कहानी, बाल नाटक, बाल गीत, बाल उपन्यास आदि। इनमें बाल कहानी को सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई है। संभवत: बाल कविताओं के बाद बाल कहानियों का सर्वाधिक सृजन हुआ है। हमने बचपन में किसी-न-किसी से कहानियाँ सुनी होंगी और बचपन में तो कहानियाँ सुनने के लिए हमेशा उत्सुकता होती है। बचपन में सुनी लोक-कथाएँ, पंचतंत्र की कहानियाँ, अकबर बीरबल की कहानियाँ आदि भी बाल कहानियों के क्षेत्र में रखी जाती हैं। आज भी घर के किसी बुजुर्ग सदस्य, दादा-दादी, नाना-नानी आदि से बच्चे कहानियाँ सुनते हैं, जिनमें बहुत-सी कहानियाँ आज भी याद हैं। जिन कहानियों को बचपन में सुनाया गया है, उनसे बालकों को बहुत सीख मिलती है और मनोरंजन भी खूब होता है। बाल कहानियों में राजा-रानी, दैत्य, परी, भूत-प्रेत तथा संतति अलग महत्व रखते हैं।

हिंदी बाल साहित्य में बाल कहानियों के कथानक विभिन्न विषयों से प्रभावित पाए जाते हैं। जैसे- उद्देश्य प्रधान बाल कहानियाँ, पशु-पक्षी संबंधी बाल कहानियाँ, नीति परक बाल कहानियाँ, साहसिक बाल कहानियाँ, वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक बाल कहानियाँ, मुहावरे एवं लोकोक्ति पर आधारित बाल कहानियाँ, हास्य बाल कहानियाँ, परी कथाएँ व लोक कथाएँ, ऐतिहासिक बाल कहानियाँ, पौराणिक कथाएँ आदि कथा-वस्तुओं पर कहानी लेखन होते हैं।

बाल कहानी क्या है, कैसी है, कैसी होनी चाहिए एवं उनके अर्थ के संदर्भ में डॉ. शकुंतला कालरा के शब्दों में - ''बाल कहानी बड़ों की कहानी के समान गद्य साहित्य की एक स्वतंत्र विधा है। इसका इतिहास इतना ही पुराना है, जितना बालक के जन्म की कहानी।''[1]

''बाल कहानी से तात्पर्य है, वह कहानी जो बालकों के लिए लिखी गई हो, जिसके केंद्र में बालक भी हो सकता है और अन्य भी। इसका पाठक वृंद बालक होते हुए भी वह किसी के लिए भी पठनीय हो सकती है। बाल कहानी में बालकों के संसार का चित्रण होता है। उनके सुख-दुख, हर्ष-विषाद, उनके सपने एवं उनकी अनुभूतियाँ उसमें चित्रित रहती हैं। इसमें कहानीकार की दृष्टि वही होती है, जिससे बालक दुनिया को देखता है। दूसरे शब्दों में बाल कहानी में बालक की मनोकांक्षाओं और भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है।''[2]

बाल साहित्य (बाल कहानी) वह है, जो बच्चों के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर लिखा गया हो, बालक उस साहित्य को पढ़कर अपनी मानसिक जिज्ञासाओं, कल्पनाओं, भावनाओं व रचनात्मक क्षमताओं आदि का विकास कर सकें।

बच्चों की कहानियों में कथावस्तु का तत्व या विषय सबसे अधिक महत्वपूर्ण होता है। कहानी के प्रति बच्चों का लगाव उसकी जिज्ञासा का परिणाम है। कहानी के कथानक निर्माण के बारे में इस प्रकार कहा गया है कि- ''कहानी का निर्माण ऐसे तत्वों से होता है, जिनसे इन समस्त जिज्ञासाओं की तृप्ति हो जाती है। कथावस्तु, पात्र और चरित्र चित्रण, देश काल, उद्देश्य और शैली के सर्वमान्य तत्व बाल कहानी में विद्यमान अवश्य रहते हैं। उदाहरण के लिए लोक कथाओं में तथा इसी प्रकार के अन्य परंपरागत कथाओं में देश और काल का वर्णन विस्तार से नहीं किया जाता है। पाठक को कहानी के संसार में प्रविष्ट कराने से नहीं किया जाता। पाठक को कहानी के संसार में प्रवेश कराने के लिए 'एक समय की बात है' और 'किसी नगर या गाँव में' कहकर देश का संकेत भर कर देना ही पर्याप्त होता है। नीति कथाओं में घटनाओं और पात्रों की योजना कहानी के उद्देश्य को सामने रखकर ही की जाती है। पात्रों के चरित्र-चित्रण के लिए उनकी वेश-भूषा, आकार-प्रकार और चारित्रिक गुणों का वर्णन भी परंपरागत कहानियों में सांकेतिक रूप में ही किया जाता हैं।''[3]

बाल कहानी के मुख्य तत्वों में कथावस्तु, पात्र योजना, संवाद, भाषा-शैली और उद्देश्य आदि हैं, जिनमें कथानक सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण होता है। इसके बिना कथा निर्माण की प्रक्रिया शुरू नहीं हो सकती। कथा-प्रक्रिया के निर्माण में कुछ पात्रों के चरित्र व घटनाओं का संयोजन ऐसा होता है, जिन्हें एक से अधिक कहानियों में बार-बार दोहराया जाता है, जिन्हें कथानक रूढ़ियाँ कहा जाता है जिनका अनुशीलन इस प्रकार किया जा सकता है :

1. लोक कथाओं की शैली पर आधारित बाल कहानियाँ : इन कहानियों के विषय अंतर्गत ऐसे कथावस्तु आते हैं, जिसमें परंपरागत, अंधविश्वास, जादू-टोना, त्योहारों, उत्सव आदि की कथाएँ सम्मिलित हैं। इसमें लोक-कथाओं के कथानक पर विविध प्रकार की कहानियों का सृजन होता है। डॉ. परशुराम शुक्ला की 'लोक कथाओं पर आधारित बाल कहानियाँ' इस कहानी संग्रह में लोक कथाओं की बारह लोक कथाएँ सम्मिलित हैं, जिसमें इच्छाधारी नाग, धोखेबाज जादूगरनी आदि कहानियाँ हैं। डॉ.उषा यादव की 'हिरनावती' (ब्रज की लोककथा), महेंद्र भटनागर की कहानी संग्रह 'दादी की कहानियाँ' इसमें सुनी अनसुनी लोक कथाएँ हैं। देवेन्द्र कुमार की 'एशिया की सर्वश्रेष्ठ लोक कथाएँ', 'यूरोप की सर्वश्रेष्ठ लोक कथाएँ' आदि और जयप्रकाश भारती की 'भारत की प्रतिनिधि लोककथाएँ'। इन लोक कथाओं में रोचक ढंग से कथानक रूढ़ियों का पुनर्गठन किया गया है।

2. नीति एवं शिक्षाप्रद बाल कहानियाँ : नीति एवं शिक्षाप्रद बाल कहानियों का मूल स्रोत तो पंचतंत्र एवं हितोपदेश हैं। पंचतंत्र की रचना नीति एवं शिक्षा देने के लिए हुई थी। इन कहानियों में प्रयुक्त कथानक रूढ़ियों के कारण बालकों को शिक्षा मिलती है। विभिन्न लेखक इन्हीं कथानकों पर कहानी रचना करते रहे हैं। इसके अतिरिक्त अन्य लेखकों द्वारा अपनी मौलिक एवं रचनात्मक क्षमता से नई-नई शिक्षाप्रद बाल कहानियों का भी सृजन किया गया है। इनमें भीष्म साहनी की 'गुलेल का खेल', मोहन राकेश की 'कांटेदार आदमी' हैं। डॉ. परशुराम शुक्ला 'नैतिक बाल कहानियाँ' नामक कहानी संग्रह में 25 नीति एवं शिक्षा परक बाल कहानियाँ संकलित हैं, जिसमें बालकों में नीति निर्माण और संवेदनशील व्यक्ति बनने की क्षमता जगाने और बालकों में सद्विचार एवं चारित्रिक संस्कार

जगाने के लिए प्रयत्न किया गया है।

3. ऐतिहासिक, साहसपूर्ण एवं देशभक्ति पर आधारित बाल कहानियाँ : इस प्रकार की कहानियों के अंतर्गत ऐसे कथानक होते हैं, जिसमें ऐतिहासिक व्यक्ति, घटना, देश-प्रेम की भावना युक्त कहानियाँ होती हैं। ऐतिहासिक कहानियों की कथावस्तु इतिहास की सुप्रसिद्ध घटनाओं पर आधारित होती है, परंतु कहानियों में मौलिकता तत्व का रूप देखने को मिलते हैं। ऐतिहासिक कहानियाँ बच्चों के लिए अधिकतर जीवनी के रूप में लिखी जाती हैं। जैसे राजा हरिश्चंद्र, रानी लक्ष्मीबाई, महात्मा गांधी, बाल गणेश आदि नाम से कई कहानियाँ लिखी गईं। मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित 'राणा प्रताप', 'राजा मानसिंह', 'स्वामी विवेकानंद' आदि और जयशंकर प्रसाद की 'बाल चंद्रगुप्त' प्रमुख हैं। कल्पना सिंह की 'नमन करो इस मातृभूमि को', 'देश के लिए', 'सैनिक मेरा नाम है' आदि संजीव गुप्ता की 'साहसी बाल कथाएँ', डॉ. परशुराम शुक्ल की 'वीरांगना लक्ष्मीबाई', डॉ. शकुंतला कालरा की 'राणा के वचन' इसके अंतर्गत आती हैं। ऐतिहासिक तथा राष्ट्रीय कहानियों से बच्चों को वीर एवं साहसी बनने का प्रेरणा मिलती है।

4. हास्य एवं व्यंग्य प्रदान बाल कहानियाँ : इस कहानी की कथावस्तु में जो कहानियाँ आती हैं, उनमें कथानक हास्य प्रधान होते हैं, जिन्हें सुनते समय या पढ़ते समय पाठकों पर हँसी उत्पन्न होती है और मनोरंजन प्राप्त होता है। हास्य-विनोदपरक कहानियाँ मानसिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक होती हैं। इस कथावस्तु के अंतर्गत अकबर बीरबल की कथाएँ, तेनालीराम की कथाएँ आदि भी आती हैं। किरण बारिया की 'शेखचिल्ली के कारनामे', ओमप्रकाश कश्यप की 'अकली बकली की पाठशाला','वेद चाचा और करामाती लट्टू'। प्रकाश मनु की 'अजब अनोखी हास्य कथाएँ' और 'बच्चों की 51 हास्य कहानियाँ', सुरजीत की 'मुल्ला नसरुद्दीन के कारनामे'। डॉ. उषा यादव की 'भोंदूराम' इस किस्म की कहानियाँ हैं। इन कहानियों से बाल पाठकों को पढ़ते समय या सुनते समय हँसी आ जाती है।

5. मुहावरों एवं कहावतों पर आधारित बाल कहानियाँ : मुहावरों, कहावतों तथा लोकोक्तियों की पृष्ठभूमि पर कई कहानियों की रचना हुई है। जैसे- जैसी करनी वैसी भरनी, दिन में तारे, जो गरजते हैं वह बरसते नहीं, अंगूर खट्टे हैं आदि कहावतों पर कई सारी लघु कहानियाँ लिखी गई हैं। राधाकांत भारती की 'अंधेर नगरी चौपट राजा टके सेर खाजा', 'अंगूर खट्टे हैं', 'धोबी का कुत्ता घर का न घाट का', सीताराम खोड़ावाल की 'कहावतों की कहानियाँ में मुहावरों एवं कहावतों की कथावस्तु पर लिखी गई हैं।

6. नवीन पशु कथाएँ एवं परी कथाएँ अर्थात फैंटेसी पर आधारित बाल कहानियाँ : इन कहानियों की विषयवस्तु में परियों, पशु-पक्षी को पात्र बनाकर कहानियाँ सृजन करते हैं। इनमें यथार्थ जिंदगी से दूर बच्चों को एक नई दुनिया देती है, जो काल्पनिक तथा चमत्कारिक एवं मनोरंजक होती है। परी कथाएँ बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य के लिए बहुत आवश्यक होती हैं। फैंटेसी के पात्र इस दुनिया कोई जड़ पदार्थ भी हो सकते हैं। जैसे मनुष्य, पशु-पक्षी, कंगन अथवा खिलौना आदि और जीन, भूत प्रेत या ग्रह-मानव आदि कल्पनिक पात्र भी हो सकते हैं। इसमें प्रकाश मनु की 'तितली का घर', 'चुनमुन और चिड़िया का बच्चा' आदि कहानियाँ पशु-पक्षी की आनंदमयी

कहानियाँ हैं। डॉ. उषा यादव की 'परी की पायल' कहानी संग्रह के अंतर्गत कई कल्पनामय कहानियाँ हैं, जिसमें 'बजी बासुरी', 'अंगूठी गायब', 'अनोखा उपहार', 'पतीली में खीर' आदि सत्तरह कहानियाँ है। मुंशी प्रेमचंद की 'जंगल की कहानियाँ' में शेर, सांप, हाथी, बाघ, कुत्ता आदि विषयों से संबंधित कहानियाँ है। सुमित्रानंदन पंत का 'हंस और राजकुमारी', 'पीलू हाथी', श्री प्रसाद की 'इंटरव्यू', 'कातिल वन का कांटा', 'कौन जीतेगा', जहूरबख्श की 'सोने का पानी' आदि कहानियाँ इसके अंतर्गत आती हैं। इस प्रकार की कहानियाँ छोटे बच्चों को बहुत अच्छी लगती हैं।

7. यथार्थ एवं आधुनिक रंग ढंग की बाल कहानियाँ : इन कहानियों में विषय यथार्थ जीवन की घटना से संबंधित कथा, आधुनिकता बोध, आज के बच्चे की समस्या, स्कूल जीवन की कहानियाँ, आधुनिक रंग ढंग की प्रयोगात्मक कहानियाँ शामिल हैं। डॉ. शकुंतला कालरा की 'विश्वास', 'नई स्मिता' स्कूली जीवन की कहानियाँ हैं। डॉ. उषा यादव की 'दादी अम्मा का खजाना' संग्रह में पर्यावरण की समस्या, सामाजिक समस्या आदि को मार्मिक रूप और रोचक ढंग में दिखाया गया है। इसमें 'विजेता', 'बूंद बूंद पानी', 'दूसरा मिडास', 'नेकी का फरिश्ता', 'इम्तहान में' आदि कहानियाँ संकलित हैं। हरिकृष्ण देवसरे की 'पीपल वाला भूत', 'बिल्ली रास्ता काट गई', 'गुब्बारे की जीत', शकुंतला वर्मा की 'बस पाँच मिनट', नागेश पांडेय संजय की 'खोया नहीं', दिनेश पाठक शशि की 'सपनों में सपना', रमेश कुमार अमित का 'पश्चाताप के आँसू' चंद्रशेखर व्यास का 'सुबह का सपना' आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

8. पौराणिक एवं धार्मिक कथाएँ : भारत का प्राचीन इतिहास, पुराणों, धार्मिक तथा संस्कृति से परिचित कराने के लिए इन कथा वस्तुओं में कहानियाँ सृजन करते हैं। इसमें देवी-देवताओं की कहानियाँ और उनमें सृष्टि के रहस्यों को स्पष्ट रूप करने का प्रयास होता है। रामायण और महाभारत इन दोनों महाकाव्यों की उपकथाएँ देखने को मिलती हैं। पौराणिक कहानियों में धार्मिक ज्ञान मिलता है। इनमें ज्ञानवर्धक, मनोरंजक तथा शिक्षा का तत्व भी विद्यमान होता हैं। इनमें महादेव, पार्वती, कृष्ण, गणेश हनुमान, भीम, युद्ध का वर्णन, रोचक कथा, वीरता आदि के प्रसंगों से कथा का निर्माण किया जाता है। डॉ. शकुंतला कालरा की 'कौन करेगा पूजा', जयप्रकाश भारती की 'राक्षसी का ब्याह', धार्मिक कथाओं में बौद्धों की जातक कथाएँ, उपनिषदों की कथाएँ बालकों को दी जाती हैं। चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट प्रकाशन से सावित्री द्वारा पौराणिक कहानियाँ भाग-1, भाग-2, भाग-3 में अठारह कहानियाँ है, जिनमें- लाख का घर, द्रौपदी का स्वयंवर, भीम और हनुमान, राजा शिवि, बाणासुर, भस्मासुर, कालिय नाग आदि संकलित कहानियां हैं।

9. अन्य बाल कहानियाँ : इसके अंतर्गत ज्ञान विज्ञान संबंधी कहानियाँ, जासूसी कहानियाँ, राजा-रानी की कहानियाँ, मर्मस्पर्शी एवं भावना पूर्ण कहानियाँ, किस्सागोई अंदाज की बाल कहानियाँ, असाधारण यथार्थ बाल कहानियाँ, बुद्धि विनोद कथाएँ, आत्मकथात्मक ढंग की कहानियाँ, पर्यावरण संबंधी बाल कहानियाँ, बाल मनोवैज्ञानिक पर आधारित बाल कहानियाँ, परंपरागत बाल कहानियाँ, किशोर बाल कहानियाँ, मनोरंजक एवं दिलचस्प कहानियाँ आदि अन्य कथानक से बाल कहानियों का निर्माण किया गया है। आधुनिक युग में विज्ञान का आधिक महत्व है। वैज्ञानिक के आविष्कार पर अनेक कहानियाँ आई हैं, जिसमें प्रकाश मनु का संग्रह- 'अद्भुत कहानियाँ ज्ञान- विज्ञान', जयप्रकाश भारती 'विज्ञान की विभूतियाँ'। डॉ. शकुंतला कालरा की 'विश्वास', 'उसकी दिवाली', 'मोती-जोति' कहानियाँ बाल मन को छू लेने वाली कहानियाँ है और 'चमत्कार का रहस्य' उनका विज्ञानपरक कहानी संग्रह है। डॉ. उषा यादव की 'झोले में चांद', 'नन्हीं शहजादी', 'बोलते खंडहर' आदि हैं। 'बोलते खंडहर' कहानी नई ढंग की कहानी है, जिसमें किशोर अवस्था के दो लड़के स्कूल पिकनिक में आने के बाद महलगाँव की खोज एवं उस गाँव की अन्य पुरानी धरोहर की खोजबीन करने की कहानी है। डॉ. उषा यादव और डॉ. राजकिशोर सिंह द्वारा संपादित 'हिंदी की श्रेष्ठ बाल कहानीयाँ' में परंपरागत किस्म की बाल कहानियां है और कुछ नए दिन की बाल कहानियाँ भी शामिल हैं। डॉ. परशुराम शुक्ल

'बाल विमर्श की कहानियाँ', वैज्ञानिक बाल कहानियाँ' आदि में अलग-अलग तरह की बाल कहानियाँ हैं। स्वयं प्रकाश की 'प्यारे भाई रामसहाय', 'बेर की गुठली' आदि कहानियाँ हैं। शकुंतला वर्मा ने बच्चों के लिए चुटकुले कहानियाँ लिखी हैं। उनके बाल कथा संग्रह 'खेल खेल में', 'हार की जीत', 'परिवर्तन' आदि आते हैं। जाकिर अली 'रजनीश' की 'सुम्मी का सपना', 'मैं स्कूल जाऊँगी' आदि, मुंशी प्रेमचंद की 'ईदगाह', 'दो बैलों की कथा', 'बूढ़ी काकी' आदि कहानियाँ मर्मस्पर्शी एवं भावना पूर्ण कहानियाँ हैं।

उपर्युक्त विषयों के अनुसार कथानक पृष्ठभूमि पर कहानियाँ लिखी जाती हैं। विभिन्न विषयों को लेकर कहानियों द्वारा बच्चों को मनोरंजन प्रदान करते हैं। उन कहानियों से बालकों को सीख मिलती है और उसे सुनकर या पढ़कर अधिक प्रभाव पड़ता है। उससे बालकों की बुद्धि एवं मानसिक क्षमता की विकास यात्रा में सहयोग मिलता है।

बाल कहानियों की भाषा संरचना :

अच्छी भाषा और शैली कहानी सृजन में आवश्यकता होती है। किसी विषय या कथ्य को कह देना मात्र कहानी नहीं होती। उस कथ्य को कहने के लिए कहानी में विशेष तरह की शैली, शब्द अथवा वाक्य को रसात्मक ढंग से प्रस्तुत करना पड़ता है। बाल कहानी की भाषा ऐसी होती है, जो बालकों को सरलता से समझ में आए। बालक जब कहानी को पढ़े या सुने उस समय उसे तुरंत समझ में आए। मोहन राकेश की 'सुनहरा मुर्गा, काला बंदर और लाल अमरूद का पेड़' कहानी की प्रथम पंक्ति इस प्रकार है- ''सुनहरा मुर्गा अपनी तरह एक था''[14] इस वाक्य में सुनहरा मुर्गा को 'अनोखा' बताने के लिए 'अपनी तरह एक' का प्रयोग किया गया। इसी तरह लेखक बाल पाठक को पढ़ते समय सरलता से समझ में आने वाले शब्द चयन करके लिखता है। सुमित्रानंदन पंत और सुमिता पंत की 'पीलू हाथी' कहानी की पंक्ति इस प्रकार है- ''एक घाटी के किनारे पीलू हाथी रहता था। घाटी के पास एक सुंदर-सा वन था।''[15] इस कहानी की भाषा संरचना इस प्रकार की गई है कि वह बारीकी से एकाएक चीज को शुद्धता से बता देती है। इसमें कोई शब्द जाल नहीं है। बाल पाठकों को पढ़ते समय कोई परेशानी नहीं होती।

बाल कहानी की भाषा सरल, सहज, सुगम, हास्य, बोधगम्य तथा स्वाभाविक होती है। बाल पाठकों को पढ़ते समय मनोरंजन एवं रुचि प्रदान करते हैं। इनके भाषा में लय-ताल, चंचलता, तुक-तुकिया होता है जिससे बालक खेल-खेल की तरह उसे पढ़ सके। कहानी के बीच में कभी-कभी गीत, कविता, संवाद आदि भी आ जाते हैं। श्री प्रसाद की 'गुरु' कहानी में गाना इस प्रकार आया है :

''राम करेगा राज
अयोध्या सुखी रहे
परे सबकी आस
ना कोई दुखी रहे
अफसर आया आज।''[16]

बाल कहानी की भाषा को आयु तथा अवस्था के अनुकूल होना पड़ता है। छोटे बच्चे जिसकी उम्र पाँच से छह साल होती है, उनके लिए कम वर्णिक शब्द और छोटी वाक्य से रचना होती है। डॉ. शकुंतला कालरा कि 'उसकी दिवाली' कहानी की प्रथम पंक्ति इस प्रकार है, ''दिवाली में तीन दिन बाकी थे। माया आजकल झाड़ू बर्तन करने रोज देर से आती।''[17] इस तरह वाक्य ज्यादा लंबे नहीं होते हैं और शब्द भारी-भरकम भी नहीं होते हैं। किशोर अवस्था बालक, जिनकी उम्र दस से पंद्रह साल होती है उनके लिए कहानी की भाषा अलग होती है। छोटे बच्चों के लिए कहानी की भाषा किशोर वर्ग को रुचि अनुरूप होती है। डॉ. उषा यादव की 'बोलते खंडहर' कहानी का आकार थोड़ा-सा बड़ा है। यह कहानी 40 पृष्ठ लंबी है, जो किशोर वर्ग के पाठक को बहुत रुचि उत्पन्न कर सकती है। कहानी की शुरुआत की पंक्ति इस प्रकार है, ''वनभोज? नाम ही इतना आकर्षक था कि पूरी क्लास ललचा उठी, सर आप जब स्कूल में पढ़ते थे,''[18] इसमें वनभोज का अर्थ निकालना छोटी बच्चों के लिए कठिनाई हो सकती है, परंतु कहानी के भीतर ही इसका अर्थ निकल आता है। इस कहानी में लेखिका ने 'पिकनिक' या अन्य शब्द के बदले इस शब्द का प्रयोग किया, जिससे किशोर पाठकों को कहानी के

प्रति आकर्षण प्रदान करे। कहानी में द्वि आर्थिक एवं विभिन्न अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग नहीं करना है, जिससे बाल पाठक इसका और अर्थ तथा अलग मतलब न निकाले। डॉ. उषा यादव की भोंदूराम कहानी में माँ भोंदूराम को मीठा-मीठा तथा नरम-नरम से बोलने को कहती है, पर भोंदूराम इसका अपना मतलब निकाल के अपनी भाभी के पूछने पर मीठा शब्द के बदले मिठाइयों के नाम बताता है, जैसे- रसगुल्ला, राजभोग, रसमलाई और बर्फी, लड्डू, पेरा तो सामान्य मिठाइयाँ समझकर छोड़ देते हैं।

बाल कहानियों की भाषा में कृत्रिम, बनावटी तथा भारी और लदी-फदी भाषा नहीं होती है। किस वर्ग में कितने शब्द वाले वाक्य होने चाहिए, कितनी संख्या में संयुक्ताक्षर होते हैं, इसका चयन बाल कहानीकार बहुत ध्यान से करते हैं। बाल कहानी में तत्सम शब्द का प्रयोग नहीं करते हैं। इसकी भाषा बोलचाल की भाषा होती है, जो आसपास के लोगों द्वारा बोली जाती है। बाल कहानी की भाषा सीधी-सादी, हास्य, आनंदयुक्त होती है, जिससे कहानी के प्रति रुचि एवं आकर्षण पैदा होता है।

उपसंहार :

अत: बाल साहित्य व बाल कहानी लिखते समय लेखकों को बच्चों की मानसिक स्थिति को गहराई से समझना होता है। कहानी सुखी बचपन के लिए अनिवार्य है। बच्चे अत्यंत कठिन परिस्थितियों में पलकर भी बचपन में सुख उपभोग कर सकते हैं।

बच्चों को किस विषय में रुचि है, कौन से शब्द व शैली के प्रयोग से बच्चे समझेंगे, कहानी की ओर आकर्षित होंगे और बालकों को मनोरंजन प्रदान करेंगे-बाल कहानी का विषय या कथावस्तु रोचक बनाने के लिए मनोरंजक ढंग से प्रस्तुत करना पड़ता है। बाल साहित्य रचना सृजन के लिए बचपन को फिर से जीना पड़ता है, बच्चे जैसा सोचना पड़ता है। बाल कहानी का विषय चयन भी आवश्यक है।

अनुचित विषयों, जिससे बाल पाठकों पर बुरा प्रभाव पड़े उसको कथ्य रूप नहीं देना चाहिए, जिससे बाल पाठकों के मानसिक स्तर पर बुरा प्रभाव पड़े। शिक्षाप्रद बात को भी रोचक और मोहक अंदाज से बच्चों की भाषा में संप्रेषित करके बालकों को बहुत कुछ सिखाया जा सकता है। बाल कहानी के माध्यम से बालकों को नैतिक शिक्षा प्रदान कराना प्रमुख उद्देश्य होता है, जिससे बालक को कल्पनाशील तथा संवेदनशील मनुष्य के रूप में विकसित होने का अवसर प्राप्त हो सके। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. हिंदी बाल साहित्य : विचार और चिंतन : डॉ शकुंतला कालरा, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं. 97
2. वही, पृष्ठ सं.97
3. हिंदी बाल साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन : मस्तराम कपूर, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन प्रा.लि., नई दिल्ली 2015, पृष्ठ सं. 245
4. बिना हाड़ मांस के आदमी : मोहन राकेश, कहानी : सुनहरा मुर्गा, काला बंदर और लाल अमरूद, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृष्ठ सं.27
5. हंस और राजकुमारी : सुमित्रानंदन पंत और सुमिता पंत, कहानी : पीलू हाथी, सुमित्रा प्रकाशन, इलाहाबाद, 2016 पृष्ठ सं.7
6. बाल दिवस और अन्य कहानियाँ : श्री प्रसाद, कहानी : गुरु, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं.40
7. मोती-जोती(बाल कहानी संग्रह) : शकुंतला कालरा, प्रकाशक- अतुल अग्रवाल, अनुपम प्रकाशन, दिल्ली कहानी : उसकी दिवाली, 1998, पृष्ठ सं.15
8. बोलते खंडहर : उषा यादव, सं. : आभा गौड़, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली, 2020, पृष्ठ सं.1

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

यथार्थ

हम लेना नहीं देना भी जानते हैं...!

देवा बासफोर

शोधार्थी, हिंदी विभाग
राजीव गांधी विश्वविद्यालय
अरुणाचल प्रदेश, दोइमुख-791112
9365096667
devabasfor567@gmail.com

''भले कोमल है हृदय मेरा
किंतु अवसर दे के देखो
रण में विजय पताका लहरा सकती हूँ मैं
किन्नर हूँ मैं
मुझे अपना के देखो एक नया संसार बसा सकती हूँ मैं।''[1]

मानवीय संवेदना से अंतर्भुक्त ये उद्‌गार एक किन्नर द्वारा स्वरचित हैं। कवयित्री सिमरन सिंह इस कविता की चंद पंक्तियों में न केवल अपने हृदय के भावों को पाठकों के समक्ष उड़ेल देती हैं, बल्कि साफ और स्पष्ट शब्दों में यह आह्वान भी करती हैं कि किन्नरों में वह सारी प्रतिभा और गुण मौजूद हैं, जिनके लिए प्राय: समाज का तबका उनके प्रति एक उपेक्षा अथवा नकार का भाव रखता है। आधुनिक विश्व से तालमेल बिठाते ये लोग किसी भी कार्य को करने के लिए इच्छुक और आतुर दिखाई देते हैं या कि लालायित होते हैं। उनकी यह ललक, यह आतुरता या कहें व्याकुलता संवेदना के धरातल पर एक सघन रूप ले लेती हैं, जब बात अपने राष्ट्रहित, शौर्य और अभिमान की हो! दूसरे शब्दों में, उनका स्वर और भी तीखा हो जाता है, जब सवाल देश से प्रेम करने की हो अर्थात अपना योगदान समाजहित और राष्ट्रहित में देने की हो! शायद, वह ऐसी स्थिति में कभी भी 'मुँह मोड़ने' की बातें न करें, बशर्ते उनके योगदान और सहयोग को प्रतिष्ठाजन्य समझा जाए! उन्हें उनके जीवन के महत्वपूर्ण अवसर दिए जाए, पूरकत्व ही उसके कार्य की सराहना राष्ट्र एवं समाज द्वारा मुक्त कंठ से की जाए! इनमें भी सबसे महत्वपूर्ण कामना कवयित्री की है, जो एक तरह से 'थर्ड जेंडर' समाज की प्रतिनिधि की भूमिका में जाहिर करते हुए कहती हैं कि हमें समाज के द्वारा पूरी तरह से अपनाए जाने की जरूरत है, जिससे आलोच्य समुदाय भी इस दुनिया रूपी विशाल प्रांगण में अपने सहयोग द्वारा सुंदर फूल खिला सकते हैं।

इसी तरह की आकाँक्षाएँ लिए एक किन्नर रोजी का वक्तव्य द्रष्टव्य है- ''अपने देश के लिए तो देखिए, हम मर-मिटेंगे। जिस तरह फौज में या पुलिस में एक सिपाही भर्ती होता है, उसकी तरह सरकार हमें भी हथियार दे दे तो मैं तो लड़ूँगी। लड़ते-लड़ते हिंदुस्तान के पीछे अपनी जान दे दूँगी। बस मेरी यही तमन्ना है।''[2]

रोजी का यह वक्तव्य लेखिका नीरजा माधव द्वारा अपने एक साक्षात्कार में कहा गया था। एक किन्नर अपने देश के प्रति किस प्रकार की प्रगाढ़ भक्ति का भाव रखती है अथवा वह भारतवर्ष और अपने समाज के लिए क्या कर सकती है, इसका अनुमान रोजी के उक्त वक्तव्य से स्वत: ही लगाया जा सकता है।

उपर्युक्त दोनों उद्धरण वास्तव में विचार योग्य हैं। युगों-युगों से समाज 'तृतीय लिंगी समुदाय' को मुख्यधारा से विलग करके देखते आया है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो प्राय: उनकी कार्य-क्षमता की अनदेखी ही की गई है। उनका जिक्र छिड़ते-ही एक प्रकार की नकारात्मकता की गूँज लोगों के मन-मष्तिष्क में दौड़ने लगती है। समाज में विशेषकर 'भारतीय समाज' इनकी उपस्थिति केवल और केवल अवसर विशेष पर दिए जाने वाले आमंत्रण अथवा एवज में मिले आशीर्वाद के रूप में ही देखता आया है। अन्यथा, ये 'यम की दीप' की तरह उस समाज में विद्यमान हैं, जिन्हें मुड़कर देखना भी नावाजिब अथवा अपशगुन माना जाता रहा है।[3]

हालाँकि, अब इसका एक अन्य रूप भी देखने को मिलता है। अब ये उन स्थानों पर अथवा नवजात शिशु के जन्मोत्सव, विवाह आदि की खबर पाकर बिन बुलाए ही पहुँच जाते हैं। इसका एक महत्वपूर्ण पक्ष आर्थिक अभाव से लगातार जूझने और संघर्ष करने का भी है। सामान्य-जन और इनके मध्य बधाई व नेग तथा बस, ट्राफिक, ट्रेन आदि में माँगने के कार्यकलाप में ये अक्सर सन्नद्ध रहते हैं। कई बार लोगों द्वारा अवांछित टिप्पणी और कुछ पैसे पाने के बदले में तंज, गुस्सा और हिकारत भी सहना पड़ता है। इसका एक अर्थ यह भी हो सकता है कि जिस समाज ने उन्हें अपने से दूर किया है, वे अब उनकी इस प्रथा पर भी मानो पूर्ण विराम लगा देना चाहता है! इसके पीछे उनकी भूमिका मनुष्य की मन:स्थिति में अधिक माँग करने के रूप में भी बैठी हुई है। कहने का आशय है कि ये वर्ग लोगों से केवल लेना जानता है; ऐसा बहुतेरे लोगों द्वारा कहते पाया गया है। पर ऐसा कहने व सोचने से पहले तथाकथित सभ्य कहे जाने वाले लोगों को पूर्वाग्रह के काले चश्मे खोलकर किन्नर समुदाय की पारिस्थितिकी पर तटस्थ ढंग से नजर डाल लेना उचित प्रतीत होता है। शायद तभी संपूर्ण समाज इनके लेने वाले पक्ष को इतर रख अपने समाज, राष्ट्र एवं मनुष्य होने के नाते इनके मनुष्यता भरे गुणों वाले एक बहुत ही जरूरी पहलू पर सम्यक दृष्टि अपना पाएँगे।

किन्नरों के पीठिका पर दृष्टि डाले तो देख पाएँगे कि उस समय के पौराणिक तथा महाकाव्यात्मक ग्रंथों में जिस समाज का वर्णन हुआ है, उसमें किन्नर कहीं से अनछुए नहीं रहे हैं। हाँ, यह बात अलग है कि उस समय भी कुछ अपवादों को छोड़कर उनको वह सम्मान न मिल सका। उनके लिए नपुंसक, वृहन्नला, षण्ढ शब्द का प्रयोग एक अस्वस्थ अथवा नकारात्मक मानसिकता के साथ किया जाता रहा। पर इसके बावजूद यह प्रशंसा के पात्र थे। इसका सबसे बड़ा उदाहरण- भगवान राम के पुन: अयोध्या लौट आने के समय किन्नर को अपने भक्ति में प्रतीक्षारत पाकर प्रसन्न होने वाले राम और किन्नर के बीच का प्रसंग बहुचर्चित है-

''जथा जोगु करि विनय प्रनामा,
बिदा किए सब सानुज रामा
नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे,
सब सनमानि कृपानिधि फेरे।''[4]

तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस' की यह पंक्तियाँ उद्धृत करने के पीछे यहाँ उद्देश्य किन्नरों की भक्ति की पराकाष्ठा एवं एकनिष्ठता से परिचय कराना भी है। बिना किसी स्वार्थ के राम के लिए अपने को समपर्ण करना, उनकी भक्ति में चौदह वर्षों तक इंतजार करना-इनके देने के भाव को ही उजागर करता है; न कि लेने का!

वह अन्य स्त्री-पुरुषों की तरह राम का आदेश पाकर उस स्थान से चले भी जा सकते थे, क्योंकि राम की वाणी में उनके रुके रहने का किसी भी प्रकार के निर्देश का उल्लेख उक्त दोहे में नहीं मिलता। पर वे उस क्षण तक रुके, जब तक राम के दर्शन उनके नयनों ने न कर लिए हों! अधिकतर पुस्तकों में ऐसा उल्लेख है कि किन्नरों की भक्ति भाव से प्रसन्न होकर राम ने उनका आशीर्वाद अन्य

के लिए शुभ बताते हुए वरदान स्वरूप अनोखी शक्ति प्रदान की। एक महत्वपूर्ण उपन्यास महेंद्र भीष्म कृत 'किन्नर कथा' में उक्त प्रसंग का कुछ इस प्रकार उल्लेख मिलता है- ''भगवान राम हिजड़ों के कथन से बहुत प्रभावित हुए और प्रसन्न होकर हिजड़ों को वरदान दिया कि जब पृथ्वी पर कलयुग आएगा तब तुम लोग राज करोगे।'' [5]

किन्नरों की यह शक्ति वर्तमान समय में एक तरह से तथाकथित मुख्यधारा कहे जाने वाले समाज में गुजर-बसर करने का एक माध्यम बना हुआ है। कहने से अभिप्राय है कि सर्वहारा समाज द्वारा किन्नरों को अपने समाज से दरकिनार किए जाने के बावजूद बद्दुआ के भय और आशीर्वाद पाने के एवज में उसे अपने से जोड़े रखा है। अन्यथा, वह किस हद तक उन्हें इस स्त्री-पुरुष वर्चस्व समाज में स्थान देता अथवा देगा- यह विमर्श का विषय हो सकता है।

अन्य एक ग्रंथ महाभारत के संदर्भ में देखें तो द्विलिंगी प्रकृति के व्यक्ति की भूमिका वहाँ भी अहम रही है। वृहन्नला बने अर्जुन नामक किन्नर पात्र की भूमिका केवल नृत्य-गायन तक ही सीमित नहीं थी, अपितु उसकी सहायता से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में कई युद्ध भी सफल हुए। वहीं महत्वपूर्ण पात्र शिखंडी की महिमा सर्वविदित है। शिखंडी ही वह पात्र था, जिसके कारण भीष्म जैसे विशालकाय योद्धा को पांडव सेना परास्त कर सकने में सफल हुई थी। अर्थात विरोधी सेना कौरवों के आगे पांडव भाई की विजय सुनिश्चित हो पाई थी।

इसी तरह मध्यकालीन युग विशेषकर मुगल काल और सल्तनत काल के संदर्भ में देखें तो 'द्विलिंगी जेंडर' वहाँ भी दरबार में सेवक, अफसर अथवा बड़े-बड़े पदों पर कार्यरत थे। वह बादशाहों और बेगमों की नजरों में सम्मान के हकदार थे। वह दरबारों अथवा रानियों के हरमों के अंगरक्षक ही नहीं थे, बल्कि अपने साम्राज्यों के प्रति बतौर सेनानी बनकर युद्ध के मैदान में सम्राटों की सहायता करने से कतई गुरेज नहीं करते थे। द्विलिंगी व्यक्तित्व वाले पात्र के रूप में विख्यात 'मलिक काफूर' एक ऐसे ही योद्धा का परिचायक है, जिसने अलाउद्दीन खिलजी के नेतृत्व में बहुत से युद्ध लड़े तथा सुल्तान को विजयी बनाया। ऐसे ही एक किन्नर इतिमाद खां का भी जिक्र मुगल काल में मिलता है, जो अकबर का बहुत खास थे। इन्हें मुगलकालीन वित्तीय जिम्मेदारी सौंपी गई थी, जिसे इन्होंने बखूबी ढंग से निभाया भी था। उक्त तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि 'थर्ड जेंडर' समुदाय को यदि मौका दिया जाए तो वे न केवल उसका लाभ उठाएँगे, अपितु उस कार्य को पूरी निष्ठा और समर्पण के साथ करेंगे।

ब्रिटिशकालीन युग किन्नरों के जीवन काल का बुरा दौर माना जाता है। इस काल में उनकी गणना एक सामान्य व्यक्ति के रूप में न करते हुए उनके द्वारा किए प्रत्येक कार्यवृत्त को शक की निगाहों से देखा जाने लगा अथवा उन्हें अब अपराधी की श्रेणी में रखते हुए धारा 377 लागू कर दी गई। इस पूरे कार्य को ब्रिटिश सरकार द्वारा ''द ट्राइब्स एक्ट'(1871) अधिनियम के तहत अंजाम दिया

गया था। ऐसा माना जाता है कि आज जो भी इनके प्रति समाज में रची-बसी एक तरह की नकारात्मक दृष्टि है, उसके अन्य प्रमुख कारणों में एक महत्वपूर्ण कारण यह भी था। इस घटना के बाद संपूर्ण किन्नर समुदाय के आगे का जीवन दूभर होता गया। इसका एक बड़ा तबका भिक्षार्जन, सेक्स वर्कर जैसे पेशे से जुड़ता चला गया। परिणामस्वरूप लोगों में उनकी छवि किसी से छीन-झपट कर लेने के रूप में बैठती चली गई। पर साथ में किन्नर समुदाय से निकले उन लोगों पर भी एक नजर डालने की आवश्यकता है, जो जीवन के कठिनतम यात्रा में संघर्ष करते हुए एक प्रतिष्ठित पद पर कार्यरत हैं। इनमें से कुछ अपने समाज के लोगों को मुख्यधारा से जोड़ने हेतु निरंतर प्रयासरत हैं-

लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी : लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी किन्नर समुदाय में एक बहुत चर्चित नाम है। यह संपूर्ण किन्नर समुदाय के समुचित विकास हेतु महत्वपूर्ण कार्य करती आई हैं। इन्होंने वर्ष 2007 में 'अस्तित्व' नामक एक संगठन की स्थापना की, जो पूरी तरह समुदाय के लोकहित के लिए कार्य करता है। वर्तमान समय में लक्ष्मीनारायण जी 'किन्नर अखाड़े' की महामंडलेश्वर के रूप में पदासीन होकर तथा एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में थर्ड जेंडर समाज के उत्थान एवं विकास के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

डॉ. मानवी बंद्योपाध्याय : मानवी बद्योपाध्याय एक ट्रांस वुमेन हैं। वे ट्रांसजेंडर समुदाय के लिए आए दिन निरंतर कार्य तो करती ही हैं, साथ ही अपने जीवन के महत्वपूर्ण क्षण उन्होंने शैक्षिक संस्थानों में दिया। वर्तमान में वह अपनी सेवा बतौर प्रिंसिपल के रूप में ढोला महाविद्यालय में दे रही हैं। यह केवल उनके समाज के लोगों के लिए गर्व की बात नहीं है, बल्कि यह संपूर्ण भारतवर्ष के लिए भी हर्ष का विषय है कि मानवी भारत देश की पहली ऐसी ट्रांस महिला हैं, जो प्रिंसिपल हैं। साथ ही यह समाज के उन दकियानूसी सोच पर भी एक तरह का तमाचा है, जो तृतीय लिंगी समुदाय को स्वयं से कमतर आँकती है।

कल्कि सुब्रमणियम : 'सहोदरी' संस्था की निदेशिका एवं उसकी संस्थापिका के रूप में कार्य कर रहीं कल्कि सुब्रमणियम का नाम सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में विख्यात है। यह संस्था मुख्य रूप से 'तृतीय लिंगी' समुदाय के लिए कार्य करती है। कल्कि जी लेखन कार्य भी करती हैं। इनके द्वारा लिखी रचनाओं ने सहर्ष ही पाठकों को अपनी ओर आकर्षित किया है। यही कारण रहा है कि उनके द्वारा रचित अनेक कविताओं का अब जर्मन, आदि भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

इसके अतिरिक्त अपनी प्रतिभा व मेहनत से अनेक थर्ड जेंडर समुदाय के लोग देश-दुनिया को बहुत कुछ दे रहे हैं। विद्या राजपूत और रवीना बरिहा भी ट्रांस समुदाय में चर्चित नाम हैं। ये 'ट्रांसजेंडर कल्याण बोर्ड' के भी प्रमुख सदस्य व सक्रिय लेखिका भी हैं। ये राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के विभिन्न मुद्दों से जुड़कर प्रशिक्षक अथवा सहभागी के रूप में भी कार्यरत हैं। मध्य प्रदेश की संजना सिंह सरकारी पद पर कार्यरत हैं तो वहीं राजस्थान की कम (24) वर्षीय बालिका पुलिस विभाग में कांसटेबल के रूप में अपनी सेवा दे रही है। छत्तीसगढ़ पुलिस विभाग में पिछले वर्ष ही नौ ट्रांसजेंडर का चयन हुआ। इनका चयन मुख्य रूप से 'बस्तर फाइटर्स' के लिए हुआ है। पूर्वोत्तर भारत के गुवाहाटी प्रांत रेलवे स्टेशन में भी ट्रांसजेंडर ने अपने परंपरागत पेशे से हटकर एक नई मिसाल कायम की है। वे 'ट्रांस टी स्टॉल' खोल कर अपने समुदाय के लोगों को रोजगार का मौका दे रहे हैं। इसी तरह के प्रयास मुंबई शहर में भी 'ट्रांस सैलून' का शुभारंभ करके किया गया है। इसके अतिरिक्त अनेकों 'थर्ड जेंडर' समाज के लोग विभिन्नों पदों पर रहकर अपनी सेवाएँ बखूबी दे रहे हैं। पायल सिंह, धनंजय चौहान, तनुश्री साहू, आशा देवी, मधु बाई किन्नर आदि ऐसे ही नाम हैं।

अब इनके समुदाय से राजनीति में भी लोग आ रहे हैं। हाल में ही यूपी नगर निकाय चुनाव की विजेता एक किन्नर रही। सोनू ने भाजपा जैसे मजबूत पार्टी को भी इस चुनाव में 397 भारी वोटों से परास्त कर निर्दलीय जीत प्राप्त की।

इसी तरह हाल ही में 'दैनिक जागरण' समाचार पत्र में किन्नरों के कार्य की सराहना करते हुए महत्वपूर्ण खबर छपी है, जिसकी कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत हैं- ''यह देख

ट्रेन में ताली बजाकर पैसा मांग रहीं मंगलामुखियों ने तुरंत प्रसव पीड़ा से परेशान महिला को सहारा दिया व बाथरूम में ले जाकर प्रसव कराया। मंगलामुखियों ने महिला को आर्थिक सहयोग देने की भी पेशकश की, जिसे महिला ने हाथ जोड़कर मना कर दिया। मंगलामुखियों ने नवजात को चिकित्सक बनने का आशीर्वाद दिया।'' [6]

उक्त पंक्तियाँ अत्यंत मार्मिक जान पड़ती हैं, जहाँ लोगों के घर में बधाई व नेग या ट्रेन, आदि अन्य जगह पर पैसे माँगने आए किन्नरों को अनदेखा किया जाता है, उनसे किसी भी तरह से पीछा छुड़ाने की आनाकानी लगी रहती है। पर वास्तव में उनके इस तरह के माँगने के पीछे की विडंबनाओं पर भी गौर करना जरूरी है। क्यों वह विवश हैं? कहीं इस विवशता का कारण हम और आप तो नहीं? या फिर कुछ दोष उनका भी है! कारण जो भी रहा है, पर इन तृतीय लिंगियों के साथ अमानवीयता का दुर्व्यवहार करने के बावजूद इनकी मानवता खत्म नहीं हुई है। जैसा कि ऊपर की पंक्ति में स्पष्ट है कि किस तरह किसी को मुसीबत में देख सबसे पहले यही लोग मदद के लिए आगे आए।

यह और बात है, किन्नर समुदाय की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय है, क्योंकि इनकी आय का प्रमुख स्रोत बधाई व ट्रेन, बस आदि में पाग माँगना तथा कुछ लोग सेक्स वर्क में जुड़ अर्थात वहाँ से अपनी आय में वृद्धि, आदि तक ही सीमित रह गया है। ऐसे में उस समाज के बहुसंख्यक लोग अपनी रोजी-रोटी हेतु इनके इन्हीं दैन्यादिन कमाई पर निर्भर हैं। तो इससे बड़ा उदाहरण इनके देने का क्या हो सकता है कि- जरूरत पड़ने पर वे बेझिझक अपनी दिन भर की कमाई का हिस्सा देने को भी पीछे नहीं हट रहे हैं।

निष्कर्षत: 'थर्ड जेंडर' समाज इतिहास से लेकर अब तक किसी-न-किसी रूप में हमारे समाज के अभाज्य अंग रहे हैं। वे न केवल इस समाज के साक्षी हैं, अपितु वे स्त्री-पुरुष के समान ही अपने राष्ट्र व समाज को गढ़ने में निरंतर योगदान दे रहे हैं। इस बात की पुष्टि उनकी मानवीयता से संपन्न शीलगुण व उनके द्वारा ग्रहण की गईं उपलब्धियाँ करा पाने में सर्वथा सक्षम हैं। मानवीय जीवन-मूल्यों के निकष पर देखें तो इन्हें अपने से अलग कर के देखना, उनकी अवहेलना कर के पूर्वाग्रह में जीते रहना; कहीं-न-कहीं अपनी सीमित सोच और संकुचित धारणा का ही परिचायक है। अब जरूरत है उस सोच को बदलने की और उन्हें अपने साथ लेकर चलने की। आज किन्नर समुदाय जिन परिस्थितियों में दूसरों के आगे हाथ पसारने के लिए मजबूर है, उससे उसके लेने की प्रवृत्ति का तो पता चलता है, जबकि अपनी चेष्टा और चेतना में ये अवसर पाकर उससे कई गुणा ज्यादा देता आया है- जिसे अक्सर भुला दिया जाता है। किन्नर समुदाय के प्रति यह अनदेखी किसी भी दृष्टि से न्यायसंगत और मानवीय नहीं कहा जा सकता है। ❑

संदर्भ-ग्रंथ :

1. संपादक- विद्या राजपूत/रवीना बरिहा, जिन्दगी की दास्तान, विकास प्रकाशन, पृ. सं. 53
2. नीरजा माधव, किन्नर नहीं हिजड़ा समुदाय (कुछ तथ्य, कुछ सत्य), पृ. सं. 60
3. वही, पृ. सं. 96
4. डॉ. विनय कुमार पाठक, किन्नर-विमर्श : दशा और दिशा, पृष्ठ सं. 25
5. महेंद्र भीष्म, किन्नर कथा, पृ. सं. 40
6. दैनिक जागरण, बरेली, 'जनशताब्दी एक्सप्रेस में ताली बजाने वालों के लिए बजीं तालियां', 18 जनवरी, 2023

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

सुधा अरोड़ा की कविताओं में स्त्री

शिप्रा देवी

शोधार्थी, पीएच.डी.
हिंदी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय
कांचीपुर, इंफाल-795003
7084665519
shipra210292@gmail.com

शोध सार :

वर्तमान समय में स्त्री के खिलाफ किए जा रहे अत्याचार, शोषण, उत्पीड़न तथा उनके अधिकारों की माँग को लेकर साहित्य में सृजनात्मक कार्य हो रहा है। आज स्त्री की संवेदनाओं पर लेखन कार्य पुरुष से ज्यादा स्त्री मुखर रूप में अपने शब्दों के माध्यम से बयाँ कर रही हैं। वे स्त्री के साथ हो रहे कुकृत्य को हू-ब-हू व यथार्थ रूप के साथ दर्शा रही हैं। इसे आज कोई भी साहित्यकार अथवा रचनाकार, साथ-ही-साथ आम लोग भी इस प्रयास को मिथक नहीं कह सकते हैं, क्योंकि जो समाज में घटित हो रहा है, वही आज हमें साहित्य में भी पढ़ने को मिलता है। समाज में जहाँ अपराध को जघन्य माना जाता था, जो आज तक बंद नहीं हुआ। दहेज आज के समय में अभिशाप बन गया है, जिससे आज भी निर्धन परिवार एवं मध्यवर्ग की लड़कियाँ दहेज के नाम पर सताई व उत्पीड़न का शिकार हो रही हैं।

हमारे भारतीय समाज में स्त्री को माता की संज्ञा दिया गया है। वह रक्षक भी है और संहारक भी। आज के समय में वह आत्मरक्षा ज्यादा करने लगी है, क्योंकि उन्हें वर्षों के इतिहास में स्त्री सिर्फ भोग्या की वस्तु नजर आती है। यह सब आज की स्त्री के लिए अभिशाप बन गया है। स्त्रियाँ सभी कुप्रथा के जकड़न से निकल कर अपना अलग अस्तित्व बनाने के प्रयास में लगी हैं। आज भी समाज में वर्चस्ववादी लोगों की सोच यही है कि वह अंतिम समय में मेरे ही कंधों का सहारा लेगी, परंतु आज के समय में पुरुषों के बरक्स स्त्रियाँ भी कंधा देने लगी हैं। वर्षों से स्थापित यह विडंबना टूटती हुई नजर आ रही है। साइमन के अनुसार स्त्री ही स्त्री कि दुश्मन होती है, लेकिन नासिरा शर्मा के अनुसार स्त्री ही स्त्री की रक्षक एवं सहायक होती है, क्योंकि ऐसी तमाम महिला संस्थाएँ हैं, जिन्हें सिर्फ महिलाएँ ही चलाती हैं। वहाँ जितनी भी महिलाएँ अपनी समस्या लेकर आती हैं, उन्हें सुलझाया जाता है और महिलाओं को काम भी मुहैया कराने में सहयोग करती हैं। धीरे-धीरे समाज बदल रहा है, जिससे साहित्य में भी परिवर्तन आने लगा है।

बीज शब्द :

समाज, स्त्री, बलात्कार, कुप्रथा, अत्याचार, उत्पीड़न, अस्तित्व, शोषण, अधिकार, जागरूकता, रिश्ते-नाते, साहित्य, दहेज उत्पीड़न।

मूल आलेख :

सुधा अरोड़ा सातवें दशक की प्रख्यात कथाकार हैं। हिंदी साहित्य में इन्होंने कहानी, उपन्यास, स्त्री विमर्श लेखन के साथ-साथ कविता के क्षेत्र में भी योगदान दिया है। जिस प्रकार सुधा जी ने कहानियों, उपन्यासों और स्त्री विमर्श में स्त्री से संबंधित उन सभी अनछुए पहलू को उधेड़ने का कार्य किया है, ठीक उसी प्रकार कविताओं में भी स्त्री के प्रति उन सभी संवेदनात्मक तत्वों को भी समाज के सामने बहुत सरल रूप में चित्रित किया है। इनके दो काव्य संग्रह हैं-पहला काव्य संग्रह का नाम 'रखेंगे हम साझा इतिहास' और दूसरे संग्रह का नाम 'कम से कम एक दरवाजा' है। 'कम से कम एक दरवाजा' काव्य संग्रह में ही उनकी पहली काव्य संग्रह की सभी कविताएँ संकलित हैं। कवयित्री के काव्य का मुख्य केंद्र स्त्री उत्पीड़न, पीड़ा, संघर्ष, सामाजिक शोषण, बलात्कार, दहेज, परिवार व पुरुषवादी सोच से निकलकर पुरुष के सापेक्ष समाज में स्थान स्थापित करना है। सुधा जी के काव्य की जो भाषा है, वह मधुर है, परंतु उस मधुर भाषा में ही स्त्री का आक्रोशित रूप भी शामिल है। इससे पाठक को मधुर भाषा में ही उनकी दुखात्मक संवेदना झलकती है, वर्चस्ववादी विचारधारा के लोगों से सवाल करती हुई स्त्री नजर आती है।

लेखिका ने अपने समय के अन्य लेखक-लेखिकाओं के सोच-विचार एवं भाव विषय से परे हटकर काव्य सृजन किया है। ऋषभदेव शर्मा कहते हैं कि ''अपने समय के काव्य की भूमिका की कमियों को पूरा करने के लिए जो आंदोलन विकसित हुए, उन्होंने रचना क्षेत्र में नई हलचल को जन्म दिया। उनके भीतर जीवन को अभिव्यक्त करने वाली कुछ ऐसी विशेषताएँ विद्यमान थीं, जिन्होंने उन्हें दीर्घजीवी बनाकर अगले दशक में प्रवेश दिलाया और जीवित रहने की ऊर्जा प्रदान की।''[1] वस्तुत: सुधा जी भी स्त्री के बीच रहकर स्त्री के जीवन की एक-एक कड़ी को अपने काव्य में स्थान देकर आने वाले समय में स्त्री के उज्ज्वल व्यक्तित्व को एक संबल प्रदान किया है। इनका 'काम से कम एक दरवाजा' कविता संग्रह में बहुसंख्यक कविताएँ स्त्री पर आधारित हैं-चाहे वह अकेली स्त्री हो, तलाकशुदा, प्रतीकता ब्लॉक करती अशिक्षित- शिक्षित या फिर परिवार के प्रेम को प्राप्त करने के लिए सर्वस्व निछावर करने वाली।

आज के आधुनिक व परिवर्तनशील समाज में स्त्री यदि स्वयं पर आश्रित होना चाहती है तो समाज में उसे पग-पग पर काँटें बिछे मिलते हैं, जिससे वह थक-हार कर अपने विचारों, भावनाओं का गला घोंट देती है और उन्हीं वर्चस्ववादियों की शरण में वापस पहुँच जाती है, जहाँ से वह निकलना चाहती थी। लेखिका सुधा अरोड़ा 'अकेली औरत का हँसना' कविता में यह उल्लेख करती हैं कि जब किसी स्त्री के पति की मृत्यु हो जाती है तो वह स्त्री यदि इस समाज में पति के बगैर खुश रहना चाहती है तो समाज को उसकी खुशी अच्छी नहीं लगती। समाज के हिसाब से उसकी प्रसन्नता तभी खत्म हो जाती है, जब उसके पति का देहांत हो जाता है। अब समाज उसे तरस खाती नजरों से देखना चाहता है। उसके चेहेरे पर एक भयावह पसरा हुआ शून्य होना चाहिए।

''अकेली औरत
का चेहरा कितना भला लगता है
जब उसके चेहरे पर ऐसा शून्य पसरा होता है
कि जो आपने कहा उस तक पहुँचा ही नहीं।
आप उसे देख लो तो लगता ही नहीं
कि सबूत खड़ी है वहां!
पूरी की पूरी आपके सामने खड़ी होती है
और आदि पानी ही दिखती है।
बाकी का हिस्सा कहां किसे ढूंढ़ रहा है
उसे खुद भी मालूम नहीं होता।
कितना मासूम लगती है ऐसी औरत।''[2]

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारा समाज कितना मतलबी है। जहाँ स्त्री को सहारा या सहयोग उसके खत्म हो जाने पर करना चाहता है। स्त्री को ऐसा होना चाहिए कि वह खुद पर आश्रित न होकर पर आश्रित रहे और स्वयं की पहचान भी ना रहे- वह कौन है और इस समाज में किसके सामने खड़ी है। स्त्री के चेहरे पर एक ऐसी झलक

दिखाई देनी चाहिए, जिससे कि समाज को लगे कि वह किसी को खोज रही है, जिसे खुद भी पता ना हो कि वह किसे खोज रही है।

समाज में जब स्त्री जब अचानक अकेली पड़ जाती है तो वह मानो शून्य पड़ जाती है, जिसका मन किसी कार्य में नहीं लगता है। वह अपने जीवन के गुजरे हुए पल को याद करने में लगी रहती है और निरंतर इस प्रयास में रहती है कि वह अपनी मन:स्थिति को ठीक कर लेगी। इसी जद्दोजहद में अपना संपूर्ण जीवन गुजार देती है। आधुनिक या 21वीं सदी की स्त्री समाज की कटु सच्चाइयों को पहचान चुकी है। वह परिवर्ती समय को याद भी करती है और स्वयं कठोर बन समाज में सिर उठाकर चलती है। वह अब पहले किए गए कार्य को नहीं भूलती। उसे फिर से इतिहास नहीं दुहराना पड़ता है। अब उसे किताबों के पन्नों को बार-बार नहीं खोलना पड़ता है। आज की अकेली स्त्री अब अकेली नहीं रह गई है। वह अपना समय किसी अच्छे कार्य को करने में बिताती है। आधुनिक अकेली स्त्री के बारे में सुधा जी कहती हैं कि-

''और फिर एक दिन
अकेली औरत अकेली नहीं रह जाती
वह अपनी उँगली थाम लेती है
अपने साथ सिनेमा देखती है
पानी की बोतल बगल की सीट पर नहीं ढूँढ़ती
किताब के बाइसवें पन्ने से आगे चलती है
लंबी साँस को चमेली की खुशबू सा सूँघती है।
खींच लेती है मुस्कान
आँखों की कोरों तक...
अपने लिए नई परिभाषा गढ़ती है।'' [3]

21वीं सदी की स्त्रियाँ अपनी ताकत पहचान चुकी हैं। वे पति की मृत्यु या तलाक के बाद अपना जीवन सहर्ष व्यतीत करती हैं। अब उन्हें बीते दिनों की याद तो रहती है, परंतु वे उसे अपने जीवन की कमजोरी नहीं बनने देती हैं। डॉ. विनय कहते हैं- ''आज की नारी ने आत्म अस्तित्व की स्थिति के लिए एक यात्रा तय की है। वर्तमान नारी मुक्ति आंदोलन अधिकारों की माँग से होता हुआ टकराव, वुमेन लिव का प्रभाव अनेक ऐसे सामाजिक स्वरूप रहे, जिनके कारण कथा साहित्य में सीधे स्वतंत्र नारी पात्रों की स्थापना हुई। कविता में उस विद्रोही व्यक्तित्व का चित्रण भी बहुत कम हुआ है, जो कभी-कभी प्राचीन काव्यों में मिल जाता है।'' [4] वास्तविक रूप में भी देखा जाए तो विनय जी का कथन सत्य है। सुधा अरोड़ा भी ज्यादातर कहानियाँ लिखती हैं, लेकिन कहानियों में स्त्री के विद्रोह की गुँजाइश कम दिखाई देती है। वे स्वयं भी काव्य में रुचि नहीं रखती थीं, लेकिन कुछ बातें हैं, जो कविता के माध्यम से ही कही जा सकती हैं। इस लिए इन्होंने काव्य की रचना की।

सुधा जी ने यौन उत्पीड़न की समस्या पर भी कविताएँ लिखी हैं, जिसमें स्त्री अपने पति के यौन उत्पीड़न को प्रेम समझती रहती है। वह स्त्री समाज में रहने वाले इस प्रकार के ढोंगी पुरुष को नहीं पहचान पाती है, जो उसे अचानक छोड़ कर चला जाता है, जिसे वह पाँच मिनट भी छोड़कर के नहीं रह पाता था। स्त्री उसी पति के प्रेम पर मुस्कुराती है, गर्व करती है, जो उसे हमेशा अपने नागपाश में जकड़ कर रखता था। अब पुरुष के छोड़ने के बाद उसे अनेक पुरुष संभालने के लिए आगे बढ़ते हैं, परंतु वह सभी को दरकिनार कर अब वह स्वतंत्र जीना चाहती है फिर से किसी अत्याचारी पुरुष के हाथों अपनी जिंदगी को बेबस नहीं करना चाहती है, जहाँ उसे कोई अपने नागपाश में न जकड़ पाए। वह स्त्री जाड़े के ठंड में निर्वस्त्र नहीं रजाई या कंबल की गरमाहट से अपनी देह को गर्म रखना चाहती है। वह रातभर स्वतंत्र होकर सोना चाहती है। अब अपनी आजादी से पूरे ब्रह्मांड में स्वतंत्र होकर साँस लेना चाहती है।

''वह कड़कती ठंड की रात में
सर्द हवाओं को परे धकेलती
दोनों कंधों को सीधा रखकर

रजाई कसकर ओढ़ लेती है
और उस गरमाहट में अपनी देह को
महफूज पाती है।'' [5]

पहले स्त्री के अकेलेपन का कारण अविवाहित रहना था। लेकिन आज आधुनिकता के दौर में स्त्रियाँ जागरूक हुई हैं। उन्हें अकेलेपन से मुक्ति यानी एक नई जीवन शैली की शुरुआत करना है। अब वह समाज में स्वयं को अकेली महसूस नहीं करती हैं। वर्तमान समय में एक नई सोच को लेकर स्त्रियाँ पुरुषवादी सोच से आगे निकलकर एक नई परिभाषा को अंजाम दे रही हैं। यह जागरूकता शायद इतने वर्षों से समाज में प्रचलित विडंबनाओं एवं कुरीतियों से प्राप्त हो रही है। या समाज में ऐसे अनेक घटनाएँ देखने को मिल जाती हैं, जो उन्हें क्षत-विक्षत कर देती हैं, जिससे वे सारी उम्र अकेले गुजारना चाहती हैं। वह समाज द्वारा बनाए गए तानों-बानों से दूर एक सुकून भरी जिंदगी जीना चाहती हैं। अपने को स्वतंत्र रखना चाहती हैं। हालांकि उनके अकेले रहने के और भी कारण हो सकते हैं। 'शतरंज के मोहरे' कविता में लेखिका कहती हैं कि वर्तमान समय में स्त्रियाँ शांत वातावरण में संगीत नहीं सुनती हैं। अपनी पुरानी यादों को वे स्वेटर बुनने एवं सालाइयों में फंदे डालने में नहीं उलझाती हैं। नासिरा शर्मा कहती हैं कि अकेलेपन का नई परिभाषा विवाहरहित रहना है- ''नई परिभाषा का अर्थ है एक नई जिंदगी की शुरुआत, एक नई स्वतंत्रता का ऐलान, जिसमें सब कुछ है, मगर प्रताड़ना, अपमान, असुरक्षा, आँसू, आह, विश्वास नहीं हैं। जो अंजाम है, अच्छा या बुरा वह आपका अपना हिस्सा है, क्योंकि उसको आपने स्वयं चुना है। यह नई जीवन शैली वर्तमान परिस्थितियों में किसको कितनी रास आती है, यह भी आने वाला समय तय करेगा।'' [6]

जब हमें चेतना आई है हमने देखा समाज ने स्त्रियों को हमेशा कटघरे में खड़ा किया। जब वे अपने परिवार के खिलाफ या असहमति के किसी कार्य को अंजाम देती थीं, तो उनके लिए जो जीवन का सबसे महत्वपूर्ण रिश्ता होता था वही टूट जाता था। वह बेघर हो जाती थी। लेखिका ने 'खत, खिड़कियाँ, दरवाजे' की श्रृंखला में कविताओं का चयन किया है, जहाँ वे अपने मन से स्वयं वर को चुन कर घर की रजामंदी के बगैर निर्वाह करती हैं तो उनके लिए वह घर हमेशा के लिए बंद हो जाता है। उस समय उनमें उन विकट समस्याओं से लड़ने की क्षमता नहीं होती है, क्योंकि वे माता-पिता को ठेस पहले ही पहुँचा चुकी होती हैं। रिश्तों की बात की जाए तो रिश्ता टूटने का कारण स्वयंवर का चुनाव कर भाग जाना ही नहीं है और भी रिश्ते टूटने के कई कारणों का लेखिका ने उल्लेख किया है कविताओं में। इसमें 'संपत्ति का अधिकार' सबसे बड़ी समस्या है। एक विवाहित स्त्री को यदि उसके पिता की संपत्ति में हिस्से का बँटवारा होता है तो वहाँ भी रिश्ते नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि जिसे घर का वारिस कहा जाता है वह अपने बहन से सारे रिश्ते-नाते तोड़ देता है और हमेशा के लिए अपने घर का दरवाजा बंद कर देता है। लेकिन आज की स्त्री उन रिश्तों को बचाने के लिए संपत्ति को ठुकरा देती है, जिससे उसे वहाँ आने-जाने की अनुमति मिल जाती है। दोनों परिवार बिखरने से बच जाते हैं। और संपत्ति विभाजित होने से भी बच जाती है, जिसका चित्रण यथार्थ रूप में कवयित्री 'राखी बांध कर लौटती हुई बहन' कविता में करती हैं-

''वकील ने नोटिस के कागज तैयार किए
उसने न माँ की सुनी,
न वकील की
साँप सीढ़ी का खेल
नहीं खेलना उसे भाई के साथ
और नोटिस के चार टुकड़े कर डाले!
उसने कहा- नहीं चाहिए खैरात
मैं जहाँ हूँ, वहीं भली!
...और अपने रोटी पानी की जुगाड़ में
बच्चों के स्कूल में अपने पैर जमा लिये
तब से वहीं है
अपने शहर शहारनपुर'' [7]

समाज का वास्तविक रूप यहाँ देखने को मिलता है। जैसे ही स्त्री अपने पिता की संपत्ति को इनकार करती है, वैसे ही दुनिया के सारे रिश्तों में मिठास आ जाती है और

उसे वही सम्मान मिलने लगता है, जो उसे पहले मिलता था। जब किसी भी संबंध को तोड़ने व जोड़ने में स्त्री को महत्वपूर्ण माना जाता है तो फिर समाज उन्हें अबला की संज्ञा क्यों दे देता है। ऐसे ही 'कंधे' कविता में है। इस कविता में स्त्री अपनी बिरादरी यानी अपनी जाति (स्त्री जाति) के अधिकार के लिए किसी पुरुष का सहारा नहीं लेती है। स्वयं उन्हें अधिकार दिलाने के लिए खड़ी रहती है। इस पर वर्चस्ववादी लोगों द्वारा व्यंग्य भी किया जाता है, क्योंकि वर्चस्ववादी लोगों की सोच है कि जब तक उसके शरीर में शक्ति, सामर्थ्य है तब तक वह अपनी शक्ति और सामर्थ्य का प्रयोग करेगी। उसके बाद उसकी मृत्यु होने पर वह हमारे ही कंधे का सहारा लेगी। भावी पुरुष किसी तरह स्त्री को यह साबित करने में लगे रहते हैं कि वह कभी न कभी उसे हमारे सहारे की जरूरत पड़ती है। और इस कथन को मन्नू भंडारी सत्य साबित करती हैं। वह कहती हैं कि ''हर सफल स्त्री के पीछे सफल पुरुष का हाथ होता है।'' मैं मन्नू भंडारी के इस कथन से पूर्णत: सहमत नहीं हूँ, क्योंकि किसी भी समाज को चलाने के लिए सिर्फ एक पहलू की आवश्यकता नहीं होती है। जब तक दोनों की बराबरी किसी कार्य में नहीं है, तब तक उस कार्य में सफलता नहीं मिलती है। बहुत सारे ऐसे कार्य हैं, जो स्त्री के बिना अधूरे है और कई ऐसे कार्य होते हैं, जिनका पुरुष के बिना पूर्ण होना संभव नहीं हो पाता है तो मेरे ख्याल से इस सृष्टि को चलाने के लिए दोनों की अहम भूमिका है। लेकिन आधुनिक समय में तकनीकी एवं तरह-तरह के आविष्कार दूसरे के सहयोग को जरूरी नहीं मानते हैं। परस्थितियाँ ही सभी प्रकार के आविष्कार की दास होती हैं। जैसे परिस्थिति बदली, वैसे ही विचारधारा में परिवर्तन आया।

21वीं सदी की महिला लेखिकाएँ समाज में प्रचलित अनेक समस्याओं का कारण सहित उल्लेख करती हैं, जिससे उन्हें समझने में कोई कठिनाई न हो। वे बलात्कार एवं दहेज की समस्या को भी गुप्त शब्दों में नहीं रखती हैं। वे समाज को वास्तविक यथार्थ एवं अपने स्पष्ट शब्दों को मुखर रूप से रखने में सक्षम हैं। इसी समय सुधा जी ने भी कई ऐसे कविताओं का उल्लेख किया है, जिसमें स्त्री दहेज के नाम पर इसलिए प्रताड़ित होती है कि उसे उसके माता-पिता ने विवाह में कुछ नहीं दिया था। 'दुख का सिरा' कविता में स्त्री हमेशा दुखी नजर आती है, क्योंकि वह विवश रहती है। वह अपने दुखों के कारण स्वतंत्र रूप से रो भी नहीं पाती है। पति का दहेज के लिए प्रताड़ित करना व आक्रोशित भरा रूप लेखिका इन शब्दों में उल्लेखित करती हैं-

''अब याद आता है
फूफा को बुआ के आँसू भाते नहीं थे
खबरदार! जो टेंसुए बहाकर घर में मनहूसियत लाई
भरे घर में सबके बीच झिड़क देते बुआ को
घर चलाने को पैसा माँगती तो सुनती
घर से फुटी कौड़ी लाई नहीं
और यहाँ पैसे पेड़ों पर उगते हैं।'' [8]

कवयित्री यहाँ स्त्री के भावात्मक संवेदनाओं का चित्रण कर उन माता-पिता की ओर इशारा करती हैं, जिन्होंने बेटी के विवाह के बाद अपनी जिम्मेदारी से छुटकारा पा ली है। और जिस घर में बेटी को ब्याह कर भेजते हैं, वहाँ भी उसकी जिम्मेदारी लेने से लोग मुकर जाते हैं। इससे यह प्रत्यक्ष प्रमाणित हो जाता है कि कारण कुछ भी हो, लेकिन एक समय के बाद स्त्री के पास कुछ नहीं बचता। सिर्फ वह दूसरों के हाथ की कठपुतली बनी रह जाती है। उसका स्वतंत्र जीवन भी नहीं रहता, जिससे वह स्वयं आत्मनिर्भर हो सके। इन कथनों से लेखिका यह प्रमाणित करना चाहती हैं कि आज के दौर में स्त्रियों को पुरानी परंपरा एवं जड़ हो चुकी कुप्रथाओं को दरकिनार कर समाज में अपनी एक अलग मिसाल कायम करनी चाहिए ताकि उनका सम्मान एवं अस्मिता बचा रहे व समाज में उसकी भी एक प्रतिष्ठा कायम रहे।

आज की लेखिकाएँ समाज में वास्तविक रूप में घट रही घटनाओं को संकेत के रूप में उल्लेख नहीं करती हैं। वे उस घटना को उसी रूप में प्रदर्शित करती हैं, जिस रूप में समाज में घटी रहती है। वह लक्षणा शब्दशक्ति का भी प्रयोग न कर अविधा रूप में ही समाज के सामने रखने में सामर्थ्य एवं साहस रखती हैं, जिससे आमजन को सामाजिक

विसंगतियों के वास्तविक रूप का पता चल सके और आगे से वे ऐसी घटना होने से पहले सतर्क हो जाएँ व घटना को अंजाम देने वाला व्यक्ति भी शर्मनाक हरकत करने से पहले हजार बार सोचने पर विवश हो कि उसका अंतिम परिणाम क्या होगा? लेखिका सुधा अरोड़ा की कविता 'अब हम आँसुओं से नहीं, अपनी आँख के लहू से बोलेंगे...' में उन तमाम बलात्कृत मासूम लड़कियों का वर्णन है, जिन्हें अपनी उम्र भी पता नहीं होती कि वह कितने वर्ष की हैं। हमारे भारतीय संविधान में बलात्कारियों के लिए कानून भी बने हैं, परंतु वे उन्हें दंड देने के बजाय साक्ष्य-गवाह की पृष्ठभूमि में जकड़े रहते हैं। इसक चलते कोर्ट सही फैसला नहीं दे पाता और पीड़िता को न्याय नहीं मिल पाता है।

''अब तुम में जिंदा होगी
1979 कि गढ़चिरौली कि मथुरा
चौदह से सोलह के बीच कि वह आदिवासी लड़की
जिसे अपनी उम्र तक ठीक से मालूम नहीं थी
लॉकअप में जिसके साथ हुआ बलात्कार
सुप्रीम कोर्ट ने हाईकोर्ट का बदला फैसला
गणपत और तुकाराम बाइज्जत बरी कर दिये गए
सारे महिला आंदोलन और नुक्कड़ नाटक धरे रह गए।''[9]

इससे स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ उम्मीद होती है कि उन्हें इंसाफ मिल जाएगा, पूरी उम्मीद के साथ डटे रहते हैं, परंतु वे वहीं से निराश होकर लौटते हैं। तब उन्हें पता चलता है कि देश का कानून ही उनका सबसे बड़ा अपराधी है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि लेखिका ने स्त्री से संबंधित उन सभी समस्याओं का मार्मिक रूप से चित्रण किया है, जिससे स्त्रियाँ निरंतर अपमानित हुई हैं। इन्होंने सामाजिक विसंगतियों को यथार्थ रूप में समाज के सामने तो लाया है, परंतु साथ में यह भी संकेत किया है कि जहाँ स्त्रियाँ भावनात्मक रूप से अपने आपको बदलने में अक्षम साबित हो रही हैं, वहाँ वे अपने पारिवारिक रिश्ते को बचाने की कोशिश में प्रयासरत हैं । इस संग्रह में लेखिका समाज की सच्चाइयों को दूर देश तक फैलाने व उन्हें उससे सतर्क रहने का संदेश दे रही हैं। वर्चस्ववादी समाज में हमेशा स्त्री को सताया ही गया है, परंतु वर्तमान समय की स्त्रियाँ शिक्षित होकर उसे बदलने की कोशिश में लगी हुई हैं एवं एक नई ऊर्जा के साथ एक नई जीवन शैली को परिभाषित कर रही हैं। हालाँकि वर्तमान समय में अत्याचार और शोषण कम नहीं हुए हैं। लेकिन हाँ, शोषण एवं अत्याचार करने के तरीकों में परिवर्तन समाज में जरूर देखने को मिलता है। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. हिंदी कविता आठवाँ नवां दशक, ऋषभ देव शर्मा, तेवरी प्रकाशन, खतौली, प्रथम संस्करण 1994, पृष्ठ- 132
2. कम से कम एक दरवाजा, सुधा अरोड़ा, बोधि प्रकाशन, जयपुर, द्वितीय संस्करण 2017, पृष्ठ- 24
3. वही, पृष्ठ- 27
4. आधुनिक काव्य में नारी स्वरूप और प्रतिमा, संपादक : उमा शुक्ल, सहसंपादक : डॉ. माधुरी छेड़ा, अरविंद प्रकाशन, बंबई, प्रथम संस्करण, 1993, पृष्ठ-79
5. कम से कम एक दरवाजा, सुधा अरोड़ा, बोधि प्रकाशन, जयपुर, द्वितीय संस्करण 2017, पृष्ठ- 34
6. औरत के लिए औरत, नासिरा शर्मा, समसामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संसकरण : 2019, पृष्ठ- 164
7. कम से कम एक दरवाजा, सुधा अरोड़ा, बोधि प्रकाशन, जयपुर, द्वितीय संस्करण 2017, पृष्ठ- 53
8. वही, पृष्ठ- 92 -93
9. वही, पृष्ठ- 101

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

कृष्णदास अधिकारी के काव्य में लोकतत्व

डॉली गुप्ता

शोधार्थी, हिंदी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007
9560577906
dollygupta334@gmail.com

शोध सारांश :

भारतीय संस्कृति में लोक की अपनी पहचान है। हिंदी का काव्य साहित्य वास्तविक रूप में लोक-साहित्य है। परंपरा की पृष्ठभूमि पर आधारित होने के कारण तथा लोक-समाज के बीच से उत्पन्न होने के कारण अष्टछाप कवियों के काव्य में लोकचित प्रतिबिंबित हुआ और लौकिक रीति-रिवाज तथा लोक प्रचलित विचार मुखरित हुए। अष्टछाप के प्रमुख आठ कवियों का सामूहिक रूप से हिंदी साहित्य में योगदान पर कई शोध कार्य संपन्न हुए, परंतु कृष्णदास अधिकारी पर केंद्रित अभी तक एकाध कार्य ही हुआ है। जैसे 1970-71 ई. में डॉ. हरगुलाल के निर्देशन में 'कृष्णदास की कविता' विषय पर पुष्पलता गुप्ता द्वारा एम.लिट्. पूर्ण हुई, 1984 ई. में डॉ. महेन्द्र कुमार जी के निर्देशन में किरणबाला सेठी द्वारा 'कृष्णदास के काव्य' शीर्षक से एम.फिल का कार्य हुआ। परंतु कृष्णदास अधिकारी के व्यक्तित्व, लोक तत्व, सांस्कृतिक चेतना इत्यादि विषयों पर स्वतंत्र रूप में कभी कोई कार्य नहीं हुआ। ब्रजभाषा के प्रमुख कवि कृष्णदास अधिकारी ने अपने काव्य में ब्रजभूमि के लोकतत्तव का सुंदर समावेश किया है। इनके काव्य में लौकिक संस्कार, पर्व-उत्सव, त्योहार आदि के वर्णन से ब्रजलोक में प्रचलित रीति-रिवाज साकार हो उठे हैं और प्रस्तुत शोध आलेख के माध्यम से कृष्णदास अधिकारी के काव्य में लोकतत्व का निरूपण करना ही मेरे लेखन का ध्येय है।

प्रस्तावना :

भारतीय संस्कृति की अमिट छाप से लोक का गहरा नाता है। जीवन जीने की चाह बनी रहे, लोक भूमि, लोक तत्व, लोक लय की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है। हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक 'लोक' का असीमित विस्तार है। हिंदी साहित्य को समृद्ध करने में 'लोक-तत्वों' की अहम् भूमिका है।

कृष्णदास अधिकारी का समग्र साहित्य लोक-तत्वों का भण्डार है। कृष्णदास भारतीय लोकमानस में रचे बसे रीति-रिवाजों, संस्कारों, त्योहारों एवं सामाजिक प्रथाओं से प्राप्त रूढ़ियों आदि के उद्घाटन में 'लोक' को ऊँचा स्थान देते हैं। हिंदू जीवन को समुन्नत सुव्यवस्थित बनाने के लिए सोलह संस्कारों का विधान है। कृष्णदास ने उनमें से अधिकांश के वर्णन में शास्त्रीय-विधान के अतिरिक्त लोक

पद्धति का भी सहारा लिया है। जातकर्म की रीतियों का उल्लेख करते हुए कवि आरती, न्यौछावर, स्त्रियों द्वारा मंगलगान आदि के रूप में लोक रीतियों का संस्पर्श दे देता है। इसके बाद नामकरण, चूढ़ाकरण, यज्ञोपवीत आदि संस्कार सामान्य लोक रीति के अनुसार दिखाये गए हैं।

कृष्णदास अधिकारी का जीवन परिचय

भक्तिकाल की कृष्ण भक्ति शाखा में अष्टछाप के कवियों का प्राधान्य रहा है। विट्ठलनाथ जी ने अष्टछाप की स्थापना 1565 ई. में की, जिन्हें 'कृष्णसखा' भी कहा जाता है। इनमें चार वल्लभाचार्य के शिष्य हैं – कुंभनदास, सूरदास, परमानंददास और कृष्णदास। चार विट्ठलनाथ के शिष्य हैं – नंददास, गोविंदस्वामी, छीतस्वामी और चतुर्भुजदास।

कृष्णदास अष्टछाप के प्रथम चार कवियों में अंतिम थे। अष्टछाप के प्रमुख कवि श्री कृष्णदास जी परम भगवद्भक्त, सेवाव्रती, उच्चकोटि के कवि, संगीत शास्त्र के ज्ञाता एवं कुशल प्रबंधक थे।[1] कृष्णदास का जन्म संवत् 1552 ई. में माना जाता है,[2] परंतु प्रभुदयाल मीतल ने 1553 ई. में गुजरात के चिलोतरा गाँव में माना है। हरिराय जी की भावप्रकाश वाली 84 वार्ता से ज्ञात होता है कि कृष्णदास अधिकारी का जन्म 'कुनबी' पटेल कुल में हुआ था। 'कुनवी' शूद्र जाति है, क्योंकि वार्ता में कई स्थानों पर कृष्णदास को शूद्र कहा गया है।[3]

बाल्यकाल से ही कृष्णदास में असाधारण धार्मिक प्रवृत्ति थी। 12–13 वर्ष की अवस्था में उन्होंने अपने पिता के एक चोरी के अपराध को पकड़कर उन्हें मुखिया के पद से हटवा दिया था। इसके फलस्वरूप पिता ने उन्हें घर से निकाल दिया और कहा – ''तू वा जन्म को फकीर है तासौं तैने हमको फकीर किया है। तू घर ते कहूं दूर चल्यो जा, न तोको देखेंगे और न दुख होयगो।''[4]

तीर्थयात्रा करते हुए कृष्णदास ब्रज में आ गए। उन दिनों श्रीनाथ जी के कार्य से महाप्रभु वल्लभाचार्य भी अड़ैल

से ब्रज आए हुए थे। इसी समय संवत् 1567 ई. के लगभग अपनी 13 वर्ष की आयु में कृष्णदास वल्लभाचार्य जी के शिष्य हुए।[5] कृष्णदास में असाधारण बुद्धिमत्ता, व्यवहार, कुशलता और संगठन की योग्यता थी। पहले उन्हें वल्लभाचार्य ने भेंटिया के पद पर रखा और फिर उन्हें श्रीनाथजी के मंदिर के अधिकारी का पद सौंप दिया। अपने इस उत्तरदायित्व का कृष्णदास ने बड़ी योग्यता से निर्वाह किया[6] यहीं से इनके नाम के साथ 'अधिकारी' जुड़ने लगा।

कृष्णदास के जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना है। किसी वैष्णव ने श्रीनाथ जी का कुआँ बनवाने के लिए कृष्णदास को 300 रुपये दिये थे। उन रुपयों में से 100 रुपए कृष्णदास ने छिपा लिये और 200 रुपये से कुआँ बनवाया। एक दिन वे अधूरे कुएँ को देखने गए और फिसल जाने से उसी अधूरे कुएँ में गिरकर उनका शरीर लुप्त हो गया और वे प्रेत बन गये। जब उन्होंने एक ग्वाले से कहकर गड़े हुए रुपये निकलवाए और गोसाईंजी ने कुआँ पूरा कराया तब उनकी सद्गति हुई।[7] कृष्णदास ने कृष्ण-लीला के अनेक प्रसंगों पर पद रचना की है। इन्होंने अन्य कृष्णभक्तों के समान राधा-कृष्ण के प्रेम को लेकर श्रृंगार रस के ही पद गाए हैं। इनके पद का उदाहरण देखिए -

मो मन गिरिधर दबि पे अटक्यौ
ललित त्रिभंग चाल पै चलिकै चिबुक चारू गड़ि ठटक्यो।। [8]

कृतित्व :

कृष्णदास अधिकारी के नाम से कहीं जाने वाली जुगलमान चरित्र, भक्तमाल की टीका, भ्रमरगीत, प्रेम सत्व निरूप, भागवत-भाषानुवाद, वैष्णव वन्दन, कृष्णदास की बानी, प्रेम रस-रास मानी गई है[9] जिनमें से वल्लभ संप्रदायी केंद्रों में हस्तलिखित तथा छपे कीर्तन रूप में पाये जाने वाले पद संग्रह ही कवि की प्रामाणिक रचनाएँ मानी गई हैं। कांकरौली से छपे 200 कीर्तन पदों को ही कृष्णदास अधिकारी का प्रामाणिक व सुलभ साहित्य माना गया है। इसी अध्ययन में इसी निजी 200 पद संग्रह का आधार लिया गया है।[10]

कृष्णदास अधिकारी के विषय में विभिन्न आलोचकों ने अपने इतिहास एवं साहित्य से संबंधित ग्रंथों में उल्लेख किया है। उदाहरणार्थ - आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास', रामकुमार वर्मा ने 'हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास', गुलाबराय ने 'हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास', डॉ. दीनदयाल गुप्त ने 'अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय', डॉ? नगेन्द्र ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास', डॉ? धीरेन्द्र वर्मा, डॉ? ब्रजेश्वर वर्मा, रामस्वरूप चतुर्वेदी ने 'हिंदी साहित्य कोश भाग-2' में कृष्णदास का उल्लेख किया है।

लोकतत्व : अर्थ और स्वरूप

'लोक' शब्द संस्कृत की 'लोकृ दर्शने' धातु से 'धञ्' प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है।[11] इस धातु का अर्थ है 'देखना' जिसका लट्लकार में अन्य पुरुष एकवचन का रूप 'लोकते' है। अत: लोक शब्द का अर्थ हुआ 'देखने वाला'। इस प्रकार वह समस्त जनसमुदाय, जो इस कार्य को संपन्न करता है, लोक कहलाएगा। लोक शब्द अत्यंत प्राचीन है। ऋग्वेद में सामान्य जनता के अर्थ में इसका अनेक स्थानों पर प्रयोग किया है। वहाँ लोक शब्द के लिए 'जन' का भी प्रयोग प्राप्त होता है।[12] ऋग्वेद के प्रसिद्ध सूक्त में लोक शब्द का व्यवहार जीव तथा स्थान दोनों अर्थों में किया गया है। उदाहरणार्थ -

नाभ्यां आसीदंतरिक्षं शीषर्णो द्यौ: समवर्तत।
पदम्यां भूमिर्दिश:श्रोत्रातथा लोकान् कल्पयत्।।[13]

भगवद्गीता में लोक तथा लोकसंग्रह आदि अनेक शब्दों का प्रयोग अनेक स्थानों पर उपलब्ध होता है। यहाँ लोक का तात्पर्य संसार, तीनों लोक आदि से है,[14] किंतु लोकसंग्रह का अर्थ है - साधारण जनता का आचरण एवं व्यवहार। हिंदी साहित्य कोश में लोक के संसार, जनसामान्य दोनों अर्थ लिए गए हैं - 1. इहलोक, परलोक और त्रिलोक, तथा 2. जनसामान्य।[15]

लोक शब्द यद्यपि अत्यंत प्राचीन है, किंतु इसका प्रयोग आधुनिक काल में बहुत कुछ अंग्रेजी शब्द फोक के अर्थ में किया जाता है। फोक का तात्पर्य है - जनसामान्य। फोक के इसी अर्थ को ध्यान में रखकर 1887 ई. में यूरोपीय विद्वान जॉन आब्रे ने सर्वप्रथम सर्वसाधारण जनता

के रीति-रिवाज, रहन-सहन, अंधविश्वास आदि का अध्ययन प्रारंभ किया।[16] पं. रामनरेश त्रिपाठी ने फोक के लिए लोक शब्द के स्थान पर ग्राम शब्द का प्रयोग किया है और इसी के आधार पर अपनी पुस्तक का नाम ग्राम-साहित्य रखा।[17] डॉ. मोतीचंद्र ने लोक के लिए 'जन' शब्द को उपयुक्त ठहराया है। इसके विपरीत, डॉ. हजारीप्रसाद लोक शब्द को 'काम' और 'जन' से पृथक् करते हुए कहते हैं, ''लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है बल्कि नगरों और गाँवों में फैली हुई वह समूची जनता है, जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं। ये लोग नगर के परिष्कृत, रुचि संपन्न, सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती हैं, उनको उत्पन्न करते है।''[18] हिंदी साहित्य में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने समाज तथा संस्कृति को ध्यान में रखकर अनेक स्थानों पर लोक शब्द का प्रयोग किया है, कहीं संसार के अर्थ में तो कहीं जनसामान्य के अर्थ में। अपने निबंध संग्रह 'चिंतामणि' में शुक्ल जी ने लोकसामान्य, लोकसत्ता, लोकव्यवहार, लोकधर्म, लोकमंगल[19] आदि शब्दों का प्रयोग स्थान-स्थान पर किया है।

लोकतत्व के लिए डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल एवं डॉ. सत्येन्द्र द्वारा प्रयुक्त लोकवार्ता शब्द अंग्रेजी शब्द 'फोकलोर' का हिंदी पर्याय है। ''लोकवार्ता एक जीवित शास्त्र है - लोक का जितना जीवन है, उतना ही लोकवार्ता का विस्तार है।''[20] शार्लर्ट सोफिया बर्न ने लोकवार्ता की व्यापकता पर विस्तार विचार किया और इसकी अधिक विशद एवं वैज्ञानिक परिभाषा प्रस्तुत की। उनके अनुसार 'यह एक जातिबोधक शब्द की भाँति प्रतिष्ठित हो गया है, जिसके अंतर्गत पिछड़ी जातियों में प्रचलित अथवा अपेक्षाकृत समुन्नत जातियों के असंस्कृत समुदायों में अवशिष्ट विश्वास, रीति-रिवाज, कहानियाँ, गीत तथा कहावतें आती हैं। प्रकृति के चेतन तथा जड़ जगत् के संबंध में, भू-प्रेतों की दुनिया तथा उसके साथ मनुष्य के संबंधों के विषय में 'जादू-टोना', सम्मोहन, वशीकरण, ताबीज, भाग्य, शकुन, रोग तथा मृत्यु के संबंध में आदिम तथा असभ्य विश्वास इसके क्षेत्र में आते हैं। और भी इसमें विवाह, उत्तराधिकार, बाल्यकाल तथा प्रौढ़ जीवन के रीति रिवाज तथा अनुष्ठान और त्योहार, युद्ध, मत्स्य-व्यवसाय, पशुपालन आदि विषयों के भी रीति-रिवाज और अनुष्ठान इसमें आते हैं तथा धर्मगाथाएँ, लोक कहानियाँ, किंवदन्तियाँ, पहेलियाँ तथा लोरियाँ भी इसके विषय है। संक्षेप में लोक की मानसिक संपन्नता के अंतर्गत जो भी वस्तु आ सकती है, वह सभी इसके क्षेत्र में है।[21]

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकवार्ता के स्थान पर लोकसंस्कृति शब्द का प्रयोग उचित बताया है। ''लोकसंस्कृति वस्तुत: आदिम मानव की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति है, वह चाहे दर्शन, धर्म, विज्ञान तथा औषधि के क्षेत्र में हुई हो अथवा सामाजिक संगठन तथा अनुष्ठानों में अथवा विशेषत: इतिहास, काव्य और साहित्य के अपेक्षाकृत बौद्धिक प्रदेश में संपन्न हुई हो।''[22]

इस प्रकार, लोकतत्त्व के लिए प्रयुक्त उक्त अभिधानों पर विचार करने पर कहा जा सकता है कि लोकवार्ता में लोक की प्रत्येक अभिव्यक्ति चाहे वाणी, शरीर, आचरण के माध्यम से हो अथवा अन्य लोककथाओं, लोकगीतों, लोकनाट्यों के माध्यम से, उसके विश्वास एवं प्रथाएँ सभी आ जाते हैं। अर्थात् लोकवार्ता में लोकमानस की संपूर्ण अभिव्यक्ति समाहित रहती है और यह लोकमानस केवल किसी विशेष वर्ग अथवा जाति विशेष की धरोहर नहीं है। अपितु यह गाँव, शहर के सर्वत्र मानव मात्र के मानसिक जगत् (अवचेतन) में देशकाल की बाधाओं, सभ्यताओं के आवरण को तोड़ता हुआ विद्यमान रहता है। वास्तव में लोकवार्ता को लोक का विश्वकोश कहा जा सकता है।[23]

कृष्णदास अधिकारी के काव्य में लोकत्व का निरूपण

ब्रज क्षेत्र और उसकी संस्कृति लोक संस्कृति है। कृष्णदास इसी भूमि के ऐसे महत्त्वपूर्ण कीर्तनकार, रचनाकार एवं भक्त हैं, जिन्होंने इसके लोकतत्व को अपनी रचना धर्मिता का मूलाधार बनाया। ब्रज की लोक भूमि, उत्सव धर्मिता और भक्ति-भावना में लोक को समाहित किए हुए है। कृष्णदास के काव्य की महत्त्वपूर्ण विशिष्टा है - लोकतत्व का समावेश। लोक तात्त्विक दृष्टि से उनकी रचनाओं का अनुसंधान किया जाए तो पर्व-उत्सव, रीति-रिवाज, संस्कार, लोकरीति इत्यादि तत्वों का समाहार उनके काव्य में मिलता है।

कृष्णदास अधिकारी के काव्य में पर्व, उत्सव और त्योहार

कृष्णदास ने अपने परमाराध्य श्रीकृष्ण के माध्यम से जीवन के बहुविध रूप को बहुत सुंदर ढंग से स्पष्ट किया है। वेश-भूषा, भोज्य पदार्थ, आभूषण, त्योहार एवं आमोद-प्रमोद के दूसरे साधनों के बीच में काव्य को उपस्थापित करके उन्होंने ब्रज के तात्कालिक सांस्कृतिक जीवन को अभिद्योतित किया है। कृष्णदास ने प्रत्येक पर्व, उत्सव और त्योहार का संबंध कृष्ण के साथ जोड़ दिया है। प्रत्येक त्योहार मानो कृष्ण को प्रसन्नता प्रदान करने के लिए ही संपन्न किया गया है। नंद-यशोदा, ग्वाले, सधा तथा अन्यायन्य गोपियाँ इन त्योहारों पर कृष्ण का ही मुँह जोहती रहती है, कृष्ण ही प्रत्येक त्योहार की अनेकानेक गतिविधियों को पूर्ण करने वाले मुख्य अस्तित्व के रूप में सामने आते हैं एवं कृष्ण का उल्लसित तथा हर्षित होना ही त्योहार की सफलतापूर्वक परिसमाप्ति मानी गयी है।[24] दीपावली के अवसर पर दीपमालिका का जगमगाता प्रकाश, होली के अवसर पर हो, हो, हो, होरी की प्रत्यक्ष ध्यनि करता हुआ उल्लसित, जनसमाज, रक्षाबंधन के अवसर पर कृष्ण का रक्षा-सूत्र बँधाकर प्रसन्न होना, कृष्ण जन्माष्टमी पर गोकुल में आनंद व उल्लास, गोधनोत्सव पर पशु-धन के प्रति ब्रजवासियों की महान आस्था ब्रज की लोक परंपरा व संस्कृति की महत्तवपूर्ण अविच्छिन्न परंपरा है। कृष्णदास के काव्य में अनेकानेक पर्वों, उत्सवों और त्यौहारों का जो चित्र प्रस्तुत किया गया है, वह युगानुकूल परंपरागत विश्वासों, आस्थाओं, नैतिक मान्यताओं एवं चिरकालीन धार्मिक भावनाओं का पूर्ण चित्र है। कृष्णदास ने फूल मंडली, हिण्डोरा रास का सुंदर वर्णन अपने पदों में किया है। देव प्रबोधिनी एकादशी में तुलसी की महिमा, ब्रज-गोकुल के लोगों द्वारा व्रत करने व देव जगाने के गीत गाने का सुंदर चित्रण इन पदों में किया है -

''प्रबोधिनी ब्रज कीजै नीकौ।
जागे देव जगत-हित कारन सबै ब्रतनि कौ टीकौ।।''[25]
''देव जगावति जसोदा मैया।''[26]
''धनि धनि माता तू तुलसी बड़ी, नारायण लै माथें चढ़ी।
जो कोउ तुलसी की सेवा करै, कोटि पाप छिन में परिहरै॥''[27]

जन्माष्टमी जो कृष्ण जन्म-लीला का उत्सव है। कृष्णदास के पदों में श्रीकृष्ण के जन्म पर ब्रज में आनंद व बधाइयाँ गायी जा रही है -

''गोकुल बाजत आज बधाई।
नन्द महर घर ढोटा जायौ तीन लोक सुखदाई॥[28]
''सखी री! आजु भयौ ब्रज-आनंद।
नृत्यत गोपी ग्वाल सबै मिलि प्रगटै परमानंद॥[29]

कृष्ण के जन्मोत्सव पर चंदन, चोवा और दही इतनी छिड़की जाती है कि फिसलन हो जाती है। लोग नाचते-गाते है और बार-बार दही (पीली दही) में फिसल पड़ते है। दूसरे लोग उन्हें बाँह पकड़कर उठाते हैं, वे फिर नाचने लगते है। पीली दही पर नृत्य-गान की इस प्रक्रिया को दधिकादौ' कहा जाता है जो ब्रज की संस्कृति को दर्शाती है, जिसका सुंदर वर्णन कृष्णदास ने इस पद में किया है -

''दूध दही छिकत तहाँ सब पै मंदित ग्वालिनी ग्वाल।
गावत बिमल सुजस सब ब्रजजन मंगल गीत रसाल।।
छिरके हरद दही पय पर तिय अति ही सोभा देत।
होलत लोलत डोलत बोलत रसमय भए सहेत॥''[30]

राधाष्टमी पर श्री राधा जी का सौंदर्य वर्णन व बरसाने में आनंद से भरी बधाइयों का वर्णन करते हुए कहा गया है कि -

''आजु बरसानें बजत बधाई।
भाग बड़े कीरति रानी के ऐसी कन्या जाई॥[31]
''आजु अति आनँद है बरसानें।
कुँवरि लली की बरस-गँठि है सब ब्रजजन सरसानें॥[32]

इसी प्रकार पवित्रा एकादशी, अक्षय तृतीया, गणगौर, सावन तीज, राखी बंधन इत्यादि का भी सुंदर चित्रण कृष्णदास जी ने अपने पदों में किया है। उदाहरणार्थ -

''दच्छिना देति हिजनि को ठाढ़ी धन
खरचाति न अघानी।
लै आरती वारति हरि-मुख पर अंग-
अंग बिकसानी॥[33]

उपरोक्त मन में कृष्णदास ने यशोदा द्वारा कृष्ण के राखी बांधने पर द्विजों को दान करने एवं लाल का आरता करने का उल्लेख किया है।

''अक्षया तृतीया अक्षय लीला गिरिधर नवरँग पहिरत चंदन।''[34]

कृष्णदास ने अपने पदों में गनगौर के दिन प्रात:काल के समय छोटी-छोटी लड़कियों द्वारा दूब व पुष्पों द्वारा सोत्साह गनगौर की पूजा करने व विभिन्न पकवानों के बनाने का वर्णन किया है -

''देखि गनगौर पिय प्यारी नवकुंज में, आय बैठे ब्यारू करन दोऊ मिलि साथ।
विविध पकवान व्यंजन नहों भाँति के, ठाडी भरि लै ललित हाथ।''[35]

श्रृंगार, फाग होरी का माँ खूब वर्णन कृष्णदास जी ने किया है -

''अपने अपने भेष सबै मिलि आवौ।
खैलौ होरी फाग सबै मिलि अति रस झूमक गावौ॥[36]
''एरी सखी! निकसी है वृषभानु-कुवाँरी, होरी खेलत स्याम सौ।
रंग हो हो हो हो होरिया, उड़ावति अबीर गुलाल पिचकारी छूटत चहुँ धाम सौ॥''[37]

दशहरे के त्योहार पर कृष्णदास की यशोदा कृष्ण को आभूषणों से सजाती है, कुंकुम लगाती है, न्यौछावर करती है -

''सुभग दसहरा लागत नीकौ।
गिरिधरलाल जवारे बाँधत वन्यो भाल कुंकुम कौ टीकौ।
मात जसोदा करति आरती बारति हार देति मोती कौ।
''कृष्णदास'' प्रभु की छबि निरखत त्रिभुवन कौ सुख लागत फीकौ।[38]

दीपावली के दिन कृष्णदास के पदों में लोग घरों को दीपक से सजाते हैं, मंगलाचार बधाई गाते हें। घरों में थापे लगाते हैं, वंदनमाला से देहरी सजाते हैं, लोक नए-नए पकवान बनाते है, सजते-सँवरते है, खुशियों के गीत गाते हैं, नाचते हैं -

''ब्रज घर-घर सब दीपक साजत मंगलचार बधाई बाजत।
घर-घर थापा वंदन-माला देखि-देखि मन मोद बढ़ावत॥''[39]

गोवर्द्धन-पूजा के अवसर पर कृष्णदास की स्त्रियाँ गोवर्धन पर्वत की पूजा करती है। चंदन, कपूर, कुमकुम, दूध, दही, शहद इत्यादि से पूजा करती है, धृत-दीप जलाती है -

''गोवर्द्धन पर्बत पूजिये।
चंदन मृगमद कपूर कुंकुम दूध वही मधु सींजिये॥''[40]

कृष्णदास अधिकारी के विभिन्न पदों में पर्व, उत्सव व त्योहार लोक तत्व को उजागर करते नजर आते हैं।

कृष्णदास अधिकारी के काव्य में संस्कार वर्णन

डॉ. राजबली पांडेय के शब्दों में संस्कार से तात्पर्य शुद्धि की धार्मिक क्रियाओं तथा व्यक्ति के दैहिक मानसिक और बौद्धिक परिष्कार के लिए किये जाने वाले अनुष्ठानों से है, जिनसे वह समाज का पूर्ण विकसित सदस्य हो सके।[41] कृष्णदास ने अपने काव्य में जन्म से लेकर मृत्यु तक के प्रमुख संस्कारों का विशद वर्णन किया है। जातकर्म संस्कार के माध्यम से शिशु के कल्याण के लिए मानवेतर प्रबल शक्तियों, ब्राह्मणों, वृद्धजनों आदि के प्रति एक प्रकार के उपास्य भाव की अभिव्यंजन होती है। नामकरण संस्कार पौरोहित्य संस्कार है, जिसके द्वारा तात्कालिक बहुत-सी प्रथाओं का अभिद्योतन होता है। अन्न-प्राशन संस्कार के द्वारा बालक को बलिष्ठ बनाने के लिए विविध व्यंजन खिलाने की भावना बहुत ही सुंदर ढंग से अभिव्यक्त होती है। विवाह संस्कार के द्वारा तात्कालिक अनेकानेक कुलाचारों, मान्यताओं, मांगलिक अनुष्ठानों, सामाजिक व्यवहारों तथा चलनों का कृत्य आ जाते हैं, जो जन-समाज के द्वारा मृतात्मा से भय और स्नेह की भावना से संवलित होने के कारण पूरे किये जाते हैं। इनके अतिरिक्त छठी और वर्षगाँठ के अंतर्गत मिलकर उत्सव मनाने की विशिष्ट सामूहिक भावना का ज्ञान होता है। निश्चय ही इन संस्कारों के द्वारा तात्कालिक रीति-रिवाजों, खान-पान, वेशभूषा, रूढ़ियों और प्रथाओं, कुलाचारों, मांगलिक अनुष्ठानों, सामाजिक व्यवहारों और चलनों, मिलकर उत्सव मनाने की सामूहिक भावना आदि का पूर्ण परिज्ञान हो जाता है।[42] कृष्णदास ने जन्मोत्सव के समय जातकर्म और नामकरण संस्कार न ऐसे संस्कार हैं, जिनको संपन्न करते समय अनेक बार बधावा गया जाता है, कुल की रीति के अनुसार अनेक कृत्य किये जाते हैं, लोगों को दान-दक्षिणा दी जाती है, नेग पाने वालों को नेग दिया जाता है तथा प्रियजनों को भोज आदि भी कराया जाता है। इस संदर्भ में

कृष्णदास जी का पद उल्लेखनीय है –

''आजु बधायौ नंदमहन-घर फूले फिरत नर नारी।
इक गावत इक मृदंग बजावत, नांचत दै कर तारी॥
इक अद्भुत गति लेत मगन मन, गावत गीत रसारी।
तान तरंगनि रंग जम्यौ अति देत हैं हार उतारी॥''[43]

''बंदीजन सब निकट बुलाए देत दान बाबा नंद।''[44]

कर्ण छठी पूजन संस्कार पर श्री राधा के जन्म पर और कृष्ण जन्म पर बधाइयाँ गायीं। कर्णवेध संस्कार पर आपने छेदने वाले नाऊ को डाँटा और कहा कि –

''रोवत देखि जनजि अकुलानी दियौ तुरत नउवा क्रोधु रकी॥''[45]

विवाह से पूर्व हल्दी चढ़ाकर और उबटन लगाकर कृष्ण के स्नान का उल्लेख कृष्णदास जी ने किया है –

''हरद चढ़ावै हृदय लगावैं, उलट न्हवावैं सब ब्रजनारी।
कृष्णदास गिरिधरन छबीले रंग रंगीले की बलिहारी॥[46]

विवाह के अतिरिक्त कृष्णदास ने विदा होती हुई राधा का निकट संबंधियों से लिपट-लिपट कर रोना एवं वृषभानु का सांत्वना रूप में पुचकार कर यह कहना कि घबराओ मत, मैं जल्दी ही तुम्हारे भैया को भेजकर तुम्हें बुला लूँगा कितना मार्मिक और लौकिक है –

''लैहों बेगि बुलाय लड़ैती पिता कहौ पुचकार।
दैहौ बेगि पठाय भैया को यौं कहि रथ बैठार॥''[47]

विवाह के अवसर पर भी वागदान में टीका करके पुष्प माला पहनाने का वर्णन भी है –

''भाल कर्यौ कुमकुम को टीकौ पुष्पमाल गर में पहिरायी॥'' 48

विवाह के अवसर पर हल्दी हाथ की प्रथा को गाया है –

''हरद चढ़ावै हृदय लगावै उबटिन्हवावै सब नारी॥''

विवाह में दहेज को भी बताया कि –

''गोपनि के गोधन अति नीकि दीन्ही हैं लख चार॥''[49]

इस प्रकार कृष्णदास ने विवाह संस्कार, हल्दी संस्कार, कर्ण छठी पूजन संस्कार इत्यादि के माध्यम से अपने काव्य में लोक तत्व को दर्शाया है।

कृष्णदास अधिकारी के काव्य में वर्णित समाज

कृष्णदास ने अपने काव्य में जिस समाज की अभिव्यंजना हुई है, वह जाति-पांति के बंधनों में जकड़ा हुआ था। समान जाति के लोगों में परस्पर बहुत मेल-मिलाप था। नंद का परिवार समाज की प्रत्येक गतिविधि का मुख्य केंद्र रहा। शिशु (बालक कृष्ण) इस समाज की धुरी है। प्रत्येक पात्र किसी न किसी रूप में बालक कृष्ण के साथ अपना संबंध बनाये हुए है। शुभ अवसरों पर सभी एक-दूसरे को आमंत्रित करते और भेंट आदि देते। एक ही जाति के लोगों में छोटे-बड़े का कोई भाव नहीं था। पारस्परिक सहयोग, संगठन एवं सौहार्द्र इस समाज के मूलाधार थे। ग्रामीण महिलाएं दूध, दधि अथवा लवनी बेचने पास के किसी बड़े नगर में जाया करती थीं। संकट टलने पर सभी का मिलकर पर्व मनाना, शुभ अवसरों पर मिलकर बधाई गाना, यथाशक्ति सभी को दान देना, खुशियाँ मनाना आदि कार्य ऐसे है, जो इस समाज में पूरे हुए संगठन के प्रबल तंतुओं का ज्ञान कराते हैं।[50] कृष्णदास के कई पदों में इसका वर्णन है –

''गोपी ग्वाल सबै मिलि हरषित फूले अँग न समाई।
लै-लै भेट सामग्री उत्तम गृह-गृह तें उठि धाई।।
आए सकल नंदजू के द्वारै देखे मोहनराई॥''[51]

''आज बधायौ नंदमहर-घर फूले फिरत नर नारी।
इक गावत इक मृदंग बजावत, नाचत दै कर तारी॥''[52]

कृष्णदास ने अपने पदों के माध्यम से उस समय में (समाज में) पुत्र के जन्म की तरह पुत्री के जन्म पर भी समाज के आनंद व उल्लास को दर्शाया है, बधाइयाँ दी जा रही हैं, विप्रों को दान दिया जा रहा है –

''श्री वृषभानु राइजू के आँगन बाजत आजु बधाई।
भादौ सुदि आठें उजियानी आनँद की निधि आई॥''[53]

''देत बधाई जिनहिं सुनाई ब्रिप्रनि कों बहु दान।
बंदीजन अरू भाट ढाढी पाए बहुत सनमान॥''[54]

कृष्णदास के काव्य में समाज की परिवार नामक इकाई में पिता की अपेक्षा माता को प्रधानता दी गयी है।

कृष्णदास ने माँ-बेटे की सार्वजनिन कहानी के द्वारा शिशु की शैशवोचित क्रीड़ाओं एवं माता के द्वारा उसके लालन-पालन, रक्षण, मनोरंजन एवं बौद्धिक विकास हेतु किये गये बहुत से प्रयत्नों का सविस्तार उल्लेख किया है। माँ बेटे की बलाई उतारती है कि कहीं लाल को किसी की नजर न लग जाए-

''लाल को रववाइ पान मुरि-मुरि बलिहारि जाति
उलटि चली छकिहारी बीड़ा बाँटि देत जवै॥''[55]

समाज में गोचारण का मुख्य महत्व कृष्णदास जी के काव्य में देखने को मिलता है। कृष्णदास ने अपने परमाराध्य को गाय चराने भेज कर ग्वाले के स्वाभाविक अकृत्रिम जीवन, गाय घेरने की संपूर्ण प्रक्रियाओं आदि का सविस्तार विवेचन किया है -

''आजु हरि आनन्दै दुहत है गैयां।
श्रीदामा आदि सखा सब, लीने पीत मथि-मथि धैयां॥''[56]

ब्रज की लोकभूमि उत्सव धर्मिता और भक्ति-भावना में लोक को समाहित किए हुए है।

निष्कर्ष

लोक के प्राणी को जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेकों रीति-रिवाजों, संस्कारों और आचारों के बीच में से गुजरना पड़ता है। लोक का प्राणी इनसे पदे पदे चालित होता रहता है। कृष्णदास अधिकारी ने पर्व, उत्सव, त्यौहार, विभिन्न संस्कार, समाज, व्यवस्था इत्यादि के माध्यम से अपने पदों में लोकतत्त्व को उभारा है, जिससे एक ओर साहित्य निर्माण में योगदान मिला और दूसरी ओर समसामयिक समाज के दर्शन हुए। कृष्णदास अधिकारी के काव्य में मूल संवेदना भारतीय संस्कृति और उसके सरोकारों की सामाजिक और आध्यात्मिक अर्थों में आज भी प्रासंगिक है। लोक उत्सव, लोक और प्रेम की विचार संधि इस काव्य के विविध आयामों को आज भी गहराई से रेखांकित करती है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. अष्टछाप के कलित कवि और कीर्तनकार अधिकारी श्रीकृष्णदास, भगवतीप्रसाद देवपुरा, साहित्य-मण्डल, श्रीनाथ द्वारा, प्रथम संस्करण 2003,पृष्ठ-68
2. अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय, दीनदयाल गुप्त, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, संवत् 2004, पृष्ठ-311
3. अष्टछाप परिचय, प्रभुदयाल मीतल,अग्रवाल प्रेस, मथुरा, पृष्ठ-218
4. अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय, दीनदयाल गुप्त, पृष्ठ-246
5. अष्टछाप परिचय, प्रभुदयाल मीतल, पृष्ठ-218
6. अष्टछाप के कलित कवि और कीर्तनकार अधिकारी श्रीकृष्णदास, भगवतीप्रसाद देवपुरा, पृष्ठ-553
7. वही, पृष्ठ-553
8. वही, पृष्ठ-556
9. अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय, दीनदयाल गुप्त, पृष्ठ-315
10. वही, पृष्ठ-324
11. सिद्धांत कौमुदी, पृष्ठ-417
12. ऋग्वेद 3/53/12
13. वही, 10/90/14
14. श्रीमद्भागवत पुराण, 3/3,3/22, 3/24
15. धीरेन्द्र वर्मा (संपा.), हिंदी साहित्य कोश, (भाग-1), ज्ञानमण्डल लि. वाराणसी, द्वितीय सं., संवत् 2020, पृष्ठ-747
16. डॉ. शशि शर्मा, प्रगतिशील कविता में लोकतत्व, संजय प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2007, पृष्ठ-35
17. जनपद (त्रैमासिक) अंक 1, काशी
18. पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी विचार और वितर्क, पृष्ठ-196
19. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, चिंतामणि (भाग-1), पृष्ठ-148, 146
20. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, पृथिवी-पुत्र, पृष्ठ-85
21. डॉ. सत्येन्द्र, ब्रज लोकसाहित्य का अध्ययन, पृष्ठ-4
22. डॉ. शशि शर्मा, प्रगतिशील कविता में लोकतत्त्व, पृष्ठ-40
23. वही, पृष्ठ-40-41

24. डॉ. हरगुलाल, मध्ययुगीन कृष्णकाव्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, पृष्ठ-283
25. भगवतीप्रसाद देवपुरा (संपा.), अष्टछाप के कलित कवि और कीर्तनकार अधिकारी श्रीकृष्णदास, पृष्ठ-414, पद 770
26. वही, पृष्ठ-414, पद 769
27. वही, पृष्ठ-415, पद 771
28. वही, पृष्ठ-400, पद 720
29. वही, पृष्ठ-403, पद 727
30. वही, पृष्ठ-400, पद 719
31. वही, पृष्ठ-407, पद 737
32. वही, पृष्ठ-407, पद 738
33. डॉ. हरगुलाल, मध्ययुगीन कृष्णकाव्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, पृष्ठ-251
34. भगवतीप्रसाद देवपुरा (संपा.), अष्टछाप के कलित कवि और कीर्तनकार अधिकारी श्रीकृष्णदास, पृष्ठ-451, पद 342
35. वही, पृष्ठ-533, पद 1254
36. वही, पृष्ठ-488, पद 1064
37. वही, पृष्ठ-489, पद 1097
38. वही, पृष्ठ-411, पद 752
39. वही, पृष्ठ-411, पद 756
40. वही, पृष्ठ-412, पद 760
41. डॉ. हरगुलाल, मध्ययुगीन कृष्णकाव्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, पृष्ठ-285
42. वही, पृष्ठ-332
43. भगवतीप्रसाद देवपुरा (संपा.), अष्टछाप के कलित कवि और कीर्तनकार अधिकारी श्रीकृष्णदास, पृष्ठ-399, पद 716
44. वही, पृष्ठ-399, पद 717
45. वही, पृष्ठ 112
46. डॉ. हरगुलाल, मध्ययुगीन कृष्णकाव्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, पृष्ठ-312
47. भगवतीप्रसाद देवपुरा (संपा.), अष्टछाप के कलित कवि और कीर्तनकार अधिकारी श्रीकृष्णदास, पृष्ठ-112
48. वही, पृष्ठ-112
49. डॉ. हरगुलाल, मध्ययुगीन कृष्णकाव्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, पृष्ठ-49
50. वही, पृष्ठ-399, पद 414
51. भगवतीप्रसाद देवपुरा (संपा.), अष्टछाप के कलित कवि और कीर्तनकार अधिकारी श्रीकृष्णदास, पृष्ठ-400, पद 419
52. वही, पृष्ठ-399, पद 414
53. वही, पृष्ठ-408, पद 741
54. वही, पृष्ठ-408 पद 742
55. वही, पृष्ठ-289, पद 199
56. वही, पृष्ठ-350, पद 492

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

হোমেন বৰগোহাঞিৰ উপন্যাস ‘মৎস্যগন্ধা’ত নাৰী মনস্তত্ত্ব ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

ড° হিৰুমণি কলিতা

সহকাৰী অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
ভট্টদেৱ বিশ্ববিদ্যালয়
বজালী-৭৮১৩২৫
৯৩৯৫২৮৩৪২২
hirumanikalita652@gmail.com

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমীয়া কথাশিল্পৰ বিষয়ক বিস্তৃতি আৰু নতুন মাত্ৰা প্ৰদানৰ ক্ষেত্ৰত হোমেন বৰগোহাঞিৰ নাম সততে স্মৰণীয়। বৰগোহাঞিৰ সাহিত্যত সাহিত্যিকগৰাকীৰ অধ্যয়ন আৰু প্ৰজ্ঞাৰ গভীৰতা পাঠকে সদায়ে অনুভৱ কৰি আহিছে। সাহিত্যৰ অন্য দিশ সমূহৰ লগতে অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যলৈও বৰগোহাঞিৰ অৱদান লক্ষণীয়। তেওঁৰ উপন্যাসৰ বিষয়বস্তুৰ অভিনৱত্ব, বৈচিত্ৰতা আৰু কথনশৈলীৰ নতুনত্বই পাঠকক সাহিত্য পঠনৰ আনন্দ দিয়াৰ লগতে চিন্তাৰ নতুন দিশো মুকলি কৰে। সামাজিক, ৰাজনৈতিক আদি বিষয়বস্তুৰ লগতে মানুহৰ জটিল মনস্তাত্ত্বিক বিশ্লেষণ তেওঁৰ উপন্যাসৰে বৈশিষ্ট্য। বৰগোহাঞিৰ ৰচিত বাৰখন উপন্যাসৰ ভিতৰত *মৎস্যগন্ধা* অন্যতম। সামাজিক বৈষম্য, ভেদ-ভাব, উচ্চ-নীচৰ বিচাৰে কেনেদৰে মানুহৰ জীৱন তিক্ততাপূৰ্ণ কৰি তোলে- তাকেই উপন্যাসখনত এক ব্যতিক্ৰমী চৰিত্ৰৰ উপস্থাপনেৰে প্ৰকাশ কৰা হৈছে। এই অধ্যয়নত উপন্যাসখনৰ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ মেনকাৰ বিশ্লেষণৰ মাজেৰে চৰিত্ৰটোৰ মাজত প্ৰকাশি উঠা নাৰী মনস্তত্ত্বক ফহিয়াই চোৱাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। মেনকাৰ নাৰীমনৰ বিশ্লেষণেই এই অধ্যয়নৰ মূলবস্তু।

বীজ শব্দ ঃ

বৰগোহাঞি, মৎস্যগন্ধা, মেনকা, নাৰী আদি।

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

অসমীয়া সাহিত্যক্ষেত্ৰত যিসকল সাহিত্যিকে নিজস্ব চিন্তা আৰু আদৰ্শৰে সৃষ্টিশীলতাক একক আৰু অনন্য কৰি তুলিছে, তেওঁলোকৰ ভিতৰত হোমেন বৰগোহাঞি নিঃসন্দেহে অন্যতম। কবিতা, চুটিগল্প, উপন্যাস, প্ৰবন্ধ, নিবন্ধ, সমালোচনা, সাংবাদিকতা, সম্পাদনা তথা অনুবাদ— এই সকলো ক্ষেত্ৰলৈ বৰগোহাঞিয়ে সুকীয়া বৈশিষ্ট্যসম্পন্ন অৱদান আগবঢ়াই থৈ গৈছে। অধ্যয়নপুষ্ট চিন্তাশীল এই কথাশিল্পীগৰাকীয়ে সাহিত্যৰ অন্য অংগৰদৰে উপন্যাস ক্ষেত্ৰলৈও অৱদান আগবঢ়াইছে। বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ বিষয়ৰ আধাৰত ভিন্নৰঙী চৰিত্ৰৰ সমাবেশেৰে ৰচা বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসৰাজিয়ে পাঠকক সাহিত্য পঠনৰ আনন্দ প্ৰদানৰ লগতে তথা চিন্তাৰ নতুন দিশ নিৰ্ণয় কৰি আহিছে। *সুবালা* (১৯৬৩), *তান্ত্ৰিক* (১৯৬৭), *কুশীলৱ* (১৯৭০), *পুৱাৰ পূৰৱী সন্ধ্যাৰ বিভাস* (১৯৭০, নিৰূপমা বৰগোহাঞিৰ সৈতে যুটীয়াভাৱে), *হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়* (১৯৭৩),

পিতাপুত্র (১৯৭৫), *তিমিৰতীর্থ* (১৯৭৫), *অন্তৰাগ* (1986), *সাউদৰ পুতেকে নাও মেলি যায়* (১৯৮৭), *মৎস্যগন্ধা* (১৯৮৭), *নিঃসঙ্গতা* (২০০০) আৰু *বিষন্নতা* (২০০২)— এই বাৰখন বৰগোহাঞিৰ ৰচিত অসমীয়া উপন্যাস। সাধাৰণ শ্রেণীৰ মানুহৰ শ্রেণীসংগ্রাম, ৰাজনৈতিক বিষয়বস্তু, বর্ণবৈষম্য, স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতীয় সমাজলৈ অহা পৰিৱর্তন, মনস্তাত্ত্বিক দিশৰ ভিন্ন বিশ্লেষণ- প্রভৃতি বিষয়বস্তুৰ আধাৰত বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসসমূহ সৃষ্টি হৈছে।

বৰগোহাঞিৰ সৃষ্ট উপন্যাসসমূহৰ ভিতৰত *মৎস্যগন্ধা* অন্যতম। অসমীয়া সমাজত প্রচলিত জাত-পাতৰ বৈষম্যৰ দৰে এক সামাজিক সমস্যাৰ পটভূমিত উপন্যাসখন সৃষ্টি হৈছে। 'মেনকা' উপন্যাসখনৰ কেন্দ্রীয় চৰিত্র। ঔপন্যাসিকে অতি প্রাণৱন্ত ৰূপত এক প্রতিবাদী সত্ত্বাৰূপে চৰিত্রটিক চিত্রিত কৰিছে, যাৰ মাজেৰে প্রকাশি উঠিছে নাৰীমনৰ কেতবোৰ স্বাভাৱিক গোপন দিশ।

১.০০ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসৰ বিভিন্ন দিশ সন্দর্ভত ইতিপূর্বে বিভিন্ন আলোচনা সম্পাদিত হৈছে। *মৎস্যগন্ধা*—উপন্যাস সম্পর্কেও আলোচনা দেখা গৈছে। কিন্তু, উপন্যাসখনৰ কেন্দ্রীয় চৰিত্রটিৰ মাজেৰে প্রকাশিত নাৰী মনস্তত্ত্ব সম্পর্কে বিশেষ আলোচনা বর্তমানলৈকে সীমিত যেন অনুভৱ হৈছে। এই অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য হৈছে—

১) হোমেন বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসত প্রতিফলিত নাৰী মনস্তত্ত্বক আলোচনা কৰা।

২) মেনকাৰ মাজেৰে প্রকাশি উঠা নাৰীমনৰ বিশ্লেষণ দাঙি ধৰা।

৩) তাৰ অন্তৰালত ক্রিয়া কৰা সামাজিক কেৰোণসমূহ বিচাৰ কৰা।

১.০.১ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু পৰিসৰ ঃ

অধ্যয়নপুষ্ট চিন্তাশীল লেখকৰূপে বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসৰ চৰিত্রসমূহত মনস্তাত্ত্বিক বিশ্লেষণ সততে লক্ষ্য কৰা যায়। কিন্তু বিষয়ৰ পৰিধিলৈ লক্ষ্য ৰাখি এই আলোচনাত মাত্র *মৎস্যগন্ধা* - উপন্যাসৰ কেন্দ্রীয় চৰিত্র 'মেনকা' কহে অধ্যয়নৰ পৰিসৰলৈ অনা হৈছে।

এই অধ্যয়ন মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক। কিন্তু প্রয়োজসাপেক্ষে বর্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো প্রয়োগ কৰা হৈছে।

২.০০ বিষয় প্রৱেশ ঃ

মৎস্যগন্ধা - উপন্যাসৰ পটভূমি হৈছে যুগে-যুগে সমাজত গভীৰভাৱে শিপাই থকা জাত পাত ভেদ ভাৱৰ সমস্যা। সামাজিক বর্ণবৈষম্য আৰু অস্পৃশ্যতাৰ বিৰুদ্ধে এক চৰম প্রতিবাদ হৈছে *মৎস্যগন্ধা*। উপন্যাসখনৰ কেন্দ্রীয় চৰিত্র 'মেনকা'ৰ মাজেৰে অন্যায় - অবিচাৰৰ বিৰুদ্ধে ক্রোধ, ঘৃণা আৰু প্রতিবাদৰ কণ্ঠস্বৰ প্রতিধ্বনিত হৈছে। এগৰাকী অশিক্ষিত তিৰোতা হোৱা স্বত্বেও মেনকাৰ সাহস আৰু সবল চৰিত্র লক্ষণীয়। সমাজত অস্পৃশ্যৰূপে পৰিচিত কৈৱর্ত সমাজখনক উচ্চবর্ণৰ হিন্দু লোকসকলে কৰা হীন ব্যৱহাৰৰ বিৰুদ্ধে সমগ্র জীৱন নিজৰ উদাত্ত কণ্ঠৰে প্রতিবাদ কৰিছে মেনকাই।

চৈধ্যটা পর্বত বিভক্ত উপন্যাসখনৰ মূল কাহিনীৰ পূর্বে আৰু সামৰণিত দুটা পর্ব সংযোগ কৰা হৈছে। আৰম্ভণি পর্বত দুজন বাটৰুৱাই কথা-বতৰাত 'ডোম'- জাতিক তুচ্ছ-তাচ্ছিল্য কৰাত এজনী ডোম মহিলাই দুয়োজনকে এজাউৰী গুৱাল গালি দিছে। মহিলাৰ মুখৰ অশ্রাব্য ভাষা শুনি দুয়ো বাটৰুৱা বেগাবেগিকৈ গন্তব্য স্থানলৈ আগবাঢ়িছে। এই মহিলাজনীয়ে হ'ল উপন্যাসখনৰ প্রধান চৰিত্র মেনকা।

আর্থিকভাৱে দুর্বল মেনকাহঁতৰ পৰিয়ালটোৰ দুবেলা দুমুঠি ভাতৰো অভাৱ। আনফালে তাইৰ কানি খোৱাৰ বদ্ অভ্যাস এটা আছে। যিদিনাই তাই কানি খাবলৈ নাপায়, সিদিনাই হকে-বিহকে মানুহক গুৱাল গালি দি মনৰ ক্ষোভ দমন কৰে। হিন্দু ধর্মৰ তথাকথিত উচ্চ বর্ণৰ লোকসকলে মাছ মাৰি জীৱন নির্বাহ কৰা 'ডোম' সকলক বৰ অস্পৃশ্য জ্ঞান কৰে। মেনকাই শৈশৱকালতে তেনে তিক্ত অভিজ্ঞতাৰ মুখামুখি হ'বলগীয়া হৈছিল। সেয়েহে 'ডোম' শব্দটো কাণত পৰিলেই মেনকা একেবাৰে পাগলী হৈ উঠে। মাক মেমেৰিয়ে মেনকাক বুজাইছিল ঃ

আমি ডোম বুজিছ। পূর্বজন্মৰ কিবা পাপৰ শাস্তি স্বৰূপে ঈশ্বৰে আমাক নীহ-কুলীয়া ডোম কৰি সৃষ্টি কৰিছে। হেঁদুৰ চোতালত উখুৰা ধান মেলি থ'লে তাত যদি ডোমৰ ছাঁ পৰে, তেন্তে ধানখিনি চুৱা হয়।[১]

মহ'ঘুলি নৈৰ পাৰৰ গৱৈমাৰী নামৰ কৈৱর্ত গাওখনৰ বেছিভাগ মানুহে দুখীয়া। তাৰ মাজতো দুর্যোধনৰ পৰিয়ালটো কিছু অৱস্থাপন্ন। দুর্যোধনৰ দুজনী ছোৱালী, বেউলা আৰু মেনকা। দুয়োজনীয়ে গাঁওখনৰ ভিতৰত ধুনীয়া ছোৱালী। সেয়েহে দুর্যোধনে দুজন চাকৰিয়াল জোঁৱাই আশা কৰে।

কিন্তু গৰেমাৰী গাঁওত হোৱা হাইজা মহামাৰীয়ে গাঁওৰ ৭২২ জন মানুহৰ লগতে দুর্যোধন আৰু তেওঁৰ পুতেক দুটাকো পৃথিৱীৰ পৰা আজুৰি নিলে। কৈৱর্ত গাঁৱৰ ধনী মানুহ দিগম্বৰৰ দুই পুত্ৰ জয়হৰি আৰু পূর্ণৰ লগত বেউলা আৰু মেনকাৰ বিয়া হ'ল। বিয়াৰ পিছতো পূর্ণৰ সোৱোপা আৰু ভঙুৱা স্বভাৰৰ পৰিৱর্তন নহ'ল। পুতেকৰ স্বভাৱৰ পৰিৱর্তন নোহোৱাত দিগম্বৰে পূর্ণক ঘৰৰ পৰা বেলেগ কৰি দিলে। ফলত পূর্ণ-মেনকাৰ সংসাৰক অভাৱনীয় দৰিদ্রতাই হেঁচি ধৰিলে।

'মেনকা'- চৰিত্রটি অংকনত ঔপন্যাসিকৰ অন্তদৃষ্টিৰ প্রভাৱ অতি স্পষ্ট। দৰাচলতে শিশু অৱস্থাতে পোৱা এটি তিক্ত অভিজ্ঞতাই গুটিৰপৰা পোখা মেলি গছ হৈ 'মেনকা'ৰ ৰূপ ধাৰণ কৰিছে। পাঁচ-ছয় বছৰ বয়সতে মাকৰ সৈতে এঘৰ উচ্চবর্ণৰ মানুহৰ ঘৰলৈ যাওঁতে ঘৰৰ গিৰিহঁতনীয়ে চোতালত মেলি দিয়া ধানত মেনকাৰ গাৰ ছাঁ পৰাত মানুহজনীয়ে এক প্রচণ্ড চৰ মেনকাৰ গালত বহুৱাই দিয়ে। জাত-পাত, উচ্চ-নীচ বুজাৰ বয়স নৌহৌতেই গালত পৰা সেই সুতীব্র চৰটোৰ আঘাতে মেনকাৰ মানসিকতাত সমগ্র জীৱনৰবাবে এক যন্ত্রণা ৰোপণ কৰে। এই যন্ত্রণাই পৰৱর্তী পর্যায়ত ঘৃণা, ক্রোধ আৰু প্রতিশোধৰ ৰূপ লৈ মেনকাৰ সমগ্র সত্ত্বা আৱৰি ধৰে। সেয়ে, সমাজৰ তথাকথিত উচ্চ কুলীয়া লোকসকলক সুযোগ পালেই মেনকাই অশ্রাব্য ভাষাৰে গুৱালগালি পাৰে তথা প্রতিশোধৰ বাট বিচাৰি ফুৰে।

দৰিদ্রতা অভাৱগ্রস্ততা তথা অপূৰণীয় আশা-আকাঙ্খাৰ আতিশয্যই কিদৰে নাৰীমনক সময়সাপেক্ষে ক্রুৰ কৰি তোলে তাৰ প্রতিফলন ঘটিছে 'মেনকা'ৰ মাজেৰে। কিন্তু গাঁওখনৰ ভিতৰতে ধুনীয়া বুলি প্রশংসিত মেনকাই কৈশোৰ-যৌৱনৰ সন্ধিক্ষণত দুচকুত ৰচিছিল নিত্য-নতুন স্বপ্নঃ

পেট উপবাসী হৈ থাকিলেও তাইৰ হৃদয় পৰিপূর্ণ হৈ আছিল নিত্য-নতুন স্বপ্নেৰে। তৰা-ফুল বছা আকাশে, কুল কুলকৈ বৈ থকা নৈয়ে, গছৰ পাতত সুহৰি বজোৱা বতাহে আৰু বহু দূৰৰ পৰা উটি অহা গৰখীয়াৰ পেঁপাৰ মাতে তাইৰ হৃদয়ত প্রতিদিনে একোটা ন ন সপোনৰ জন্ম দিছিল। তাই জীৱনৰ পৰা কিবা এটা বিচাৰিছিল। ঠিক কি বিচাৰিছিল সেই কথা স্পষ্টভাৱে তাই কোনো দিনে জনা নাছিল। কিন্তু কিবা এটা খুব সুন্দৰ মনোহৰ তাই বিচাৰিছিল, আৰু তাইৰ মনত নিশ্চিত বিশ্বাস হৈছিল যে কিবা এটা অলৌকিক উপায়েৰে হ'লেও তাই বিচৰা বস্তুতো নিশ্চয় পাবই পাব।[২]...

কিন্তু নিষ্ঠুৰ জীৱনৰ বাস্তৱতাই তথা অভাৱে কোঙা কৰি পেলোৱা 'মেনকা'ৰ মনৰ অৱচেতনত নোপোৱাৰ ক্ষোভ এটাই দিনে-নিশাই ক্রিয়া কৰাটো চৰিত্রটোত প্রতিফলিত হৈছে। গিৰীয়েক পূর্ণৰ সোৱোপা, নিষ্কর্মা, দায়িত্বহীন স্বভাৱৰবাবে যেতিয়া স্বচ্ছল শহুৰেকৰ ঘৰখনৰ পৰা তাই বেলেগ হব লগা হ'ল দুবেলা-দুমুঠিৰবাবেও মেনকাই হাহাকাৰ কৰিবলগা হ'ল। তাইৰ এই সাংসাৰিক সংকটৰবাবে শেষত ঈর্ষাৰ বশৱর্তী হৈ মেনকাই শহুৰেকৰ ঘৰত স্বচ্ছল জীৱন কটোৱা আপোন বায়েক বেউলাক দোষীসাব্যস্ত কৰিছে আৰু দিনে-নিশাই গালি-গালাজ, শাওপাত দি যন্ত্রণাৰপৰা মুক্ত হবৰ চেষ্টা কৰিছে। প্রকৃতার্থত সমগ্র জীৱনত এধানি সুখৰ মুখ নেদেখা মেনকাই জীৱনযুদ্ধত হতাশগ্রস্ত হৈ পৰিছে যদিও তাইৰ চেতন মনটোৱে সেই হতাশাক স্বীকাৰ কৰি পৰাজয় বৰণ কৰিবলৈ প্রস্তুত নহয়।

এই যন্ত্রণাৰ মুক্তিস্বৰূপে মেনকাই কানিৰ আশ্রয় লৈছে আৰু শাৰীৰিক-মানসিক দুয়োপ্রকাৰে নিচাৰ ওপৰত নির্ভৰশীল হৈ পৰিছে। কানি আবিহনে তাই শুব নোৱাৰে। মেনকাৰ অবদমিত হতাশাই উদ্বেগৰ ৰূপ হৈ চেতন অৱস্থাত তাইক খেদি ফুৰে আৰু সেয়ে কানিৰ আশ্রয়ত সেই জীৱন যন্ত্রণাৰপৰা তাই মুক্তি বিচাৰে। নিচাগ্রস্ত মনোব্যাধিৰ পূর্ণ প্রতিফলন ঔপন্যাসিকে চৰিত্রটোৰ মাজেৰে প্রতিফলন ঘটাইছে।

গোটেই জীৱন নীহকুলীয়া বুলি পাই অহা সামাজিক বৈষম্য তথা যন্ত্রণাক দূৰ কৰাৰ অস্ত্রৰূপে মেনকাই গ্রহণ কৰিছে

যেতিয়া গম পাইছে যে তাইৰ ননদ কমলা আহোম যুৱক মণিৰামৰ সৈতে হোৱা অবৈধ সম্পৰ্কৰ ফলত অন্তঃসত্ত্বা হৈছে। মণিৰামক বিভিন্ন ভাবুকিৰে মেনকাই 'ডোমৰ ঘৰত ঘৰজোঁৱাই হ'বলৈ বাধ্য কৰিছে আৰু উচ্চকুলীয় মানুহৰ সন্তানক নিজৰ জাতত ঘৰজোঁৱাই কৰিবলৈ পাই আত্মতৃপ্তি লাভ কৰিছে তথা জীৱনজুৰি পাই অহা অসন্মান, অৱহেলাৰ পোটক তোলা যেন অনুভৱ কৰি তাই বিচিত্ৰ সুখৰ সোৱাদ লৈছে।

ঔপন্যাসিকে চৰিত্ৰটিক এক চতুৰ, ঈৰ্ষাকাতৰ, খঙাল, অত্যন্ত মুখচোকা, প্ৰতিশোধপৰায়ণা, জেদী প্ৰতিবাদী চৰিত্ৰৰূপে সৃষ্টি কৰিছে যদিও তাৰ মাজতেই মেনকাৰ মাজেৰে প্ৰকাশি উঠিছে মানৱীয় অনুভূতি, প্ৰকাশ পাইছে অন্য নাৰীৰ প্ৰতি সহমৰ্মিতা। মেনকাই গৰ্ভপাতৰ গাঁৱলীয়া ঔষধ বিদ্যাৰ অধিকাৰী। কিন্তু উপন্যাসখনত মেনকাই কৈছে— 'গৰ্ভ নষ্ট কৰিছো মানুহৰ প্ৰাণ বচাবলৈ, মান বচাবলৈ।'[৩] একেটি প্ৰসংগতে সমাজত মান বচাবলৈ নিজ কন্যাক মৃত্যুৰ মুখলৈ ঠেলি দিয়া কথাত মেনকাই হুমুনিয়াহ কাঢ়িছে, যাৰ মাজেৰে চৰিত্ৰটিৰ মাজত থকা মানৱীয় দিশৰ প্ৰকাশ ঘটিছে, লগতে মেনকাৰ বিভক্ত ব্যক্তিত্বও প্ৰকাশি উঠিছে।

৩.০০ উপসংহাৰ ঃ

'মেনকা' ঔপন্যাসিকৰ এক সবল প্ৰতিবাদী চৰিত্ৰ; যাৰ সোঁতৰ বিপৰীতে গৈ যুঁজাৰ সাহস আছে। স্বপ্নভংগৰ যন্ত্ৰণা, অৱদমিত কামনা-বাসনা, দৰিদ্ৰতা আৰু জীৱনৰ বাস্তৱতাৰ নিষ্ঠুৰ ৰূপে কিদৰে নাৰীমনক জীৱনটোৰ প্ৰতি ৰুক্ষ কৰি তোলে, তাৰ এক ব্যতিক্ৰমী প্ৰকাশ হৈছে 'মেনকা'। জীৱনৰ হতাশাগ্ৰস্ততাক সহজৰূপে স্বীকাৰ কৰি পৰাজয় বৰণ কৰাৰ পৰিৱৰ্তে 'মেনকা'ৰ চেতন মানসিকতাই এক প্ৰতিবাদী ব্যতিক্ৰমী পদ্ধতি বাছি লৈছে। চেতন মনৰ উদ্বেগ-উত্তেজনাৰ পৰা পলায়নৰ পথৰূপে কানিক আশ্ৰয় কৰি এটি মনোব্যাধি গঢ়ি লোৱা 'মেনকা' দৰাচলতে আমাৰ সমাজৰ বহু সমস্যাৰ জ্বলন্ত প্ৰতিভূ। পাঠকৰ হৃদয়ক গভীৰভাৱে স্পৰ্শ কৰা এই চৰিত্ৰটোৰ মনস্তত্ত্বৰ বিশ্লেষণৰ আধাৰ প্ৰকৃততে সামাজিক বৈষম্যৰ সমস্যাহে; যাৰ সৈতে সম্পৃক্ত হৈ আছে একো-একোটা জাতিৰ আৰ্থিক দিশটো। ❑

অন্ত্যঃটীকা ঃ

[১]হোমেন বৰগোহাঞি, *মৎস্যগন্ধা*, পৃ. ৫৬৪
[২]উল্লিখিত, পৃ. ৫৬৬
[৩]উল্লিখিত, পৃ. ৫৭৩

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য উৎস ঃ

বৰগোহাঞি, হোমেন। *উপন্যাস সমগ্ৰ-১*, গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট'ৰচ, ২০১৪
বৰগোহাঞি, হোমেন। *উপন্যাস সমগ্ৰ-২*, গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট'ৰচ, ২০১৪

গৌণ উৎস ঃ

কটকী, প্ৰফুল্ল। *স্বাজোত্তৰ অসমীয়া উপন্যাস সমীক্ষা*। গুৱাহাটী ঃ বীণা লাইব্ৰেৰী, ২০১১
ঠাকুৰ, নগেন (সম্পা.)। *এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস*। গুৱাহাটী ঃ জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০০০
ডেকা, নমিতা (সম্পা.)। *হোমেন বৰগোহাঞিৰ সন্ধানত*। গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট'ৰচ, ১৯৯৮
বৰগোহাঞি, হোমেন। *আত্মানুসন্ধান*। গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট'ৰচ, ১৯৯০
—————। *ধুমুহা আৰু ৰামধেনু* (প্ৰথম খণ্ড)। গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট'ৰচ, ১৯৯৭

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

সাধুকথাত নাৰী চৰিত্ৰৰ বৈপৰীত্য ঃ এটি চমু আলোচনা

(লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ 'বুঢ়ী আইৰ সাধু'ৰ আলমত)

শিখা শর্মা

সহকাৰী অধ্যাপিকা (অংশকালীন)
অসমীয়া বিভাগ, দুধনৈ মহাবিদ্যালয়
পিন-৭৮৩১২৪
৮১৩৩৮৪৭৮৩২
sharmashikha94jjll@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

সাধুকথাবোৰ লোকমনৰ চিৰন্তন ভাৱ-অনুভূতিৰ বাহক। অতীজৰে পৰা মানুহৰ মুখে মুখে বাগৰি অহা কাহিনীবোৰেই সাধুকথা। যাক মৌখিক সাহিত্য ৰূপে জনা যায়। লিখিত সাহিত্যৰ পূৰ্বৰ পৰাই সাধুকথাবোৰ জনমানসত প্ৰচলিত। এই মৌখিক সাহিত্য বা বাচিক কলাৰ প্ৰধান বৈশিষ্ট্য হৈছে নৈৰ্ব্যক্তিকতা আৰু পৰিৱৰ্তনশীলতা মূল ধৰ্ম। সেয়ে সময়ৰ সোঁতত সাধুকথাৰ পৰিৱৰ্তন হোৱাটো নিত্যান্তই স্বাভাৱিক। সাধুকথাবোৰ মূলতঃ শিশু কেন্দ্ৰিক। বিশেষকৈ শিশুমনক আকৃষ্ট কৰিবলৈকে সাধুকথাৰ সৃষ্টি। শিশুৰ মনঃপূত হোৱাকৈ ভিন্ন বিষয়ৰ ৰসাল কথাৰ সংযোজন কৰা হয় বাবেই সাধুকথাত প্ৰকৃতি, চৰাই-চিৰিকটি, গছ-গছনিৰ লগতে মানুহ আৰু সমাজৰ সৈতে সম্পৰ্কিত বিষয় সুখ-দুখ, হাঁহি-কান্দোনৰ লগতে জীৱ-নিৰ্জীৱ, বাস্তৱ-অতিবাস্তৱ ইত্যাদিৰ সমাহাৰ দেখা যায়। সাধুকথাৰ আৰু এটা বিশেষ গুণ হৈছে সাধুকথাৰ কাহিনীক কওঁতাই নিজা ধৰণে কাহিনীৰ বঢ়া-টুটা কৰি উপস্থাপন কৰিব পাৰে। অতীজৰে পৰা প্ৰচলিত সাধুকথাবোৰক নৱৰূপ দিয়ে লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই।

আমাৰ এই আলোচনাৰ জৰিয়তে সাধুকথাৰ মাজেৰে নাৰী চৰিত্ৰৰ বৈপৰীত্য কেনেদৰে প্ৰকাশ পাইছে সেই বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ যত্ন কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ সাধুকথা, নাৰী, শিশু, সমাজ।

১.০০ অৱতৰণিকা ঃ

সাধুকথা লোকসাহিত্যৰ এবিধ অন্যতম উপাদান। লোকসাহিত্য অসমীয়া সাহিত্যৰ সাহস্বৰূপ। অতীজৰে পৰা চহা লোকৰ মুখে মুখে প্ৰচলিত সাহিত্যই লোকসাহিত্য। লোকজীৱনৰ ভাৱ-অনুভূতি, চিন্তা-চেতনা, কথনশৈলী, সুখ-দুখ ইত্যাদি বিভিন্ন দিশৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে লোকসাহিত্যৰ জৰিয়তে। যিহেতু সাহিত্যৰ মাজেৰেই সমাজৰ প্ৰতিফলন ঘটে; গতিকে লোকসাহিত্যসমূহৰ দ্বাৰাই আমি প্ৰাচীন অসমীয়া সমাজ সম্পৰ্কে ধাৰণা কৰিব পাৰিছোঁ। আলোচনাৰ সুবিধাৰ্থে লোকসাহিত্যক ভিন্ ভিন্ ধৰণেৰে ভাগ কৰি দেখুৱাইছে। তাৰ ভিতৰত ড° সত্যেন্দ্ৰনাথ শৰ্মাদেৱে 'অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত' গ্ৰন্থত উল্লিখিত ভাগকেইটা হ'ল—

(ক) লোকগীত, (খ) ফকৰা-যোজনা আৰু প্ৰবচন, (গ) সাধুকথা।

অৰ্থ বিচাৰ কৰিবলৈ গ'লে দেখা যায়— অসমীয়া 'সাধুকথা' শব্দটো ইংৰাজী

ভাষাৰ Tales, Legends, Myths, Fables আদি শব্দৰ সমাৰ্থক। সাধুকথা শব্দৰ মূল বিচাৰি বহুতে কয় যে ভালেমান কাহিনীত সাধু বা সজ-নীতি-শিক্ষা থকা বাবেই হ'বলা এনেবোৰ লোককাহিনীক সাধুকথা বোলা হয়।[১] প্ৰফুল্ল দত্ত গোস্বামীৰ মতে 'সাধু' শব্দটো 'সাধু' অৰ্থাৎ সদাগৰসকলৰ পৰা অহা। সদাগৰ মানে হৈছে দেশে-বিদেশে বেপাৰ-বণিজ কৰি ফুৰা লোক।[২] বেজবৰুৱাদেৰে আকৌ 'সাধু' শব্দৰ পোণপটীয়া অৰ্থ গ্ৰহণ কৰি ইয়াক 'সজকথা' বুলিছে। সাধুকথা মানে সজকথা বা সন্তসাধুৰ উপদেশ বাক্য বুলি আদিৰ পৰাই অসমীয়াই ভাৰি আহিছে।

সাধুকথাবোৰ হৈছে লোকমনৰ বিচিত্ৰ চিন্তাৰ সমষ্টি। লোকমনৰ অভিজ্ঞতা, চিন্তা-চেতনা, ৰীতি-নীতি, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, সংস্কৃতি আদিৰ প্ৰতিফলন ঘটে সাধুকথাবোৰত। শিশুকেন্দ্ৰিক হ'লেও এই সাধুকথাবোৰত লোকসমাজৰ প্ৰতিচ্ছবি বিদ্যমান। সেয়ে সাধুকথাবোৰক অসমীয়া জাতীয় জীৱনৰ মৌকোঁহ বুলি কোৱা হয়। মানুহে ব্যক্তিজীৱনত লাভ কৰা অভিজ্ঞতা ব্যক্ত কৰি আত্মতৃপ্তি লাভ কৰে। মহাকবি গ্যেটেই সাধুকথাক সকলো ধৰণৰ গল্প, উপকথা বা উপন্যাস (Fiction) ৰ পিতৃস্বৰূপ বুলিছে।

পূৰ্বেই উল্লেখ কৰা হৈছে যে, লোকসাহিত্যৰ মাজেৰে সমাজৰ প্ৰতিচ্ছবি প্ৰতিফলিত হয়। সমাজৰ বাবে মূল অৱলম্বন হৈছে— পুৰুষ আৰু নাৰী। নাৰী সমাজৰ অবিচ্ছেদ্য অংগ। সমাজত নাৰীৰ কাৰ্যকলাপ, নাৰী প্ৰকৃতি, নাৰী মনস্তত্ত্ব চিত্ৰণে সাধুকথাবোৰক অনন্য মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে। তাৰোপৰি নাৰী চৰিত্ৰৰ বৈপৰীত্য বেজবৰুৱাদেৰে 'বুঢ়ী আইৰ সাধু' সংকলনত কেনেদৰে প্ৰকাশ কৰিছে; সেই বিষয়ে এটি আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

২.০০ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

নাৰী এক অনন্য সত্ত্বা। সাহিত্য আৰু সমাজৰ সৈতে নাৰী কেনেদৰে জড়িত হৈ আছে বা সাহিত্যত নাৰীচৰিত্ৰৰ প্ৰতিফলন কেনেদৰে হৈছে, সেইবিষয়ে অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আছে লগতে সাধুকথাবোৰৰ মাজেৰে নাৰীচৰিত্ৰৰ বৈপৰীত্য কেনেদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে সেইবিষয়ে বেজবৰুৱাদেৰেৰ 'বুঢ়ী আইৰ সাধু'ৰ আলমত বিচাৰ কৰাটোৱেই এই আলোচনাৰ মূল উদ্দেশ্য।

৩.০০ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

বিষয়টো আলোচনা কৰিবলৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি আৰু প্ৰয়োজন সাপেক্ষে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিও গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

৪.০০ লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ চমু পৰিচয় ঃ

আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যৰ গুৰিধৰোঁতা লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই ১৮৬৪ খ্ৰীষ্টাব্দত জন্ম লাভ কৰে। কবিতা, গল্প, উপন্যাস, ৰম্যৰচনা, ব্যঙ্গৰচনা, নাটক, শিশু সাহিত্যিকে ধৰি সাহিত্যৰ আটাইকেইটা বিষয়তে সাহিত্য ৰচনা কৰি তেখেতে সাহিত্য প্ৰতিভাৰ নিদৰ্শন দি গৈছে। যিবোৰ অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যৰ অমূল্য সম্পদ। তেখেত আছিল অসমীয়া চুটিগল্পৰ জনক। চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালা আৰু হেমচন্দ্ৰ গোস্বামীৰ সৈতে মিলি অন্যান্য ছাত্ৰসকলৰ লগত অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যক পুণৰ প্ৰতিষ্ঠাৰ উদ্দেশ্যে "অসমীয়া ভাষা উন্নতি সাধিনী সভা" গঠন কৰে আৰু তাৰ মুখপত্ৰ হিচাপে "জোনাকী" আলোচনী (১৮৮৯ কাকত উলিয়ায়। তেখেতৰ সাহিত্যৰাজি সম্পৰ্কে চাবলৈ গ'লে দেখা যায় যে বেজবৰুৱাদেৰৰ গল্পপুথি চাৰিখন। 'সুৰভি' (১৯০৯, 'সাধুকথাৰ কুঁকি' (১৯১০, 'জোনবিৰি' (১৯১৩ আৰু 'কেহোঁকলি' (মৰণোত্তৰভাৱে)। 'বুঢ়ী আইৰ সাধু' (১৯১২ 'ককাদেউতা আৰু নাতিল'ৰা' আৰু 'জুনুকা'। "কবিতা হয় যদি হওঁক, নহয় যদি নহওঁক", বুলি লিখা কবিতাবোৰ থুপাই ১৯১৩ চনত 'কদমকলি' প্ৰকাশ কৰে আৰু মৰণোত্তৰভাৱে 'পদুমকলি' ১৯৬৮ প্ৰকাশ পায়। 'জয়মতী কুঁৱৰী' (১৯১৫, 'চক্ৰধ্বজ সিংহ' ১৯১৫, আৰু 'বেলিমাৰ' (১৯১৫ বুৰঞ্জীমূলক নাট আৰু 'লিতিকাই', 'নোমল', 'পাচনি', 'চিকৰপতি-নিকৰপতি' তেখেতৰ দ্বাৰা ৰচিত প্ৰহসন। দন্দুৱাদ্ৰোহ পটভূমিত ১৮৯১ চনত ৰচনা কৰা 'পদুমকুঁৱৰী' ১৯০৫ চনত প্ৰকাশ পায়। কৃপাবৰ বৰুৱা ছদ্মনামেৰে লিখা বহুতো হাস্য-ব্যংগ ৰচনাৰ উপৰি ১৯০৯ চনত 'ডাঙৰীয়া দীননাথ বেজবৰুৱাৰ জীৱন চৰিত' নামেৰে দেউতাকৰ জীৱনী লিখি উলিয়ায়। ১৯১১ চনত 'শংকৰদেৱ' আৰু ১৯২৪ চনত 'শ্ৰী শ্ৰী শংকৰদেৱ আৰু শ্ৰী শ্ৰী মাধৱদেৱ" নামে আন দুখন জীৱনী গ্ৰন্থ ৰচনা কৰে। তেখেতৰ আত্মজীৱনীখন হৈছে 'মোৰ জীৱন সোঁৱৰণ'।

এইজনা মহান সাহিত্যিকৰ স্বদেশপ্ৰীতি, সাহিত্যপ্ৰীতি কৰ্মদ্যোম, ৰচনাৰীতিৰ দক্ষতা, কথনশৈলী সদায় অনুকৰণ কৰিবলগীয়া।

৫.০০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

সাধুকথাবোৰ অসমীয়া সমাজৰ আপুৰুগীয়া সম্পদ। অসমীয়া সমাজত সিচঁৰিত হৈ অহা সাধুকথাবোৰক একগোট

কৰি নতুনৰূপত সজাই পৰাই তোলে লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাই। লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ ককাদেউতা আৰু নাতি ল'ৰা, বুঢ়ী আইৰ সাধু, জুনুকা, বাখৰ উল্লেখযোগ্য পুথি। সময়ৰ সোঁততে বিলীন হৈ যাব নোৱাৰাকৈ বেজবৰুৱাদেৱে সংকলিত কৰা সাধুকথাৰ পুথিসমূহে অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল সমৃদ্ধ কৰিছে। এই সাধুকথাবোৰ অকল কাহিনীয়ে নহয়, ই হৈছে সমাজৰ দলিল স্বৰূপ। য'ত দেখা গৈছে প্ৰাচীন অসমৰ সমাজ-ব্যৱস্থা, ৰীতি-নীতি, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, বিশ্বাস-অন্ধবিশ্বাস আদিৰ চিত্ৰণ। বেজবৰুৱাদেৱৰ অনন্য কথনৰীতিয়ে সাধুকথাবোৰক বিশেষ মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে। সমাজৰ অবিচ্ছেদ্য অংগ নাৰীৰ কাৰ্য-কলাপ, আচাৰ-আচৰণ, বেজবৰুৱাদেৱে সূক্ষ্ম দৃষ্টিভঙ্গীৰে পৰ্যবেক্ষণ কৰিছে। 'বুঢ়ী আইৰ সাধু'ত মূলতঃ নাৰীকেন্দ্ৰিক সাধুৰে সন্নিৱিষ্ট হৈছে। তাৰ ভিতৰত ঐ-কুৱঁৰী, তেজীমলা, চিলনী জীয়েকৰ সাধু, তুলা আৰু তেজা, চম্পাৱতী আদি উল্লেখযোগ্য। এফালে নাৰী ৰূপ-সৌন্দৰ্য, কৰ্ম-পটুতা, সহনশীলতা, মমতাময়ী আদি গুণেৰে মহীয়ান আনহাতে হিংসাকুৰীয়া, কপটীয়া, টুটুকীয়া চৰিত্ৰৰ নাৰীও আমাৰ আশে-পাশে নোহোৱা নহয়। চাৰিত্ৰিক গুণৰ বৈপৰীত্য বেজবৰুৱাই অতি সুন্দৰ ৰূপত প্ৰকাশ কৰা দেখা যায়। চাৰিত্ৰিক গুণ অনুসৰি সুলক্ষণা, কুলক্ষণা, কপটীয়া, হিংসাকুৰীয়া, পতিব্ৰতা নাৰী সাধুকথাত দেখিবলৈ পাইছোঁ। এই বৈপৰীত্য সাধুকথাৰ মাজত চাবলৈ গ'লে দেখা যায়; 'তেজীমলা' সাধুটো। তেজীমলা এজনী নিমাখিত ছোৱালী। মাহীমাকৰ হাজাৰ শাস্তি মূৰ পাতি লৈও একো প্ৰতিবাদ কৰা নাই। তেজীমলাই সখীয়েকৰ বিয়াত পিন্ধিবলৈ পঠিয়াই দিয়া পাটকাপোৰযোৰ মাহীমাকে নিজেই নষ্ট কৰি তেজীমলাৰ ওপৰত অন্যায়ভাৱে দোষ জাপি দি অতি নিষ্ঠুৰভাৱে ঢেঁকীত খুন্দি মাৰিছে। সাধুকথাটোৰ মাজেৰে মাহীমাকৰ নিৰ্দয় ৰূপ এটা দেখা গৈছে আনহাতে, তেজীমলাৰ দুখত স্বাভাৱিকতেই পাঠকৰ হৃদয় সিক্ত হৈ উঠিছে। সেইদৰে, চিলনী জীয়েকৰ সাধুত চিলনীজনী মমতাময়ী মাতৃৰ ৰূপ। পু�ৰণিকালত নাৰীৰ আশা-আকাংক্ষাক গুৰুত্ব দিয়া নাছিল, কন্যা শিশুক আপদৰ বস্তু বুলিয়ে গণ্য কৰিছিল। দেখা যায় কুমাৰণী যেতিয়া আকৌ গা-ভাৰী হৈছিল তেতিয়া কুমাৰে কৈছিল—

"যদি এইবাৰো তই ছোৱালীকহে পাৱ, তেন্তে মই ঠিক কৈছোঁ, তোক ক'ৰৱাত বেচিম।" এই কথা শুনি কুমাৰণীয়ে এটি চৰুত তাইক উটুৱাই দিছিল।[৩]

উটুৱাই দিয়া সদ্যজাত সন্তানটো চিলনীয়ে নি প্ৰতিপাল কৰে আৰু এজন ধনী সদাগৰৰ সৈতে বিয়া দিয়ে। ইফালে সদাগৰৰ আগতেই সাতজনী ঘৈণী আছিল। চিলনীৰ জীয়েকে সদায় সতীনী বায়েকহঁতৰ আজ্ঞা পালন কৰিছিল, কিন্তু সতীনীহঁতে প্ৰতিদিনে চিলনীৰ জীয়েকৰ বাবে কূটকৌশল ৰচিছিল। বুদ্ধি কৰি চিলনীজনীক মাৰি বস্তু কিনাৰ ছলেৰে মুদৈৰ তাত বেচিলে। শেষত যেনিবা সদাগৰে সকলো গম পালে আৰু সিহঁতক মৃত্যুদণ্ড দিলে। সেইদৰে 'তুলা আৰু তেজা' সাধুত লাগীয়ে তেজাৰ মাক এলাগীক মাছ মাৰিবলৈ যোৱাৰ ছলেৰে বৰকাছ হ'গৈ বুলি মন্ত্ৰ মাতি পুখুৰীত পেলাই দিছিল। পৰৱৰ্তী সময়ত তেজাক যেতিয়া ৰজাই বিয়া পাতিলে, তাইৰ সুখ দেখি মাহীমাক লাগী আৰু তুলা ঈৰ্ষাত জ্বলি-পকি মৰিছিল। তেজাৰ মাহীমাক আৰু তুলাই ঘৰলৈ মাতি নি এদিন ওকণি চোৱাৰ ছলেৰে তুলাই শালিকা চৰাই হ' বুলি মন্ত্ৰ মাতি তেজাৰ মূৰত হুল বিন্ধাই দিছিল আৰু তেজাৰ ৰূপত ৰজাৰ ঘৰলৈ গৈছিল। শেষত ৰজাই সকলো গম পাই তুলাক মৃত্যুদণ্ড দিলে।

'চম্পাৱতীৰ সাধু'টিতো চম্পাৱতীক যেতিয়া অজগৰৰূপী কোঁৱৰে বিয়া কৰাবলৈ প্ৰস্তাৱ দিলে, তেতিয়া মাহীমাকে চম্পাৱতীক অজগৰে খাওক বুলি গিৰিয়েকৰ হতুৱাই বিয়া দিয়ালে। কিন্তু ভৱা কথা ওলোটাহে হ'ল। অজগৰ ডাল এজন দেৱতাহে। অজগৰৰূপী দেৱতাই নতুন কানি-কাপোৰ, আ-অলংকাৰেৰে চম্পাৱতীক সজাই তুলিলে। চম্পাৱতী আৰু মাকৰ সুখ দেখি ঈৰ্ষাতে অন্য এডাল অজগৰেৰে সৈতে নিজৰ জীয়েকক বিয়া দিলে, কিন্তু অজগৰে খাই পেলালে।

এই সাধুকেইটাৰ জৰিয়তে সতিনী বিদ্বেষ, পিতৃ-প্ৰধান সমাজ তথা বহুবিবাহ প্ৰথাৰ চিত্ৰ পৰিস্ফুট হৈছে। হিংসাৰ বশৱৰ্তী হৈহে এজনে আনজনক মাৰিবলৈকো কুণ্ঠাবোধ কৰা নাই।

'মেকুৰী জীয়েকৰ সাধু'টিত গৰ্ভৱতী নাৰীৰ সহজাত

প্রবৃত্তি অনুসৰি গিৰিহঁতনীয়ে মাছ খাবলৈ মন গৈছে বুলি কোৱাত গাভিনী মেকুৰীজনীও মাছ খাবৰ মন গৈছে বুলি কৈছিল। নির্দয় গিৰিহঁতনীয়ে মেকুৰীজনীয়ে আনি দিয়া মাছবোৰ নিজে খাই কাঁইটবোৰ মেকুৰীজনীক দিছিল। মনৰ দুখত মেকুৰীজনীয়ে গিৰিহঁতনীৰ পেটত থকা সন্তানটো নিজৰ পেটলৈ আহক আৰু নিজৰ পেটৰ সন্তানটো গিৰিহঁতনীৰ পেটলৈ যাওক বুলি শাওপাত দিছিল। ইয়াত গিৰিহঁতনীৰ চৰিত্রটোৰ মাজেৰে নাৰীৰ নির্দয়ৰূপ আৰু মেকুৰীজনীৰ মাজেৰে নাৰীৰ মর্মবেদনা প্রকাশ পাইছে।

অবাস্তৱ ঘটনাৰ সমাৱেশ থাকিলেও সাধুকথাবোৰৰ মাজেৰে সমাজৰ বাস্তৱ চিত্রখন সুন্দৰ ৰূপত পৰিস্ফুট হৈছে।

"কটা যোৱা নাক খাৰণি দি ঢাক", "লখিমী তিৰোতা" আদি সাধুৰ মাজেৰে অসমীয়া নাৰীৰ বুদ্ধিদীপ্ততা, কর্মপটুতাৰ আভাস পোৱা যায়।

তাৰোপৰি দেখা যায় নাৰী আছিল অতিকে আজ্ঞাবাহী, পিতৃ-মাতৃ তথা স্বামীৰ ইচ্ছানুসাৰেই তেওঁলোকে কাম কৰিছে। নাৰীৰ ইচ্ছা-অনিচ্ছাক গুৰুত্ব দিয়া হোৱা নাছিল। নাৰীৰ ইচ্ছা-অনিচ্ছাক দমন কৰাৰ বাবেই হয়তো নাৰী নাৰীৰ প্রতিয়েই অধিক বিদ্বেষাত্মক হৈ পৰিছিল।

সি যি কি নহওঁক 'বুঢ়ী আইৰ সাধু' পঢ়িলে দেখা যায় বেজবৰুৱাদেৱে অতি নিখুঁতৰূপত নাৰীচৰিত্রৰ বৈপৰীত্য অংকন কৰিছে। লগতে প্রতিটো সাধুৰ জৰিয়তে একোটা নীতিশিক্ষাও পোৱা গৈছে। ভাল কাম কৰিলে ভাল ফল পায় আৰু বেয়া কাম কৰিলে বেয়া ফল পায়। যিসকলে আনৰ অন্যায়-অপকাৰৰ কথা চিন্তা নকৰে তেওঁলোকেহে সুখ লাভ কৰিব পাৰে। যিহেতু সাধুকথাবোৰ শিশুকেন্দ্র কৰি ৰচিত হৈছিল; এনেধৰণে নীতিশিক্ষা দিয়াটো আছিল মূল উদ্দেশ্য।

সামৰণি ঃ

সাধুকথাবোৰ কল্পনাপ্রসূত হ'লেও ঘাই শিপাডাল আছিল লোকজীৱনৰ সৈতে সংপৃক্ত। সেয়ে সাধুকথাবোৰৰ মাজেৰে একোটা নীতিশিক্ষা পোৱা গৈছিল। প্রকৃতিৰ ভিন্ন উপাদান, জীৱ-নির্জীৱ, সামাজিক কার্য, লোকবিশ্বাস, ৰীতি-নীতিৰে সাধুকথাবোৰ পৰিপূর্ণ। সাধুকথাত অতিবাস্তৱ ঘটনাৰ সমাৱেশ থাকিলেও এইবোৰৰ স্বকীয়তা আৰু মূল বক্তব্যৰ পৰা বিচ্ছিন্ন হোৱা নাই। বেজবৰুৱাদেৱে অভিনৱ ৰচনাশৈলী আৰু কথনৰীতিৰে নাৰীৰ চাৰিত্রিক বৈপৰীত্য সুন্দৰ ৰূপত উপস্থাপন কৰিছে। যাৰ জৰিয়তে পুৰণি অসমৰ সমাজত নাৰীৰ স্থান, নাৰীৰ ভূমিকা সম্পর্কে সহজে অনুমান কৰিব পাৰি। ❑

অন্ত্যটীকা ঃ

১। শর্মা, হেমন্ত কুমাৰ ঃ "অসমীয়া সাহিত্যৰ দৃষ্টিপাত", পৃ. ২৮
২। গোস্বামী, প্রফুল্ল দত্ত ঃ "অসমীয়া লোকসাহিত্য", পৃ. ৫৪
৩। শইকীয়া, নগেন ঃ "বেজবৰুৱা ৰচনাৱলী খণ্ড-৬", পৃ. ৯৩

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য সমল ঃ

শইকীয়া, নগেন ঃ "বেজবৰুৱা ৰচনাৱলী খণ্ড-৬", বনলতা, পাণবজাৰ, ২০১০

গৌণ সমল ঃ

১। বৰুৱা, প্রহ্লাদ কুমাৰ ঃ "অসমীয়া লোকসাহিত্য, অসম সাহিত্য সভা", ২০০১
২। হাজৰিকা, বিশ্বেশ্বৰ ঃ "অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী প্রথম খণ্ড", অসমীয়া ভাষা-কলা-সংস্কৃতি সংস্থা, ২০০৩
৩। শর্মা, সত্যেন্দ্রনাথ ঃ "অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত", সৌমাৰ প্রকাশ, ২০১৫
৪। শর্মা, হেমন্ত কুমাৰ ঃ "অসমীয়া সাহিত্যৰ দৃষ্টিপাত", বীণা লাইব্রেৰী, ২০১২

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অসমৰ চীন তিব্বতীয় ভাষাত সুৰ ঃ এটি পৰিচয়মূলক আলোচনা

প্রীতম তালুকদাৰ
গৱেষক ছাত্র, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৭৬৩৫৯৯৭৯৬

বিকাশ দাস
গৱেষক ছাত্র, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৮১৩৫০৮৬৭৩৭
bkdas1126@gmail.com

প্রস্তাৱনা ঃ

বাগধ্বনি সৃষ্টিৰ বাবে হাওঁফাওঁৰ পৰা নির্গত বায়ু প্রবাহ (Pulmonie airstream mechanism) পোন প্রথমতে কণ্ঠনাল (Larynx) ত বাধাপ্রাপ্ত হয়। কাৰণ কণ্ঠনালত আছে ওঁঠ সদৃশ দুচটা মাংসপেশী। এই মাংসপেশী দুচটাই হৈছে স্ৱৰতন্ত্রী বা কণ্ঠতন্ত্রী (Vocal Chords)। এই কণ্ঠতন্ত্রী দুখনৰ তাৰতম্যৰ ওপৰত ভিত্তি কৰিয়েই সুৰ (Tone) ৰ সৃষ্টি হয়। এই সুৰ পৰিলক্ষিত হয় শব্দৰ অন্তর্গত অক্ষৰত। সুৰে যেতিয়া ভাষাত বিৰোধৰ সৃষ্টি কৰে তেতিয়া ই বিশিষ্ট ধ্বনিলৈ ৰূপান্তৰিত হয়। সাধাৰণতে সুৰক প্রধানকৈ চাৰিটা ভাগত ভগোৱা হয়- উদাত্ত (high), অনুদাত্ত (Low), স্ৱৰিত বা সম (mid or level) আৰু স্বাধীন স্ৱৰিত (circumflex)। অৱশ্যে এই চাৰিওটা সুৰ একেটা ভাষাত কেতিয়াবা পোৱা নাযাবও পাৰে আৰু কেতিয়াবা ইয়াৰ বৃদ্ধিও হ'ব পাৰে।

সুৰ ধ্বনি বিজ্ঞানৰ অন্তর্গত এটি গুৰুত্বপূর্ণ বিষয়। ধ্বনি বিজ্ঞানত ধ্বনিৰ গুণ, বৈশিষ্ট,প্রয়োগ আৰু স্বৰূপ অনুশৰী ইয়াক কেইবাটাও ভাগত ভাগ কৰা হৈছে। সাধাৰণতে স্বৰূপ অনুশৰী ধ্বনিক প্রধানকৈ দুটা ভাগত ভাগ কৰা হৈছে। বিভাজ্য ধ্বনি আৰু অবিভাজ্য ধ্বনি। আমাৰ আলোচ্য বিষয়ৰ অন্তর্গত সুৰ মূলতঃ অবিভাজ্য ধ্বনিৰ অন্তর্ভুক্ত। ভাষাৰ ধ্বনিতাত্ত্বিক অধ্যয়নে প্রমান কৰে পৃথিৱীৰ অধিকাংশ ভাষাত সুৰে এক গুৰুত্বপূর্ণ ভুমিকা পালন কৰি আছে। সুৰৰ তাৰতম্যৰ ওপৰতে কিছুমান ভাষাৰ শব্দৰ অর্থ বহু পৰিমানে নির্ভৰ কৰে। অতীজৰে পৰা অসমত বসবাস কৰা মংগোলীয় নৃগোষ্ঠীৰ চীন তীব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ লোকসকলৰ ভাষাতো সুৰে এক বিশিষ্ট স্থান অধিকাৰ কৰি থকা দেখা যায়। এই আলোচনাত চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তর্গত অসমৰ আইতন, ফাকে, তুৰুং, দেউৰী, চুতীয়া, কার্বি ৰাভা আদি ভাষাত সুৰৰ প্রয়োগ সম্পর্কে আলোচনা কৰা হৈছে। উল্লিখিত ভাষাসমূহত সুৰৰ স্তৰ অনুসৰি একোটা শব্দই কিদৰে ভিন্ন অর্থ প্রকাশ কৰে সেই দিশবোৰৰ ওপৰতো আলোকপাত কৰা হৈছে।

অসমত প্রচলিত চীন তিব্বতীয় ভাষাৰ চমু পৰিচয় ঃ

ইণ্ডো-ইউৰোপীয় ভাষা পৰিয়াল (Indo European Language Family) ৰ পিছতেই পৃথিৱীৰ দ্বিতীয় বৃহৎ ভাষা পৰিয়ালটো হৈছে চীন তিব্বতীয় ভাষা-পৰিয়াল (Sino Tibetan language Family)। এই ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তর্ভুক্ত সর্বমুঠ ভাষা

হৈছে ৪০০ : ১.৩ নিযুতকৈয়ো অধিক লোকে এই পৰিয়ালৰ বিভিন্ন ভাষা কয়। এই ভাষা সমূহ প্ৰধানকৈ পূৱ এছিয়া, দক্ষিণপূৱ এছিয়া আৰু দক্ষিণ এছিয়াৰ মংগোলীয় নৃগোষ্ঠীৰ লোক সকলৰ মাজত প্ৰচলিত। সাধাৰণতে বিশ্বাস কৰা হয় যে, "চীন দেশৰ দক্ষিণ পশ্চিম অঞ্চলৰ ইয়াংছিকিয়াং আৰু হোৱাংহো নদীৰ উৎপত্তি স্থলেই এই ভাষাগোষ্ঠীৰ লোকসকলৰ আদিম বাসস্থান আছিল বুলি অনুমান কৰা হৈছে। তাৰ পৰাই ইফালে এই দুই নদীয়েদী চীন দেশত পৰিব্যাপ্ত হয় আৰু আনফালেদি ব্ৰহ্মপুত্ৰ, ইৰাৱতী, চিন্দুইন, মেনাম, মেকং আদি নদীয়েদী ভাৰতবৰ্ষ ব্ৰহ্মদেশ, শ্যামদেশ আদিত বিয়পি পৰে।"[১] (২০১৪ : ১১১) ভাষিক বিশেষত্বৰ ফালৰ পৰা চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ ভাষা সমূহক প্ৰধানকৈ দুটা ভাগত ভাগ কৰা হৈছে - তিব্বত বৰ্মী আৰু থাই চীনীয় বা শ্যাম চীনীয়। দুয়োটা শাখা আকৌ কেইবাটাও উপশাখাত বিভক্ত। সামগ্ৰিকভাৱে অসমত প্ৰচলিত চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ ভাষাসমূহ হৈছে- আহোম, খামতি, টুৰুং ফাকে, আইতন, খামখাং, মিচিং, বড়ো, ৰাভা, কাৰ্বি, তিৰা, হাজং, দেউৰী, ডিমাছা, ডিমাছা গাৰো, চুতিয়া, টিপৰা, কক্‌বৰক, টাংচা, আও, লোথা, ছেমা, ৰামু, খেজা, লাকিং, গালং, ছেৱডুকপেন, পাদাম, পাছি, পাঞ্জি, বোকাৰ, ৰামু, আচিং, হিলমিৰি, ছাৰাক, ছেমা, চাঙ, ফোম্, খেজা, লাকিং, আ পাতানি, নিচিং,আদী, লাও, লু, আই-তনিয়া, নেৰাৰি, লাহুলী আদি।

মূল বিষয় ঃ

প্ৰাচীন কালৰ পৰাই ভাষাত সু�ৰৰ ভিন্ন প্ৰয়োগ দেখিবলৈ পোৱা যায়। পৃথিবীৰ এনে কিছুমান ভাষা আছে, যিবোৰ সুৰৰ স্পষ্ট জ্ঞান অবিহনে বুজাটো অসম্ভৱ। 'Tones take many forms in the languages of the world'[২] (২০০৫:১১৩) বৈদিক, গ্ৰীক, বাল্টো-স্লাৱিক আদি ভাষাসমূহ আছিল সুৰাঘাত (Pitch-Accent) প্ৰধান। এই ভাষা সমূহত স্বৰতন্ত্ৰীৰ সহায়েৰে এটা শব্দৰ এটা অক্ষৰৰ পৰা আন এটা অক্ষৰলৈ সুৰাঘাতৰ স্থান পৰিৱৰ্তন কৰি শব্দৰ অৰ্থ ভিন্ন ভিন্ন কৰা হৈছিল। বিখ্যাত ভাষাবিদ Robert S. Bauer আৰু Paul K.Benedict ৰ মতে সুৰ হৈছে "By systematically manipulating the pitch of voice, speakes of a tone language have at their disposal a second phonetic dimension - in addition to the consonants and vowels- for constrasing words. By convention, such distintive and indispensable pitch differences are called tones."[৩] (১৯৯৭ : ১০৭) পৃথিৱীৰ আন ভাষা সমূহৰ তুলনাত চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ অধিকাংশ ভাষাই সুৰ প্ৰধান। ইয়াৰে কিছুমান ভাষাত সুৰৰ সহায়ত কেতিয়াবা এটা শব্দই ৮ টা পৰ্যন্ত অৰ্থ গ্ৰহন কৰা দেখা যায়। এই পৰিয়ালৰ প্ৰধান ভাষা চীনাৰ লক্ষণসমূহ আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে ভাষাবিদ নগেন ঠাকুৰে কৈছে, "চীনীয় ভাষাৰ শব্দৰ বিভিন্ন প্ৰকাৰ সুৰৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। বিভিন্ন সুৰ, যেনে- উদাত্ত (High), অনুদাত্ত-উন্নত (Low-rising), অনুদাত্ত (Low),উদাত্ত - উন্নত (High rising) আদিৰ প্ৰয়োগেৰে বিভিন্ন অৰ্থ প্ৰকাশ কৰা হয়, 'য়েন্' শব্দই সুৰৰ তাৰতম্য অনুসৰি 'ধোৱাঁ', 'নিমখ', 'চকু', 'হাঁহ' -এই চাৰি প্ৰকাৰ অৰ্থ প্ৰকাৰ কৰিব পাৰে।"[৪] ২০১৫ : ১২২ । চীনা ভাষাৰ দৰে থাইলেণ্ডৰ প্ৰধান ভাষা থাইয়ো সুৰ প্ৰধান। থাই ভাষাতো প্ৰধানকৈ ৫ প্ৰকাৰৰ সুৰ পোৱা যায় আৰু সুৰ অনুসৰি প্ৰতিটো শব্দৰ অৰ্থ ভিন্ন হোৱা দেখা যায়। যেনে না[১]-ধান, না[চ]-এটা ছদ্ম নাম, ন±[৩]-মুখ, না[৪] -খুড়া, না[৫] -ডাঠ । এছিয়া আৰু দক্ষিণ আফ্ৰিকাৰ বিলুপ্তপ্ৰায় ভাষা সমূহৰ বিষয়ে অধ্যয়ন আৰু গৱেষণা কৰা Stephen Morey য়েও টাই ভাষাত সুৰৰ উপস্থিতি লক্ষ্য কৰিছে আৰু এই সম্পৰ্কত এনেদৰে মন্তব্য আগবঢ়াইছে- "In the tai languages most of the tones are contour tones. contour is the relationship between pitch height and pitch movement in time. A high level tone has a high pitch height,and little or no pitch movement. A high falling tone may have high pitch height and then lowering movement over time. it must be noted,however,that tone of the pitches will be absolute, because of the different levels of voices, the most obvious of which is the different pitch levels of the voices of men and women"[৫] (২০০৫ : ১১৪) আনহাতে আধুনিক ভাৰতীয় আৰ্য ভাষা সমূহত আকৌ সুৰ লহৰৰহে বেছি প্ৰাধান্য দেখিবলৈ পোৱা যায়। সাধাৰণতে সুৰ বা সুৰৰ সমষ্টিয়ে হৈছে সুৰ লহৰ (Intonation)। সুৰ লহৰে বিভিন্ন পদৰ সমষ্টিৰে গঠিত বাক্য,গৰ্ভবাক্য আদিৰ সীমা নিৰ্ধাৰণ কৰি দিয়ে। অসমীয়া ভাষাত সুৰ লহৰ বুজাবলৈ ঘাইকৈ দাৰি (।), কোলন (ঃ), কমা (,), হাইফেন (-), ডেচ (-) আদি যতি চিহ্নবোৰৰ প্ৰয়োগ কৰা হয়। এই যতি চিন সমূহে একো একোটা বাক্য সমস্তিৰ ভিন্ন স্থান আৰু প্ৰয়োজন অনুসৰি বিৰামৰ ইংগিত দি সুৰ লহৰৰ সৃষ্টি কৰে। তলত চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ

অসমত প্রচলিত কেইটামান ভাষাত সুৰে কিদৰে প্রাধান্য লাভ কৰিছে আৰু ই সুৰৰ জৰিয়তে কেনেদৰে অর্থ বিস্তাৰ কৰে তাৰ উদাহৰণ তলত দাঙি ধৰা হ'ল-

১. টাই খামতি ঃ চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ থাই চীন শাখাৰ টাই ভাষা সমূহৰ ভিতৰত খামতি অন্যতম। অন্যান্য টাই ভাষাৰ দৰে খামতি ভাষাৰো স্বৰধ্বনি মূলতঃ সুৰাশ্রয়ী। খামতি ভাষাত সুৰৰ গুৰুত্বক প্রায় প্রতিজন ভাষাবিদে স্বীকাৰ কৰিছে। 'Tone is a vital feature of the khamti language. the significance of the words always depends on tones...'[৬] (১৯৮৮:১৫৪) এই ভাষাত কেতিয়াবা স্বৰৰ হ্রস্ব-দীর্ঘ ৰূপো সুৰৰ অন্তর্ভুক্ত হোৱা দেখা যায়। সামগ্রিকভাৱে খামতি ভাষাত মুঠ পাঁচ প্রকাৰৰ সুৰ পোৱা যায়। ভাষাবিদ ভীমকান্ত বৰুৱাই এই পাঁচবিধ সুৰক ক্রমে উদাত্ত, অনুদাত্ত, স্বৰিত, উদাত্ত-উন্নত আৰু অনুদা-অৱনত এনেদৰে ভাগ কৰিছে। এই সুৰ অনুসৰি কেতিয়াবা একোটা শব্দৰ পাঁচটা, চাৰিটা, তিনিটা বা দুটা অর্থও পোৱা যায়। সুৰ অনুসৰি একোটা শব্দই কিদৰে ভিন্ন অর্থ প্রকাশ কৰে তলত দাঙি ধৰা হ'ল -

খাও^{১} = ভাত
খাও^{২} = গৰুৰ শিং
খাও^{৩} = আধা পকা
খাও^{৪} = বগা
খাও^{৫} = এজাক
চাও^{১} = বিশ
চাও^{২} = থিয় হৈ থক
চাও^{৩} = ঘৰৰ খুটা
খ^{৭} = দলং
খ^{৮} = হঁহা
খ^{৩} = কোৰ
খ^{৪} = খকুৱা

কিন্তু সত্যেন্দ্র নাৰায়ন গোস্বামীয়ে খামতি ভাষাত সুৰৰ সংখ্যাৰ ওপৰত কিছু পৃথক মনোভাৱ ব্যক্ত কৰা দেখা যায়। তেওঁৰ মতে খামতি ভাষাত কেতিয়াবা এটা শব্দই সাতটা পর্যন্ত অর্থ প্রকাশ কৰিব পাৰে। (উদাহৰণস্বৰূপে তেওঁ 'কা' শব্দটোৰ উল্লেখ কৰিছে। সুৰৰ তাৰতম্যৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি এই শব্দটোৱে ক্রমে- 'কাউৰী', 'নৃত্য কৰা', 'নতুনকৈ অংকুৰিত হোৱা', 'যোৱা', 'আচর্য কৰণ', 'যিয়ে স্পষ্টকৈ কব নোৱাৰে' - এই অর্থ কেইটা প্রকাশ কৰে) কিন্তু তেওঁৰ মতে, সাধাৰণতে এই ভাষাত সঘনাই তিনিবিধ সুৰৰহে উপস্থিতি লক্ষ্য কৰা যায়। যেনে-হো^{১}- মূৰ, হো^{২}-বাদ্য, হো^{৩}-নাওঁ

২. টাই আইতন ঃ টাই আইতন বা আইতনীয়া ভাষাটোও সুৰ প্রধান। সুৰৰ স্পষ্ট জ্ঞান অবিহনে এই ভাষাটো বুজা অত্যন্ত জটিল। সুৰ অনুসৰি এই ভাষাত একোটা শব্দৰ কেতিয়াবা পাঁচটা, কেতিয়াবা তিনিটা আৰু কেতিয়াবা দুটা অর্থও পোৱা যায়।

কাই^{১} = কল
কাই^{২} = বেগাই
কাই^{৩} = দূৰ
কাই^{৪} = কুকুৰা
কাই^{৫} = কামোৰণি
ফা^{ৰ} = কাপো
ফা^{২} = বেৰ
ফা^{৩} = আকাশ

৩. টাই ফাকে ঃ টাই ফাকে অসমৰ এটা ক্ষুদ্র জনগোষ্ঠী। টাই ফাকে সকল প্রধানকৈ অসমৰ ডিব্রুগড় জিলাৰ অন্তর্গত নাম ফাকে, টিপাম ফাকে, আৰু বৰ ফাকে এই তিনিখন গাওঁত বসবাস কৰে। টাই ফাকে সকলৰ ভাষাত সাধা ৰণতে পাঁচ প্রকাৰৰ সুৰ দেখা যায়। এই সুৰ সমূহ হৈছে - উদাত্ত, অনুদাত্ত, সম, উদাত্ত -উন্নত আৰু অনুদাত্ত-অৱনত। যেনে-

নাম^{১} = পতাকা
নাম^{২} = পানী
নাম^{৩} = কাঁইট
নাম^{৪} = সৰহ-পৰিমান
নাম^{৫} = ক'লা
ফা^{১} = খেৰ
ফা^{২} = আকাশ
ফা^{৩} = দা
ফা^{৪} = ফলা
ফা^{৫} = কাপোৰ

অৱশ্যে কেতিয়াবা ইয়াৰ ব্যতিক্রম ও দেখা যায় । সুৰৰ সহায়ত কেতিয়াবা কোনো কোনো শব্দই ৬ টা পর্যন্ত অর্থ প্রদান কৰা দেখা যায়। ড° বিজু মৰাণে তেওঁৰ ' টাই ফাকে' শীর্ষক প্রৱন্ধটোত এই ভাষাটোৰ ৬ প্রকাৰৰ সুৰৰ উপস্থিতিৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰিছে।[৭] (২০১৩ : ৩৭৪) যেনে -

না^{১} = কাজিয়া লগা
না^{২} = দেই, পথাৰ
না^{৩} = মুখমণ্ডল
না^{৪} = মোমাই
না^{৫} = গলি যোৱা
না^{৬} = ডাঠ

৪. টাই টুৰুং ঃ স্বৰৰ হ্রস্ব-দীর্ঘ ৰূপৰ উপৰিও সুৰৰ প্রয়োগ টুৰুং ভাষাৰ এটা প্রধান বৈশিষ্ট। টুৰুং ভাষাত সাধাৰণতে দুটা সুৰ পোৱা যায় আৰু সুৰ অনুসৰি একোটা শব্দই দুটাকৈ অর্থ প্রকাশ কৰে-

ৰা^{১} = দাঁত
ৰা^{২} = যোৱা
খাও^{১} = ভিনিহি
খাও^{২} = কি

৫. টাই খাময়াং ঃ খাময়াং ভাষাটো সুৰৰ উপস্থিতি

পৰিলক্ষিত হয়। গৱেষক ষ্টিফেন ম'ৰে এই ভাষাটোত মুঠ ৬ প্ৰকাৰৰ সুৰৰ উপস্থিতি চিনাক্ত কৰিছে 'The khamyang tonal system has six tones with a different distribution from the six tones of the phake'[৮] (২০০৫:১৭২) উদাহৰণস্বৰূপে তেখেতে 'মা' (Maa) শব্দটোলৈ আঙুলিয়াইছে-

মা^{১} = কান্ধ
মা^{২} = অহা
মা^{৩} = বলিয়া
মা^{৪} = ঘোড়া
মা^{৫} = যাব
মা^{৬} = কুকুৰ

(উল্লেখযোগ্য যে, চীনা ভাষাতো এই 'মা' শব্দটোৰ উল্লেখ পোৱা যায় । এই মা শব্দটোৱে সম সুৰত মাতৃ, উচ্চ সুৰত ভাঙ সদৃশ এবিধ পাত, নিম্ন উচ্চ সুৰত ঘোঁৱা আৰু নিম্ন সুৰত অপমান কৰা আদি বুজায়।)

৫. **দেউৰী-চুতীয়া ঃ** টুৰুং ভাষাৰ দৰে দেউৰী চুতীয়া ভাষাতো দুটা সুৰ পোৱা যায়। এই সুৰ দুটা হৈছে উচ্চ আৰু নিম্ন। গতিকে দেউৰী-চুতীয়া ভাষাত সুৰ অনুসৰি শব্দৰ দুটাকৈ অৰ্থ পোৱা যায়। অৱশ্যে কেতিয়াবা উল্লিখিত সুৰ দুটাৰ উপৰিও মধ্য বা সম সুৰ এটাৰ উপস্থিতি দেখা যায়। এই তৃতীয় সুৰবিধৰ অস্তিত্বক সত্যেন্দ্ৰ নাৰায়ণ গোস্বামীয়েও স্বীকাৰ কৰিছিল।

চা^{১} = কলপাত নি^{১} = গোৱা
চা^{২} = বেয়া নি^{২} = ধৰা
নি^{৩} = পান কৰা

৬. **কার্বি ঃ** কার্বি ভাষাতো সুৰ দুটা। উচ্চ^{১} আৰু নিম্ন^{২}। গতিকে সুৰ অনুসৰি একোটা শব্দৰ অৰ্থ দুটা-

ফু^{১} = ককাদেউতা চ্চ ^{১} = আগৰ
ফু^{২} = মূৰ চ্চু ^{২} = চুলি

৭. **ৰাভা ঃ** ৰাভা ভাষাত সুৰ বা সুৰৰ উপস্থিতি সম্পৰ্কীয় নিশ্চিত আলোচনা প্ৰায় নায়েই বুলিব পাৰি। সত্যেন্দ্ৰ নাৰায়ণ গোস্বামীয়ে কৈছে 'বড়ো-নাগা শাখাৰ অন্যান্য সুৰ যুক্ত ভাষাৰ তুলনাত ৰাভা ভাষাত সুৰ সম্পূৰ্ণৰূপে হেৰাই গৈছে।'[৯] ১৯৮৮:২৪ কিন্তু ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে জীৱেশ্বৰ কোচে ৰাভা ভাষাত দুই প্ৰকাৰৰ সুৰৰ স্থিতি লক্ষ্য কৰিছে। এই দুই প্ৰকাৰৰ সুৰ হৈছে উচ্চ^{১} আৰু নিম্ন^{২}

ছাম^{১} = উৰল
ছাম^{২} = ঘাঁহ, অপেক্ষা কৰা ('অসমীয়া আৰু অসমৰ ভাষা' (২০১০:২৫১)

৮. **চিংফৌ ঃ** চিংফৌ ভাষাত প্ৰধানকৈ ৫ প্ৰকাৰৰ সুৰ দেখা যায়। ইয়াৰে ৩ টা মুক্ত আৰু ২ টা বদ্ধ সুৰ। যেনে-

চা^{১} = যোৱা
চা^{২} = ভাত
চা^{৩} = প্ৰহাৰ কৰা
চা^{৪} = খোৱা
চা^{৫} = প্ৰৱেশ কৰা

৯. **ডিমাছা ঃ** ডিমা হাছাও, কাছাৰ,কার্বি আংলং, নগাঁও, নাগালেণ্ড আদিত বসবাস কৰা ডিমাছা সকল অসমৰ এটা প্ৰধান জনগোষ্ঠী। ডিমাছা সকলৰ ভাষাৰ ধ্বনি তাত্ত্বিক অধ্যয়নে প্ৰমান কৰে এই ভাষাতো সুৰৰ উপস্থিতি আছে। এই ভাষাত সুৰ তিনিটা। যেনে- উচ্চ, মধ্য আৰু নিম্ন। এটা শব্দই এই তিনিওটা সুৰৰ সহায়ত কিদৰে ভিন্ন প্ৰকাশ কৰে তলত দাঙি ধৰা হল-

লাই^{১}- পাঠ
লাই^{২}- সহজ
লাই^{৩}- আশা

১০. **বড়ো ঃ** ভাৰতবর্ষৰ সংবিধান স্বীকৃত জনজাতীয় ভাষা সমূহৰ ভিতৰত বড়ো অন্যতম। বড়ো ভাষাৰ বস্তুনিষ্ঠ গৱেষণাৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰমোদ চন্দ্ৰ ভট্টাচার্যৰ 'A Descriptive Analysis of the Bodo Language' গৱেষণা গ্ৰন্থখনৰ ভূমিকা অনস্বীকার্য। গ্ৰন্থ খনত বড়ো ভাষাৰ বিভিন্ন দিশ সম্পর্কে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে তেখেতে সুৰৰ ওপৰতো আলোকপাত কৰিছে। তেখেতে বড়ো ভাষাত উচ্চ, মধ্য আৰু নিম্ন এই তিনিটা সুৰৰ লগতে চতুর্থ সুৰ এবিধৰ কথাও উল্লেখ কৰিছে। এই চতুর্থ সুৰ বিধক তেখেতে '0' চিহ্নটোৰে সূচাইছে। এই '0' সুৰটোৰ অস্তিত্বক অনুমান কৰিব পাৰি দ্বিঅক্ষৰযুক্ত শব্দত। উদা হৰণস্বৰূপে তেখেতে ^{0}khu^{1}ser শব্দটোৰ উল্লেখ কৰিছে -

* ^{0}khu^{1}ser-prick with nails
* ^{0}khu^{1}ser-sugar cane

কিন্তু ভট্টাচার্যৰ পৰৱর্তী গৱেষক সকলে তেওঁ উল্লেখ কৰি যোৱা এই '0' সুৰটোৰ অস্তিত্বক নাকচ কৰিছে। Dr. Priyankoo Sarmah ই তেওঁৰ গৱেষণা 'Some Aspect Of The Tonal Phonology Of Bodo' (2004)ত এই

'0' সুৰটোৰ সম্পৰ্কত কৈছে- According to our analysis the firtst vowel of the disyllabic word always takes the default, mid tone, hence there is no possibility there that any tone is copied from the neighboring syllables.'[১০] (২০০৪:৩৮)

সাধাৰণতে বড়ো ভাষাত সততে দেখিবলৈ পোৱা সুৰ দুবিধ। এই সুৰ দুবিধ হৈছে- উচ্চ আৰু নিম্ন। এই সুৰ অনুশৰী এটা শব্দই দুটাকৈ অর্থ প্রকাশ কৰে -

কাপোৰ[১]- পাঠ

কাপোৰ[২]- তিতা

সামৰণি ঃ

শেষত কব পাৰি চীন তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ মংগোলীয় নৃ-গোষ্ঠীৰ লোকসকলৰ অধিকাংশ ভাষাত সুৰৰ নিশ্চিত উপস্থিতি আছে কিন্তু; সুৰৰ প্রকৃতি আৰু সংখ্যা সম্পৰ্কত সঠিক সিদ্ধান্তত উপনীত হোৱাটো কঠিন। এই সম্পৰ্কত পূৰ্বৱর্তী আৰু পৰৱর্তী ভাষাবিদ আৰু গৱেষক সকলৰ মাজতো মতানৈক্য দেখিবলৈ পোৱা যায়। ইয়াৰ কাৰণ দুটা। প্রথম,পূৰ্বৱর্তী আৰু পৰৱর্তী ভাষাবিদ আৰু গৱেষক সকলৰ মাজত কালগত ব্যৱধান আৰু দ্বিতীয়তে তেওঁলোকে সুৰ অধ্যয়নৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰা যন্ত্রপাতিৰ প্রয়োগ। কাৰণ সুৰৰ প্রকৃত স্বৰূপ নির্ভুলভাৱে অধ্যয়নৰ ক্ষেত্রত উন্নতমানৰ বৈজ্ঞানিক আহিলাৰ প্রয়োগ অনস্বীকার্য।

অসমৰ মংগোলীয় নৃগোষ্ঠীৰ অধিকাংশ লোক মূলতঃ দ্বিভাষী। দৈনন্দিন জীৱনত যোগাযোগৰ বাবে তেওঁলোকে নিজৰ জনসমষ্টি বা সম্প্রদায়ৰ মাজত নিজস্ব ভাষাত কথা পাতে আৰু ইয়াৰ বাহিৰত সদায় অসমীয়া ভাষাকে ব্যৱহাৰ কৰা দেখা যায়। এনে দ্বিভাষিক পৰিস্থিতিৰ লগতে গোলকীকৰণ তথা ইংৰাজী ভাষাৰ প্রভাৱেও চীন তিব্বতীয় ভাষাৰ উমৈহতীয়া বৈশিষ্ট সুৰক প্রভাৱিত কৰা দেখা যায়। একে ভাষা পৰিয়ালৰ হোৱা পিছতো কিছুমান ভাষাত সুৰৰ পৰিৱর্তে সুৰ লহৰৰ হে প্রাধান্য দেখা যায়। ❑

প্রসংগটোকা ঃ

১. ঠাকুৰ, নগেন (২০১৪), 'পৃথিৱীৰ বিভিন্ন ভাষা', জ্যোতি প্রকাশ, পাণবজাৰ অসমৰ

২. Morey, Stephen, (2005),' The tai languages of assam-a grammer and texts', pacific linguistics research of pacific and asian studies, Australia.

৩. Bauer,Robert s. and paul k Benedict (1997), 'Modern contonese phonolog', Berlin.

৪. ঠাকুৰ, নগেন (২০১৪), 'পৃথিৱীৰ বিভিন্ন ভাষা', জ্যোতি প্রকাশ,পাণবজাৰ

৫. Morey,Stephen, (2005),' The tai languages of assam-a grammer and texts', pacific linguistics research of pacific and asian studies, Australia.

৬. Goswami,S.N, 'Studies in Sino-Tibetan Languages'(1988) Published by smti Mandira Goswami, Ambari, Arunaday Press, Silpukhuri.

৭. ডেভী, গণেশ নাৰায়ণ,(মুখ্য সম্পা), (২০১৩), 'অসমৰ ভাষা', বনলতা, গুৱাহাটী

৮. Morey, Stephen, (2005),' The tai languages of assam-a grammer and texts', pacific linguistics research of pacific and asian studies,Australia.

৯. Goswami,S.N, 'Studies in Sino-Tibetan Languages'(1988) Published by smti Mandira Goswami, Ambari, Arunaday Press, Silpukhuri.

১০. Sarmah, priyankoo, (2004) 'Some Aspect of the Tonal phonology of Bodo'

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

১. গোস্বামী, উপেন্দ্রেনাথ' অসমীয়া ভাষাৰ উদ্ভৱ সমৃদ্ধি আৰু বিকাশ, চতুর্থ প্রকাশ, ২০১৪, মনিমানিক প্রকাশ

২. গোস্বামী, উপেন্দ্রনাথ, 'ভাষা বিজ্ঞান', দ্বাবিংশতিতম্ সংস্কৰণ, ২০১৫, মনিমানিক প্রকাশ

৩. ঠাকুৰ, নগেন 'পালি-প্রাকৃত-অপভ্রংশ ভাষা আৰু সাহিত্য', কে.এম. প্রকাশন, ২০০৯

৪. পাঠক, ৰমেশ, 'ভাষা বিজ্ঞানৰ ভূমিকা' অশোক বুক ষ্টল, ২০১৪

৫. বৰুৱা, ভীমকান্ত 'অসমৰ ভাষা' বনলতা, ২০১৭

৬. হাকাচাম, উপেন ৰাভা 'অসমীয়া ভাষা আৰু অসমৰ ভাষা-উপভাষা' জ্যোতি প্রকাশন, ২০১৭

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

লিংগ অধ্যয়নৰ নাৰীবাদতত্ত্বৰ আধাৰত অসমীয়া আখ্যানমূলক গীতৰ বিচাৰ-বিশ্লেষণ

দীক্ষিতা খাটনিয়াৰ
গৱেষক, আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ,
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৮৬৩৮১-৭২৪৩৫
dkhataniar39@gmail.com

ড° গীতাঞ্জলি হাজৰিকা
সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
আর্য্য বিদ্যাপীঠ মহাবিদ্যালয়, গুৱাহাটী-১৬
৯৮৬৪০-৪১৮৯৫
gitanjalihazarika72@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমৰ সাংস্কৃতিক ঐতিহ্যৰ এক অবিচ্ছেদ্য অংগ অসমীয়া লোকগীতসমূহৰ ভিতৰত আখ্যানগীত বা মালিতাসমূহ অন্যতম। যিয়ে ইতিহাস, সামাজিক ৰীতি-নীতিৰ অনন্য মিশ্রণক প্রতিনিধিত্ব কৰে। সাংস্কৃতিক তাৎপর্য্যৰ বাবে পৰিচিত এই পৰম্পৰাগত লোকগীতবোৰ প্রায়ে সমাজৰ নাৰীৰ অভিজ্ঞতাক কেন্দ্র কৰিয়েই চলি থাকে। এই গীতসমূহত নাৰীৰ চিত্রণ বুজিবলৈ আৰু পুনৰ সংজ্ঞায়িত কৰিবলৈ নাৰীবাদতত্ব এক গুৰুত্বপূর্ণ উপাদান হৈ আহিছে। নাৰীবাদৰ দৃষ্টিভংগীৰে আমি এই গীতবোৰৰ কথা, বিষয়বস্তু আৰু চৰিত্রৰ গভীৰতালৈ সোমাই যাব পাৰো আৰু লিংগভূমিকা আৰু লিংগ গতিশীলতাৰ বিষয়ে অন্তর্নিহিত বার্তাসমূহ পৰীক্ষা কৰিব পাৰো। এই বিষয়বোৰৰ লগত এটা প্রশ্ন নিশ্চিতভাৱে উত্থাপন হয়-এখন সমাজত নাৰীৰ বেলিকা ক্ষমতাৰ কিবা দখল আছেনে নতুবা পুৰুষ আধিপত্য থকা সমাজখনত সিদ্ধান্ত গ্রহণৰ দিশবোৰৰ ওপৰত তেওঁলোকৰ কিবা প্রভাৱ আছেনে? এই গৱেষণা পত্রখনত লিংগ অধ্যয়নৰ আলমত নাৰীবাদতত্বৰ দৃষ্টিভংগীৰে নাৰীৰ ইচ্ছা, অনুভূতি, আৱেগ, সাহস আদিক প্রতিফলিত কৰা কিছুমান নির্বাচিত আখ্যানগীতৰ ওপৰত আলোকপাত কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ আখ্যানগীত, লিংগ, নাৰীবাদ, পিতৃতন্ত্র, লোকসাহিত্য।

১.০ অৱতৰণিকা ঃ

সমাজ তথা সামাজিক আচৰণৰ অধ্যয়নসমূহ বিশ্লেষণাত্মক ৰূপত উপস্থাপন কৰাৰ প্রধান চর্ত হ'ল ধাৰণা আৰু এই ধাৰণাসমূহ হ'ল মনোবিজ্ঞানীসকলৰ এক বিজ্ঞানসন্মত অধ্যয়ন তথা অনুসন্ধান প্রক্রিয়া। ঠিক তেনেদৰে লিংগ বিষয়ক অধ্যয়নৰ ক্ষেত্রত সমাজ বিজ্ঞানীসকলৰ ধাৰণাসমূহক ভিন্ন প্রকাৰে বিবেচনা কৰি সামাজিক আচৰণৰ অধ্যয়নক এক নতুন গতি প্রদান কৰিছে। পৰিয়াল, সমাজ বা সংস্কৃতিয়ে পুৰুষ আৰু মহিলাৰ বাবে ধার্য্য কৰা দায়িত্ব আৰু ভূমিকাসমূহক লিংগই সূচনা কৰে। অর্থাৎ পুৰুষ আৰু নাৰীৰ প্রত্যাশিত আচাৰ ব্যৱহাৰক এই লিংগৰ ধাৰণাই সামৰি লয়। ১৯৮৪ চনত জে.জে. মেথিউছ (Jill Julius Mathews)ৰ গৱেষণা পত্র "Construction of Feminity"ত প্রথমতে লিংগ অধ্যয়নৰ ধাৰণাই বিকাশ লাভ কৰে। Mathews ৰ মতে লিংগৰ ধাৰণা হ'ল সমাজত সামাজিকভাৱে পুৰুষ আৰু মহিলা হিচাপে চিনাক্তকৰণ। সেয়েহে লিংগৰ ধাৰণা বুলি ক'লে বুজা যায় যে লিংগ হ'ল

পুৰুষ আৰু মহিলাৰ সামাজিক সম্পৰ্ক আৰু বিন্যাসসমূহৰ শৃংখলাৱদ্ধ আচৰণ[১]। আমাৰ কার্য্য-কলাপবোৰ, বিশ্বাস, ইচ্ছা-আকাংক্ষা, আচৰণৰ লগত ইমান গভীৰভাৱে সংপৃক্ত যে, ই মানুহৰ জীৱনৰ এক অবিচ্ছেদ্য অংগ তথা প্ৰকৃতিৰ দৰে হৈ পৰিছে। লিংগ সম্পৰ্কত Kamala Bhasin এ কৈছে "Gender refers to the Socio cultural defination of man and woman the way societies distinguish man and woman assign the social rules.[২]"।

নাৰী আৰু পুৰুষৰ মাজত থকা সামাজিক পার্থক্য আৰু সমাজত তেওঁলোকৰ ভূমিকাক উজ্জ্বল কৰি লিংগ অধ্যয়নত নাৰীত্ব আৰু পুৰুষত্বৰ আলোচনাই কেন্দ্ৰীয় ভূমিকা পালন কৰে। এই নাৰীত্ব আৰু পুৰুষত্বৰ বিকাশৰ লগতে লিংগ পৰিচয়ত অৱিহণা যোগোৱা সামাজিকৰণ প্ৰক্ৰিয়াসমূহৰ অন্বেষণ কৰিবলৈ লিংগ অধ্যয়নে বিভিন্ন তত্ব বা দৃষ্টিভংগী সামৰি লৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে ঃ মনোবিশ্লেষণাত্মক তত্ব (Psychoanalytical Theory), সামাজিক শিক্ষাতত্ব (Social Learning Theory), সামাজিক সংজ্ঞাত্মক তত্ব (Social Cognitive Theory), সাংস্কৃতিক সম্প্ৰচাৰতত্ব (Cultural Transmission Theory), কুইয়াৰ তত্ব (Queer Theory), পুৰুষত্ব অধ্যয়ন (Masculinity Studies), নাৰীবাদ তত্ব (Feminism Theory) ইত্যাদি [৩]।

নাৰীবাদতত্ব লিংগ অধ্যয়নৰ এক কেন্দ্ৰীয় দিশ। নাৰীবাদতত্বৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকাক সম্বোধন নকৰাকৈ লিংগ অধ্যয়নৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিব নোৱাৰি। নাৰীৰ প্ৰতি চলি থকা অন্যায়-অবিচাৰ, লিংগ বৈষম্য (Gender discrimination), লিংগ অসমতা (Gender enequality) আদিক প্ৰতিফলিত কৰা এক মতাদর্শ যাক নাৰীবাদ বুলি কোৱা হয়। পুৰুষৰ সমানে ৰাজনৈতিক, অর্থনৈতিক আৰু আইনী অধিকাৰসমূহৰ ক্ষেত্ৰত সফলতা অর্জনৰ জৰিয়তে মহিলাৰ স্থানûমর্যদা অগ্ৰগামী কৰাৰ ই এক তত্ব বা আন্দোলন। ঊনবিংশ শতিকাৰ আৰম্ভণিতে ফৰাছী সমাজতাত্ত্বিক Charles Fourier-এ সর্বপ্রথমে 'Faminism' শব্দটি প্ৰয়োগ কৰে [৪]। যাৰ অসমীয়া প্ৰতিশব্দ "নাৰীবাদ"। নাৰীবাদতত্বই সততে সমাজত মহিলাৰ প্ৰকৃত অৱস্থান বুজাবলৈ প্ৰয়াস কৰে। সাধাৰণতে নিম্ন উল্লেখিত নীতি বা তত্বসমূহ নাৰীবাদ তত্বই সামৰি লয়—

১। পিতৃতান্ত্ৰিক অৱদমনৰ নির্মূলকৰণ (To eradicate patriarchal suppression)

২। অন্য ব্যক্তিৰ পৰা পৃথক বিবেচনা কৰি মহিলাৰ বাবে পৃথক পৰিচয়ৰ উন্নতি সাধন কৰা যিটো পিতৃতন্ত্ৰৰ অৱদান হিচাপে কৰা বিবেচিত হয়। (To develop a separate woman identity different from being considered other which is a gift of patriarchy)

৩। জৈৱকভাৱে নির্দ্ধাৰিত প্ৰক্ৰিয়াৰ দ্বাৰা লিংগ চিনাক্তকৰণ সহজ কৰা (To understand gender identity born from biological determination)

৪। সামাজিক ক্ষেত্ৰত মহিলাৰ প্ৰতি সহানুভূতিশীলতা প্ৰতিপন্ন কৰা (To incorporate woman's understanding in social field)

নাৰীবাদী আন্দোলনৰ উত্থান আৰু নাৰীবাদতত্বৰ বিকাশে সাহিত্য আৰু সাংস্কৃতিক অধ্যয়নত বহু পৰিমাণে প্ৰভাৱিত কৰি নাৰীবাদৰ ধাৰণাটোক আগস্থানলৈ আনিছে। বিশেষকৈ অসমৰ পৰম্পৰাগত লোকসংগীতৰ প্ৰেক্ষাপটত অসমীয়া আখ্যানগীতসমূহ পিতৃতান্ত্ৰিক নিয়ন্ত্ৰণ আৰু লিংগ বৈষম্যৰ বিৰুদ্ধে নাৰীৰ সংগ্ৰামক চিত্ৰায়িত কৰাৰ এক মঞ্চ হৈ আহিছে।

১.১ গৱেষণাৰ উদ্দেশ্য ঃ

১। আখ্যানগীতবোৰত গতানুগতিক লিংগ নীতি, পুৰুষ আৰু মহিলাৰ মাজৰ গতিশীলতা, ক্ষমতাৰ ভাৰসাম্যহীনতাৰ বিষয়ে অনুসন্ধান কৰা।

২। নির্বাচিত গীতৰ কথা, বিষয়বস্তু আৰু বার্তাৰ ভিতৰত থকা লিংগ পক্ষপাতিত্ব আৰু পুৰুষপ্ৰধান মতাদর্শৰ সম্ভাব্য উপস্থিতিৰ মূল্যায়ণ কৰা।

৩। এই গীতসমূহে পুৰুষত্ব আৰু নাৰীত্বৰ পৰম্পৰাগত আদর্শক সমর্থন কৰে নে প্ৰত্যাহ্বান জনায় তাৰ বিষয়ে পৰীক্ষা কৰা।

১.২ গৱেষণাৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোতে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰা হৈছে।

১.৩ গৱেষণাৰ সমল ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰাৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰধানতঃ দুটা সমলৰ সহায় লোৱা হৈছে। মুখ্য সমলত নির্বাচিত কিছু

অসমীয়া আখ্যানমূলক গীত অন্তর্ভুক্ত কৰা হৈছে। এই গীতসমূহ কেতবোৰ আলোচনীৰ পাতত, পুথি আকাৰত, সম্পাদিত ৰচনাৱলীৰ পৰা সংগ্রহকৃত। আনহাতে গৌণ সমলৰ ভিতৰত বিভিন্ন গৱেষণামূলক প্রৱন্ধ, পুথি, গৱেষণা গ্রন্থ আদিক সামৰি লোৱা হৈছে।

২.০ বিষয়বস্তু বিশ্লেষণ ঃ

সাহিত্য হৈছে এটা জাতিৰ, এখন সমাজৰ দাপোনস্বৰূপ। বুৰঞ্জীত লিপিৱদ্ধ নোহোৱা বহুতো ঘটনা-পৰিঘটনা আমি সাহিত্যৰ বুকুতে দেখা পাওঁ। সাহিত্যই লিখিত ৰূপ পোৱাৰ আগত অসমীয়া ভাষাত যথেষ্ঠ পৰিমাণে মৌখিক সাহিত্যৰ জন্ম হয় যাক লোক সাহিত্য নামেৰেও নামাকৰণ কৰিব পাৰি। এই লোকসাহিত্যসমূহে অসমীয়া সংস্কৃতিত প্রচলিত সমাজৰ নীতি-নিয়ম, বিশ্বাস আৰু মূল্যবোধৰ এক উল্লেখযোগ্য প্রতিনিধিত্ব আগবঢ়াইছে। লোকগীত, ফঁকৰা-যোজনা আৰু প্রবচন, সাধুকথা আদি বিভিন্ন মাধ্যমৰ জৰিয়তে এই চহকী কলাত্মক প্রকাশৰ ৰূপটোৱে অসমীয়া সমাজত নাৰীৰ অৱস্থানৰ বিশদ বিৱৰণ দাঙি ধৰিছে।

নাৰীৰ সাহস, ত্যাগ আৰু যন্ত্রণাৰ প্রতিচ্ছবিয়ে যেন লোকগীতসমূহৰ মূল বিষয়বস্তু। সেই গীতসমূহত পিতৃতান্ত্রিক সামগ্রিক সংহিতাত লিংগ পক্ষপাতিত্বৰ সমল থকা নথকাৰ লগতে গীতসমূহৰ পৰা সাৱলীলভাৱে নিগৰিত সুৰ আৰু চিন্তাধাৰত ভাৰতীয় সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰীৰ বাস্তৱ অৱস্থাৰ দিশসমূহ উন্মোচিত হৈছে। তৎকালীন সমাজত প্রচলন হৈ থকা গা-ধন, বহুবিবাহ, বাল্যবিবাহ, যৌতুক প্রথা, ডাইনী হত্যা আদি জন-জীৱনৰ ব্যাধিস্বৰূপ কুসংস্কাৰবোৰত অধিক ক্ষতিগ্রস্থ হোৱা নাৰী জাতিটোক প্রধান বিষয় হিচাপে লৈ ৰচিত হোৱা অসমীয়া বিহুগীত বনগীত, বিয়ানাম, বাৰমাহীগীত, গোৱালপৰীয়া লোকগীত, আখ্যানমূলক গীতসমূহ লোকগীতৰ এক ঘাই সম্পদ। লোকগীতৰ লেখীয়াকৈ অসমীয়া যোজনা আৰু প্রবচনবিলাকতো নাৰীক সদায় কোমল, দুর্বল, লেহুকা, অর্থনৈতিক পৰনির্ভৰশীলতাৰে প্রক্ষেপ কৰা হয়। পুৰুষ প্রধান অসমীয়া সমাজত নাৰীক হেয় প্রতিপন্ন কৰাৰ মানসিকতা প্রকট কৰা প্রবচন সমূহৰ ভিতৰত হৈছে-'লাও যিমানে ডাঙৰ হওঁক, সদায় পাতৰ তল', 'কটাৰী ধৰাবা শিলে, তিৰোতা বাবা কিলে', 'তিৰীৰ মেল, কলৰ ভেল' ইত্যাদি। লোকগীত, ফঁকৰা-যোজনা আৰু প্রবচনৰ সমান্তৰালকৈ সাধু কথাৰ মাজেৰেও অসমীয়া সমাজত নাৰীৰ অৱস্থান, নাৰীসকলে সমুখীন হোৱা সমস্যা, প্রত্যাহ্বান-বঞ্চনা, সামাজিক বাধাৰ বিৰুদ্ধে নাৰীৰ বিদ্রোহ আদি বিষয়সমূহ লিপিৱদ্ধ হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে বেজবৰুৱাৰ "বুঢ়ী আইৰ সাধু"ত কেইবাটাও নাৰী প্রধান গল্পৰ ভিতৰত 'তেজীমলাৰ সাধু', 'তুলা আৰু তেজা', 'চিলনীৰ জীয়েকৰ সাধু', 'মেকুৰীৰ জীয়েকৰ সাধু' অন্যতম।

অসমীয়া লোক সাহিত্যৰ সকলো ৰূপতে এনেদৰে লিংগ বৈষম্য তথা নাৰী শোষণ প্রতিফলিত হ'লেও লোক সাহিত্যৰ অন্তর্ভুক্ত লোকগীতৰ আখ্যানমূলক গীতসমূহত এই প্রতিফলন অধিক শক্তিশালীৰূপত ধৰা দিছে।

২.১ লিংগ অধ্যয়নৰ নাৰীবাদ তত্ত্বৰ আলোকত অসমীয়া কাহিনী/আখ্যানগীত ঃ আখ্যানগীত বা কাহিনী গীত অসমীয়া লোক সাহিত্যৰ প্রধান অঙ্গ লোকগীতৰ এক অবিচ্ছেদ্য বিষয়। অসমীয়া আখ্যানগীতক বুজাবলৈ 'মালিতা' শব্দটো ব্যৱহাৰ কৰা হয় যাৰ ইংৰাজী প্রতিশব্দ হৈছে বেলাড (Ballad)। অৱশ্যে অসমীয়াত 'মালিতা'ক বুজাবলৈ গীত শব্দটোকে সচৰাচৰ ব্যৱহাৰ কৰা হয়, যেনে—বৰফুকনৰ গীত, মণিৰাম দেৱানৰ গীত, জনা-গাভৰুৰ গীত ইত্যাদি। মালিতা সম্পর্কে পোৱা বিভিন্ন সংজ্ঞা আৰু আলোচনাৰ পৰা ক'ব পাৰি যে মালিতা এবিধ আখ্যানযুক্ত মৌখিক গীত বা কবিতা, ইয়াক সুৰ ধৰি গোৱা হয়, ই নৈব্যক্তিৰ আৰু চহা-জনসাধাৰণৰ একচেতিয়া সম্পত্তি। গীতি-ধর্মিতা মালিতাৰ প্রধান লক্ষণ হ'লেও কাহিনীহে মালিতাৰ প্রাণ বুলিব পাৰি। মূল মালিতাটো কোনে, কেতিয়া ৰচনা কৰিছিল জনা নাযায় যদিও ইয়াৰ সার্বজনীন আবেদনে ইয়াক জনসাধাৰণৰ সামূহিক উচ্ছ্বাসৰ মাধ্যমৰূপে গঢ়ি তোলে। আমাৰ আলোচনাৰ বাবে নির্বাচিত লিংগ অধ্যয়নৰ নাৰীবাদ তত্বটো ৰাজনৈতিক, সামাজিক-সাংস্কৃতিক ক্ষেত্রৰ পৰা উত্থিত হোৱা হেতুকে অসমীয়া কাহিনীৰ মৌখিক গীতত তাৰ প্রাসংগিকতা লক্ষ্য কৰা যায়। সেয়ে থাউকতে অসমীয়া চহাজীৱনত প্রচলিত আৰু পৰিৱেশিত মৌখিক গীতসমূহৰ মাজৰ পৰা কেতবোৰ মৌখিক গীত লিংগ অধ্যয়নৰ অন্তদৃষ্টিৰে ফঁহিয়াই চোৱাৰ প্রয়াস কৰা হ'ল—

১) **জনা গাভৰুৰ গীত ঃ** 'জনা গাভৰুৰ গীত' অসমীয়া লোক সাহিত্যৰ এপদ লেখত ল'বলগীয়া সম্পদ। পিতৃতান্ত্রিক সমাজত নাৰীক পুৰুষৰ বহতীয়া কৰি ৰখাৰ অভিপ্রায়েৰে ৰচিত কাহিনীগীত হৈছে জনা গাভৰুৰ গীত। গীতৰ কাহিনীটো

এনেধৰণৰ—গৰুচৰ ৰাজ্যৰ ৰজাৰ জীয়েক জনাই ৰাজপাটত উঠি বিয়া হ'বলৈ মন মেলি তেওঁক বিয়া কৰাব খোজা কোঁৱৰবোৰৰ বাবে তিনিটা প্ৰশ্ন যুগুত কৰি থৈছে। এই প্ৰশ্নৰ উত্তৰ দিব নোৱাৰা নশ কোঁৱৰক গৰুচৰৰ পোতাশালত বন্দী কৰি থোৱা হৈছে। কামপুৰৰ কলিধন নটও জনাক পৰীক্ষাত ঘটুৱাৰ উদ্দেশ্যৰে আহি নিজে হাৰি নাক-কাণ কটা বিড়ালী হৈ নগাঁওলৈ উভতি আহি সখীয়েক গোপীচন কোঁৱৰক সকলো বিৱৰি কৈ লগতে পৰীক্ষাত ঘটুৱাই আনিবলৈ পৰামৰ্শ দিলে। গোপীচন কোঁৱৰে বুঢ়ীমাক আৰু ন-পোন কুঁৱৰীৰ হাক-বচন নামানি গৰুচৰ ৰাজ্যলৈ গৈ জনাৰ অলৌকিক পৰীক্ষাত সহজতে উত্তীৰ্ণ হৈ জনাৰ গৰ-খৰ্ব কৰিলে। লগতে গোপীচনে বুঢ়া ৰজাৰ পুতেক অভিমন কোঁৱৰক বধ কৰি আৰু ৰজাৰ বাৰকুৰি হাতীকো খেদাই জনাক নিজৰ ৰাজ্যলৈ আনি বিয়া পাতিলে।

গীতটোৰ আৰম্ভণিতে জনা নামৰ নাৰী চৰিত্ৰটোক শক্তিশালী ৰূপত আত্ম প্ৰতিষ্ঠা কৰোৱাইছে—

"গৰুচৰ ৰাজ্যতে জনা গাভৰুৱে
তিৰী হৈ ৰাজপাট খায়,
নশ কোঁৱৰক বন্দীকৈ থৈছে
তাইৰ মান বলৱান নাই।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃঃ ২৯৩)

অসীম পৰাক্ৰমী জনাই বীৰত্বৰে নশকোঁৱৰক বশ কৰি পোতাশালত বন্দী কৰি থোৱা দৃশ্যই নাৰী শক্তিয়ো যে অপ্ৰতিৰোধ্য, নাৰীয়ো যে পুৰুষৰ সমানে সকলো কাম অনায়াসে কৰিব পাৰে তাৰে এক জলন্ত প্ৰমাণ দাঙি ধৰিছে। জনাই প্ৰদৰ্শন কৰা এই কাৰ্য্যই জনাক পৰম্পৰাগত নাৰীৰ পৰা পৃথক কৰিছে। জনাৰ সাহিসিকতাই প্ৰমাণ কৰিছে যে জনাই পুৰষতান্ত্ৰিক সমাজ-সংস্কৃতিৰ নিৰ্দেশনা অবজ্ঞা কৰিব পাৰিছে।

পিতৃতান্ত্ৰিক ৰক্ষণশীল সমাজখনত নাৰীৰ হাতত পুৰুষে পৰাজয় বৰণ কৰিবলগীয়া হোৱাটো যেন পৌৰষত্বত আঘাত হনাৰ লেখীয়া। সেয়েহে নশকোঁৱৰৰ লগত কামপুৰ চহৰৰ নটৰ কলিধনে জনাৰ হাতত পৰাজয় বৰণ কৰি লঘু-লাঞ্ছনাত অতিষ্ঠ আৰু বিমুখ হৈ সখীয়েক গোপীচন কোঁৱৰক উচটনি মূলক ঠাট্টা-মস্কৰাৰে প্ৰলুব্ধ কৰিবলৈ চেষ্টা কৰে—

"চৰায়ে কৰিৰ চিউ সখীদেউ
চৰায়ে কৰিৰ চি,
অপহীয়া তিৰিয়ে খাইছে ৰাজপাট
কোঁৱৰ হে কৰিছা কি?"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩০০)

গীতটিত "তিৰী হৈ ৰাজপাট খায়" আদিৰ নিচিনা নাৰীৰ ওপৰত কৰা তীৰ্যকপূৰ্ণ মন্তব্যৰ পৰাই মনুস্মৃতিয়ে আৱৰি ৰখা পৰম্পৰাগত সমাজখনৰ স্বৰূপ দাঙি ধৰা হৈছে। জনাই ৰাজপাট খোৱা কাৰ্য সেই সময়ৰ পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাৰ পৰম্পৰাগত ধাৰণাৰ স'তে খাপ নোখোৱা এক ঘটনা। সাধাৰণতে সেই সময়ৰ সমাজৰ দৃষ্টিত জনাৰ এই অদমনীয় সাহস আৰু আচৰণ আছিল অশোভনীয় আৰু সমাজসৃষ্ট। পৰম্পৰাগত নাৰীসকলৰ এনেকুৱা অশোভনীয় আচৰণ মুক্ত আছিল।

ন পোন মাদৈৰ পৰিচৰ্যাৰে গা-জুৰ পেলোৱা গোপীচনে জনাৰ দৰে গাভৰুৰ প্ৰয়োজনবোধ পোনপ্ৰথমে কৰা নাছিল যদিও পৰাজয়ৰ পোতক তোলাৰ তীব্ৰ বাসনাত জুৰুলা হোৱা কলিধনে জনাৰ ৰূপ যৌৱনৰ দোহাই দি গোপীচনক জনাৰ পাণিগ্ৰহণৰ চেষ্টা চলায়—

"তোমাৰ বলে হ'ব মোৰ বুদ্ধি হ'ব
জনাৰ নগৰে যাম,
তোমাৰ যুৱীয়া জনা গাভৰুক লৈ
গৈ হাতে হাতে পাম।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩০১)

জনাৰ প্ৰতি কলিধনৰ ভিতৰত পঞ্জীভূত হোৱা প্ৰতিশোধৰ বাসনাই পুৰুষ সুলভতাৰ ক্ষেত্ৰতো পুৰুষতান্ত্ৰিক দৃষ্টিভংগীৰ প্ৰকাশ পাইছে। কলিধনৰ দৃষ্টিত নাৰীমনৰ গুৰুত্ব নাই বাবে কলিধনে গোপীচন কোঁৱৰক জনাৰ পাণিগ্ৰহণৰ বাবে উচটাইছে। কলিধনৰ এই খং আৰু প্ৰতিশোধপৰায়ণতা হ'ল পুৰুষসুলভতা।

নাৰীক পদে পদে অৱনমিত তথা পৰাস্ত কৰি ৰাখিব খোজা পুৰুষতান্ত্ৰিক মনোভঙ্গী প্ৰকাশ পাইছে জনাগাভৰু গীতৰ নায়ক গোপীচন কোঁৱৰ চৰিত্ৰটোৰ জৰিয়তে—

"নশ কোঁৱৰক জনাই বন্দী কৰি
যুৱীয়া মৰাইছে ঢাপ
নশ কোঁৱৰক উদ্ধাৰ কৰোঁগৈ
গুচাওগে মনৰে তাপ"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩০২)

জনাৰ নগৰলৈ বুলি ওলোৱাৰ প্ৰাক্‌ক্ষণত বাঁৰী মাকৰ ওচৰলৈ গৈ কোৱা উপৰোক্ত বক্তব্যৰ পৰা প্ৰমাণিত হৈছে গোপীচনৰ অধিপত্যতা পুৰুষসুলভতা। নিজৰ কতৃত্ব আৰু অধিপত্য প্ৰদৰ্শন কৰিব বিচাৰি পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত উপযুক্ত পুৰুষলৈ পৰিণত হ'ব বিচৰাৰ এক জলন্ত উদাহৰণ হৈছে গোপীচন।

পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ মানসিকতাই নাৰীক এনেকুৱা এক পৰ্যায়লৈ লৈ গৈছে য'ত নাৰীয়ে নাৰীৰ শত্ৰুলৈ পৰ্য্যবেসিত হৈছে। গীতটিত ন পোন মাদৈৰে এখন ভৰা সংসাৰৰ গৰাকী গোপীচনৰ জনাক পাবলৈ মন মেলা অৰ্থনৈতিক কামত বাৰী মাকে বাধা দিছে—

"হিয়া ভাঙি ভাঙি খোজক বুলে তাই
তাইৰ মান কুলক্ষণী নাই,
জনাৰ ভৰিযোৰ খৰমে যুৱীয়া
তাইৰ মান গজমুৰী নাই।"
(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩০৩)

গোপীচনৰ বাঁৰীমাকে জনাক কুলক্ষণী, গজমূৰী আদি কুৰুচীপূৰ্ণ শব্দৰে হেয় কৰাৰ প্ৰয়াস কৰাৰ কাৰ্য্যই গোপীচনৰ বাঁৰীমাকে পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজসৃষ্ট পৰম্পৰাগত নাৰীকে প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে। যদিও পুতেকৰ নোচোৰবান্দা তথা আঁকোৰগোজ মনোভাৱৰ উমান পাই জনাৰ নগৰলৈ যোৱাৰ আগমুহূৰ্তত হানি-বিঘিনি নহ'বলৈ গণকৰ হতুৱাই মঙল চোৱাৰ ব্যৱস্থা কৰিছে—

"মাকক মাতি গ'ল বুকুৰ বাঁৰী মাকে
গণকৰ মুখলৈ চাই,
যিহকে খুজিব তাৰেই পূজিব
তালৈ একো ভয় নাই।"
(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩১১)

এই মঙল চোৱা কাৰ্য্যই এগৰাকী মাতৃৰ পুত্ৰৰ প্ৰতি অপত্য স্নেহ, পুত্ৰৰ কুশল মঙ্গলেই যে তেওঁৰ প্ৰাণৰ আকুতি তাকেই প্ৰতিপন্ন কৰা কাৰ্য্যই অসমীয়া নাৰীৰ পৰম্পৰাগত আচৰণকে দাঙি ধৰিছে।

পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত পৰম্পৰাগত নাৰীসকল যে পৰমুখাপেক্ষী পুৰুষ অবিহনে নাৰীৰ অস্তিত্ব যে অসাৰ লগতে তথাকথিত সামাজিক পৰম্পৰাৰ বেদীত নাৰীয়ে যে নিজস্ব সকলো জলাঞ্জলি দিব লগা হৈছে এয়া যেন গীতটিত গোপীচন আৰু নপোন কুঁৱৰীৰ মাজৰ কথোপকথনে প্ৰমাণ কৰি দিছে—

"মাতক মাতি গ'ল বুকুৰ কুঁৱৰীয়ে
কোঁৱৰৰ মুখলৈ চাই
জনাক আনিবলৈ যাবলৈ ওলাইছা
আমাত একো কাম নাই।"
(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩০৬)

- - - - - - - - - - -

অতি হেপাহেৰে আয়ে বিয়ে দিলে
পুৰুষত বিশ্বাস নাই।

- - - - - - - - - - -

"অচিন কাঠৰে থোৱাকো নল'বা
আৰু নেবানিবা ধান
নেজানি নুশুনি আমাক বিয়া দিলে
কোঁৱৰে নেৰাখে মান।"
(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩০৭)

বাঁৰী মাক আৰু কুঁৱৰীৰ বিৰহত ভ্ৰূক্ষেপ নকৰি মিচিকিয়া হাঁহিৰে যাত্ৰা আৰম্ভ কৰিবলৈ লোৱাৰ মুহূৰ্তত গোপীচনে জনাৰ আশাত গৰুচৰ ৰাজলৈ ওলোৱা নাই বুলি কৰা মন্তব্যই পুৰুষতান্ত্ৰিত সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰীৰ প্ৰতি অপমান, অত্যাচাৰ, দুৰ্ব্যৱহাৰ আদি কাৰ্য্যই যে মান্যতা পায় তাৰেই যেন এক উদাহৰণ গীতটিত পোৱা গৈছে—

"লাটিম বৰুৱাক ছাটিম ঐ কুঁৱৰী
লাটিম বৰুৱাক ছাটিম,
জনা গাভৰুক আনিব পাৰিলে
চুলিকোছা গৰত থৈ কাটিম।"
(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩০৯)

লগতে কুঁৱৰীসকলক গোপীচনে অনাদৃতভাৱে এৰি থৈ যোৱা কাৰ্য্যইও পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত পুৰুষৰ মইৰৱ ভাবটোক পূৰ্ণ ৰূপত প্ৰতিফলিত কৰোৱাইছে গীতটোত এইদৰে—

"আমাক এৰি থৈ গ'লগৈ কোঁৱৰে
নগ'লে আমাকো কাটি
যাকে দেখিব তাকে চাবগৈ
পুৰুষ যে ভোমোৱা জাতি।"
(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩২০)

ঠিক তেনেদৰে জনাৰ নগৰলৈ বুলি ৰাওনা হোৱা গোপীচনৰ যাত্ৰাবাটত জনাৰ লগৰীসকলৰ লগত হোৱা সাক্ষাৎ লগতে গোপীচনৰ সহিতে কলিধনক দেখা মাত্ৰকেই লিগিৰীহঁতৰ ফেপেৰি পাতি ধৰাৰ পৰা নাৰী হৈও পুৰুষৰ সৈতে কাজিয়াত লিপ্ত হ'ব পৰা যি মানসিকতা প্ৰকাশ পাইছে সেয়া নাৰীবাদৰ অন্য এটা নিদৰ্শন—

"লগত দেখিছো কাণ-কটা বিৰলী
কথাৰ পোৱা নাই ভাল
মোকে চুপুতি কৰিবি তহঁতে
ছৰিয়াই ছিণ্ডি দিম গাল।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩২৬)

লিগিৰীহঁতৰ "ছৰিয়াই ছিণ্ডি দিম গাল" কথাষাৰ পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ পৰম্পৰাগত আচৰণৰ এক পৰিপন্থী কাৰ্য্য। পুৰুষপ্ৰধান সমাজে নাৰীক সদায় লেহুকা, কোমল, দুৰ্বল আৰু দয়াশীল হোৱাটোহে বিচাৰে। লিগিৰীহঁতৰ দাম্ভিক কথা-বতৰাত অপমাণিত গোপীচনৰ সোণৰ ভিমৰাজ দলিয়াই পেলোৱা আৰু সিহঁতক কৰা নিৰ্যাতনৰ দৰে কাৰ্য্যই পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত নাৰীৰ ওপৰত অত্যাচাৰ, উৎপীড়ন যে পুৰুষসুলভাৱে নামান্তৰণ তাকে গীতটিয়ে প্ৰমাণ কৰে এইদৰে—

"দলিয়াই পেলালে সোণৰ ভিমৰাজ
মাৰে কান-ফটা চৰ,
চৰণো লাথি খাই জনাৰে লিগিৰী
ঘৰলৈ মাৰিলে লৰ।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩২৬)

শেষত চতুৰ কলিধনৰ বুদ্ধিৰে গোপীচনৰ প্ৰশ্নবানত ধৰাশায়ী হৈ গোপীচনৰ সাহসিকতাক স্বাগতম জনাই নিজকে সমৰ্পণ কৰি গোপীচনক স্বামী হিচাপে পাবলৈ মনস্থিৰ কৰা কাৰ্য্যই এগৰাকী নাৰী হৈও জনাই যিকোনো পুৰুষকে স্বামীৰূপে গ্ৰহণ কৰাৰ পৰম্পৰাগত মানসিকতা ৰখা নাই তাকে প্ৰমাণ কৰিছে।

"এখনি তামোলক লোৱা মোৰ স্বামী
চৰণত লগাইছো মূৰ
অনেক দায়-জগৰ লগালো স্বামী দেউ
মাৰিবা ভৰিৰে গোৰ।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩৩৭)

জনাৰ "চৰণত লগাইছো মূৰ" আৰু "মাৰিবা ভৰিৰে গোৰ" কথাই অৱশেষত জনাক পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ নিৰ্মাণ হিচাপে প্ৰতিপন্ন কৰে।

জনাক নিজ ঘৰলৈ আনি কলিধনক কৰা অপমানৰ পোতক তোলাৰ অৰ্থে আৰু লগতে ন কুঁৱৰীক দিয়া বচন ৰাখিবলৈ গোপীজনে জনা গাভৰুৰ চুলি চাৰি আঙুল গৰত থৈ কাটি পেলোৱা কাৰ্য্যই গোপীচনক পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজত দেখুওৱা দাম্ভিকতাকে প্ৰমাণ কৰিছে—

"জনা গাভৰুৰ চুলি চাৰি আঙুল
গৰত থৈ পেলালে কাটি"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৩৫৪)

জনাৰ দীঘল চুলিৰ অপ্ৰয়োজনীয়তাৰ কথা দোহাই দি অলপ কটা বুলি গোপীচনৰ মিথ্যা সান্ত্বনা আৰু এই সান্ত্বনাত ভোল যোৱা জনাগাভৰুৰ চৰিত্ৰটিৰ মাধ্যমেৰে পুৰুষতন্ত্ৰৰ ওচৰত নাৰীৰ বশ্যতা স্বীকাৰৰ ইংগিত আছে।

"জনা গাভৰুৰ গীত" অসমীয়া লোক-সাহিত্যৰ এপদ অতি লেখত ল'বলগীয়া সম্পদ। অলৌকিকতাৰ সমাৱেশ, দুঃসাহসিক ঘটনাৰ বিৱৰণ আৰু প্ৰকাশভঙ্গীৰ নাটকীয়ত্বই গীতটোত চমৎকাৰিতা প্ৰদান কৰিছে।

২) জয়মতী কুঁৱৰীৰ গীত ঃ "জয়মতী কুঁৱৰীৰ গীত" বুৰঞ্জী প্ৰসিদ্ধ ঘটনাৰ আধাৰত ৰচিত হোৱা হেতুকে এনে গীত ঐতিহাসিক আখ্যান গীতৰ ভিতৰত পৰে। এটা জাতি একোখনকৈ সমাজ গঠনত একোগৰাকী নাৰীৰ ত্যাগ আৰু বৰঙণি পুৰুষতকৈ কোনো গুণেই যে কম নহয়, শত্ৰুপক্ষ লাগিলে যিমানেই শক্তিশালী ৰূপত প্ৰতিষ্ঠিত নহওঁক কিয় নাৰীয়ে কেতিয়াও পিছ হুহুকি নোযোৱাৰ এক উৎকৃষ্ট নিদৰ্শন দাঙি ধৰা হৈছে জয়মতী কুঁৱৰীৰ গীতত। গীতটোৰ কাহিনীমৰ্মে আহোম স্বৰ্গদেউ চুলিকফা বা ল'ৰা ৰজাৰ শাসনকালত তেওঁৰ ৰাজ সিংহাসন নিষ্কণ্টক কৰিবৰ কাৰণে ৰজা হ'বৰ যোগ্য কোঁৱৰবিলাকক চোৱাংচোৱা লগাই ৰজা হোৱাৰ অযোগ্য কৰিবলৈ ঘৃণীয়া কৰিব ধৰাত, মহাবাহুবলী গদাপানিয়ে প্ৰথমাৱস্থাত চোৱাংচোৱাকো কেৱেপ নকৰি ফেৰ পাতি ধৰে যদিও শেষান্তৰত প্ৰিয়তমা ভাৰ্য্যা জয়মতী কুঁৱৰীৰ বুজনিত অগত্যা অকলে নগৰ এৰি আঁতৰিবলৈ বাধ্য হয়। দুই পুত্ৰ লাই আৰু লেচাইৰ সহিতে অকলে এৰি থৈ যোৱা

জয়মতীৰ পৰা গদাপাণিৰ কোনো সম্ভেদ উলিয়াব নোৱাৰি ৰাজাজ্ঞানুসৰি কুকুৰচোৱা চাউদাঙে জয়মতীক জেৰেঙা পথাৰলৈ নি তাতে কেপীয়া খুঁটাত বান্ধি অবর্ণনীয় অত্যাচাৰ কৰিবলৈ ধৰিলে যদিও সকলো যন্ত্রণা নীৰৱে সহি থাকি তথাপি নিজৰ স্বামীৰ সম্পর্কে এযাৰো মুখৰ পৰা উলিয়াব নোৱাৰিলে। নিজ স্থিতিত অটল জয়মতীৰ মতক প্রতিস্থিত কৰিব নোৱাৰি চাউদাঙে জেৰেঙা পথাৰত দিয়া ন ন শাস্তি দিয়াৰ মুহূর্তৰ জয়মতীৰ অন্তর্দন্দৰ প্রতিচ্ছবি "জয়মতী কুঁৱৰীৰ গীত"ত প্রকাশ পাইছে—

"হাবিতে কান্দিলে হয়কলী চৰায়ে
চিটিকাৰ মুখলে চাই,
জেৰেঙা পথাৰত কান্দে জয়মতী,
চাউদাঙৰ মুখলৈ চাই।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্রহ; পৃ ঃ ৯)

চাউদাঙৰ মুখলৈ চোৱা ঘটনাই অসহয়া জয়মতীৰ কৰুণ অৱস্থাৰ প্রতিচ্ছবি দাঙি ধৰিছে আৰু ইয়ে পুৰুষতান্ত্রিক সমাজত নাৰীৰ কোমল, অসহায় অৱস্থাকে নির্দেশ কৰিছে।

জেৰেঙা পথাৰত অমানৱিক অত্যাচাৰৰ সন্মুখীন হৈ থকাৰ সময়তো ঘৰত শাহুৰেক তথা আইতাকৰ তত্ত্বাৱধানত থকা কণমানি লাই-লেচাইৰ খোৱা-বোৱা তথা ভৱিষ্যতৰ কথা চিন্তা কৰি জয়মতীৰ মাতৃ হৃদয়ে হাঁহাকাৰ কৰি উঠিছে—

"লাই লেচাই কোঁৱৰক তোমাতে অর্পিলো
চেনেহত পালিবা আই
বেলা চাই পালিবা বেলা চাই খুৱাবা
খেমিবা সকলো দায়।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্রহ; পৃ ঃ ১০)

পুৰুষতান্ত্রিক সমাজত শিশুৰ পৰিচর্যাৰ দায়িত্ব কেৱল যে নাৰীৰ ওপৰতহে অর্পিত, মমতাময়ী মাতৃ জয়মতীৰ কাতৰ আহ্বানে তাকে প্রমাণ কৰিছে। উক্ত কার্য্যৰ দ্বাৰা জয়মতী কুঁৱৰী আৰু শাহু আইৰ পৰম্পৰাগত নাৰী সুন্দৰতাকে প্রকাশ পাইছে।

ৰাজ আজ্ঞা পালক অত্যাচাৰী চাউদাঙৰ নিষ্ঠুৰ শাস্তিৰ সময়তো স্বামী গদাপানিৰ স্মৃতিয়ে জয়মতীক ব্যাকুল কৰি তুলিছে—

"গদাপাণি কোঁৱৰে বিয়াকৈ অনিলে
মাদুৰি চহৰৰ পৰা
সকলো সুখতে বিধাতাই বঞ্চিলে
দেহৰো তামুলী চ'ৰা।।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্রহ; পৃ ঃ ১১)

বিয়াৰ পিছত পৰম্পৰাগত অসমীয়া নাৰীক সকলো সুখ-দুখ নিজৰ স্বামীৰ ওপৰত নির্ভৰ বুলি পতিয়ন নিওৱা হয়। কিন্তু জয়মতী কুঁৱৰী স্বামীৰ সুখৰ পৰা বঞ্চিত হোৱা ঘটনাটো বিধাতাৰ লিখন বুলি মানি লোৱাটোৱে জয়মতী কুঁৱৰীৰ পৰম্পৰাগত মানসিকতাকে প্রমাণ কৰিছে।

বিয়াৰ আগত পৰম্পৰাগত অসমীয়া নাৰী ককাই-ভাই, পিতৃ-মাতৃৰ চেনেহৰ আবর্তত ডাঙৰ-দীঘল হয়। সেই মৰম-চেনেহৰ এনাজৰী ডালৰ স্মৃতিয়ে জেৰেঙা পথাৰত জয়মতীক স্মৃতিকাতৰ কৰি তুলিছে—

"ছঅঁৰা ককাই-ভাই আহঙত খাইছিলোঁ
ৰাজমন্ত্রীৰ হৈছিলো জী,
ছঅঁৰা চাউদাঙে নানা শাস্তি কৰে
মাৰিব যাতনা দি।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্রহ; পৃ ঃ ১২)

ৰাজকুঁৱৰী হৈয়ো ককাই-ভাই, পিতৃ-মাতৃৰ মৰম-চেনেহৰ মাজত ডাঙৰ-দীঘল হোৱা জয়মতীৰ এই কথাই সমাজে বিচৰাধৰণে নাৰীৰ কোমলতা সহৃদয়তা ইত্যাদি গুণৰ কথা কয় আৰু জয়মতী কুঁৱৰীক পুৰুষতান্ত্রিক সমাজৰ নির্মাণ হিচাপে প্রমাণ কৰে।

যদিও আনৰ হকে বলি দিবলৈ কুণ্ঠাবোধ নকৰা জয়মতীৰ কিছু কিছু দিশত ক্ষোভ ফুঁটি উঠা পৰিলক্ষিত হৈছে গীতটোত এইদৰে—

"ছঅঁৰা ককাই-ভাই এঘাৰজনী মাহী আই
তেৰ বাই ভনী
বিপদৰ সময়ত কাকো নেদেখিলো
মই অভাগিনী হায়।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্রহ; পৃ ঃ ১১)

ৰাজ পৰিয়ালৰ জীয়ৰী হিচাপে নিজকে চিনাকি দি ছ'অৰা ককাই ভাই থকা সত্ত্বেও নিজৰ বিপর্যয়ৰ সময়ত কোনেও সঁহাৰি নিদিয়াটো নাৰী এগৰাকীৰ বাবে অতি পুতৌলগা বিষয় যদিও বিপর্যয়ৰ সময়তো তেওঁ নির্ভীক, ধৈর্য্য সাহসিকতাৰে যুঁজ দি পুৰুষৰ দৰে নাৰীৰো শক্তি, সামর্থ আৰু মনোবল আছে তাকে প্রতিয়মান কৰি থৈ গৈছে।

জয়মতীৰ গীতত থকা জয়মতী কুঁৱৰীৰ চৰিত্রটোৱে সহনশীলতা, বিচক্ষণতা আৰু ত্যাগে নাৰী শক্তি যে অপ্রতিৰোধ্য লগতে স্বার্থপৰ, দমন, শোষণ, ভষ্ট্রাচাৰী, কামুক সমাজৰ বিৰুদ্ধে যুঁজ দিবলৈ নাৰীৰো যে এটা শক্তিশালী ৰূপ আছে তাকে প্রমাণ কৰি দিছে।

সাধবী জয়মতীয়ে পৰমেশ্বৰ আৰু স্বামী গুৰুৰ চৰণ চিন্তি চাঙদাঙৰ নিষ্ঠুৰ আঘাত আদি একোকে কেৰেপ নকৰি, সতীত্ব আৰু ত্যাগৰ তেজেৰে তেজস্বিনী হোৱা ঘটনাৰ আলমত ৰচিত 'জয়মতী কুঁৱৰীৰ গীত' অসমীয়া লোক সাহিত্যৰ এক অমূল্য সম্পদ।

৩) **নাহৰৰ গীত** ঃ "নাহৰৰ গীত" এটি বুৰঞ্জীমূলক মৌখিক গীত। ৰাজকাৰেঙত চলা প্রণয়ৰ অভিসাৰ আৰু বুকুত সোমাই থকা জীৱনৰ প্রথম প্রণয়ৰ স্মৃতি পাহৰিব নোৱাৰা কুঁৱৰীৰ ই এটা ৰোমাণ্টিক কাহিনী। এই গীতৰ কাহিনীভাগ আহোম স্বর্গদেউ চুখাম্‌ফা বা খোৱা ৰজাৰ ৰাজত্বকালৰ খোৱাৰজাৰ দুয়োগৰাকী ৰাণী অপুত্রক হোৱা হেতু নাহৰ নামৰ এজন ডেকাক তেওঁলোকৰ তোলনীয়া পুত্র কৰে। দুয়োগৰাকী কুঁৱৰীৰ মৃত্যুৰ পিছত ৰজাই কুঁৱৰীৰ লিগিৰী কাঞ্চনীক বিয়া পাতে। পূর্বৰে পৰা প্রণয়জনিত সম্বন্ধ থকা হেতু লগতে পোন যৌৱনৰ সোনসনা স্মৃতি পাহৰিব নোৱাৰি কাঞ্চনীয়ে নাহৰক তোলনীয়া পো বুলি চপাই লয় ৰাজকাৰেঙলৈ লৈ আহে। এপিনে গুপ্ত প্রণয়ৰ নিবিড়তা আনপিনে নাহৰৰ পদমর্যদা বাঢ়িবলৈ ধৰাত ডা-ডাঙৰীয়া আৰু ৰজাক নামানি কুঁৱৰীৰ বলত বলিয়ান হৈ ৰাজক্ষমতাৰে বহুতো আলি পুখুৰী তেওঁৰ নামত নির্মাণ কৰোৱা হ'ল। নাহৰৰ অযথা ক্ষমতা সহিব নোৱাৰি শেহান্তৰত ডা-ডাঙৰীয়াৰ চক্রান্তত তেওঁক বধ কৰায়।

প্রশ্ন আৰু উত্তৰৰ ঠাঁচত আগবাঢ়ি যোৱা নাহৰৰ গীতটোত এখন পুৰণি অসমীয়া ঘৰৰ চিত্র ফুঁটি উঠিছে—

"ৰঙালী মদাৰৰ পাত
এইনো মাজনিশা আহিলি নাহৰ ঐ
খালি কি নেখালি ভাত
আইনো আই বুলি নাহৰে মাতিলে
বুঢ়ী মাকৰ মুখলৈ চাই
কেলেই মাতিলি নাহৰ চেনামুৰা
চৰুতো পইতা নাই"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্রহ; পৃ ঃ ১)

উপৰোক্ত গীতাংশৰ জৰিয়তে পুৰুষপ্রধান অসমীয়া সমাজত মিতিৰ-কুটুম, আলহী-অতিথি আদিৰ সোধ-পোচৰ দায়িত্ব কেৱল নাৰীৰ ওপৰতহে ন্যস্ত থকাৰ কথাটো প্রতিপন্ন কৰিছে। ৰন্ধা-বঢ়াকে আদি কৰি পাকঘৰৰ সমস্ত দায়িত্ব নাৰীৰ ওপৰত ন্যস্ত থকাৰ কথাটোৱে পৰম্পৰাগত অসমীয়া নাৰীক পুৰুষতান্ত্রিক সমাজৰ নির্মাণ বুলি চিহ্নিত কৰিছে।

নাহৰৰ গীতৰ পৰা ৰাজকাৰেঙত চলা অভিসাৰৰ এটি কাহিনী উপলব্ধি কৰাৰ থল আছে। গাঁৱত থকা ধুনীয়া ৰূপৰ জুই ৰৰষা ছোৱালীজনীক ৰাজকাৰেঙলৈ লৈ আহিল কাৰেঙৰ লিগিৰী কৰি। পোন যৌৱনৰ সোন পৰশত দুটি হিয়া এটি কৰি লিগিৰী ছোৱালীয়ে নাহৰ নামৰ কোনোবা চেনামুৰাক ভাল পাইছিল আৰু পাহৰিব তাই নোৱাৰিলে। গাঁৱৰ ল'ৰাটোক কিবা এটা সুবিধা দি ৰাজকাৰেঙলৈ লৈ আহিল। আৰম্ভ হ'ল অভিসাৰ। ৰজাৰ কাৰেঙৰ সকলো সুবিধা পাই নাহৰ হৈ পৰিল দুঃসাহসী। কুঁৱৰীৰ অভিসাৰত মত্ত নাহৰৰ পুৰুষসুলভ দাম্ভিকতা, মদ্‌গর্বিতা প্রকাশ পাইছে এনেদৰে—

"লেহেতী বাঁহৰে জকাই বুঢ়ী আই
লেহেতী বাঁহৰে জকাই
পর্বতে পর্বতে বগাব পাৰো মই
নগাকনো বুলি যাওঁ ককাই।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্রহ; পৃ ঃ ৩)

নাহৰৰ এনে দাম্ভিকতাপূর্ণ কথাই নাহৰক পুৰুষতান্ত্রিক সমাজৰ প্রতীক হিচাপে চিহ্নিত কৰিছে।

নাহৰৰ গীতত যিগৰাকী বুঢ়ীমাকে নাহৰক অতি চেনেহকৈ ভাত-পানী খুৱাই মৰমত এৰি দিব পৰা নাই, সেইগৰাকী কুঁৱৰীৰ বাহিৰে আন কোনো নহয়, ৰাজকাৰেঙৰ মর্যাদা ৰক্ষা কৰিবলৈ স্বভাৱ কবিয়ে ইয়াত বুঢ়ীমাক হিচাপে থিয় কৰাইছে—

"ভাতে ৰান্ধি দিয়া খাওঁ মই বুঢ়ী আই
পানী আনি দিয়া খাওঁ
লগৰ সমনীয়া যায় মহং বেহাবলৈ
ময়ো বেহাবলৈ যাওঁ।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্রহ; পৃ ঃ ১)

স্বামীৰ বর্তমানত বুঢ়ী আইৰূপী কুঁৱৰীৰ পৰ-পুৰুষৰ লগত মিলা-মিচা অভিসাৰ আদি অনৈতিক কার্যই পুৰুষ প্রধান অসমীয়া সমাজৰ পৰম্পৰাৰগত নাৰীৰ অনাৰীসুলতাকে প্রমাণ কৰিছে।

সোণাৰি-জী কুঁৱৰীৰ অভিসাৰেই যে চফল ডেকা নাহৰৰ মৃত্যুৰ কাৰণ সেইটো গীতটোত স্পষ্ট ৰূপত ধৰা দিছে—

"হেৰ বুঢ়ী পাখৰী মৰাণৰ জীয়ৰী
নাহৰক কটালে কোনে?
জালি কোমোৰা যেন নাহৰ চেনেমুৰা
কি জগতৰ মৰালে প্ৰাণে।"

(অসমীয়া আখ্যানগীত সংগ্ৰহ; পৃ ঃ ৫)

নাৰীৰ পৰ-পুৰুষগামিতা, অভিসাৰিতা আদি অনৈতিক কাৰ্যক পুৰুষপ্ৰধান অসমীয়া সমাজত অভিশাপ হিচাপে গণ্য কৰা হয় একেই কাৰ্য্য পুৰুষে কৰিলে তাৰ প্ৰতি আদৰ সমাদৰ ক্ষমা ভাব থাকে। কুঁৱৰীৰ অভিসাৰি দৌৰাত্মই চফল ডেকা নাহৰক মৃত্যুৰ মুখলৈ ঠেলি দিয়া কাৰ্য্যই কুঁৱৰীক সমাজত অভিশপ্ত হিচাপে চিনাক্ত কৰিছে।

৪) **মণিকোঁৱৰৰ গীত** ঃ অসমীয়া লোক সাহিত্যৰ এক বুজন অংশ আগুৰি থকা কাহিনীগীতবোৰৰ ভিতৰত এক প্ৰধান তথা প্ৰাচীনতম গীত হৈছে মণিকোঁৱৰৰ গীত। অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী প্ৰণেতাসকলে এই গীতক অসমীয়াৰ উমৈহতীয়া সম্পদ হিচাপে স্থান দিছে। এই গীতটিৰ কাহিনীমৰ্মে শংখদেৱ (শংকৰদেউ) ৰজা অপুত্ৰক আছিল। ৰজাই দৈৱজ্ঞক মাতি আনি পুত্ৰ লাভৰ উপায় বিচৰাত দৈৱজ্ঞই ক'লে যে, জলকোঁৱৰক সন্তুষ্ট কৰিব পাৰিলে তেওঁ পুত্ৰ লাভ কৰিব। সেই মৰ্মে ৰজাৰ স্তুতি প্ৰাৰ্থনাত সন্তুষ্ট হোৱা জলকোঁৱৰে নিজ পত্নীক এৰি ৰাজকুঁৱৰীৰ গৰ্ভত মানুহৰূপে প্ৰৱেশ কৰে—

"বিধাতাৰ লেখন গুচাওঁ কেনে কৰি
থাকিবা চৌমেৰ তৰি,
ওলাইছো বাৰ বছৰ থাকিম ষোল বছৰ
আহিম জললৈ ঘূৰি।"

(অসমীয়া লোকগীত সমীক্ষা; পৃ ঃ ৭১)

বিধাতাৰ লেখনক দোহাই দি জলকোঁৱৰে পত্নীক এৰি অহাৰ কাৰ্যই পুৰুষপ্ৰধান সমাজত নাৰীৰ ইচ্ছা-অনিচ্ছা, সন্মতি, অনুমতি আদিৰ যে কোনো গুৰুত্ব তথা মূল্য নাই সেইটোকে প্ৰতিপন্ন কৰিছে।

এইদৰে জলকোঁৱৰে ৰজাৰ ঘৰত জন্ম পাই নাম পালে মণিকোঁৱৰ। 'মণিকোঁৱৰৰ গীত'ৰ বিষয়বস্তুত দুটা কথা পোৱা যায়—মণিকোঁৱৰৰ মৃত্যু আৰু কাঁচন কোঁৱৰীৰ বিলাপ। ঘোঁৰা চেকুৰাই ঘূৰি ফুৰোতে মন্ত্ৰীৰ জীয়েক কাঁচন কুঁৱৰীক দেখি বিবাহ কৰোৱাই অনাৰ কিছুদিন পিছতে নৈত গা-ধুবলৈ যোৱাৰ সময়ত জলকোঁৱৰে মণিকোঁৱৰক পানীৰ ভিতৰলৈ টানি নিয়াত মনিকোঁৱৰ নিৰুদ্দেশ হৈ পৰে। তামুলীৰ মুখে কৰুণ বাতৰিটোৰ বিষয়ে জ্ঞাত হয় কাঁচন মতীয়ে উন্মাদিনীৰ দৰে হৈ পৰিল আৰু ইনাই বিনাই কান্দিবলৈ ধৰিলে—

"থেকেচি ভাঙি যাওঁ ৰূপহী যঁতৰে
ভুকু মাৰি ভাঙি যাওঁ মাকো,
মোৰ যদি কোঁৱৰ পানীত পৰি হেৰাল
মই কাৰে লগতে থাকো।"

(অসমীয়া লোকগীত সমীক্ষা; পৃ ঃ ৭৩)

পৰম্পৰাগত পুৰুষপ্ৰধান সমাজত স্বামী অবিহনে বিবাহিত নাৰীৰ অস্তিত্ব মূল্যহীন হৈ পৰে। "মই কাৰে লগতে থাকো" কাঁচনমতীৰ এই কথাই কাঁচনমতীক এজনী দুৰ্বল, পৰনিৰ্ভৰশীল নাৰী হিচাপে চিহ্নিত কৰিছে আৰু কাঁচনমতী পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজৰ নিৰ্মাণ হিচাপে ধৰা দিছে।

গীতাংশত অকাল বৈধব্যৰে পীড়িত কাঁচন মতীৰ বিননিৰ সুৰ ভাঁহি উঠিছে—

"লুইতে এৰিলে দীঘলে এসুঁতি
দিহিঙে এৰিলে কুল,
আইয়ে বোপায়ে ধৰম দিয়া দিলে
নুগুচিল হালধিৰ বোল।"

(অসমীয়া লোকগীত সমীক্ষা; পৃ ঃ ৭৩)

অকাল বৈধব্যৰ যন্ত্ৰনাৰে পীড়িত কাঁচনমতীৰ ভাবনাই পৰম্পৰাগত অসমীয়া নাৰীৰ ভাৱনাকে প্ৰতিফলিত কৰি কাঁচনমতীৰ নাৰীসুলভতাকে দাঙি ধৰিছে। কিন্তু পৰম্পৰাগত অসমীয়া পুৰুষৰ ভাৱনাত এনে বৈধব্যজীৱন আদৰ্শ নহয়।

৩.০ উপসংহাৰ ঃ সামৰণিত ক'ব পাৰি যে, অসমীয়া আখ্যানমূলক গীতৰ ওপৰত নাৰীবাদী দৃষ্টিভংগীৰে পৰম্পৰাগত মৌখিক সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত লিংগ নীতি-নিয়ম, ক্ষমতা, গতিশীলতা আৰু নাৰী সৱলীকৰণৰ মাজত এক বহুমুখী আন্তঃক্ৰিয়া উন্মোচন কৰে। সমাজৰ আশা-আকাংক্ষা আৰু নাৰীৰ ওপৰত জাপি দিয়া বাধা নিষেধক প্ৰতিফলিত কৰাৰ পিছতো এই গীতসমূহে নাৰীৰ শক্তি আৰু দৃঢ়তাৰ দৃষ্টান্তও চিত্ৰিত কৰিছে।

অসমীয়া আখ্যানমূলক গীতত নাৰীৰ চিত্ৰণক সমালোচনাত্মকভাৱে পৰীক্ষা কৰি আমি সংস্কৃতি, পৰম্পৰা, লিংগৰ জটিলতাৰ মাজলৈ সোমাই যোৱাৰ লগতে অসমীয়া

সাহিত্য পৰম্পৰাত নাৰীৰ বৈচিত্ৰপূৰ্ণ দৃষ্টিভংগী আৰু প্ৰতিনিধিত্বৰ ওপৰত পোহৰ পেলাব পাৰো। লিংগ গতিশীলতা আৰু সমাজ গঠনৰ বিষয়ে আমাৰ বুজাবুজি গভীৰ কৰিবলৈ অসমীয়া সমাজৰ ভিতৰত লিংগ সমতা আৰু সামাজিক প্ৰগতিৰ পটভূমিত বহল আলোচনাত অৰিহণা যোগাবলৈ এই আখ্যানসমূহৰ তন্ন তন্নকৈ চোৱা-চিতা কৰাটো অতি প্ৰয়োজনীয়।

লিংগ ভূমিকাৰ প্ৰতিষ্ঠিত নীতি-নিয়মসমূহ যুক্তিপূৰ্ণভাৱে প্ৰত্যাহ্বান জনাই আমি প্ৰতিজন ব্যক্তিৰ বৈচিত্ৰপূৰ্ণ দৃষ্টিভংগী আৰু অৱদানক আকোৱালী লোৱা এখন সমাজ গঢ়িতোলাৰ দিশত কাম কৰিব পৰা ইয়ে সমাজৰ পুৰুষ-নাৰীভেদে সকলোৰে প্ৰতি সম স্বীকৃতি আৰু কৃতজ্ঞতাৰ প্ৰসাৰিত কৰি এখন সৰ্বাঙ্গসুন্দৰ আৰু সুস্থ শ্ৰেণীহীন সমাজ গঢ়াৰ পাথেয় হ'ব। ❑

প্ৰসংগ-সূত্ৰ ঃ

1) Jill Julius Matthews, Good and Mad Women : The Historical Construction of Femininity in Twentieth-Century Australia, 1984, page 5-6, ISBN (S) 0868616575
2) Kamla Bhasin, Understanding Gender, 2014, page-1, ISBN 81-88965-19-7
3) Michelle, Potter, The Etymology of "Feminism" Media Theory and Criticism 2017, May 6, 2017, https://medium.com/media-theory-and-criticism-2017/the-etymology-of-feminism-4ca3caec9ad0
4) Girish Pachauri; Arun Kumar, Gender Issues and Concerns, page 11-12, ISBN 978-81-948139-9-6

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মূল গ্ৰন্থ ঃ

চলিহা, ভৱপ্ৰসাদ, অসমীয়া আখ্যান-গীত সংগ্ৰহ (সম্পা.), অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী, ২০১২

ভট্টাচাৰ্য, বসন্ত কুমাৰ ঃ অসমীয়া লোকগীত সমীক্ষা, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, গুৱাহাটী-২০১৮

সহায়ক গ্ৰন্থ ঃ

মহন্ত, অৰ্পনা ঃ নাৰীবাদ, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, ডিব্ৰুগড়, ২০১৮

দেৱী, সন্ধ্যা ঃ নাৰী বন্ধন আৰু মুক্তি; অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুৱাহাটী-২০০৭

ৰাজখোৱা, অজন্তা ঃ নাৰী ঐতিহ্য-আৰু বাগধাৰা, কে আৰ ফাউণ্ডেচন, গোলাঘাট, ২য় সংস্কৰণ, ২০২০

শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰ নাথ ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত, প্ৰতিমা দেৱী, গুৱাহাটী-১৯৯৩

গগৈ, লীলা ঃ অসমীয়া লোক-সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা; বনলতা; ডিব্ৰুগড়, ২০০১

নেওগ, মহেশ্বৰ ঃ অসমীয়া গীতি সাহিত্য; চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, গুৱাহাটী-২০০৮

শৰ্মা, হেমন্ত কুমাৰ ঃ অসমীয়া লোকগীতি সঞ্চায়ন, বীণা লাইব্ৰেৰী, গুৱাহাটী-২০১৮

বৰদলৈ, নিৰ্মলপ্ৰভা ঃ অসমৰ লোকসংস্কৃতি; বীণা লাইব্ৰেৰী, গুৱাহাটী, ১৯৮৭, মুদ্ৰণ

শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ ঃ লোকসংস্কৃতি, চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, চতুৰ্থ সংস্কৰণ, ২০১৯

বায়ন ভৱজিৎ ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী; মা-লক্ষ্মী পাব্লিকেশ্বন, গুৱাহাটী, প্ৰথম সংস্কৰণ, ২০১৩

নেওগ, মহেশ্বৰ ঃ অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা; চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, গুৱাহাটী, ২০১৩, মুদ্ৰণ

গোস্বামী, প্ৰফুল্ল দত্ত ঃ বাৰ মাহৰ তেৰ গীত; সাহিত্য একাডেমী, দিল্লী, ১৯৬২

ইংৰাজী ঃ

Girish Pachauri, Arun Kumar; Gender Issues and Concerns, Vinay Rakheja, Meerut

Simone de Beauvoir, The Second Sex, New York, Vintage Books 1989, c1952. Pdf

Matthews, Jill Julius, Good and Mad Women : The Historical Construction of Femininity in Twentieth-Century Australia, George Allen & Unwin Sydney London Boston, 1984

Kamla Bhasin, Understanding Gender, Kali for Women, 2014

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

গ্রাম্য মহিলাৰ জীৱন আৰু জীৱিকাত ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযানৰ প্ৰভাৱ

অমৃত জ্যোতি লেখাৰু
গৱেষক, বাণিজ্য বিভাগ
ৰাজীৱ গান্ধী কেন্দ্ৰীয় বিশ্ববিদ্যালয়,
অৰুণাচল প্ৰদেশ-৭৮১১১২
৮৬৩৮৮ ১৮৬৩১
lekharuamrit@gmail.com

ড° ৰামা চন্দ্ৰ পাৱিদা
অধ্যাপক, বাণিজ্য বিভাগ
ৰাজীৱ গান্ধী কেন্দ্ৰীয় বিশ্ববিদ্যালয়
অৰুণাচল প্ৰদেশ-৭৮১১১২
৯৪৩৬০ ৪৩১২৯
rcparida@yahoo.co.in

সাৰাংশ (Abstract) ঃ

ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযান, ভাৰত চৰকাৰৰ মহিলা সবলীকৰণৰ এক প্ৰধান কাৰ্যসূচী। সমগ্ৰ ভাৰতৰ লগতে অসমতো গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযানে মূল অভিযানখনৰ উপাদান সমূহ প্ৰয়োগ কৰে। বৰ্তমান ৰ অধ্যায়টিত উক্ত অভিযানখনে অসমৰ নগাঁও জিলাৰ গ্ৰাম্য মহিলাসকলৰ জীৱন আৰু জীৱিকাত কেনেদৰে প্ৰভাৱ পেলাইছে সেই সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ কৰিব বিচৰা হৈছে। মুঠ ৩০০ গৰাকী মহিলাৰ ওপৰত ক্ষেত্ৰভিত্তিক কৰা অধ্যয়নৰ পৰা এই তথ্য প্ৰকাশ হৈছে যে এই অভিযানখনে আত্ম সহায়ক গোটৰ সদস্যা সকলক উপাৰ্জনমুখী কাম গ্ৰহণ, উপাৰ্জন বৃদ্ধি আদিত সহায় কৰিছে। সদস্যাসকলৰ জ্ঞানযশিক্ষা বৃদ্ধি, আত্মবিশ্বাস ও যোগাযোগ দক্ষতা বৃদ্ধি, সামাজিক আঁচনিৰ সুবিধা লাভ, নূন্যতম প্ৰয়োজনীয়তা পূৰণ আদি ক্ষেত্ৰত সক্ষম কৰি সমাজ আৰু পৰিয়ালত তেওঁলোকৰ স্থান উন্নত কৰিছে।

মূল শব্দ ঃ ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযান, অসম ৰাজ্যিক গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযান, আত্মসহায়ক গোট, মহিলা, জীৱন আৰু জীৱিকা।

আৰম্ভণি (Introduction) ঃ

এখন দেশৰ বিকাশত মহিলাৰ অৰ্থনৈতিক অৱদান অপৰিহাৰ্য্য। জীৱন যাত্ৰাত মহিলা সকলেও পুৰুষৰ দৰেই বোজা বহন কৰে। জীৱন আৰু সমাজৰ প্ৰতিটো দিশতে তেওঁলোকৰ সক্ৰিয় অংশগ্ৰহণে আমুল পৰিৱৰ্তন আনিব পাৰে। কিন্তু একবিংশ শতিকাতো মহিলাৰ মৰ্য্যাদা নিৰ্দিষ্ট স্থানলৈ উপনীত নোহোৱাটো পৰিতাপৰ কথা। আমি যেতিয়া উপাৰ্জনৰ কথা কওঁ তেতিয়া পুৰুষৰ ছবিখনেই আমাৰ মনলৈ প্ৰথমে আহে। ইতিহাসেও এই কথাৰ সাক্ষ্য দাঙি ধৰে কৰ্ম সংখ্যক মহিলাৰ নামহে হাজাৰ হাজাৰ জন পুৰুষৰ বিপৰীতে উল্লেখ পোৱা যায়। মহিলাসকলে ঘৰৰ ভিতৰত আৰু বাহিৰত বহু কামেই কৰে যদিও, তেওঁলোকৰ কামে অৰ্থনৈতিক মৰ্য্যাদা লাভ নকৰে। ই ভাৰতবৰ্ষ আৰু ইয়াৰ ৰাজ্য অসমৰ ক্ষেত্ৰটো সত্য। মহিলাসকলক সমাজৰ অসুবিধাগ্ৰস্ত শ্ৰেণীৰ শ্ৰেণীভুক্ত কৰা হয়। ৰাজনৈতিক, সামাজিক আৰু অৰ্থনৈতিকভাৱে তেওঁলোক পিছপৰা। এই পিছপৰা মহিলা সকলৰ সবলীকৰণ দিশটোৱে সম্প্ৰতি বহু গৱেষণাৰ কেন্দ্ৰ পৰিছে। যেতিয়া অধিক মহিলাই কাম কৰে তেতিয়া অৰ্থনীতি বৃদ্ধি পায়। দ্বাদশ পঞ্চবাৰ্ষিক পৰিকল্পনাত জাতিৰ প্ৰগতিৰ ক্ষেত্ৰত মহিলাসকলৰ অংশগ্ৰহণৰ ওপৰতো

গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হৈছে। মহিলাসকলে গ্ৰহণ কৰা অৰ্থনৈতিক কাৰ্য্যকলাপে দেশৰ অৰ্থনৈতিক বিকাশত সহায় কৰাৰ লগতে মহিলা সবলীকৰণতো সহায় কৰে।

মহিলাসকলৰ অৰ্থনৈতিক সবলীকৰণে তেওঁলোকক সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ প্ৰক্ৰিয়াত অংশগ্ৰহণ কৰিবলৈ সক্ষম কৰে। মহিলাসকলক মূলসুতিলৈ অনাৰ প্ৰয়োজনীতা আৰু ইয়াৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে বিভিন্ন ৰাজ্যৰ ৰাজ্য চৰকাৰৰ লগতে ভাৰত চৰকাৰেও অনুধাৱন কৰিছে। সেই অনুসৰি ভাৰত চৰকাৰে দৰিদ্ৰ মহিলা আৰু তেওঁলোকৰ অৰ্থনৈতিক বহনক্ষমতাক লক্ষ্য কৰি কিছুমান নীতি আৰু কাৰ্য্যসূচী প্ৰস্তুত কৰি আহিছে। ভাৰত চৰকাৰৰ এনে এক প্ৰধান কাৰ্য্যসূচী হৈছে স্বৰ্ণ জয়ন্তী গ্ৰামীণ স্বৰোজগাৰ যোজনাৰ পুনৰ্গঠনেৰে ২০১১ চনত আৰম্ভ হোৱা ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিয়ান (National Rural Livelihood Mission)। ২০১৬ চনত এই অভিযানৰ নাম সলনি কৰি দীনদয়াল অন্ত্যোদয় যোজনা ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযান (DAY-NRLM) কৰা হয়। কেন্দ্ৰীয় চৰকাৰে পৃষ্ঠপোষকতা কৰা এই অভিযানত কেন্দ্ৰ আৰু ৰাজ্য চৰকাৰে যৌথভাৱে প্ৰকল্প সমূহৰ বাবে পুঁজি আগবঢ়ায়। এই অভিযানৰ অধীনত কেন্দ্ৰ আৰু ৰাজ্য সমূহৰ পুঁজিৰ আবণ্টনৰ ধৰণ উত্তৰ পূৰ আৰু হিমালয়ৰ ৰাজ্যসমূহৰ বাবে ৯০ঃ১০ অনুপাত, কেন্দ্ৰীয় শাসিত অঞ্চলসমূহৰ বাবে ১০০ শতাংশ (জম্মু এণ্ড কাশ্মীৰক বাদ দি যি ৯০ঃ১০ অনুপাতত আছে) আৰু বাকী ৰাজ্যসমূহৰ বাবে ৬০ঃ৪০ অনুপাত। এই অভিযানখনৰ ৰূপায়নৰ দায়িত্ব ৰাজ্যসমূহত ৰাজ্যিক গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযান (বিশেষ উদ্দেশ্যৰ বাহন) ৰ ওপৰত ন্যস্ত কৰা হৈছে। জিলা পৰ্য্যায়ত এক জিলা অভিযান পৰিচালনা গোট (District Mission Management Unit) পৰিকল্পনা আৰু কাৰ্য্যকৰীকৰণৰ বাবে দায়বদ্ধ (জিলা প্ৰশাসনৰ সামগ্ৰিক নিয়ন্ত্ৰণত থাকি) আৰু উন্নয়ন খণ্ড পৰ্য্যায়ত এক উন্নয়ন খণ্ড অভিযান পৰিচালনা গোট (Block Mission Management Unit) য়ে অভিযান খনৰ কাৰ্য্যকলাপ কৰে।

ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযানৰ মূল উদ্দেশ্য হৈছে - "দৰিদ্ৰ সকলৰ বাবে বহনক্ষম জীৱিকাৰ প্ৰসাৰ যাতে তেওঁলোকে দৰিদ্ৰতাৰ পৰা ওলাই আহে।" এই দৰিদ্ৰ সকলৰ

বিকাশৰ বাবে অভিয়ানখনে তৃণমূল পর্য্যায়ত আত্মসহায়ক গোট (বিশেষকৈ মহিলাৰ দ্বাৰা) ৰ দৰে শক্তিশালী প্রতিষ্ঠান গঢ়ি তোলা আৰু এই গোট সমূহকলৈ উচ্চস্তৰীয় অনুষ্ঠান যেনে - গ্রাম্য সংগঠন, মণ্ডল পর্যায়ৰ সংগঠন আদি গঠনৰ ওপৰত কাম কৰে। এই প্রতিষ্ঠান সমূহক অভিযান খনৰ আওঁতাত এক পৰিসৰৰ বিত্তীয় সেৱা আৰু জীৱিকাৰ ব্যৱস্থা কৰা হয়। এই প্রতিষ্ঠান সমূহৰ সহায়েৰে হিতাধিকাৰীসকলৰ জীৱিকাৰ বৈচিত্রতা, আয় বৃদ্ধি আৰু জীৱনৰ মান উন্নত কৰাৰ বাবে দীর্ঘম্যাদী সহায় আগবঢ়োৱা হয়।

পূর্ব সাহিত্যৰ পর্য্যালোচনা (Literature Review) ঃ

পৰিসৰ আৰু বহুলতাৰ ওপৰত থকা অন্তর্নিহিত জ্ঞান প্রাসংগিক সাহিত্যত সামৰি লোৱাৰ বাবে এই গৱেষণা পত্রখনে কিছুমান গৱেষণা পত্রৰ পর্য্যালোচনা কৰিছিল তলত দিয়া ধৰণে ঃ-

গ্রাম্য মহিলাসকলৰ সবলীকৰণত ৰাষ্ট্রীয় গ্রামীণ জীৱিকা অভিযানে গুৰুত্বপূর্ণ অৱদান আগবঢ়াইছে। আত্ম সহায় গোটত যোগদান কৰাৰ আগতে তেওঁলোকৰ আর্থ-সামাজিক অৱস্থা ভাল নাছিল। কিন্তু গোটত যোদগান কৰাৰ পিছত মহিলাসকলৰ জীৱিকাৰ উত্থান ঘটিছে। গৱেষণাৰ দ্বাৰা এই কথা প্রকাশ হৈছে বেছিভাগ সদস্যই কম আয়ৰ শ্রেণীৰ পৰা অর্ধমধ্যম আয়ৰ শ্রেণীলৈ উন্নীত হৈছে। মহিলাসকলৰ অর্থনৈতিক অৱস্থা উন্নত হোৱাৰ লগে লগে পৰিয়ালৰ লগতে সমাজতো তেওঁলোকৰ ভূমিকা আগৰ তুলনাত ভালকৈ গণনা হৈছে। গৱেষক সকল এই সিদ্ধান্তত উপনীত হৈছে এই অভিযানখনৰ হস্তক্ষেপে মহিলসকলৰ সবলীকৰণ কৰিছে। (চাহ আলম, ২০১৮/ ঋতুৰাজ বৰুৱা আৰু লেখকসকল, ২০২২)।

ৰাষ্ট্রীয় গ্রামীণ জীৱিকা অভিযানৰ দ্বাৰা প্রৱর্তিত আত্ম সহায়ক গোটত যোগদানৰ পাছত উত্তৰদাতা সকলৰ মাহিলী আয়কে ধৰি কিছুমান সুবিধা বৃদ্ধি পাইছে। আয় বৃদ্ধিৰ লগে লগে তেওঁলোক অধিক স্বাধীন হৈ পৰিছে আৰু জীৱন ধাৰণৰ মানদণ্ড উন্নত হৈছে। তদুপৰি উত্তৰদাতাসকলৰ কাম অদক্ষ বৃত্তিৰ পৰা দক্ষ বৃত্তিলৈ সলনি হৈছে। এইধৰণৰ দক্ষ বৃত্তিয়ে আত্মব্যৱসায় বা গোটৰ কামক প্রসাৰিত কৰি জীৱিকা কার্য্যকলাপৰ বৃদ্ধি কৰি এক নতুন দিশত বিৱর্তন আনিছে। **(ড° অনুপম কুমাৰ তিৱাৰী আৰু ড° শিৱানী দেৱান, ২০২৯)**

আত্ম সহায়ক গোটত যোগদান কৰাৰ পিছত পৰিয়ালসমূহৰ মাহিলী আয় বৃদ্ধিৰ লগতে পশুধন দখলৰ সংখ্যাও বৃদ্ধি পাইছে। তদুপৰি গোটৰ সদস্য ভুক্তিৰ পাছত শ্রমিকৰ পৰা আন আন বৃত্তিলৈ আয়ৰ উৎস সলনি হৈছে। ঋণৰ ক্ষেত্রত পৰম্পৰাগত ঋণৰ উৎসৰ পৰিৱর্তে বেংক ঋণ গ্রহণৰ দিশে ধাৰিত হৈছে। (ৰাকেশ শর্মা আৰু লেখকসকল, ২০২০)।

মহিলাসলৰ অংশগ্রহণমূলক বিকাশ আৰু সৱলীকৰণ প্রক্রিয়াত আত্ম সহায়ক গোট সমূহ আটাইতকৈ সফল কৌশল হিচাপে আত্ম প্রকাশ কৰিছে। গোটৰ সদস্যতাই মহিলাসকলক কর্মসংস্থাপন, উপার্জন, সঞ্চয়ৰ লগতে সামাজিক বন্ধনৰ পৰা উন্নীত কৰিছে। গোটসমূহে অক্রেডিট সেৱা যেনে - সাক্ষৰতা, স্বাস্থ্য আৰু পৰিৱেশ বিষয় আদিৰ বিকাশৰ দায়িত্ব গ্রহণ কৰে (এচ. এচ. সম্বুৰাজ আৰু এচ. এইছ. পেণ্ডিয়ান, ২০২১)।

দীনদয়াল অন্তোদয় যোজনা - ৰাষ্ট্রীয় গ্রামীণ জীৱিকা অভিযানে আত্ম সহায়ক গোটসমূহলৈ যোগান ধৰা প্রতিষ্ঠানিক ঋণৰ উৎসই তেওঁলোকৰ সামর্থ্য বিকাশত সহায় কৰিছে আৰু সদস্যসকলৰ এক সমতাপূর্ণ বহনক্ষম উন্নয়নৰ ভেটি প্রদান কৰিছে। শিক্ষা, উদ্যোগীকৰণৰ দক্ষতা, বিপননৰ মানদণ্ড আদি দিশত প্রদান কৰা প্রশিক্ষণে সদস্যাৰ জীৱনত ইতিবাচকভাৱে প্রভাৱ পেলাইছে। **(ড°আশুতোষ প্রিয়া আৰু উদিত মহেশ্বৰী, ২০২২)।**

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য (Objectives of the study) ঃ

ভাৰতবর্ষৰ অধিকাংশ লোকেই গ্রাম্য এলেকাত বসবাস কৰে। অসম ৰাজ্যৰ ক্ষেত্রত প্রায় ৮৫.৯০ শতাংশ লোকেই গ্রামাঞ্চলৰ গাঁৱত বাস কৰে। গ্রাম্য দৰিদ্র মহিলা সলকৰ সবলীকৰণৰ বাবে প্রৱর্ত্তিত ৰাষ্ট্রীয় গ্রামীণ জীৱিকা অভিযান অসমৰ সকলো জিলাতে প্রয়োগ হৈছে। ২০১১ চনৰ লোক পিয়ল অনুসৰি অসমৰ নগাঁও জিলাত জনসংখ্যা সর্বাধিক। সেয়েহে অধ্যয়নটিৰ উদ্দেশ্য হ'ল - নগাঁও জিলাত দৰিদ্র গ্রাম্য মহিলাসকলৰ জীৱন আৰু জীৱিকাত ক্ষেত্রভিত্তক অধ্যয়নৰ আধাৰত অভিযানখনৰ প্রভাৱ সম্পর্কে বিশ্লেষণ কৰা।

গৱেষণা পদ্ধতি (Research Methodology) ঃ

অধ্যয়নত অংশগ্রহণকাৰী সকলক ক্লাষ্টাৰ নমুনা সংগ্রহ পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰি নির্ণয় কৰা হৈছিল। জিলাখনৰ উন্নয়ন

মণ্ডলসমূহ ক্লাষ্টাৰ হিচাপে লোৱা হৈছিল। এন. আৰ. এল. এম. ৰেবছাইটৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা তথ্য অনুসৰি জিলাখনৰ ১৩ টা উন্নয়ন খণ্ডত মুঠ ১৯,৯৪০ টা আত্ম সহায়ক গোট পঞ্জীয়নভুক্ত হৈছে। অধ্যয়নটোৰ বাবে ১০ টা উন্নয়ন খণ্ডৰ পৰা ৩০০ টা আত্ম সহায়ক গোট চিনাক্ত কৰা হৈছিল। তাৰ পিছত এজনকৈ/এগৰাকীকৈ সদস্যক চূড়ান্ত নমুনা হিচাপে লোৱা হৈছিল, যাৰ ফলত নমুনাৰ আকাৰ ৩০০ আছিল। ইয়াত সন্নিৱিষ্ট তথ্যসমূহ ক্ষেত্ৰখনলৈ গৈ উত্তৰদাতাক যোগান ধৰা পূৰ্ব নিৰ্ধাৰিত প্ৰশ্নাৱলীৰ সহায়ত সংগ্ৰহ কৰা হৈছে। সংগ্ৰহ কৰা প্ৰাথমিক তথ্যসমূহ এচ,পি,এচ,এচ, (SPSS) চফ্টওৱেৰৰ সহায়ত বিশ্লেষণ কৰা হৈছে।

ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ ওপৰত আলোচনা আৰু ফলাফল লাভ ঃ অধ্যয়নস্থলীলৈ গৈ সংগ্ৰহ কৰা তথ্যসমূহৰ বিশ্লেষণত লাভ কৰা তথ্যসমূহ তলত উপস্থাপন কৰা হ'ল।

উত্তৰদাতাসকলৰ অধিকাংশই (২৯.৭ শতাংশ) ৩৪ ৰ পৰা ৫১ বছৰ বয়সৰ ভিতৰত, ২৭.৩ শতাংশ উত্তৰদাতা ২৬ বছৰৰ পৰা ৩৩ বছৰ বয়ৰ ভিতৰত, ২৬.৩ শতাংশ ৪২ বছৰৰ পৰা ৪৯ বছৰৰ ভিতৰত, ১১.৭ শতাংশ ৫০ বছৰৰ বয়সৰ উৰ্ধৰ আৰু ৫ শতাংশ উত্তৰদাতা ১৮ ৰ পৰা ২৫ বছৰৰ ভিতৰত। উত্তৰদাতা সকলৰ ৪৯.৩ শতাংশই সাধাৰণ জাতিগত শ্ৰেণীৰ (General Caste), ৩১.৩ শতাংশ অন্যান্য পিছপৰা শ্ৰেণীৰ, ১২.৩ শতাংশ অনুসূচিত জনজাতি আৰু ৭.১ শতাংশ অনুসূচিত জাতি। ধৰ্মৰ দিশৰ পৰা উত্তৰদাতাসকলৰ ৬১ শতাংশই হিন্দু আৰু ৩৯ শতাংশ মুছলমান। শৈক্ষিক অৰ্হতাৰ ক্ষেত্ৰত দেখা গৈছে অধিকাংশই (৫১.৩ শতাংশ) নৱম শ্ৰেণীলৈকে পঢ়া, ২১.৩ শতাংশ দশম পাছ, ১৭.৩ শতাংশ দ্বিতীয় বাৰ্ষিক উত্তীৰ্ণ, ৯.৩ শতাংশ ডিগ্ৰীধাৰী আৰু .৮ শতাংশ স্নাতোকোত্তৰ ডিগ্ৰীধাৰী। উত্তৰদাতা সকলৰ ৭২ শতাংশই বি. পি. এল. (BPL) কার্ডৰ ধাৰক।

উত্তৰদাতা সকলে গোটত যোগদান দিয়াৰ পাছত জীৱিকাৰ বাবে হাতত লোৱা উপার্জনমূখী কামবোৰ (শতাংশত) হ'ল ঃ

কৃষিকার্য্য (১৬.১%), পশুপালন (৩৫.১%), মৎস্যপালন (৬.৪%), হাঁহ কুকুৰা পালন (২৬.৬%), হাতৰ কাম (৮.৫%), তাঁতশাল (১২%), স্থানীয় খাদ্যৰ প্ৰস্তুতকৰণ (৫.৮%), গেলামালৰ দোকান (৫%), আচাৰ ব্যৱসায় (২.৬%), পার্লাৰ (১.২%) আৰু অন্যান্য (৫.৩%)।

উত্তৰদাতা সকলৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা তথ্য অনুসৰি ৬৮.৭% মহিলাৰ গোটত যোগদান কৰা পূৰ্বে কোনো ধৰণৰ উপার্জন নাছিল। বাকী থকা সকলৰ বার্ষিক উপার্জন ৫০০০ ৰ পৰা ১৫০০০ ৰ ভিতৰত আছিল। কিন্তু গোটত যোগদান কৰাৰ পিছত তেওঁলোকে উপার্জনমূখী কাম হাতত দিছে আৰু উপার্জন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। ১২.৩% উত্তৰদাতাক বাদ দি প্ৰায় ৭০.৬% মহিলাৰ সম্প্ৰতি বার্ষিক উপার্জনৰ পৰিমাণ ৫০,০০০ (পঞ্চাশ হাজাৰ) টকাতকৈ অধিক। বাকী ১৭.১০% মহিলাৰ বর্ষিক আয় ২০,০০০ ৰ পৰা ৫০,০০০ টকা পর্য্যন্ত হৈছে।

এন. আৰ. এল. এম. প্ৰৱর্তিত আত্ম সহায়ক গোটত যোগদানে সদস্যসকলৰ ব্যক্তিগত আৰু সামাজিক দিশটোৰ উন্নয়নতো সহায় কৰিছে। গোটত যোগদানৰ পৰৱর্তী লাভ কৰা প্ৰশিক্ষণ আৰু সন্মিলিত হোৱা গোটৰ সভাৰ পৰা উত্তৰদাতাসকলৰ - প্ৰাপ্তিসম্পর্কে লাভ কৰা তথ্যসমূহ হ'ল ঃ অধিকাংশ উত্তৰদাতাই (৮৭.২%) প্ৰবলভাৱে সন্মতি জনাইছে যে গোটত যোগদানৰ পাছত তেওঁলোকৰ জ্ঞানৰ পৰিসৰ বাঢ়িছে। একেদৰেই ৯২.৩% উত্তৰদাতাই তেওঁলোকৰ পূৰ্বতকৈ সঞ্চয়ৰ সচেতনতা আৰু সঞ্চয় বৃদ্ধি হোৱা সম্পর্কে মত পোষণ কৰিছে। (গোটৰ সদস্য ভুক্তিয়ে ৬৩% মহিলাক অসম চৰকাৰৰ অৰুণোদয় আঁচনিৰ সুবিধা, প্ৰায় ৫৭% উত্তৰদাতা মহিলাক আয়ুষ্মান কার্ড আৰু ৪৩% মহিলাক জৱকার্ড পোৱাত সহায় কৰিছে)। ৮৬% উত্তৰদাতাই প্ৰবলভাৱে সন্মতি জনাইছে তেওঁলোকৰ যোগাযোগ দক্ষতা বৃদ্ধি পাইছে। তেওঁলোকে বেংক বিষয়া, পঞ্চায়ত, খণ্ড আদিত বিষয়াসকলৰ লগত মত বিনিময়, গাঁও সভাত অংশগ্ৰহণ আৰু গাঁও উন্নয়ন পৰিকল্পনাত অংশগ্ৰহণ, বিভিন্ন সামাজিক সুবিধাৰ আঁচনি লাভৰ বাবে দাবী কৰিব পৰা, নেতৃত্ব গ্ৰহণ কৰিব পৰাকৈ বিশ্বাস বৃদ্ধি সম্পর্কে মত পোষণ কৰিছে। উত্তৰদাতা সকলৰ ৭৩% ই অনানুষ্ঠানিক ঋণৰ উৎস আৰু উচ্চ সুদৰ হাৰত ঋণৰ ওপৰত নির্ভৰশীলতা হ্ৰাস পোৱা সম্পর্কে মত পোষণ কৰিছে। ৬৬% মহিলাই উপার্জনৰ দ্বাৰা নতুন সম্পত্তি আহৰণ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে আৰু তেওঁলোকৰ নূন্যতম প্ৰয়োজনীতা খিনি পূৰ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে।

উপসংহাৰ ঃ গ্ৰাম্য অৰ্থনীতি বিকাশত মহিলাৰ ভূমিকা উল্লেখনীয়। গ্ৰাম্যাঞ্চলত ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযানৰ হস্তক্ষেপে মহিলাসকলৰ আৰ্থ সামজিক দিশটো আগুৱাই নিয়াত বলিষ্ঠ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছে। সেইদৰে অসমতো অসম গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযানৰ প্ৰয়োগে বহু মহিলাক তেওঁলোকৰ স্থান উন্নীত হোৱাত সহায় কৰিছে। বৰ্তমানৰ অধ্যয়নটি কৰা এলকাৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা তথ্যই প্ৰকাশ কৰিছে গোটৰ সদস্যা হোৱাই বহু মহিলাক উপাৰ্জনমূখী কামেৰে স্বাৱলম্বী কৰি তুলিছে। তেওঁলোকৰ ব্যক্তিগত আৰু সামাজিক দিশত বহু পৰিৱৰ্তন হৈছে। উপাৰ্জন বৃদ্ধি, সঞ্চয় বৃদ্ধি, আত্মবিশ্বাস ও যোগাযোগ দক্ষতা বৃদ্ধি, অনানুষ্ঠানিক ঋণৰ উৎসৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীলতাৰ পৰা মুক্তি, নূন্যতম প্ৰয়োজনীয়তা পূৰণ আদিৰ সমাজ আৰু পৰিয়ালত তেওঁলোকৰ স্থান উন্নত কৰি তুলিছে। সেয়েহে এই অধ্যয়নৰ পৰা এই তথ্য স্পষ্ট হৈছে যে ৰাষ্ট্ৰীয় গ্ৰামীণ জীৱিকা অভিযান মহিলা সবলীকৰণৰ এক সফল অভিযান। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থ পুঞ্জী আৰু প্ৰসংগটীকা ঃ

Alom.S." Impact of Natural Rural Livelihood Mission on Empowering Women: A case study in Chhamaria Development Block, Kamrup, Assam". (2018). Journal of Emerging Technology and Innovative Research (JETIR). VOL 5 (1) Page 1315- 1317

Diwan, D.S and Tiwari D.A.K " National Rural Livelihood Mission- Impact Analysis and Key Parameters. 2019. JETIR. ESSN: 2349 - 5162

Sharma et.el " Role of National Rural livelihood Mission for Strengthening of Self Help Groups- A case of Jammu Region. 2020. An International referred, Peer Reviewed and Indeed Quarterly Journal in Science, Agriculture and Engineering. Vol: 10 Issue XXXV.

Thamburaj S.S. and Pandian S.H." An economic Study on women Self Help Group in Senthianbalam Village, Thoothcekudi Taluk. 2021. Vidyabhharati International Interdisciplinary Research Journal. (Special Issue) Page 1038 - 1044"[11:58 am, 22/03/2024

Priya D.A. and Maheshwari U. "An analysis of impact of Deendayal Antyodaya National Rural Livelihood Mission or Rural Peoples with Reference to Measurement through the Attitude of SHG 2022. Towards Excellence ESSN 0974-035

www.nrlm.gov.in

www.asrlm.gov.in

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ অধ্যয়ন আৰু প্ৰসংগ বিচাৰ

অংকনা বৰগোঁহাই

সাৰাংশ ঃ

অসমত বসবাস কৰা এটা ক্ষুদ্ৰ জনগোষ্ঠী হৈছে টাইফাকে জনগোষ্ঠী। এই জনগোষ্ঠীটো স্বকীয় ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰে ঐশ্বৰ্যশালী। ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনো অতি বিশাল আৰু বৈচিত্ৰপূৰ্ণ। ফাকে লোকসমাজত লোকগীত, লোককাহিনী, প্ৰবাদ-প্ৰবচন, সাঁথৰ আদি লোকসাহিত্যৰ প্ৰায় সকলোবোৰ বিভাগ পোৱা যায়। তাৰে মাজত এটা অতি জনপ্ৰিয় ভাগ হৈছে পু-চন-লান। পু-চন-লান হৈছে টাই ফাকে লোকসমাজত প্ৰচলিত হৈ থকা কেতবোৰ উপদেশমূলক লোককথা। পু-চন-লানৰ শব্দগত অৰ্থ হৈছে ককাদেউতাইনাতি-নাতিনীক দিয়া উপদেশ। এইসমূহত জীৱনজোৰা অভিজ্ঞতাৰ প্ৰকাশ হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। পু-চন-লানসমূহত ব্যৱহাৰিক জীৱন, সামাজিক জীৱন, অৰ্থনীতি আদিসকলো দিশৰে উপদেশ পোৱা যায়। পু-চন-লনসমূহৰ একো একোটা পাঠত সৃষ্টিৰ প্ৰেক্ষাপট, সমাজত পেলোৱা প্ৰভাৱ, পাঠটোৰ অন্তৰ্নিহিত ভাৱ আদি বিভিন্নধৰণৰ প্ৰাসংগিক দিশ জড়িত হৈ থাকে। আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰত টাইফাকেসকল পু-চন-লানসমূহৰ অধ্যয়ন কৰি এইসমূহৰ সৈতে জড়িত হৈ থকা প্ৰাসংগিক আৰু আনুষাংগিক দিশসমূহ বিচাৰ কৰা হ'ব।

বীজশব্দ ঃ পু-চন-লান, সংস্কৃতি, লোকসমাজ, লোকসাহিত্য।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

ভাৰতবৰ্ষৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ অসম ৰাজ্যত বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলে বসবাস কৰি আহিছে। যাৰ বাবে অসমক ভাষিক সাংস্কৃতিক ভূ-স্বৰ্গ বুলি অভিহিত কৰিব পাৰি। অসমত বসবাস কৰা বিভিন্ন নৃ-গোষ্ঠীয় ফৈদবোৰে নিজা নিজা ভাষিক সাংস্কৃতিক বৈশিষ্ট্যৰে স্বকীয় পৰিচয় বহন কৰি আহিছে। তাৰ ভিতৰত নিজা ভাষিক-সাংস্কৃতিক বৈশিষ্ট্যৰে সমৃদ্ধিশালী এটি নৃ-গোষ্ঠী হৈছে টাই ফাকেসকল। টাই ফাকে নৃ-গোষ্ঠীটো ভাষা-সংস্কৃতিৰ লগতে সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনতো যথেষ্ট চহকী। লিখিত সাহিত্যৰ লগতে তেওঁলোকৰ মাজত লোকসাহিত্যৰ বহুতো সমল মুখে মুখে প্ৰচলিত হৈ আছে।

পৰম্পৰাগতভাৱে জনসমাজৰ মুখে মুখে প্ৰচলিত হৈ অহা সাহিত্যই হৈছে লোকসাহিত্য। লোকসাহিত্য হৈছে লোক-সংস্কৃতিৰ অন্তৰ্গত এটি ভাগ। লোকসাহিত্যৰ

গৱেষক ছাত্ৰী, অসমীয়া বিভাগ,
ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়
৬০০২৬২৩৬৮৩
aborgohain554@gmail.com

জৰিয়তে একোটা জাতি বা জনগোষ্ঠীৰ জীৱনৰ সুখ-দুখ, আনন্দ- বিষাদ, বিশ্বাস, সংস্কাৰ, ধর্ম-দর্শন আদিৰ সৱল প্রকাশ ঘটে। টাই ফাকে জনগোষ্ঠীৰ মাজত বহু ধৰণৰ লোকসাহিত্য প্রচলিত হৈ আছে। তাৰে এটি প্রধান ভাগ হৈছে পু-চন-লান।

প্রসংগ হৈছে লোকসাহিত্যৰ পাঠসমূহত অন্তর্নিহিতহৈ থকা বিভিন্ন দিশ যেনে পাঠটোৰ সৃষ্টিৰ সামাজিক পৰিস্থিত, পাঠটোৱে লোকসমাজত পেলোৱা প্রভাৱ, পাঠটোৰ অন্তর্নিহিত ভাৱ ইত্যাদি। লোকসাহিত্যৰ পাঠটোৰ সৈতে জড়িত হৈ থকা এনে প্রাসংগিক আৰু আনুষংগিক দিশসমূহ অধ্যয়ন কৰিলেহে লোকসাহিত্যৰ পাঠসমূহৰ পূর্ণাংগ বিশ্লেষণ সম্ভৱ হৈ উঠে বুলিব পাৰি। ফাকে জনগোষ্ঠীৰ মাজত প্রচলিত হৈ থকা লোকসাহিত্যৰ এক অন্যতম ভাগ হৈছে পু-চন-লান। পু-চন-লানৰপাঠসমূহতোএনে বহুতো প্রসংগ অনুষংগ জড়িত হৈ আছে। গতিকে পু-চন-লানসমূহৰ প্রসংগ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে তেওঁলোকৰ লোকসমাজৰ বহুতো দিশৰ বিষয়ে জানিব পৰা যাব।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ অধ্যয়ন আৰু প্রসংগ বিচাৰ - শীর্ষক গৱেষণা নিবন্ধটোৰ উদ্দেশ্য হ'ল —

- ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লান সম্পর্কে অধ্যয়ন কৰা।
- ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চ্ন-লানৰ প্রসংগ আৰু অনুষংগ বিচাৰ কৰা।

০.৩ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ অধ্যয়ন আৰু প্রসংগ বিচাৰ - শীর্ষক গৱেষণা নিবন্ধটোৰ গুৰুত্বসমূহ এনেধৰণৰ—

- ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্য সম্পর্কে বর্তমানলৈকে বিজ্ঞানসন্মত অধ্যয়ন হোৱা নাই। গতিকে ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ অন্তর্গত পু-চন-লানৰ পদ্ধতিগত অধ্যয়নৰ বাবে বিষয়টোৰ গুৰুত্ব আছে।
- এই অধ্যয়নত টাইফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ বিষয়বস্তু, পাঠসমূহৰ সৈতে জড়িত হৈ থকা অন্যান্য প্রাসংগিক কাৰকসমূহ অধ্যয়ন কৰা হৈছে। গতিকে বিজ্ঞানসন্মত অধ্যয়নৰ জৰিয়তে সীমিত সংখ্যক জনসংখ্যাৰ মাজত প্রচলিত টাইফাকে লোকসাহিত্যৰ স্বকীয় স্বৰূপ সংৰক্ষণৰ ক্ষেত্রত বিষয়টোৰ গুৰুত্ব আছে।

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ

ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ অধ্যয়ন আৰু প্রসংগ বিচাৰ - শীর্ষক গৱেষণা নিবন্ধটোৰ বিষয়ৰ পৰিসৰত ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ অন্তর্গত পু-চন-লানসমূহ অর্ন্তভূক্ত কৰা হৈছে।

০.৫ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ অধ্যয়ন আৰু প্রসংগ বিচাৰ- শীর্ষক নিবন্ধটোৰ অধ্যয়নৰ বাবে দুটা পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে —

(ক) ক্ষেত্র অধ্যয়ন পদ্ধতি (খ) তথ্য বিশ্লেষণৰ পদ্ধতি

ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্রৰ তথ্য আহৰণৰ বাবে ক্ষেত্র অধ্যয়ন পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ জৰিয়তে তথ্যসমূহ আহৰণ কৰোঁতে প্রশ্নসূচী পদ্ধতি, সাক্ষাৎকাৰ পদ্ধতি আৰু পর্যবেক্ষণ পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ অন্তর্গত প্রশ্নসূচী পদ্ধতি, পর্যবেক্ষণ আৰু সাক্ষাৎকাৰ পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

তথ্য বিশ্লেষণৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্রৰ তথ্যসমূহ বিশ্লেষণৰ বাবে ঐতিহাসিক আৰু বর্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

তথ্য বিশ্লেষণৰ তাত্ত্বিক আধাৰ ঃ

ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ অধ্যয়ন আৰু প্রসংগ বিচাৰ শীর্ষক গৱেষণা নিবন্ধটোৰ তাত্ত্বিক আধাৰ হিচাপে পৰিৱেশ প্রসংগ বিচাৰ তত্ত্ব আৰু প্রকার্যাত্মক তত্ত্বৰ প্রয়োগ কৰা হৈছে —

পৰিৱেশ-প্রসংগ বিচাৰ পদ্ধতি (Contextual Method)ঃ

লোকসংস্কৃতি অধ্যয়নৰ অন্যতম এটা পদ্ধতি হৈছে পৰিৱেশ প্রসংগ বিচাৰ পদ্ধতি। এই পদ্ধতিৰে লোকবিদ্যা সম্পর্কীয় পাঠসমূহ বিচাৰ কৰোঁতে সেই পাঠটোৰ সৈতে জড়িত প্রসংগ আৰু পাঠটোৰ গঠনৰ সৈতে জড়িত অন্যান্য কাৰকসমূহৰ বিচাৰ বিশ্লেষণ কৰাত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। এই তত্ত্ব অনুসৰি লোকবিদ্যাৰ পাঠসমূহৰ তিনিটা স্তৰ থাকে। স্তৰকেইটা হৈছে — প্রসংগ (context), পাঠ (text) আৰু

গঠন (texture)। এই গৱেষণা পত্রখনত ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ সৈতে জড়িত হৈ থকা সামাজিক পৰিস্থিতিসমূহ বিচাৰ কৰোতে এই তত্ত্বৰ প্রয়োগ কৰা হৈছে।

প্রকার্যাত্মক তত্ত্ব (Functional Theory) ঃ

প্রকার্যাত্মক তত্ত্ব হৈছে লোকসংস্কতি অধ্যয়নৰ এনে এটা তত্ত্ব পদ্ধতি, যাৰ সহায়ত লোকসংস্কৃতিৰভূমিকা আৰু লোকসমাজত ইয়াৰ উপযোগিতা, সামাজিক মূল্য আদিৰ বিচাৰ কৰা হয়। এই পদ্ধতিয়ে লোকসাহিত্যৰ উপাদানসমূহে লোকসমাজত সাধন কৰা প্রকার্যসমূহৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰে। ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকগীতসমূহৰ প্রসংগ বিচাৰ কৰোঁতে এই তত্ত্বৰ প্রয়োগ কৰা হৈছে। ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যসমূহেও তেওঁলোকৰ জীৱনত নৈতিক শিক্ষা প্রদান, মনোৰঞ্জন, সমাজ সংহতি আদিৰ ক্ষেত্রত যথেষ্ট প্রভাৱ বিস্তাৰ কৰি আহিছে। গতিকে পু-চন-লানসমূহে ফাকেজনগোষ্ঠীৰ সমাজ জীৱনত পেলোৱা প্রভাৱৰ প্রসংগসমূহ এই তত্ত্বৰ আধাৰত বিশ্লেষণ কৰা হ'ব।

১.০ ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পৰিচয় ঃ

অসমত বসবাস কৰা এটা ক্ষুদ্র জনগোষ্ঠী হৈছে টাইফাকে জনগোষ্ঠী। টাইফাকে জনগোষ্ঠী হৈছে শেহতীয়াকৈ অসমত প্রৱেশ কৰা বৃহৎ টাই নৃ-গোষ্ঠীৰ এটা শাখা। ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলক ফাকিয়াল বুলিও কোৱা হয়। *'তেওঁলোকে নিজকে খুনলুংখুন লাইৰ বংশধৰ বুলি বিশ্বাস কৰে। তেওঁলোকে ফাকে মানে 'টাই ৰাজবিষয়া বুলি চিনাকি দিয়ে (ফা - ৰজা, কে - বিষয়া)*।[১] ফাকে শব্দৰ আন এটা অর্থও পোৱা যায়। *'ফা' মানে কঠিন দেৱাল আৰু 'কে' হ'ল পুৰণি, ঐতিহাসিক, অর্থাৎ পুৰণিকলীয়া প্রাচীন শিলাখণ্ডত বসবাস কৰা টাই প্রজাতি।*[২] অন্যান্য জাতি-জনগোষ্ঠীৰ দৰেই ফাকেসকলো নিজা ভাষা আৰু সংস্কৃতিৰে সমৃদ্ধিশালী। ঘৰুৱা পৰিৱেশত তেওঁলোকে টাইফাকে ভাষাৰ ব্যৱহাৰ কৰে কিন্তু অন্যান্য জাতি-জনগোষ্ঠীৰ লোকৰ সৈতে অসমীয়া ভাষাৰে মত বিনিময় কৰে। কিন্তু UNESCO ৰ সমীক্ষাৰ প্রতিবেদন অনুসৰি টাইফাকে জনগোষ্ঠীৰ ভাষা আৰু সংস্কৃতি বিপন্ন প্রায় পথলৈ গতি কৰিছে। ফাকে জনগোষ্ঠীৰ মুঠ জনসংখ্যা প্রায় ২,০০০ জন।[৩] ইমান কম জনসংখ্যা থকা স্বত্তেও ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলে তেওঁলোকৰ চহকী সাংস্কৃতিক পৰম্পৰা ধৰি ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰি আহিছে। টাইফাকেসকল প্রায় ১০০ শতাংশই থেৰাবাদী বৌদ্ধ ধর্মাৱলম্বী লোক। টাই ফাকে জনগোষ্ঠীৰ প্রত্যেকখন গাঁৱতে একোটাকৈ বৌদ্ধবিহাৰ থাকে। বৌদ্ধ ধর্মৰ প্রভাৱতেই ফাকে লোকসকল বৰ শান্তিপ্রিয় হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়।

প্রব্রজন আৰু বর্তমানৰ বাসস্থান ঃ

টাইফাকেসকলে অষ্টাদশ শতিকাৰ শেষভাগত অসমলৈ প্রব্রজিত হৈছিল বুলি জানিব পৰা যায়। তেওঁলোক পূর্বতে চীন দেশত মৌং মাও ৰাজ্য য়ুনানত বসবাস কৰিছিল। তাৰ পৰাই তেওঁলোক ম্যানমান ওচৰৰ হৌকং নামে ঠাইত বসতি কৰিছিল। হৌকং উপত্যকাতেই বহুবছৰ বসতি কৰাৰ পাছত প্রাকৃতি, ৰাজনৈতিক আদি কাৰণত সেই ঠাই ত্যাগ কৰিলে। তাৰ পিছত চুকাফাই অহা পথেৰে পাইকাই পাৰ হৈ আহি অসম বর্মা সীমান্তৰ এডোখৰ ঠাইত জিৰণি ললে। তাৰ পৰা অৰুণাচলৰ অন্তর্গত 'নং-তাও' নামেৰে ঠাইত বসবাস কৰি থাকোতে শদিয়াখোৱা গোঁহাইৰ লগত সংঘর্ষ হয়। এই সংঘর্ষৰ পিছতে আহোম ৰজাই ফাকেসকলক যোৰহাট জিলাৰ দিচৈ নদীৰ পাৰত বসবাস কৰিবলৈ দিয়ে। দিচৈত বসবাস কৰি থাকোতেই মান সৈন্যই ফাকেসকলক পুনৰ বার্মা দেশলৈ ঘূৰাই নিবলৈ চেষ্টা কৰে। মান সৈন্যৰ সৈতে গৈ ফাকেসকল অৰুণাচলৰ 'নামচিক' নামে ঠাই পাইছিলগৈ। কিন্তু প্রাকৃতিক দুর্যোগৰ বাবে ফাকে সকলক তাতে এৰি মানসকল গুচি যায়। তাৰ পৰা ফাকেসকল অসমলৈ ঘূৰি আহে আৰু মার্ঘেৰিটাত ইংথং গাঁও প্রতিষ্ঠা কৰে। এনেদৰেই টাইফাকেসকল অসমৰ স্থায়ী বাসিন্দা হৈ পৰে।

বর্তমান টাইফাকেসকল উজনী অসমৰ দুখন জিলা - ডিব্রুগড় আৰু তিনিচুকীয়াত বসবাস কৰি আছে। ডিব্রুগড়ত নামফাকে আৰু টিপামফাকে নামৰ দুখন গাঁও আছে। তিনিচুকীয়া জিলাৰ মুঠ সাতখন ফাকে অধ্যুসিত গাঁও আছে। গাঁওকেইখনৰ নাম হৈছে — বৰ ফাকে, মান ম, নঙ লাই, লঙ ফাকে, মুঙ লাঙ, নিঙ গাম আৰু ফা নেঙ।

২.০ পু-ছন-লান (ককাদেউতাই দিয়া উপদেশ) ঃ

ফাকেজনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ এক উল্লেখযোগ্য বিভাগ হৈছে — পু - ছন- লান। পু - ছন - লানসমূহত জীৱনৰ বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰ বহিঃ প্রকাশ ঘটা দেখা পোৱা যায়। এইসমূহত ককাদেউতাৰ ৰূপত জীৱনৰ অভিজ্ঞতাৰে সমৃদ্ধ এজন জ্যেষ্ঠ ব্যক্তিয়ে দিয়া উপদেশৰ দৰে বুলি ক'ব পৰা যায়। বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰ উপৰিও এইসমূহত জীৱন-দর্শন,

পুৰুষৰ গুণ আৰু কৰ্তব্য, নাৰীৰ চৰিত্ৰ, ধৰ্মীয় আচৰণ আদি সকলোবোৰ দিশ অন্তৰ্ভুক্ত হৈ থকা দেখা পোৱা যায়। পু-ছন-লানসমূহ মানুহ, ভগৱান, ব্যৱহাৰ্য্য সামগ্ৰী আদি বিষয়বস্তুৰে ৰচিত হোৱা দেখা যায়। *গীতসমূহ বাস্তৱ জীৱনৰ তাত্বিক আদৰ্শ প্ৰকাশক । এই গীতসমূহত দাৰ্শনিক ভাৱৰ আভাস পোৱা যায়।*[৪] এইসমূহ সৰু লৰা-ছোৱালীয়ে বুজিব পৰকৈ সহজ-সৰল ভাষাৰে ৰচিত। পু-চন-লানসমূহৰ প্ৰসংগসমূহ মূল তিনিটা শ্ৰেণীত বিভক্ত কৰি আধ্যয়ন কৰা হৈছ । ভাগকেইটা হৈছে ঃ

- অৰ্থনৈতিক প্ৰসংগ
- ধৰ্মীয় প্ৰসংগ
- সামাজিক প্ৰসংগ

২.১ প্ৰসংগবিচাৰ ঃ

২.১.১ অৰ্থনৈতিক প্ৰসংগ ঃ

ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ মাজত কেতবোৰ অৰ্থনৈতিক প্ৰসংগ জড়িত হৈ থকা দেখিবলৈ পোৱা যায়। মানুহৰ জীৱনৰ সৈতে অৰ্থনৈতিক ওতঃপ্ৰোতভাৱে জড়িত হৈ থাকে। গতিকে লোকসাহিত্যসমূহৰ মাজেৰেও এইসমূহ প্ৰকাশিত হয়। ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ মাজত প্ৰকাশিত হোৱা অৰ্থনৈতিক দিশসমূহ প্ৰায়ে নীতিশিক্ষা আৰু উপদেশমূলক হোৱা লক্ষ্য কৰা যায়। লোকজীৱনত অৰ্থনীতি বিশেষকৈ কৃষিকেন্দ্ৰিক। গতিকে কৃষি বেলেকৈ কৰিব লাগে, টকা পইটা সঞ্চয় আদি অৰ্থনৈতিক প্ৰসংগ জড়িত লোকসাহিত্য তেওঁলোকৰ মাজত দেখা পোৱা যায়। এনে নীতিবচনসমূহে ফাকে লোকসমাজখনৰ অৰ্থনৈতিক দিশৰ ওপৰত যথেষ্ট প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰি অহা দেখা গৈছে। এনে অৰ্থনৈতিক প্ৰসংগ জড়িত নীতিবচনসমূহক তিনিটা শ্ৰেণীত বিভক্ত কৰিব পাৰি—

- কৃষিভিত্তিক প্ৰসংগ
- ব্যৱসায়-বাণিজ্য সম্পৰ্কীয় প্ৰসংগ
- সঞ্চয়কেন্দ্ৰিক প্ৰসংগ

- **কৃষিভিত্তিক প্ৰসংগ**

অসমীয়া লোকসমাজৰ দৰে টাইফাকে লোকসমাজো কৃষিৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। গতিকে কৃষিক কেন্দ্ৰ কৰি বহুতো লোকসাহিত্য তেওঁলোকৰ সমাজত সৃষ্টি হৈছে। তেনে এটি পু-চন-লান হৈছে —

হাই না হাউ মে কুৱাং [৫]
খাত চাং য়া খং নু ।
ভাৱাৰ্থ
বাৰী আৰু পথাৰৰ খেতি বহলাই কৰিবা।
ভাগৰ লাগিছে বুলি কৈ এলাহ নকৰিবা।

ফাকে লোক সমাজৰ অৰ্থনীতি প্ৰধানকৈ কৃষিৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। বিশেষকৈ লাহি ধানৰ খেতি আৰু কম পৰিমাণে শাক-পাচলিৰ খেতি কৰি তেওঁলোকে জীৱন নিৰ্বাহ কৰে। গতিকে জীৱনধাৰণৰ প্ৰধান উৎস বাৰী আৰু পথাৰৰ খেতি যিমান পাৰে বহলকৈ কৰি নিজৰ অৰ্থনৈতিক দিশ টনকিয়াল কৰাৰ প্ৰসংগত উক্ত নীতিবচনফাকিৰ অৱতাৰণা কৰিছে।

- **ব্যৱসায়-বাণিজ্য সম্পৰ্কীয়**

মানুহে অৰ্থ উপাৰ্জন কৰিব পৰা এটা প্ৰধান উৎস হৈছে ব্যৱসায় বাণিজ্য। ফাকে লোকসমাজত প্ৰচলিত ব্যৱহায়-বাণিজ্য সম্পৰ্কীয় এটি পু-চন-লান হৈছে —

কা, খৌন লং হম চিন
য়া খাং তিন কো' ওন ।[৬]
ভাৱাৰ্থ
উজনি-নামনিলৈ বেহা-বেপাৰ কৰিবা।
বেহা-বেপাৰ কৰোঁতে ভৰি বিষ হৈছে বুলি অজুহাত নেদেখুৱাবা।

বহলকৈ ব্যৱসায় বাণিজ্য কৰি সৰহকৈ টকা উপাৰ্জন কৰাৰ প্ৰসংগত এই কথাষাৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে উজনি-নামনিলৈ অৰ্থাৎ অসমৰ ইমূৰৰ পৰা সিমূৰলৈ বেহা-বেপাৰ কৰিবৰ বাবে যোৱাৰ পৰামৰ্শ এই প্ৰবচনফাকিত পোৱা যায়। ব্যৱসায়ৰ বাবে বিভিন্ন ঠাইত ঘূৰি-ফুৰোতে এলাহ ভাৰ বা আন কোনোধৰণৰ অজুহাত যাতে মনলৈ নানে সেই উপদেশ দিয়াৰ প্ৰসংগত উক্ত বাক্যশাৰীৰ অৱতাৰণা কৰা দেখা যায়।

- **সঞ্চয় সম্পৰ্কীয় প্ৰসংগ**

সঞ্চয় অৰ্থনীতিৰ সৈতে ওতঃপ্ৰোতভাৱে জড়িত হৈ আছে। সঞ্চয় অবিহনে অৰ্থনৈতিক দিশ টনকিয়াল হ'ব নোৱাৰে। ফাকে লোকসমাজত সঞ্চয় সম্পৰ্কীয় এটি পু-চন-লান এনেধৰণৰ —

কাত কাং য়া ম জা

ঙুন খাম কুত ত হা মেত চিং।[৭]

ভাৱার্থ

বেছিকৈ বজাৱলৈ নাযাবা। টকা খৱচ হৈ শেষ হ'ব।

বজাৱলৈ গলে যিহেতু বয়-বস্তু কিনা হয়। গতিকে টকা খৱচ হয়। বেছিকৈ বজাৱলৈ গৈ থাকিলে ধুনীয়া দেখি কেতিয়াবা অপ্রয়োজনীয় বস্তু কিনি অনা হয়। গতিকে অবাবত টকা-পইছা খৱচ হয়। সেইবাবে অপ্রয়োজনত বজাৱলৈ গৈ যাতে টকা-পইচা খৱচ কৰি থাকিব নালাগে। বেছিকৈ বজাৱলৈ গৈ টকা খৱছ কৰাতকৈ সেই টকা সঞ্চয় কৰি অর্থনৈতিক দিশ যাতে টনকিয়াল কৰিব পৰা যায় - সেই প্রসংগত এই কথাষাৰি ব্যক্ত কৰিছে।

২.১.২ ধর্মীয় প্রসংগ ঃ

লোকজীৱনৰ সৈতে ধর্ম ওতঃপ্রোতভাৱে জড়িত হৈ থাকে। লোকসমাজখনে যি ধর্ম মানি চলে সেই ধর্মৰ প্রভাৱ লোকসাহিত্যৰ মাজতো প্রতিফলিত হোৱা দেখা যায়। টাই ফাকেসকল বৌদ্ধধর্মীয়। গতিকে তেওঁলোকৰ লোকসাহিত্যসমূহৰ মাজত বৌদ্ধ, ভিক্ষু আদিৰ প্রভাৱ পৰিলক্ষিত হয়। লগতে কর্মফল তথা পূর্বজন্ম, পৰজন্মৰ বিশ্বাসো লোকসাহিত্যৰ মাজেৰে প্রকাশিত হৈছে।

ধর্মীয় ভাৱ সম্পন্ন লোককথাসমূহত প্রায়ে নীতিশিক্ষা আৰু উপদেশমূলক প্রসংগ জড়িত হৈ থকা দেখিবলৈ পোৱা যায়। তেনে এটি পু-চন-লান হৈছে —

য়া হান মাও কং ম্যাত
ও পাত খং টোক ফান ।[৮]

ভাৱার্থ

ভিক্ষু হৈ বিনয়ৰ নিয়ম নীতিমতে নচলিলে অনীতিৰ দোষে চুই বিপদতহে পৰিবা।

বৌদ্ধ ধর্মাৱলম্বীসকলৰ মাজত ধর্মীয় কার্যত ভিক্ষুৱে প্রধান স্থান অধিকাৰ কৰে। ভিক্ষু হবলৈ হলে ধৈর্য্য, বিনয় আদি গুণ আহৰণ কৰিব পাৰিব লাগিব। সকলোৰে হিত চিন্তা কৰিব পৰাজনহে আচল ভিক্ষু। মনৰ পৰা বেয়াভাৱ ত্যাগ নকৰাকৈ কেৱল মানুহক দেখুৱাই ভিক্ষু হোৱাতকৈ নোহোৱাই ভাল। তেনে ভিক্ষুৰ ভাল হোৱাৰ বিপৰীতে বেয়াহে হয়। অর্থাৎ মানুহে ভাল কাম কৰিলে মনৰ পৰা ভাল চিন্তা কৰিব লাগে। মনৰ ভিতৰত অহিত চিন্তা কৰি বাহিৰে ভাল কার্য কৰিলেও তেওঁক ভগৱানে ভাল দৃষ্টি নাচায়। তেনে লোকে নিজেই নিজৰ বিপধ মাতি অনাহে হব - এই প্রসংগত উক্ত কৰা কথাষাৰি ব্যৱহাৰ কৰিছে।

২.১.৩ সামাজিক প্রসংগ ঃ

লোকসমাজৰ সামাজিক জীৱনক কেন্দ্র কৰি বহুতো পু-চন-লাল প্রচলিত হৈ আছে। এইসমূহত মানুহৰ জীৱনযোৰা অভিজ্ঞতাৰ বহিঃপ্রকাশ ঘটে। মানুহৰ স্বভাৱ-চৰিত্র, সাংসাৰিক জীৱন, এখন সমাজ সুস্থভাৱে পৰিচালিত হবলৈ প্রয়োজন হোৱা কেতবোৰ নীতিশিক্ষা আৰু উপদেশ এইসমূহৰ মাজত বিচাৰি পোৱা যায়। সামাজিক প্রসংগ জড়িত পু-চন-লানৰ তিনিটা ভাগত বিভক্ত কৰিব পৰা যায় —

- ব্যৱহাৰিক জীৱনকেন্দ্রিক প্রসংগ
- মানুহৰ স্বভাৱ চৰিত্রকেন্দ্রিক প্রসংগ
- নাৰী পুৰুষৰ লক্ষণ আৰু কর্তব্যকেন্দ্রিক প্রসংগ

- **ব্যৱহাৰিক জীৱনকেন্দ্রিক**

ব্যৱহাৰিক জীৱনক কেন্দ্র কৰি বহুতো লোকসাহিত্য প্রচলিত হৈ আছে। মানুহৰ দৈনন্দিন জীৱনটো আউল নলগাকৈ চলিবৰ বাবে দিয়া উপদেশ ফাকে লোকসাহিত্যবোৰৰ মাজত অন্তর্ভূক্ত হৈ থকা দেখিবলৈ পোৱা যায়। যেনে —

কা না হাউ লিও লাঙ, লোম ছাঙ চাঙ তী নাই[৯]

ভাৱার্থ

আগলৈ যাওঁতে পাছলৈ উলটি চাবা
যাতে পাহৰি যোৱা বস্তু লৈ যাব পাৰা

মানুহ কিবা কামত কৰবালৈ ওলাই যাওঁতে কেতিয়াবা কিবা প্রয়োজনীয় বস্তু পাহৰি যোৱা হয়। যদিহে আকৌ এবাৰ পিছলৈ ঘূৰি চোৱা হয় তেতিয়া পাহৰি যোৱা বস্তু চকুত পৰে। ঠিক তেনেদৰে জীৱন বাটত আগুৱাই যাওঁতেও পিছলৈ ঘূৰি চাব লাগে। ঘূৰি চালে জীৱনত কিবা ভুল ৰৈ গৈছে নেকি নাইবা কিবা কাম কৰিবলৈ পাহৰি গৈছে নেকি, সেই বিষয়ে চকুত পৰে। জীৱনটোত যাতে কৰিবলগীয়া একো কর্তব্য বাদ পৰি নাযায় সেই প্রসংগৰ অৱতাৰণ কৰিবলৈ এই কথাষাৰি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

- **মানুহৰ স্বভাৱ-চৰিত্র কেন্দ্রিক প্রসংগ**

মানুহৰ স্বভাৱ চৰিত্র কেনে হোৱা উচিৎ সেই বিষয়ে বহুতো প্রবাদ-প্রৱচন আৰু পু-চন-লান ফাকে লোকসাহিত্যত

অন্তর্ভুক্ত হৈ আছে। তেনে এটি পু-ছন-লান হৈছে —

য়া ৰ' চৌপ ঔপ চপ পৌন মাই লাত্ যম্ য়া হান অন্ অক্ টোৰ না কং লৌং পৌং চাউ য়ু হাং মান য়িত্।[১০]

ভাৱার্থ

আত্ম-গৌৰৱী নহ'বা। আনে নুসুধিলে উপযাচি আগতিয়াকৈ কথা নক'বা।

ডাঙৰ ঢোলৰ মুখখন বহল। কিন্তু আত্মসন্তুষ্টিৰে ই মনে মনে থাকে।

মানুহ কেতিয়াও আত্মগৌৰৱী হ'ব নালাগে। বহু কথা জানিলেও আনে নুসুধিলে আগতিয়াকৈ কৈ ফুৰিব নালাগে। ঠিক ঢোলৰ দৰে। ঢোলটো বহুত ডাঙৰ যদিও মাৰিডালে স্পর্শ নকৰা পর্যন্ত নিজে শব্দ নকৰে। ঠিক মানুহেও আনে নুসুধিলে যিকোনো বিষয়ত মাত মাতিব নালাগে। এনে কৰিলে মানুহে ফিতাহী বুলি হাঁহিব — এই প্রসংগতে পু-চন-লান ফাকিত ব্যৱহৃত হৈছে।

নাৰী পু�ৰুষৰ লক্ষণ আৰু কর্ত্তব্য কেন্দ্রিক প্রসংগ ঃ

- **নাৰীৰ লক্ষণ**

ফাকে লোকসাহিত্যত নাৰীৰ লক্ষণকেন্দ্রিক বহুতো লোকসাহিত্য পোৱা যায়। নাৰীৰ লক্ষণ বিষয়ে বর্ণনা কৰা এনে লোককথাসমূহ দুটা শ্রেণীত বিভক্ত কৰিব পৰা যায়। শ্রেণী দুটা হৈছে —

(ক) সু-নাৰীৰ লক্ষণ

(খ) কু - নাৰীৰ লক্ষণ

সু-নাৰীৰ লক্ষণ সম্পর্কে বহুতো নীতিবচন ফাকে লোকসাহিত্যত পোৱা যায়।

য়া ৰ' চিন খৌন হৌন পৌন ঙুন চাউ ঐ হেইত নিম[১১]

ভাৱার্থ

তিৰোতা মানুহে আন ঘৰলৈ বেছিকৈ ফুৰিবলৈ যাব নালাগে।

সু-নাৰী হবলৈ কি কৰিব লাগে, কেনেধৰণৰ গুণৰ প্রয়োজন হয় - সেই বিষয়ে বর্ণনা কৰাৰ প্রসংগত পু-চন-লান দুটা ব্যৱহৃত হৈছে। অসমীয়া লোকসমাজৰ দৰে ফাকে লোকসমাজতো ধীন স্থিৰ, ঘৰুৱা কাম-বনত পাৰ্গত নাৰীক সু-নাৰী ৰূপে গণ্য কৰা দেখা পোৱা গৈছে।

(খ) কু-নাৰীৰ লক্ষণ

ফাকে লোকসাহিত্যত কু-নাৰীৰ লক্ষণ বর্ণনা কৰি সৃষ্টি হোৱা লোকসাহিত্য এনেধৰণৰ —

মাং কৌন যাম লংক্যাম লৌপ লিপ ফান চৌপ নাম[১২]

ভাৱার্থ

কিছুমান স্ত্রী বৰ কথকী। অনবৰতে কেপকেপাই কথা কৈ থাকে।

ইয়াত কথা কৈ থকা নাৰী বেয়া অর্থাৎ তেনে নাৰীক কু-নাৰী হিচাপে অভিহিত কৰাৰ প্রসংগত কথাষাৰ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

- **পুৰুষৰ লক্ষণ**

কু-পুৰুষৰ লক্ষণৰ বিষয়েও পু-চন-লানত বর্ণনা কৰা হৈছে। কেনেধৰণৰ পুৰুষৰ সৈতে সম্পর্ক কৰিব নালাগে সেই বিষয়ে উপদেশ দিয়াৰ প্রসংগত এনে লোকসাহিত্যসমূহৰ ব্যৱহাৰ হয়। তেনে এটি পু-চন-লান হৈছে —

না হাই ইক নুং না ম' ক্যাৰ যা খাত্ লেইপ।[১৩]

ভাৱার্থ

নিজৰ খেতি পথাৰ থাকিও পৰিশ্রম নকৰে। কাম সময়তো ঘূৰি ফুৰে।

অর্থাৎ যিসমূহ পুৰুষ নিজৰ কর্ম নকৰে তেনে পুৰুষ কু-পুৰুষৰ শাৰীত পৰে। তেনে পুৰুষে জীৱনত কেতিয়াও উন্নতি কৰিব নোৱাৰে — সেই প্রসংগত উক্ত কথাষাৰৰ প্রয়োগ কৰা দেখা পোৱা যায়।

গতিকে দেখা যায় যে ফাকে জনগোষ্ঠীৰ লোকসমাজত পু-চন-লানসমূহে বিশেষ স্থান অধিকাৰ কৰি আহিছে। সৰু লৰা-ছোৱালীৰ লগতে ডাঙৰকো ব্যৱহাৰিক আৰু নৈতিক শিক্ষা প্রদান কৰাত পু-চন-লানসমূহৰ অৰিহণা আছে। টাইফাকে লোকসমাজখনক নৈতিক শিক্ষাৰে সমৃদ্ধ কৰি সুসংহত কৰি ৰখাত এইসমূহে গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা গ্রহণ কৰি আহিছে।

৩.০ উপসংহাৰ ঃ

৩.১ সিদ্ধান্ত

ফাকে জনগোষ্ঠীৰ পু-চন-লানৰ অধ্যয়ন আৰু প্রসংগ বিচাৰ - শীর্ষক গৱেষণা নিবন্ধটোৰ প্রাপ্ত সিদ্ধান্তসমূহ হৈছে—

- পু-চন-লানসমূহত জীৱনৰ অভিজ্ঞতাসমূহ উপদেশ আৰু নীতিশিক্ষাৰ ৰূপত প্রকাশিত হৈছে

- পু-চন-লানসমূহত অর্থনৈতিক,ব্যৱহাৰকি জীৱন কেন্দ্রিক, ধর্মীয়, সামাজিক আদি সকলোধৰণৰ প্রসংগ জড়িত নীতিশিক্ষামূলক কথা প্রচলিত হৈ আছে ।

- টাইফাকেসকলৰ জীৱন-দর্শন,চিন্তা,অভিজ্ঞতা আদি পু-চন-লানসমূহৰ মাজেৰে প্রকাশিত হৈছে। গতিকে এইসমূহৰ মাজেৰে ফাকে লোকসমাজখনৰ ছবি প্রতিফলিত হয় ।

- পু-চন-লানসমূহেটাইফাকে লোকসমাজখন সুসংহত আৰু সুশৃংখলিত কৰি ৰখাত অৰিহণা যোগাইছে ।

৩.২ সামৰণি ঃ

টাই ফাকেসকলৰ মাজত লোকসাহিত্যৰ এখন বিশাল ক্ষেত্র আছে । অতি কম জনসংখ্যাৰ মাজেৰেই তেওঁলোকে লোকসাহিত্যসমূহ ধৰি ৰখাৰ প্রয়াস কৰি আহিছে । এই গৱেষণা পত্রত টাই ফাকে জনগোষ্ঠীৰ মাজত প্রচলিত হৈ থকালোকসাহিত্যৰ অন্তর্গত পি-চন-লান সম্পর্কে এটি চমু আভাস দাঙি ধৰা হ'ল । এই দিশত আৰু অধিক অধ্যয়নৰ প্রয়োজনীয়তা আছে ।বর্তমান ভাষিক আৰু সাংস্কৃতিক ক্ষেত্রত লুপ্তপ্রায় দিশলৈ গতি কৰা টাইফাকে লোকসাহিত্যসমূহ গৱেষণাৰ জৰিয়তে সংক্ষণৰ প্রয়োজনীয়তা আহি পৰিছে ।❑

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

অসমীয়া গ্রন্থ ঃ

গগৈ লীলা. *অসমৰ সংস্কৃতি,* বনলতা, ডিব্রুগড়, অষ্টম প্রকাশ, ২০১১

- - -. অসমীয়া *লোকসাহিত্যৰ ৰূপৰেখা,* বনলতা, ডিব্রুগড়, তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০১৭

গগৈ, গীতিমল্লিকা, *টাইফাকে লোকগীত,* পয় ফাউণ্ডেচন, নাহৰকটীয়া, প্রথম প্রকাশ, ২০১৫

- - - (সম্পা.). *টাইফাকে লোকগীত আৰু লোক কবিতা,* পয় ফাউণ্ডেচন, নাহৰকটীয়া, প্রথম, ২০২২

গোস্বামী, প্রফুল্লদত্ত. *অসমীয়া জন-সাহিত্য,* বাণী প্রকাশ প্রাইভেট লিমিটেড, গুৱাহাটী, পঞ্চম সংস্কৰণ, ১৯৮৪

গোহাঁই, ঙি পে থৌন (সম্পা). *নাতিলৈ ককাদেউতাৰ উপদেশ,* পয় ফাউণ্ডেচন, নাহৰকটীয়া, ২০২০

চৌধুৰী, সুৱাসনা আৰু বুজবৰুৱা, পল্লৱী ডেকা, (সম্প্রা.) *অসমৰ জনগোষ্ঠীয় লোক-সাহিত্য,* অসমীয়া বিভাগ, ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, মার্চ, ২০০৯

বৰুৱা, ভীমকান্ত. *অসমৰ ভাষা,* বনলতা, ডিব্রুগড়, প্রথম প্রকাশ, ১

বৰুৱা, বিৰিঞ্চি কুমাৰ. *অসমৰ লোকসংস্কৃতি,* বীণা লাইব্রেৰী, অষ্টম প্রকাশ, ২০০৫

ৰেইংকেন, ঙিয়ত. *হৌকং উপত্যকাৰ পৰা নামফাকে গাঁৱলৈ,* নাহৰকটীয়া, টাই-ফাকে প্রকাশন পৰিষদ, ২০০৪

শর্মা, নবীনচন্দ্র. *লোক সংস্কৃতি,* চন্দ্র প্রকাশ, গুৱাহাটী, পৰিবর্দ্ধিত আৰু পৰিশোধিত সংস্কৰণ, ২০১৩

শর্মা, শশী. *অসমৰ লোকসাহিত্য,* ষ্টুডেন্টচ ষ্টৰচ, কলেজ হোষ্টেল ৰোড, গুৱাহাটী, প্রথম প্রকাশ, ফেব্রুৱাৰী ১৯৯৩

ইংৰাজী গ্রন্থ ঃ

Dorsan, Richard M. *Folklorie and Folklife an Introduction,* Chicogo and London, The University of Chicago Press, 1982

Lynne S. Iveill. *Folklore Rules*, Utah State University Press, 2013

Simon J. Bronner(ed.).*The Meaning of Folklore-The Analytical Essays of Alan Dundes*, Utah State University Press 2007

বাংলা গ্রন্থ ঃ

ইসলাম, শেখ মকবুল. *লোকসংস্কৃতি বিজ্ঞান তত্ব, পদ্ধতি ও প্রয়োগ,* বঙ্গীয় সাহিত্য পরিষদ, কলকাতা, ২০১৩

সনৎ কুমার (সম্পা.) *লোকসংস্কৃতি চর্চার মেথডলজি*, পুস্তক বিপণি, ২০০৭

নায়ক, জীবেশ. *লোকসংস্কাতি বিদ্যা ও লোকসাহিত্য,* দেবাশিষ ভট্টাচার্য বঙ্গীয় সাহিত্য সংসদ, কলকাতা ২০১০

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

লিম্বু জনগোষ্ঠীৰ বিবাহ পদ্ধতি ঃ এক চমু আলোচনা

মায়া দেৱী চুব্বা
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত
বিশ্ববিদ্যালয় খানাপাৰা, গুৱাহাটী
৮১৩৪৯৭৭৫৮৮
devimayasubba1994@gmail.com

ড° নিভা ৰাণী ফুকন
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত
বিশ্ববিদ্যালয়,খানাপাৰা, গুৱাহাটী
৯৩৬৫২৩১১৮১
neevarani11@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

জন্ম আৰু মৃত্যুৰ দৰে বিবাহো মানৱ জাতিৰ এক প্ৰধান সংস্কাৰ। এই সংস্কাৰৰ জৰিয়তে পৈণত নৰ-নাৰীৰ মাজত বিধিগত প্ৰক্ৰিয়াৰে শুভমিলন ঘটোৱা হয়।এনে মিলনৰ মূলতঃ আমি জৈৱিক আৰু বংশ বিস্তাৰৰ উদ্দেশ্য জড়িত হোৱা দেখা পাওঁ। যি নহওঁক পৃথিৱীৰ সকলো জাতি-জনগোষ্ঠীৰ বিবাহ সম্পৰ্কে নিজস্ব পৰম্পৰা আৰু বিশ্বাস দেখিবলৈ পোৱা যায়। লিম্বুসকলো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। নৃতাত্ত্বিক ফালৰ পৰা মংগোলীয় আৰু ভাষাতাত্ত্বিক দিশৰ পৰা চীন-তিব্বতীয় শাখাৰ হিমালয়ী উপশাখাৰ অন্তৰ্গত লিম্বুসকল মূলত 'য়ুমা' ধৰ্মীয় লোক। মৌখিক ভাৱে প্ৰচলিত ধৰ্মীয় শাস্ত্ৰ 'মুন্ধুম' এওঁলোকৰ দৈনন্দিন জীৱন-যাপনৰ দিক নিদৰ্শক। মুন্ধুমত বিশ্বব্ৰহ্মাণ্ডৰ পৰা আদি কৰি লিম্বুসকলৰ উৎপত্তি, ৰীতি-নীতি, পৰম্পৰা, ধৰ্মীয় বিশ্বাস, আচাৰ-ব্যৱহাৰ ইত্যাদি সম্পৰ্কে বৰ্ণিত আছে। এই মুন্ধুম অনুসৰি লিম্বুসকলৰ বিবাহৰ লগত জড়িত পৰম্পৰা কেনেধৰণৰ, বৰ্তমানসময়তো সেই পৰম্পৰা ৰক্ষিত হৈছে নে নাই সেই সম্পৰ্কে এই আলোচনাত আলোকপাত কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ

লিম্বু জনগোষ্ঠী, মেকখিম/মেকহিম, ইঙ্মিবা/·ইঙমেবা/ ইঙ্মিতাংবা।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ সমন্বয়ভূমি অসমৰ এক প্ৰাচীন জনগোষ্ঠী হৈছে লিম্বু বা য়াক্থুঙ সকল। অসমৰ অন্যান্য জাতি-জনগোষ্ঠীৰ দৰে লিম্বুসকলো এই ভূ-খণ্ডৰ এক অপৰিহাৰ্য অংগ। এই ভূ-খণ্ডত বসবাস কৰা আন আন জনগোষ্ঠীৰ দৰে লিম্বুসকলৰো স্বকীয় সমাজ-সাংস্কৃতিক বৈশিষ্ট বিদ্যমান। এই স্বকীয়তা আমি তেওঁলোকৰ ভাষা, ৰীতি-নীতি, নৃত্য-গীত, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, উৎসৱ-পাৰ্বণ, সাজপাৰ, খাদ্যাভ্যাস আদিৰ জৰিয়তে দেখা পাওঁ।

লিম্বুসকলে নিজকে "য়াকথুঙ/য়াকথুম" ৰূপে পৰিচয় দিয়ে। প্ৰচলিত মত অনুসৰি 'য়াক' মানে পাহাৰ, 'থুম' মানে থকা ঠাই।[১]অৰ্থাৎ পাহাৰীয়া ঠাইত বসবাস কৰা মানুহ। 'লিম্বু' শব্দটো কেতিয়াৰ পৰা ব্যৱহাৰ হৈছিল সেই সম্পৰ্কে কোনো সঠিক তথ্য পোৱা নাযায় যদিও প্ৰচলিত মত অনুযায়ি এওঁলোক ধনু বিদ্যাতো পাৰ্গত আছিল। যুদ্ধত তেওঁলোকে শত্ৰুপক্ষক ধেনুৰেই হৰুৱাই বসবাস কৰা ঠাইডোখৰ জয়ী হোৱাৰ বাবে এওঁলোক বাস কৰা ঠাইডোখৰ 'লিম্বুৱান' (লিম্বু ভাষাত 'লি' মানে ধনু, 'আবু'

মানে মৰা/মাৰি পঠিওৱা, 'ৱান' মানে ঠাই বিশেষ)[২] নাম হয় আৰু ইয়াত বসবাস কৰা লোকসকল লিম্বু ৰূপে পৰিচিত হ'ব ধৰে। ইয়াৰ উপৰিও এওঁলোক চিকিমত তছংঙ (Tsong/Chong) বুলিও জনা যায়।[৩] বৰ্তমান সময়ত বহুতো লিম্বুসকলে চুব্বা (Subba) উপাধিও লিখা দেখা যায়। অৱশ্যে এইটো এটা পদবীহে আছিল যিটো গাৱঁৰ মুৰব্বীজনক (Village Chief) বুজাবলৈ গোৰ্খা ৰজাৰ দ্বাৰা প্রদান কৰা হৈছিল।[৪] পৰৱৰ্তী সময় মানুহে ইয়াক সামাজিক মর্যদা ৰূপে জ্ঞান কৰি উপাধিৰ দৰে ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ ল'লে।

০.১ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

অসম তথা পৃথিৱীৰ অন্যান্য ঠাইত বসবাস কৰা লিম্বুসকল এক স্বকীয় বর্ণময় লোকজীৱনৰ অধিকাৰী। অসমৰ অন্যান্য জনগোষ্ঠীৰ দৰে লিম্বুসকলৰো নিজস্ব কৃষ্টি-সংস্কৃতি বিদ্যমান যদিও তেওঁলোকৰ সমাজ তথা সংস্কৃতিক সম্পর্কে বর্তমানলৈকে কোনো ধৰণৰ বিজ্ঞানসম্মত অধ্যয়ন হোৱা নাই। গতিকে এই দিশটোৰ প্রতি লক্ষ্য ৰাখি আমাৰ এই গৱেষণা পত্রৰ গুৰুত্ব আছে বুলি ক'ব পাৰি। সেইদৰে লিম্বুজনগোষ্ঠী বিবাহৰ ক্ষেত্রত আন আন জাতি-জনগোষ্ঠীতকৈ কেনেকৈ পৃথক,বিবাহৰ প্রকাৰ আৰু পৰম্পৰা তথা বর্তমান সময়ত অহা পৰিৱর্তনসমূহ পোহৰলৈ অনাই হৈছে আমাৰ এই গৱেষণা পত্রৰ উদ্দেশ্য।

০.২ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

লিম্বুসকলৰ বিভিন্ন ৰীতি-নীতি, উৎসৱ-অনুষ্ঠান, লোকবিশ্বাস, ধর্মীয় পৰম্পৰা ইত্যাদি দিশতো বিজ্ঞানসম্মত অধ্যয়নৰ থল আছে যদিও আমাৰ আলোচনাত গৱেষণাৰ পৰিসৰৰ প্রতি লক্ষ্য ৰাখি কেৱল বিবাহ, বিবাহৰ প্রকাৰ আৰু বিবাহৰ লগত জড়িত বিভিন্ন দিশসমূহ অন্তর্ভুক্ত কৰা হৈছে।

০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

'লিম্বু জনগোষ্ঠীৰ বিবাহ পদ্ধতি' শীর্ষক বিষয়টি অধ্যয়নৰ বাবে মুখ্য আৰু গৌণ দুয়োটা উৎসৰ সহায় লোৱা হৈছে। মুখ্য উৎস ৰূপে ক্ষেত্র অধ্যয়নক গুৰুত্ব প্রদান কৰা হৈছে। ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ সময়ত শোণিতপুৰ জিলাৰ গংগাপুৰ গাওঁ, ধেমাজিৰ জিলাৰ ফুলবাৰী গাওঁ, গোলাঘাট জিলাৰ মাটিখোলা গাওঁত অনুষ্ঠিত বিবাহ কার্যত অংশগ্রহণ কৰি পোৱা তথ্যসমূহক বিশ্লেষণ কৰা হৈছে। তথ্য সংগ্রহ কৰোঁতে পর্যবেক্ষণ পদ্ধতিৰ লগতে উপস্থিত বিবাহ কার্যৰ লগত জড়িত ব্যক্তি 'ফেদেংমা বা পুৰোহিত' আৰু এই সম্পর্কে জ্ঞান থকা অন্যান্য লোকসকলৰ পৰা সমল সংগ্রহ কৰা হৈছে। গৌণ উৎস ৰূপে বিভিন্ন গ্রন্থ আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে। এই তথ্যসমূহৰ বিশ্লেষণৰ ক্ষেত্রত বিশ্লেষণাত্মক আৰু বর্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ অৱলম্বন কৰা হৈছে।

১.০ মূল আলোচনা ঃ

য়াকথুঙ্ পান অর্থাৎ লিম্বুভাষাত বিবাহক "মেক্খিম" (মেক্হিম) বোলা হয়। লিম্বু সমাজত বিবাহ কেইবা প্রকাৰৰো-সামাজিক প্রথা মতে কৰা বিবাহ, পলুৱাই নি কৰা বিবাহ, জুৰ-জুলুম কৰি কৰা বিবাহ, জাৰী বিবাহ, বিধৱা বিবাহ আদি। অৱশ্যে ইয়াৰে সামাজিক প্রথা ম'তে কৰা বিবাহত (Arranged marriage) লিম্বু বিবাহৰ সম্পূর্ণ নিয়ম সন্নিৱিষ্ট হয় বাবে ইয়াকে মান্য আৰু মর্যদাপূর্ণ বিবাহ ৰূপে গণ্য কৰা হয়।[৫]

১.০১ নাক মেক্খিম (সামাজিক প্রথা মতে কৰা বিবাহ) ঃ

লিম্বু সমাজত 'নাক মেক্খিম' অর্থাৎ সামাজিক প্রথা মতে কৰাই অনা বিবাহক বুজায় । এনে বিবাহত সাধাৰণতে ল'ৰা ঘৰৰ ফালৰ পৰা ছোৱালীৰ ঘৰলৈ বিয়াৰ প্রস্তাৱ পঠিওৱা হয়। ছোৱালীৰ ঘৰৰ মানুহে সকলো ফালৰ পৰা বিচাৰ বিবেচনা কৰি ছোৱালীজনীৰো মত সাপেক্ষে দৰা পক্ষৰ লোকক তেওঁলোকৰ ঘৰলৈ মাতি পঠিয়ায়। এইদৰে দুয়োপক্ষৰ মাজত কথা-বতৰা পাতি সম্পূর্ণ পৰম্পৰাগত নীতি-নিয়মেৰে কৰা বিবাহ কার্যকে নাক মেকখিম বোলে।

১.০২ সুনাঃইঊসেঃলুৱা মেকখিম পলুৱাই আনি কৰা বিবাহ ঃ

অন্যান্য সমাজৰ দৰে লিম্বু সমাজতো প্রেম-প্রণয়ৰ জৰিয়তে ডেকা-গাভৰুৱে ঘৰৰ অজ্ঞাতে পলাই গৈ বিবাহ সম্পন্ন কৰি দাম্পত্য জীৱনৰ পাতনি মেলে। এনে বিবাহকে সুনাঃই/সেঃলুৱা/সেঃলুক্পা বিবাহ বোলে। সাধাৰণতে ছোৱালীৰ মাক-দেউতাকে যদি কিবা কাৰণবশতঃ ছোৱালী বিয়া দিব নোখোজে, তেতিয়া ল'ৰাই ছোৱালীক পলুৱাই নি মনে মনে বিয়া পাতে।

১.০৩ খুত মেক্খিম (জুৰ-জুলুমকৈ আনি কৰা বিবাহ) ঃ

অতীজত লিম্বুসমাজত কোনো যুৱকক তেওঁৰ ভালপোৱা যুৱতী গৰাকীয়ে যদি সঁহাৰি নিদিয়ে তেতিয়া যুৱতীগৰাকীৰ সম্মতি অবিহনে বলপূর্বকভাৱে টানি আনি

যুৱকৰ ঘৰ সোমোৱা হৈছিল। এনে বিবাহক লিম্বু ভাষাত খুত মেক্‌খিম বোলা হয়। অৱশ্যে বৰ্তমান সময়ত শিক্ষাৰ প্ৰভাৱে হওঁক বা অন্যান্য কাৰণতে হওঁক এনে বিবাহ দেখা নাযায়।

১.০৪ নাপ মেক্‌খিম (জাৰী বিবাহ) ঃ

বেলেগৰ পত্নীক পলুৱাই নি কৰোঁৱা বিবাহক লিম্বুসকলে নাপ মেক্‌খিম বা জাৰী বিবাহ বোলে। এনে বিয়াত কোনো পুৰুষে বেলেগ এজন পুৰুষৰ পত্নীৰ সৈতে প্ৰেমত লিপ্ত হৈ তেওঁ গম নোপোৱাকে যদি বিবাহ কৰায় তেন্তে মহিলাগৰাকীৰ প্ৰথম স্বামীক মহিলাগৰাকীক বিবাহ কৰাওঁতে হোৱা খৰচখিনি এই দ্বিতীয়জন স্বামীয়ে ঘূৰাই দিয়ে বা দিব লাগে। কিবা কাৰণত যদি দ্বিতীয়জন স্বামীয়ে পত্নীৰ প্ৰথমজন স্বামীক বিয়াত খৰচ কৰা ধনখিনি ঘূৰাই দিব নোৱাৰে তেন্তে মহিলাগৰাকীৰ মাক-বাপেক বা পৰিয়ালবৰ্গই ঘূৰাই দিয়াটো বাধ্যতামূলক। এই নিয়মটোক জাৰী বোলা হয়। সেয়ে ইয়াক জাৰী বিবাহ বোলা হয়।

১.০৫ মিমেদুমা মেক্‌খিম (বিধৱা বিবাহ) ঃ

সাধাৰণতে লিম্বুসমাজত নাৰীৰ এক উচ্চ আসন দেখিবলৈ পোৱা যায়। বিবাহৰ ক্ষেত্ৰত যদি চাওঁ পুৰুষ আৰু নাৰী দুয়োকে সম অধিকাৰ প্ৰদান কৰা হৈছে। পুৰুষে বহু বিবাহ কৰাৰ দৰে নাৰীয়েও ইচ্ছা কৰিলে বহু বিবাহ কৰাব পাৰে। সেইদৰে পত্নীৰ মৃত্যুৰ পিছত স্বামীয়ে পুনৰ বিবাহ কৰিব পৰাৰ দৰে পত্নীয়েও স্বামীৰ মৃত্যুৰ পিছত বিবাহ কৰাব পাৰে। এই ক্ষেত্ৰত কোনো ধৰণৰ প্ৰতিবন্ধকতা নাই। বৰঞ্চ পূৰ্বে ভিনীহিয়েকে খুলশালীক বিয়া কৰাব পৰাৰ দৰে বৌয়েকে দেৱৰেকৰ লগত বিবাহত বহিব পাৰে। ই সম্পূৰ্ণ ব্যক্তিগত ইচ্ছা।

২.০০ বিবাহৰ বিধি ঃ

বিবাহ সম্পৰ্কে প্ৰতিটো জনগোষ্ঠীৰ দৰে লিম্বুসকলৰো একোটি নিজা বিধি ব্যৱস্থা দেখা যায়। লিম্বুসকলৰ বিবাহত প্ৰধানকৈ ফৈদ বা গোত্ৰৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়া হয়। লিম্বু সমাজত সমগোত্ৰীয় মাজত বিবাহ কৰোৱাটো সম্পূৰ্ণ নিষিদ্ধ। আনকি লিম্বুসকলৰ মাজত পূৰ্বতে সাত পুস্তা অৰ্থাৎ সাত উপৰিপুৰুষৰ গোত্ৰ লৈকে মিল থকা সকলৰ মাজতো বৈবাহিক সম্বন্ধ স্থাপনৰ ক্ষেত্ৰত অতি কঠোৰভাৱে নিষিদ্ধতা আৰোপ কৰা হৈছিল। বৰ্তমান এই ক্ষেত্ৰত কিছু শিথিলতা অৱলম্বন কৰা দেখা যায়। সেইদৰে লিম্বু সমাজ ব্যৱস্থাত কোনো যুৱকে যদি নিজৰ জাতিৰ বাহিৰৰ অইন জাতিৰ ছোৱালী পলুৱাই আনে তেনেক্ষেত্ৰত প্ৰথমে ছোৱালীজনীক ৰাইজে নিৰ্বাচিত কৰি দিয়া বৈধ গোত্ৰৰ ব্যক্তি এজনক ছোৱালীজনীৰ ধৰ্মপিতৃ কৰি সেই গোত্ৰলৈ গোত্ৰান্তৰ কৰে, তাৰ পিছতহে বিবাহ কাৰ্য সম্পন্ন কৰা হয়।

সাধাৰণতে লিম্বু সমাজত ছোৱালী যেতিয়া বিবাহৰ যোগ্য হয়, তেতিয়া দৰাপক্ষৰ লোক ইঙ্মিবা/ইঙমেবা/ইঙ্মিতাংবা (চৰদাৰ) অৰ্থাৎ যি জনে কথাৰ আগ ধৰে তেওঁৰ সৈতে দুই-চাৰিজন ব্যক্তিক লগত লৈ ছোৱালীৰ ঘৰলৈ যায়। ছোৱালী চাব যাওঁতে দৰাঘৰে প্ৰথম বাৰত পৰম্পৰাগত ভাৱে 'থি' (মদ)ৰ বটল দুটা লগত লৈ যায়। চৰদাৰ জনে বিভিন্ন আলংকৰিক ভাষাৰে তেওঁলোক কি উদ্দেশ্যৰে তালৈ আহিছে সেয়া বৰ্ণনা কৰি বিয়াৰ প্ৰস্তাৱ আগবঢ়ায়। তাৰ পিছত দুয়োপক্ষৰ মাজত আলোচনা হয়। আলোচনাৰ অন্তত কইনা পক্ষৰ লোকে যদি তেওঁলোকক মিতিৰ পাতিবৰ যোগ্য বুলি ভাবে আৰু কইনাও যদি সন্মত হয় তেন্তে বিয়াৰ প্ৰস্তাৱ গ্ৰহণ কৰে। ইয়াৰ পিছত দৰাঘৰৰ পৰা লৈ যোৱা থি-ৰ বটলৰ লগত কেইপাহমান ফুল কইনাৰ ঘৰৰ লোকসকলক আগবঢ়াই দিয়া হয়। তাৰ পিছত দৰাই কইনাই গাত লৈ থকা কাপোৰত পইচা এটা বান্ধি দিয়ে। ইয়াক লিম্বু ভাষাত "লুঙয়াঙ" বোলে। অতীজ তে লিম্বু সমাজত আঙঠি পিন্ধোৱা নিয়ম নাছিল, এই লুঙয়াঙ ৰ জৰিয়তে বিবাহ থিৰাং কৰা হৈছিল।

লিম্বুসমাজত বিয়া কইনাৰ ঘৰত নহৈ দৰাৰ ঘৰতহে সম্পন্ন কৰা হয়। বিয়াৰ এই মাংগলিক কাৰ্যক তেওঁলোকে 'মেক্কাম' বা 'লগন' বোলে। সেয়ে বিয়াৰ বাবে ঠিক কৰা তাৰিখ বা দিনৰ ১/২ দিন আগত দৰা আৰু তেওঁৰ কেইজনমান বন্ধুৱে কইনাক আনিবলৈ যায়। সেইফালৰ পৰা কইনাক দৰা ঘৰলৈ থবলৈ বুলি কইনাৰ পেহী, মামী, খুৰী, ককায়েক, ভায়েক, বায়েক-ভনীয়েক, বন্ধু-বান্ধৱ সকলো (কেৱল মাক-বাপেকক বাদ দি) আহে। কইনাৰ লগত কইনাৰ ভায়েক বা ককায়েক অহাটো বাধ্যতামূলক। তেওঁলোকক লিম্বু ভাষাত 'মাইতী' বোলা হয়। আনহাতে ছোৱালী থবলৈ অহা অন্য লোকসকলক মেক্কচামা/ মেঃচামা কোৱা হয়। মনকৰিবলগীয়া কথা যে অন্যান্য জাতি-জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলৰ বিয়াত দৰা আৰু দৰাঘৰৰ লোকসকলক আপ্যায়ন ধৰা ৰীতিৰ বিপৰীতে লিম্বু সমাজত কইনা ঘৰৰ মানুহকহে আদৰি আনি আতিথ্য

আগবঢ়োৱা হয়। এওঁলোকৰ বাবে দৰা ঘৰ সোমোৱাৰ আগতেই এডোখৰ ঠাইত চাহ, জলপান, তামোল-পাণ, মদ আদিৰে আপ্যায়ন কৰা হয়,যাক লাম্লক্সা বোলে। ইয়াৰ লগতে তাতে তেওঁলোকক স্বাগত তথা সন্মান জনাই ছাগলী এটা আগবঢ়াই মান ধৰা নিয়ম আছে। লিম্বু ভাষাত ইয়াক 'লাম্ল' ফুদুং' বুলি কোৱা হয়। দৰাঘৰ গৈ পোৱা পূর্বে কইনা পক্ষৰ লোকক মান ধৰি তেওঁলোকৰ বিশ্রামৰ বাবে ঠিক কৰি ৰখা 'ডেৰা' ঘৰলৈ আদৰি লৈ যোৱা হয়। তাতো তেওঁলোকক তংবা, থি আৰু পইচা (সাধ্য বা ইচ্ছা অনুযায়ী) আগবঢ়াই আসন গ্রহণ কৰিবলৈ অনুৰোধ জনাব লাগে। তাৰ পিছতহে কইনা পক্ষৰ লোকে তাত বহে। সেইদৰে তাৰ পৰা আকৌ উঠোতেও একে ধৰণৰ সামগ্রীৰে মান ধৰি উঠিবলৈ অনুৰোধ জনোৱা হয়। ইয়াতে উল্লেখ কৰিব লাগিব যে, পূর্বতে লিম্বুসমাজত বন্দুক ফুটুৱা পৰম্পৰা আছিল, বিয়াত কইনা আনিবলৈ যোৱাৰ পৰা কইনা পক্ষৰ লোকক মান ধৰা সকলো সৰু-ডাঙৰ অনুষ্ঠানত বন্দুক ফুটুৱা হৈছিল। একেদৰে কাৰোবাৰ মৃত্যু হ'লেও বন্দুক ফুটাই দূৰত থকা আত্মীয় লোকক জনোৱা হৈছিল বুলি প্রচলন আছে।

লিম্বু বিয়াৰ আটাইতকৈ গুৰুত্বপূর্ণ অনুষ্ঠানটো হৈছে মেক্কাম বা লগন, ইয়াৰ অবিহনে কোনো বিবাহ সম্পূর্ণ হ'ব নোৱাৰে। মেক্কাম সাধাৰণতে লিম্বুসকলৰ পুৰোহিত ফেদেংমা, চাম্বা বা মেক্কাম বিধি সম্পর্কে সম্পূর্ণ জ্ঞান থকা তুম্যাহাং অর্থাৎ বয়োজ্যেষ্ঠ লোকসকলেহে সম্পন্ন কৰিব পাৰে। মেক্কামৰ বাবে প্রথমে দৰাপক্ষৰ লোকে কইনা পক্ষৰ লোক জিৰণি লোৱা ডেৰালৈ গৈ থি আৰু য়াঙ (মদ আৰু পইচা) আগবঢ়াই মেক্কাম বিধিৰ বাবে কইনাৰ লগতে সকলোকে সাজু হ'বলৈ অনুৰোধ জনায়, লগতে কইনা বাবে লোৱা সাজ-পাৰখিনি দিয়া হয়। যিহেতু আ-অলংকাৰসমূহ দুয়োৰ মাজত বিয়া ঠিক হওঁতেই "লুঙয়াঙ"ৰ লগত 'সোণৌলী-ৰুপৌলী' ৰূপে দিয়া হয় গতিকে সেইখিনি কইনাই ঘৰৰ পৰা আহোঁতে পৰিধান কৰি আহে। উল্লেখযোগ্য যে লিম্বুসমাজত অতীততে ছোৱালীৰ ঘৰৰ মানুহে দৰা ঘৰৰ মানুহক বিয়া ঠিক কৰোঁতে নিজ ইচ্ছাৰে সোণ-ৰূপ, টকাৰ দাবী কৰিব পাৰিছিল বা কৰিছিল আৰু দৰা পক্ষৰ লোকে সেয়া পূৰণো কৰিছিল। বহুতে ইয়াক গা-ধন লোৱা পৰম্পৰা বুলি ক'ব খোজে, কিন্তু মনকৰিবলগীয়া কথা যে,সেই সা-সামগ্রীসমূহ কইনাকে পিন্ধাই দৰা ঘৰলৈকে দি পঠিয়াই দিয়া হৈছিল। সেয়ে লিম্বু লোক সকলে ই তেওঁলোকৰ পুত্রী বা ভগ্নীৰ ভৱিষ্যত সুৰক্ষিত কৰাৰ এটা আৰ্হি বুলিহে কয়। অৱশ্যে শিক্ষাৰ প্রভাৱ বা সময়ৰ পৰিৱর্তন যি কাৰণেই নহওঁক কিয় বর্তমান সময়ত তেনেধৰণৰ দাবী কৰা দেখা নাযায়। দৰা পক্ষই নিজৰ ইচ্ছা তথা সামর্থ অনুযায়ি দি পৰম্পৰাসমূহ মানি চলা পৰিলক্ষিত হয়। আন আন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ বিয়াত দৰাৰ লগত সখী থকাৰ দৰে লিম্বু বিয়াত দৰা আৰু কইনাৰ সৈতে তেওঁলোকৰ সম্পর্কীয় ভাইটি তথা ভন্টী থাকে। দৰাৰ লগত থকা ভাইটিক 'লকন্দা' আনহাতে কইনাৰ লগত থকা ভন্টীক 'লকন্দী' বোলা হয়।

মেক্কাম বিধি কৰোঁতে ডলা এখনত কলপাত, এযোৰ চাকি, ঘটি, দূবৰিবন, ধেনু, ৰূপৰ মুদ্রা, খুকুৰী, এযোৰ কুকুৰা (এটা মতা আৰু এজনী মাইকী), আঠ টুকুৰা গাহৰী মাংস, তংবা (পৰম্পৰাগত মদ), চেচেফুঙ্ (সেন্দুৰ), পাঙ্মুদিং (সেউজীয়া মণিৰ মালা যিডাল বিবাহিতা মহিলাই পিন্ধে) আদিৰ লগতে বাটি এটাত পানী ৰখা হয়। তাতে গোবৰেৰে মুচি ঠিক কৰা ঠাই এডোখৰত দৰা আৰু কইনাক বহিব দিয়া হয়। সাধাৰণতে সোঁফালে দৰা আৰু বাওঁফালে কইনাক বহিব দিয়ে। বহোতে কইনাৰ আঁঠুৰ ওপৰত দৰাৰ আঁঠু ৰখাৰ নিয়ম আছে। সেইদৰে দৰাৰ সোঁ হাতৰ ওপৰত কইনাৰ সোঁ হাতখন ৰাখি তাৰ ওপৰত ৰূপৰ বা যিকোনো মুদ্রা এটা থৈ ফেদেংমাজনে তেওঁলোকৰ মুন্ধুম গাই দাম্পত্য জীৱন সুখ সমৃদ্ধিৰ বাবে আশীর্বাদ দিয়ে। এনে কৰোতে পুৰোহিত বা তুম্যাহাং গৰাকীয়ে প্রথমে কেনেকৈ এই বিশ্ব ব্রহ্মাণ্ড, ইয়াত বসবাস কৰা জীৱ-জন্তু, চৰাই-চিৰিকটি ইত্যাদি তেওঁলোকৰ উপাস্য দেৱী তাগেৰা নিংৰাফু — ই সৃষ্টি কৰিলে আৰু কেনেদৰে মানুহৰ মানসিক বিকাশ ঘটে আৰু বিয়া আদিৰ সৃষ্টি হয় তাৰ লগতে প্রথমজন পুৰুষ আৰু মহিলাই কিদৰে লগন (বিয়া) কৰি একলগে বসবাস কৰিব লয় সেই সম্পর্কে বর্ণনা কৰি যায়। তাৰ পিছত তাত উপস্থিত থকা সকলো লোকক সম্বোধন কৰি কয় — "আজি অমুকৰ পুতেকে অমুকৰ জীয়েকক ৰূপ, গুণ যেনেধৰণ আছে তেনেধৰণেই সকলোকে সাক্ষী কৰি লিম্বুৱান ৰীতি তথা স-সন্মানেৰে নিজৰ পত্নীৰূপে গ্রহণ কৰিছে। ভৱিষ্যতে যদি তেওঁলোকৰ মাজত কিবা সমস্যা হয়, ৰোগ আদিৰে ভাৰাক্রান্ত হয় অথবা সন্তান সুখৰ পৰা বঞ্চিত হয় তেতিয়াও কিন্তু আজি যেনেকৈ মান-সন্মানেৰে আকোঁৱালিছে সেই একে ধৰণে মান-সন্মান জনাব লাগিব।"[৬] তাৰ পিছত দৰা পক্ষৰ লোকক সম্বোধন কৰি সোধে-"মান-সন্মান জনাব নে নজনায়?" তেতিয়া দৰা তথা

দৰা পক্ষৰ লোকে জনাম জনাম বুলি একেলগে হয় ভৰ দিয়ে। তাৰ পিছত দৰা আৰু কইনাই লৈ থোৱা কুকুৰাকেইটা সাল-সলনি কৰাই খুকুৰীৰে সিহঁতৰ মূৰত মাৰি মুখেৰে ওলোৱা তেজখিনি কলপাত পৰিব দি তাত তেওঁলোকৰ বাছনি চোৱা চায়। মুন্ধুমত সেন্দুৰ আৰু প'তে ৰ বিষয়ে উল্লেখ পোৱা নাযায় বুলি লিম্বু মুন্ধুমবিদ সকলে কয়। ই কেতিয়া, কেনেকৈ লিম্বুসকলৰ লগনত ব্যৱহাৰ হ'ব লয় সেয়াও দুৰ্বোধ্য। সেয়া হ'লেও লিম্বুসকলৰ মাজত ইয়াৰ ব্যৱহাৰ অতীজৰে পৰা প্ৰচলিত। সেয়ে কোনোৱে লগনৰ আৰম্ভণিতে, আন কোনোৱে লগনৰ সময়ত সেন্দুৰ আৰু প'তে কইনাক লগাই দিয়ে। এনেদৰে ফেদেংমাজনে শেষত দুয়োৰে জীৱন সুখময় হৈ সফল তথা দীৰ্ঘজীৱি হোৱাৰ আশীৰ্বাদ দি কু-দৃষ্টিৰ পৰা আঁতৰাই ৰাখিবলৈ মুন্ধুমৰ জৰিয়তে দেৱীক প্ৰাৰ্থনা জনায়। তাৰ পিছত দৰাই হাতত লৈ থকা সেই মুদ্ৰাটো কইনাই পিন্ধি থকা কাপোৰত বান্ধি দিয়ে। শেষত পাত্ৰত থোৱা মাংস আৰু তংবা অলপকৈ প্ৰথমে দৰাক খুৱাই দি কইনাক খাব দিয়া হয়। তাত উপস্থিত থকা কোনো লোকে বন্দুক ফুটাই বিবাহ সম্পন্ন হোৱা বুজায়। লগে লগে বাহিৰত চ্যেব্ৰোং নৃত্য কৰা সকল ভিতৰলৈ সোমাই আহি নাচিব লয়। এইদৰে তাত উপস্থিত থকা সকলোলোকে পৰম্পৰাগত হাক্পাৰে গীত আৰু চ্যেব্ৰোং নৃত্য কৰি ফূৰ্তি কৰে।

লিম্বুসকলৰ বিবাহ কাৰ্য ইয়াতে সমাপ্তি নঘটে। পিছদিনা কইনাৰ লগত অহা লোকক থবলৈ বুলি দৰা পক্ষৰ ফালৰ পৰা চৰদাৰ আৰু কেইজনমান ব্যক্তি যায়। উল্লেখযোগ্য যে ,লিম্বুসকলৰ পৰম্পৰা অনুযায়ি বিয়াৰ পিছদিনাই দৰা পক্ষৰ ফালৰ পৰা কইনাৰ ঘৰলৈ মান, উপহাৰ তথা বিয়াৰ প্ৰমাণ ৰূপে মদ, মাংস আৰু পইচা লৈ যোৱা নিয়ম আছে। ইয়াক 'হক্তক্কা' বা "ইঙ্মে" বিধি বুলি কোৱা হয়। কোনো কোনো লোকে আজি-কালি ইয়াক 'চাৰ কলম' (Char kalam) বুলিও কয়। চাৰ কলম কোৱাৰ কাৰণ এইটো যে বিয়াৰ এই অনুষ্ঠানলৈকে আহি পাওঁতে দৰাঘৰৰ লোকে তিনিটা পৰ্যায় পাৰ হৈ আহিব লাগে- প্ৰথমতে, লাঙয়াঙ দি বিয়া ঠিক কৰা নাকসিঙ্মা, দ্বিতীয়তে, কইনাক দৰাঘৰ সোমোৱা তেন্ধাম মেখিম, তৃতীয়তে, বিয়া মেক্কাম চোক্মা আৰু চতুৰ্থ পৰ্যায় হক্তক্কা তোক্মা যাক ৰীত বুজুৰা বুলিও কোৱা হয়। সেয়ে এই ৰীতিটো চাৰ কলম ৰূপে বেছি প্ৰচলিত। ইঙমে দিব যাওঁতে চৰদাৰজনে প্ৰথমে কইনাৰ ঘৰত আশ্ৰয় বিচাৰিব লাগে। তাৰ পিছত কইনা পক্ষৰ লোকে অনুমতি প্ৰদান কৰাৰ বাবে তেওঁলোকক এক বটল মদ আৰু টকা এটা আগবঢ়াই মান ধৰে। ঠাইভেদে ইয়াক ডেৰা নাক্পা/য়েন থোঃক্মা/চেঙ্ঘা নাক্মা/চাম্বোক লিম্বোক থোঃক্মা আদি কোৱা হয়। ইয়াৰ পিছত ইঙ্মেবা বা চৰদাৰজনে দৰাঘৰৰ পৰা যি আনিছে সেয়া আগ বঢ়াবলৈ অনুমতি বিচাৰি পুনৰ এক বটল মদ আৰু কিছু টকা কইনা ঘৰৰ লোকক আগবঢ়ায়, ইয়াক পাঃন্ তক্মা /পাঃন্ চাক্মা বোলে। তাৰ পিছত দৰাঘৰৰ ফালৰ পৰা পঠিওৱা এটা গাহৰী, একলহ মদ আৰু পইছা (চেৰা য়াঙ্) আগবঢ়োৱা হয়। এই ৰীতি সুভাছা/সুভায়ক্ সুঙ/সুভাখসা আদি নামেৰে জনা যায়।

কোনো কোনো ঠাইত এই বিধি কৰোঁতে দৰা-কইনা ও লগতে যায়। তেতিয়া দৰাক কইনা পক্ষৰ লোকে আত্মীয় লোকসকলক চিনাকি কৰাওঁতে সম্বন্ধত ডাঙৰ ব্যক্তিসকলক সেৱা কৰাই যায়। সেই সেৱা কৰোঁতেই ৫/১০/১০০ নিজৰ ইচ্ছা আৰু সামর্থ অনুযায়ী যিমান পাৰে সিমান পইছা মান ধৰি সেৱা কৰা হয়। যদি দৰা-কইনা লগত নাযায় তেতিয়া চৰদাৰজনে টকাখিনি কইনা পক্ষৰ লোকক অর্পণ কৰে। তাৰ পিছত চাৰি বটল মদ, কাপোৰ-কানি আৰু কিছু টকা কইনাৰ মাক-দেউতাক আৰু পেহীৰ নামত আগবঢ়োৱা হয়। এইয়া কইনাক ১০ মাহ গর্ভত ৰাখি, জন্ম দিয়া বাবে মাকক 'মা খোস', দেউতাক তুলি-তালি ডাঙৰ-দীঘল কৰাৰ বাবে 'পা খোসা' আৰু পেহীয়ে কর্মত নিপুণ কৰি তোলাৰ বাবে 'নিয়া খোসা' আগবঢ়োৱা হয়। এক বটল মদ আৰু কেইটকামান কইনাৰ ককায়েক/ ভায়েকক কইনাক সুৰক্ষিতে দৰা ঘৰলৈ থ'ব অহাৰ বাবে আগবঢ়োৱাৰ দৰে কইনাক থ'ব যোৱাত সহায় কৰাৰ বাবে বাকী লোকসকলক সম্বোধন কৰি ছাগলীৰ ঠেং ফালৰ এটা অংশ আৰু মদ আগবঢ়োৱা হয়। ইয়াৰ পিছত পুনৰ চাৰি বটল মদ আৰু ম'হ/গাহৰী/ ছাগলী দৰা ঘৰত বিয়াত যি কাটিছিল তাৰো ঠেং ফালৰ এটা অংশ কইনা পক্ষৰ লোকক বিয়াৰ প্রমাণ স্বৰূপে আগবঢ়োৱা হয়। শেষত বিবাহ ৰীতি-নীতি পালন কৰোঁতে বা কইনা ঘৰত পালন কৰিবলগীয়া নীতি-নিয়মত যদি কিবা ভুল-ভ্রান্তি হৈছে তাৰ বাবে ক্ষমা বিচাৰি মদৰ বটল এটা আৰু কেইটকামান থৈ প্রস্থানৰ বাবে অনুমতি বিচাৰে। চৰদাৰজনক বিদায় দিওঁতে কইনাঘৰৰ ফালৰ পৰাও দৰা ঘৰৰ লোকলৈ ছাগলী মাৰি তাৰ ঠেংৰ সৈতে লাগি থকা এফাল দি পঠিওঁৱা হয়। ইয়াক হাপ্চক্যা (Hapchokya) বা ৰুঞ্চে (Runche) ফিলা বোলে। এইদৰে এক দীর্ঘ প্রক্রিয়াৰ মাজেৰে লিম্বু জনগোষ্ঠীৰ বিবাহ কার্য সম্পন্ন হয়।

বিবাহৰ প্রকাৰ অনুযায়ী কিছু পার্থক্য দেখা যায় । যেনে- পলুৱাই আনি কৰা অথবা বাকী বিবাহৰ ক্ষেত্রত নীতি-নিয়মটো ইমান দীঘল নহয়। দৰাই কইনাক পলুৱাই আনি বা অনুমতি বিচাৰি ঘৰ সোমোৱাৰ পিছত দুয়োৰে লগন (বিয়া) কৰাই দিয়া হয়। তাৰ পিছত দৰাপক্ষৰ লোক চৰদাৰ এজনক লগত লৈ ওপৰত উল্লেখ কৰা সা-সামগ্রীখিনি দি থয় আহে। বর্তমান সময়ত এনে ৰীতিৰ প্রচলন বাৰুকৈ দেখা যায়। ইয়াৰ মূলতঃ আমি দুটা কাৰণ দেখিবলৈ পাওঁ - প্রথম, সময়ৰ অভাৱ; দ্বিতীয়তে অর্থৰ অভাৱ। ওপৰৰ বর্ণনাৰ দ্বাৰাই অনুমান কৰিব পাৰি যে লিম্বুসকলৰ বিয়াৰ নীতি-নিয়ম কিমান দীঘল আৰু ব্যয়বহুল। সেইবাবে বহুতে তাৰ উদাহৰণস্বৰূপে- বিয়া ঠিক কৰাওঁতে দৰাই কইনাৰ কাপোৰত মুদ্রা এটা বান্ধি দিয়াৰ বিপৰীতে কোনো কোনো লোকে আজি-কালি আঙঠি পিন্ধোৱা দেখা যায়। সেইদৰে হোম পুৰি বিবাহ কৰা কার্যও সহজে অনুমেয়। কিন্তু এটা কথা উল্লেখযোগ্য যে এই পৰিৱর্তনসমূহ আমি লিম্বুসকলৰ জনবসতি কম থকা বা অন্যান্য জাতি-জনগোষ্ঠীৰ মাজত বসবাস কৰা লিম্বুসকলৰ মাজতহে দেখিবলৈ পাওঁ।

লিম্বু জনসংখ্যা বেছি থকা ঠাই যেনে - তেজপুৰ, গোলাঘাট,তিনিচুকীয়া,শদিয়া, বিশ্বনাথ আদি জিলাত বসবাস কৰা লিম্বুসকলৰ মাজত বর্তমানেও বিবাহ অনুষ্ঠানৰ লগতে সকলো ধৰণৰ আচাৰ-অনুষ্ঠানৰ ক্ষেত্রক পৰম্পৰাগত প্রথাকে মানি চলা দেখা যায়। গতিকে এই ক্ষেত্রত জনসংখ্যা আৰু ভৌগলিক অৱস্থানে প্রভাৱ পেলাইছে বুলি ক'ব পাৰি।

সামৰণি ঃ

বর্তমান বিশ্বায়নৰ যুগত পৰিৱর্তন কেৱল স্বাভাৱিকেই নহয়, প্রয়োজনীয়ও। কিন্তু পৰম্পৰাৰ মাজেদি যদি এখন সমাজ সুস্থ, সবল আৰু সম অধিকাৰ প্রদানকাৰী হয় তেন্তে তেনে পৰম্পৰা ধৰি ৰখাও জৰুৰী বুলি ভাবো। লিম্বুসমাজত বিবাহৰ ক্ষেত্রত এনে মানসিকতা দেখিবলৈ পোৱা যায়। কইনা সন্তানক কোনো ধৰণৰ বোজা হিচাপে জ্ঞান নকৰি তেওঁলোককো জীৱনৰ সকলো সিদ্ধান্ত নিজে ল'ব দিয়া দেখা যায়।

পুৰুষৰ দৰে মহিলায়ো বহু বিবাহত বহিব পাৰে। পিতৃ-মাতৃয়ে বিয়াতে নিজৰ দায়িত্ব সামৰি নথৈ তাইৰ ভৱিষত্যৰ বাবেও 'সোণৌলী-ৰুপৌলী'ৰ জৰিয়তে সুৰক্ষা প্রদান কৰিছে। কেৱল মহিলাৰ ক্ষেত্রতে এনে অধিকাৰ আছে তেনে নহয়,যদি মহিলাগৰাকীয়ে স্বামীক এৰি বেলেগৰ লগত গুচি যায় তেন্তে বিয়াত 'সোণৌলী-ৰুপৌলী' ৰূপে দিয়া আ-অলংকাৰ আৰু পইচাসমূহ ঘূৰাই দিয়াৰো ব্যৱস্থাও আছে। সেই ফালৰ পৰা দেখা গ'ল যে দুয়োকে সম সুৰক্ষা আৰু অধিকাৰ প্রদান কৰা হয়। গতিকে লিম্বুসকলে এক ন্যায়সংগত স্বকীয় পৰম্পৰাগত পদ্ধতিৰে বিবাহ কার্য সম্পন্ন কৰে। ❑

প্রসংগ সূচী ঃ

১.https://en.wikipedia.org/wiki/Limbu-people
২. ধনহাङ সুব্বা, লিম্বুবানকা লোককথা, নিলিমা সাঁবা তথা নবিন ফোম্বো,কাঠমাডৌ, দোস্রো, 2073, পৃ-ঝ
৩. J.R. Subba, The Limboos of The Eastern Himalayas,Sikkim Yakthung Mundhum Saploppa, Gangtok,Sikkim, Second Edition, 2019, page-vii
৪. J.R. Subba, Ethno-Religious Views of the Limboo Mundhums, Yakthung Mundhum Saploppa, Gangtok,Sikkim, First Edition, 2012, page-148
৫. ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ জৰিয়তে পোৱা তথ্য
৬. ক্ষেত্র অধ্যয়নৰ জৰিয়তে পোৱা তথ্য

সহায়ক গ্রন্থ ঃ

নেপালী ঃ

১.इङ्नाम, भगिराज : लिम्बूजातिको इतिहास, रेनु लिम्बू तुम्बाहाङफे,काठ्मान्डौ, प्रथम, वि. स. 2075
२. इजम, रमेश (प्र. सम्पा.) : याकथुङ चोलुङ; युमा साम्यो महासभा नेपाल, वि. स. 2075
३. तल्लिङ; हितराम : याकथुङ सस्कारहरु, युमा साम्यो महासभा मलेसिया, पहिलो, वि. स. 2077
४. सुब्बा, धनहाङ : लिम्बुवानका लोककथा, नलिमा साँवा तथा नबिन फोम्बो,काठमाडौ, दोस्रो, वि. स. 2073

ইংৰাজী

১.Subba, Chaitanya : The Culture & Religion of Limbus, K.B. Subba,Kathmandu, 1st Edition, 1995.
২.Subba, J,R: Ethno-Religious Views of the Limboo Mundhums, Yakthung Mundhum Saploppa, Gangtok,Sikkim, First Edition, 2012
৩. Subba, J,R: The Limboos of The Eastern Himalayas,Sikkim Yakthung Mundhum Saploppa, Gangtok,Sikkim, Second Edition, 2019

তথ্যদাতাৰ নাম আৰু ঠিকনা ঃ

১. বাল মুৱিংলা, বয়স-৭৫, অধ্যাপক, গেংটক, চিকিম
২. নাৰায়ণ লিম্বু, বয়স-৭৬, খেতিয়ক, গজল বস্তি, ডিব্রুগড়
৩. কৃষ্ণ কুৱৰংবাং, বয়স ৭০, ব্যৱসায়িক, গজল বস্তি, ডিব্রুগড়
৪. ৰাজকুমাৰ লিম্বু, বয়স-৪৫, খেতিয়ক, উৰিয়ামঘাট, গোলাঘাট
৫. গংগামায়া চুব্বা, বয়স-৫২, গৃহিনী,ওৰাটিং, গোলাঘাট
৬. টংক কুমাৰী লিম্বু, বয়স-৬০, গৃহিনী, মাটিখোলা,গোলাঘাট
৭. মেচিমায়া লিম্বু, বয়স-৬২, গৃহিনী, মাটিখোলা,গোলাঘাট
৮. কিশন সিং চেমজংঙ, বয়স-৫৬, সেনা, পাৱৈ, তিনিচুকীয়া
৯. কুমাৰ সিং তেম্বে, বয়স- ৫৪, খেতিয়ক, গৈৰী বস্তি,ধেমাজি
১০. মক্কৰ চেৱেং মাদেম, বয়স-৫৫, খেতিয়ক, গৈৰী বস্তি,ধেমাজি
১১. ভক্ত বাহাদুৰ লিম্বু, বয়স-৩৪, খেতিয়ক, মোনাবাৰী, বিশ্বনাথ
১২. কর্ণ হাং লিম্বু, বয়স-২৯, অধ্যাপক, বেয়োং,পশ্চিম চিকিম
১৩. ৰাকেশ লিম্বু, বয়স-৪৩, খেতিয়ক, গজল বস্তি, ডিব্রুগড়

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক-আখ্যান ঃ এক অধ্যয়ন

অসীম শইকীয়া
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
নৰ্থ লখিমপুৰ মহাবিদ্যালয়
(স্বায়ত্তশাসিত)
৮৮২২৫৬৭৩৩৭

ফেঞ্চী চুতীয়া
সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী মহাবিদ্যালয়,
কামৰূপ (মহানগৰ), গুৱাহাটী
৯৭০৬৫৭১৭৮৭
ashimsaikia897@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

সভ্যতাৰ আৰম্ভণিৰে পৰা সমাজত লোককৃষ্টি বা লোকসংস্কৃতি বা জনসাহিত্য পৰম্পৰাগতভাৱে চলি আহিছে। জনসমাজ হ'ল লোকসংস্কৃতিৰ ধাৰক আৰু বাহক। ই হ'ল জনপ্ৰিয় পৌৰাণিক দস্তৰ আৰু জন-জীৱনৰ এৰাব নোৱৰা সম্পত্তি স্বৰূপ। সাহিত্য আৰু শিল্পৰ জন-জীৱনৰ প্ৰতিভা বিকাশত যিমান স্থায়িত্ব আছে, ঠিক একেদৰে লোকসংস্কৃতিৰো সমানেই স্থায়িত্ব আছে। লোকসংস্কৃতি আদিম আৰু সভ্য মানুহৰ ঐতিহ্য বহনকাৰী সৃষ্টি। লোকসংস্কৃতিৰ এটা বুজন শাখা লোকসাহিত্য। লোকসাহিত্যসমূহে জাতি একোটাৰ হৰ্ষ-বিষাদ, আশা-আকাংক্ষা, লোকবিশ্বাস, ভয়-ভক্তি, মানসিক চিন্তাধাৰা আদিক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। মৌখিক সাহিত্য হৈছে পৰম্পৰাগত উচ্চাৰণৰ এক কথিত, গোৱা আৰু কণ্ঠস্বৰযুক্ত ৰূপ। সময়, সমাজৰ দ্ৰুত উন্নয়নে আমাৰ জনগোষ্ঠীয় পৰম্পৰাগত ৰূপক ইতিমধ্যে ধ্বংস কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিছে। এনে সংকট কালত সাংস্কৃতিকভাৱে সমৃদ্ধিশালী মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ সৈতে জড়িত লোক-আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ সংৰক্ষণ আৰু সংবৰ্ধনৰ লগতে বিশ্লেষণ অতি জৰুৰী। কাৰণ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ অন্তৰ্গত লোক-আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ বিশ্লেষণৰ জৰিয়তে পৰৱৰ্তী সময়ত উত্তৰ প্ৰজন্মক জাতিটোৰ অস্তিত্ব আৰু সামগ্ৰিক সাংস্কৃতিক ৰূপসমূহৰ উমান দিব।

সেয়েহে *মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক-আখ্যান ঃ এক অধ্যয়ন* শীৰ্ষক আলোচনা পত্ৰ প্ৰস্তুত কৰাৰ প্ৰধান উদ্দেশ্য হৈছে মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক-আখ্যানসমূহৰ বিষয়ে অৱগত হোৱা, ইয়াৰ পৃষ্ঠভূমিসমূহ কি কি, সামাজিক সন্দৰ্ভসমূহৰ বিষয়ে আৱগত হোৱা, বিষয়বোৰ নিৰূপণ কৰা, লগতে এই লোক-আখ্যানসমূহৰ সকলো স্থানতে একেদৰে ব্যৱহাৰ হয়নে নহয় ইত্যাদি দিশক গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য হিচাপে লৈ আলোচনা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ লোকসংস্কৃতি, মৌখিক সাহিত্য, লোক-আখ্যান, সংৰক্ষণ, সংবৰ্ধন

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

সভ্যতাৰ আৰম্ভণিৰে পৰা সমাজত লোককৃষ্টি বা লোকসংস্কৃতি বা জনসাহিত্য পৰম্পৰাগতভাৱে চলি আহিছে। জনসমাজ হ'ল লোকসংস্কৃতিৰ ধাৰক আৰু বাহক। ই হ'ল জনপ্ৰিয় পৌৰাণিক দস্তৰ আৰু জন-জীৱনৰ এৰাব নোৱৰা সম্পত্তি স্বৰূপ। সাহিত্য

আৰু শিল্পৰ জন-জীৱনৰ প্ৰতিভা বিকাশত যিমান স্থায়িত্ব আছে, ঠিক একেদৰে লোকসংস্কৃতিৰো সমানেই স্থায়িত্ব আছে। লোকসংস্কৃতি আদিম আৰু সভ্য মানুহৰ ঐতিহ্য বহনকাৰী সৃষ্টি।

লোকসংস্কৃতিৰ এটা বুজন শাখা লোকসাহিত্য। লোকসাহিত্যসমূহে জাতি একোটাৰ হর্ষ-বিষাদ, আশা-আকাংক্ষা, লোকবিশ্বাস, ভয়-ভক্তি, মানসিক চিন্তাধাৰা আদিক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। মৌখিক সাহিত্য হৈছে পৰম্পৰাগত উচ্চাৰণৰ এক কথিত, গোৱা আৰু কণ্ঠস্বৰযুক্ত ৰূপ। মৌখিক সাহিত্যকে লোকসাহিত্য বুলি জনা যায় আৰু লোক-আখ্যান (মৌখিক আখ্যান) ইয়াৰ এক গুৰুত্বপূর্ণ অংশ। লোক-আখ্যান (মৌখিক আখ্যান)ত মিথ, সাধুকথা, ৰোমাণ্টিক কাহিনী, ধর্মীয় কাহিনী, লোককথা, কিংবদন্তি, পশু কাহিনী, উপাখ্যান, কৌতুক আদি অন্তর্ভূক্ত। অনাখৰী মানুহৰ দ্বাৰা সৃষ্টি হোৱা নৈর্ব্যক্তিক চৰিত্রযুক্ত এই লোকসাহিত্যসমূহ একো একোটা জাতিৰ প্ৰতিবিম্ব স্বৰূপ।

মংগোলীয় নৃগোষ্ঠীৰ অন্তর্গত, চীন-তিব্বতীয় ভাষামূলৰ মিচিংসকল অসমৰ এটা অন্যতম জনগোষ্ঠী। এই মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক দুভাষী হয়, সেয়ে প্ৰায় স্থানত তেওঁলোকে নিজা মিচিং ভাষা ব্যৱহাৰ কৰাৰ উপৰিও অসমীয়া ভাষা ব্যৱহাৰ কৰা পৰিলক্ষিত হয়। অসম তথা উত্তৰ পূর্বাঞ্চলত বাস কৰা অন্যান্য জনগোষ্ঠীয় লোকৰ দৰে মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোক লোকসংস্কৃতিৰ দিশত অত্যন্ত চহকী। বিশেষকৈ লোকসংস্কৃতিৰ বুজন শাখা লোকসাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰ মিচিং জনগোষ্ঠী চহকী। মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ অন্তর্গত লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহেই হ'ব আমাৰ আলোচনাৰ প্ৰধান বিষয়বস্তু।

০.২ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য ঃ

সময়, সমাজৰ দ্রুত উন্নয়নে আমাৰ জনগোষ্ঠীয় পৰম্পৰাগত ৰূপক ইতিমধ্যে ধ্বংস কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিছে। এনে সংকট কালত সাংস্কৃতিকভাৱে সমৃদ্ধিশালী মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ সৈতে জড়িত লোক-আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ সংৰক্ষণ আৰু সংবর্ধনৰ লগতে বিশ্লেষণ অতি জৰুৰী। কাৰণ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকসাহিত্যৰ অন্তর্গত লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ বিশ্লেষণৰ জৰিয়তে পৰৱর্তী সময়ত উত্তৰ প্ৰজন্মক জাতিটোৰ অস্তিত্ব আৰু সামগ্রিক সাংস্কৃতিক ৰূপসমূহৰ উমান দিব। *মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক-আখ্যান ঃ এক অধ্যয়ন* শীর্ষক আলোচনা পত্র প্রস্তুত কৰাৰ প্ৰধান উদ্দেশ্য হৈছে মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক-আখ্যানসমূহৰ বিষয়ে অৱগত হোৱা, ইয়াৰ পৃষ্ঠভূমিসমূহ কি কি, সামাজিক সন্দর্ভসমূহৰ বিষয়ে আৱগত হোৱা, বিষয়বোৰ নিৰূপণ কৰা, লগতে এই লোক-আখ্যানসমূহৰ সকলো স্থানতে একেদৰে ব্যৱহাৰ হয়নে নহয় ইত্যাদি দিশক গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্য হিচাপে লৈ আলোচনা পত্রখন প্রস্তুত কৰা হৈছে।

০.৩ গৱেষণা প্রশ্ন ঃ

গৱেষণা প্রশ্নই অধ্যয়নৰ তাত্ত্বিক আধাৰ নির্মাণত সহায় কৰে। মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক আখ্যান বা কাহিনীৰ পৃষ্ঠভূমি, সামাজিক সন্দর্ভ, বিষয় বৈচিত্র্য আদিৰ আলোচনাৰ প্রাৰম্ভতে ঠিৰাং কৰা গৱেষণাৰ প্রশ্ন—

- লোক আখ্যানত কেনেধৰণৰ ভাব বিষয়বোৰে ঠাই পাইছে?
- লোক আখ্যানসমূহৰ ঐতিহাসিক প্রেক্ষাপট কি?
- লোক আখ্যানত তেওঁলোকৰ সমাজ প্রতিফলন কেনেধৰণে হয়?
- লোক আখ্যানসমূহত নীতিমূলক কথা, লোকবিশ্বাস আৰু ধর্মীয় আস্থাৰ প্রকাশ কেনেদৰে প্রকাশ পাইছে?

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক-আখ্যান ঃ এক অধ্যয়ন শীর্ষক আলোচনা পত্রখন প্রস্তুত কৰিবলৈ যাওঁতে ধেমাজি জিলাৰ অন্তর্গত মাছখোৱা মৌজাৰ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকৰ সহায় লোৱা হৈছে। লগতে লোকসাহিত্যৰ সৈতে জৰিত লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ গৈ সেইসমূহৰ বিষয় বৈচিত্র্য, ঐতিহাসিক প্রেক্ষাপট আদি বিচাৰৰ পৰিসৰ নিৰূপণ কৰি লোৱা হৈছে।

০.৫ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক-আখ্যান ঃ এক অধ্যয়ন শীর্ষক আলোচনৰ বাবে বিষয় বিশ্লেষণ আৰু বর্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০ মিচিং নৃগোষ্ঠীৰ চমু পৰিচয় ঃ (আঁতিগুৰি, প্রাচীনতা, প্রব্রজন)

মিচিংসকল অসমৰ ব্রহ্মপুত্র উপত্যকাত বসবাস কৰা এটা বৃহৎ জনগোষ্ঠী। নৃতাত্ত্বিক দৃষ্টিকোণৰ পৰা মিচিংসকল মংগোলীয় আৰু ভাষাতাত্ত্বিক দৃষ্টিকোণৰ পৰা বৃহৎ

চীনতিব্বতীয় পৰিয়ালৰ তিব্বতবর্মী ঠালৰ অন্তর্গত। নৃতাত্ত্বিক দৃষ্টিভংগীৰে মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোকৰ শৰীৰৰ গঠন হটঙা আৰু পাহোৱাল ভৰিৰ কলাফুল নোদোকা, মুখমণ্ডল বহল, নাক চুটি, চকুকেইটা সৰু সৰু উখহা, চুলি ক'লা আৰু ঠৰঙা। পুৰুষৰ গোফ আৰু ডাঢ়ি কম। গাৰ দৈর্ঘৰ তুলনাত ভৰি চুটি। নৃতাত্ত্বিক-সাংস্কৃতিক বৈশিষ্ট্যসমূহ নিৰীক্ষণ কৰিলে দেখা যায় সাংস্কৃতিক সম্পদ আৰু ঐতিহ্যৰ ফালৰ পৰা মিচিংসকল যথেষ্ট চহকী। নিজস্ব ভাষা-সংস্কৃতি, কৃষি-কর্ম, খাদ্য-সম্ভাৰ, নানাৰঙী, সাজ-পোছাক, গীত-মাত, নৃত্য-বাদ্য, সামাজিক ৰীতি-নীতিৰে মিচিং জনগোষ্ঠীয়ে জাতীয় ঐতিহ্যৰ স্বকীয়তা ৰক্ষা কৰি আহিছে। অসমত বসবাস কৰা জনগোষ্ঠীসমূহৰ ভিতৰত মিচিংসকল অন্যতম। মংগোলীয় নৃ-গোষ্ঠীৰ মান শাখাৰ অন্তর্গত মিচিংসকল জনসংখ্যাৰ ফালৰপৰা বড়োসকলৰ পাছতেই অসমৰ দ্বিতীয় বৃহৎ জনগোষ্ঠী। সংস্কৃতিসম্পন্ন জনগোষ্ঠী মিচিংসকলৰ নিজস্ব ভাষা, উৎসৱ-পার্বণ, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, ৰীতি-নীতি, দেৱ-দেৱতা, সাজ-পাৰ, অয়-অলংকাৰ, খাদ্যাভাস আদি আছে। অসমৰ অন্যান্য জনগোষ্ঠীসমূহৰ তুলনাত লোকসংস্কৃতিৰ দিশৰপৰা মিচিং জনগোষ্ঠী যথেষ্ট সমৃদ্ধিশালী।

মিচিং জনগোষ্ঠীক বুজাবৰ বাবে সর্বাধিক ব্যৱহৃত শব্দ দুটা হৈছে 'মিৰি' আৰু 'মিচিং'। পুৰণি অসমীয়া পুথি, আহোম যুগত ৰচিত বুৰঞ্জী, ব্রিটিছ ৰাজত্বৰ সময়ত ইংৰাজ লেখকৰ দ্বাৰা ৰচিত ইতিহাস-ৰচনা, চৰকাৰী নথি-পত্র-টোকা আৰু ভাৰতীয় সংবিধানতো মিচিংসকলক সূচাবৰ বাবে 'মিৰি' শব্দটোৱে ব্যৱহাৰ কৰিছে। কিন্তু তেওঁলোকে 'মিৰি'ৰ সলনি নিজকে 'মিচিং' বুলিহে পৰিচয় দিব বিচাৰে। তেওঁলোকৰ মতে, তেওঁলোকৰ জনগোষ্ঠীটোৰ নাম 'মিচিং'হে, 'মিৰি' নহয়। ইতিহাসৰ পাত লুটিয়ালে এই প্রসংগত কিছু মত পোৱা যায়। আলেক্‌জেণ্ডাৰ মেকেঞ্জীয়ে ক'ব খোজে যে- 'অসম চৰকাৰে আইন প্রণয়ন কৰি মিচিংসকলক পর্বতীয়া আবৰসকলৰ লগত ভৈয়ামৰ বেপাৰীসকলৰ ব্যৱসায়ৰ যোগাযোগৰ 'মাজৰ মানুহ' (Go-between) হিচাপে নিয়োগ কৰিছিল।' [১] চাৰ এড্‌ৱার্ড গেইটেও মেকেঞ্জীৰ সুৰতে সুৰ মিলাই ক'ব খোজে যে, 'মিচিংসকলে আবৰৰ সৈতে যোগাযোগ ৰক্ষা কৰাত মাজৰ মানুহ হিচাপে চৰকাৰক সহায় কৰিছিল।' [২] 'মিৰি' শব্দৰ উৎপত্তিৰ প্রসংগত গেইট আৰু মেকেঞ্জীতকৈ তেওঁলোকৰ পূর্বসুৰী বুৰঞ্জীবিদ এড্‌ৱার্ড টুইট ডেলটনৰ মন্তব্য অধিক তাৎপর্যপূর্ণ। তেওঁ ওড়িশাৰ 'মিৰিয়া' (Miria) নামৰ লোকসকলৰ প্রসংগ টানি আনি ক'ব খোজে যে, 'এই লোকসকলে মানুহ আৰু দেৱতাৰ 'মাজৰ মানুহ' হিচাপে যিদৰে কাম কৰিছিল সেইদৰে মিচিংসকলেও পাহাৰৰ মানুহ আৰু ভৈয়ামৰ মানুহৰ 'মাজৰ মানুহ' হিচাপে কাম কৰিছিল। সেইয়ে ওড়িশাৰ মিৰিয়া শব্দৰ পৰাও 'মিৰি' শব্দটো আহিব পাৰে।' [৩] তদুপৰি ডেল্টনে এই কথাও কৈছে যে- 'দুটা জাতিৰ মাজত চলা ব্যৱসায়ৰ একমাত্র মাধ্যম হিচাপে কাম কৰাৰ কাৰণে তেওঁলোকে মিৰি নামটো পালে, যিটোৰ অর্থ হৈছে মাজৰ মানুহ বা মধ্যস্থতাকাৰী।' [৪]

মিচিং জাতিৰ বুৰঞ্জী ৰচনাৰ বাটকটীয়া সোণাৰাম পাএঁগাং কটকীয়ে 'মিৰি' জাতিৰ ধাৰণাটোকে নস্যাৎ কৰিছে। তেওঁৰ মতে, 'প্রকৃতপক্ষে মিৰি বুলি এটা জাতি নাই। মিচিং নামৰ জাতিটোকে ভৈয়ামত মিৰি বোলে।' [৫]

তৰুণ চন্দ্র পামেগাম, নোমল পেগু, নাহেন্দ্র পাদুন, ইন্দ্রেশ্বৰ পেগু, বসন্ত কুমাৰ দলে আদি লেখকসকলৰ মতেও 'মিৰ্‌'(মিচিং দেওধাই-পুৰোহিত)ৰ পৰা 'মিৰি' শব্দটো আহিছে। পামেগামৰ মতে, 'পাহাৰৰ ফালে দেওধাইসকলক 'মিৰ্‌' মি-ৰ-উ বুলি কয়। আদিতে এই দেওধাইসকলেই মিচিংসকলৰ পুৰোহিতৰ কাম কৰিছিল আৰু সমাজৰ সকলো কাম দেওধাইৰ দিহা-পৰামর্শ মতে হৈছিল। এই 'মিৰ্‌' শব্দৰ পৰাই 'মিৰি' হোৱা বুলি ধৰি ল'ব পাৰি।' [৬] নোমল পেগুৰ মতে, 'মিৰ্‌ শব্দটোৰ ধ্বনি বিকৃতি ঘটি 'মিৰি' শব্দটো আহিছে।' [৭] নাহেন্দ্র পাদুনৰ মতে, 'মিৰ্‌ বা মিৰি শব্দই প্রথমে মিচিংসকলৰ পুৰোহিতক বুজাইছিল ; কিন্তু কালক্রমত এই শব্দই জাতিটোক বুজোৱাত প্রয়োগ হ'ল।' [৮]

ওপৰৰ মতামতসমূহৰ আধাৰত এই সিদ্ধান্তলৈ আহিব পৰা যায় যে- আদী আৰু মিচিংসকলৰ দেওধাই-পুৰোহিত 'মিৰ্‌' শব্দৰ পৰাই 'মিৰি' শব্দটোৰ উৎপত্তি হ'ল। এগৰাকী পণ্ডিতৰ মতেও 'পর্বতৰ পৰা নামি আহোঁতে নাইবা ভৈয়ামত বসতিৰ বাবে ইঠাইৰ পৰা সিঠাইলৈ প্রব্রজন কৰি ফুৰোঁতে মংগল-অমংগল বিচাৰ কৰিব পৰা মিৰ্‌ৰ অধীনত পৰিচালিত হোৱা মানুহখিনিয়ে সাধাৰণতে নিজক মিৰ্‌ৰ মানুহ বা মুখীয়ালজনক মিৰ্‌ বুলি পৰিচয় দিয়াৰ কাৰণে অনামিৰি লোকে তেওঁলোকক মিৰি বুলি নাম দিয়াৰ থল নথকা নহয়।' [৯] অনামিচিংসকলে প্রথমাৱস্থাত মিৰ্‌ৰ অধীনত থকা মানুহখিনিক (মিচিংসকলক) 'মিৰ্‌ৰ লোক' বুলি ক'ব পাৰে, 'মিৰ্‌ৰ লোক'ৰ পৰা 'মিৰ্‌ লোক', 'মিৰ্‌ লোক'ৰ পৰা

'মিৰৃ' আৰু 'মিৰৃ'ৰ পৰা 'মিৰি' হোৱাৰ সম্ভাৱনা নুই কৰিব নোৱাৰি। 'মিৰৃ' শব্দটোৰ পৰা যে 'মিৰি' শব্দৰ সৃষ্টি হ'ল এই কথাখিনিয়ে তাকেই প্ৰতিষ্ঠা কৰে।

২.০ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক আখ্যান বা কাহিনী সম্পৰ্কীয় আলোচনা ঃ

মৌখিক পৰম্পৰাৰ এক উল্লেখযোগ্য শাখা হ'ল লোক আখ্যান বা কাহিনী। যুগ যুগ ধৰি মানুহৰ মুখ বাগৰি অহা বাস্তৱ আৰু কাল্পনিক কাহিনীৰ সমাহাৰ হ'ল লোক আখ্যান বা লোককাহিনীসমূহ। মিচিং লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ জৰিয়তে মিচিং জনগোষ্ঠীৰ জীৱন দৰ্শন, জীৱন সংগ্ৰাম, বিশ্বাস-অবিশ্বাস, ধৰ্মীয় ভাব, সৃষ্টিশীলতা আদি দিশ পাব পাৰি। ইয়াৰ উপৰিও এই লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ মাজত তেওঁলোকৰ স্বকীয় সংস্কৃতি, ভৌগোলিক পৰিৱেশ, স্বতন্ত্ৰ কথন শৈলী, সাধুতা, নম্ৰতাৰ দিশ, ধৰ্মীয় লোকবিশ্বাস আৰু অন্ধবিশ্বাসৰ উৎকৃষ্ট নিদৰ্শন পাব পৰা হয়। মিচিং ভাষাৰ লোক কাহিনীসমূহক দয়িং বুলি কোৱা হয়।

২.১ সৃষ্টিতত্ত্ব সম্পৰ্কীয় লোক কাহিনী ঃ

বিশেষকৈ মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোকৰ মাজত সৃষ্টিতত্ত্ব সম্পৰ্কীয় বহুতো লোক কাহিনী পোৱা যায়। তেনে লোককাহিনীসমূহ হ'ল—

— Ké:yum Kamang ya:yangko

Ké:ro tadmang ya:yangko

বিশ্ব-পৃথিৱীত কিবা এটা আছিল বুলি কোৱা নাছিল, কোনো বস্তু নাছিল। ক'বলৈ কি 'শব্দ'ও নাছিল। কিবা দেখি পাবলৈকো পোহৰ বোলাটোও নাছিল। ক'বলৈ, শুনিবলৈ, জানিবলৈ, শিকিবলৈ একোৱেই নাছিল। মাত্ৰ নাই আৰু নাই। 'শূন্য' শূন্যৰে ভৰা এক আচৰিত অন্ধকাৰময় এক ভয়ানক 'গহ্বৰ'।

Ké:yum- Yumkang- Kamang- Mangor- Orbo- Bomong Bo.

Ké:yum- Yumkang- Ka:si- Siyang- A:bo- Bomuk- Mukséng- Sé:di-Mé:lo.

এনেকৈ ওপৰলৈ অর্থাৎ (আকাশ) ছয় বিৱৰ্তণৰ অন্তত Bomong Bo পোহৰ শক্তি 'পিণ্ড' উৎপত্তি হ'ল। আৰু দ্বিতীয় পর্যায়ত তল ভাগলৈ 'ষষ্ঠ' পর্যায়ত Bomuk-Mukséng পোহৰ 'জ্যোতি' উৎপত্তি হ'ল। জ্যোতিৰ পিছত Sé:di-Mé:lo আদিম পুৰুষ -প্ৰকৃতিৰ আৰ্ৱিভাব হ'ল। Sé:di-Mé:lo ৰ যুগ্ম ক্ৰিয়াত Pédong Ané (পীদং আনী) জগত মাতৃ সৃষ্টি হ'ল। সাধাৰণভাৱে ক'বলৈ গ'লে 'বর্ষা' বা 'বৰষুণ'। বৰষুণ মানে পানী। পানী নহ'লে যে কোনো জীৱিত বস্তুৰ সৃষ্টি নহয়। শেষতহে আকাশ, সূর্য, চন্দ্ৰ, গ্ৰহ-নক্ষত্ৰ ইত্যাদি। সৌৰজগতৰ দুভাগৰ ওপৰাংশত আৰু নিম্নাংশত পর্বত-পাহাৰ, নদ-নদী, সাগৰ-মহাসাগৰ, প্ৰাণীজগত, গছ-গছনি, ওৰণ-ভোজন, সৰু-ডাঙৰ, পোক-পৰুৱা, সদৌ শেষত বুদ্ধিযুক্ত, জীৱ শ্ৰেষ্ঠ মানৱ জাতি —Tani/Taor [১০]

মিচিং জনগোষ্ঠীয় মানুহৰ মাজত প্ৰচলন থকা সৃষ্টিতত্ত্ব সম্পৰ্কীয় আন এক লোকআখ্যান বা কাহিনী এনেধৰণৰ—

'কৌয়ুম্' (Kéyum) মানে মিচিং ধৰ্মীয় দর্শন মতে এটা এটা সত্তা য'ত নিহিত আছে সৃষ্টিৰ আদিম শক্তি। কৌয়ুম্ জ্ঞানৰ অতীত, দৃষ্টিৰ বাহিৰৰ, বিশ্ব ব্ৰহ্মাণ্ডৰ সৃষ্টিৰ আগৰ একো নথকা (Aproximation to nothingness) অৱস্থাৰ মাজতে অন্তর্নিহিত এটা সত্তা, যাৰ আদিও নাই, অন্তও নাই। সেই সর্বশক্তিময় সত্ত্বাই কেইবাটাও বিৱর্তনৰ দ্বাৰা সৃষ্টি তত্ত্বৰ জন্ম দিয়ে যাৰ ফলত জন্ম পায় এই বিশ্ব ব্ৰহ্মাণ্ড, জে ান-বেলি-তৰাৰ লগতে তৰুতৃণলতা আৰু নানা প্ৰাণীয়ে। কৌয়ুম্ সম্পর্কে বহুতে ক 'ব খোজে—'Kéyum is the first in the line of creation and it is the cause & centre of all creations.' অর্থাৎ সৃষ্টিৰ আগৰ প্ৰায় শূন্যতাৰ মাজৰ অস্তিত্বসম্পন্ন একমাত্ৰ সত্তা মাথোঁ কৌয়ুমেই আৰু এই কৌয়ুমেই সমগ্ৰ সৃষ্টিৰ কেন্দ্ৰবিন্দু। [১১]

মিচিং ধৰ্মীয় দর্শনৰ মতে সৃষ্টিৰ আদিম শক্তি 'কৌয়ুম্'ৰ মাজত এক আদ্যৰূপী নাৰী শক্তি 'কৌয়ুম্ নাঃনৌক লৈ যি কল্পনা কৰা হৈছে, আশ্চর্য্যজনকভাৱে হিন্দু ধর্মও ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। শূন্য পুৰাণত থকা পৃথিৱী সৃষ্টিৰ তত্ত্বত আদ্যা শক্তি ৰূপত দেৱী দুর্গাৰ উল্লেখ আছে। তাত কোৱা হৈছে যে সৃষ্টিৰ আদিতে আছিল মাথোঁ শূন্যতা। সেই শূন্যতাত একোৱে অস্তিত্ব নাছিল, নাছিল মহাকাশ, পৃথিৱী, গ্ৰহ, নক্ষত্ৰ, স্থল, বায়ু, দিন-ৰাতি একোৱেই। সেই শূন্যতাৰ মাজতে আছিল এজন পৰমেশ্বৰ যি নিৰাকাৰ, সর্বব্যাপ্ত। সেই পৰমেশ্বৰেই এদিন সেই শূন্যতাত সৃষ্টি কৰিলে বিশ্ব ব্ৰহ্মাণ্ড, তাৰ পিছতে সৃষ্টি কৰিলে নিয়তি আৰু মহাকালক। তাৰ পিছতে সৃষ্টি কৰিলে আদ্যমাতৃ এগৰাকীক দেৱীৰূপত আৰু যথাক্ৰমে 'বন্মা'ক

সৃষ্টিকাৰীৰ ৰূপত, 'বিষ্ণু'ক পালনকৰ্তা ৰূপত আৰু 'মহেশ্বৰ'ক সংহাৰকৰ্তাৰ ৰূপত। পিছৰ পৰ্যায়ত আদ্যামাতৃ দেৱী দূর্গা আৰু জগতৰ তৃতীয় শক্তি মহেশ্বৰ (শিৱ বা মহাদেৱৰ) সহযোগত পৃথিৱীত প্ৰাণ সঞ্চাৰ হ'ল, মানৱ জাতিৰ জন্ম হ'ল। মিচিং আধ্যাত্মিক দৰ্শনতো তাপাপুমাঙত (নিৰাকাৰ, অস্তিত্বহীন, শূন্য) কীয়ুমৰ অস্তিত্বৰ লগতে সৃষ্টি তত্ত্বৰ আৰম্ভণি আৰু পৰৱৰ্তী পৰ্যায়ত এগৰাকী আদ্যামাতৃ কীয়ুম্ নাঃনীৰ কথা উল্লেখ আছে। তাৰ পিছৰ পৰ্যায়ৰ বিশ্বাসমতে চেদি (পুৰুষশক্তি) আৰু মেলৰ (নাৰীশক্তি)ৰ সৃষ্টিৰ কথাতো উল্লেখ আছে। আৰু এই চেদি আৰু মেল দুয়োৰে যুগ্ম প্ৰচেষ্টাতে পৃথিৱীত প্ৰাণৰ সঞ্চাৰ হয় আৰু মানৱ জাতিৰ জন্ম হয় বুলি এই জনগোষ্ঠীৰ দৃঢ় বিশ্বাস। [১২]

২.২ প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কীয় লোক কাহিনী ঃ

পাহাৰৰপৰা নামি আহোঁতে মিচিংসকলৰ ভালেমান ফৈদ কাৰ্কংচিয়াং অঞ্চলত লগ হৈছিলহি। তাতে এটা ডাঙৰ হ্ৰদ আছিল। সেই হ্ৰদৰ পাৰত পেগুসকলে গাঁওপাতি আছিল বাবে নাম দিছিল 'পেঃগু চিয়ীং'। তাত বিভিন্ন ধৰণৰ মাছ-কাছ থকাৰ উপৰিও বহুতো ভকোলাই বাস কৰিছিল। তিব্বত চীনৰ বহুত অঞ্চলত ভকোলা বৰ প্ৰিয় খাদ্য। তেওঁলোকে তিব্বতৰ পৰা সেইবোৰ আনি পুখুৰীটোত মেলি দিছিল। এবাৰ পাহাৰীয়া অঞ্চলত একেলেথাৰীকৈ কেইবাবছৰো খেতিবাতি ভাল নহ'ল। ফলত অঞ্চলতোত আকালে দেখা দিলে। পোনতে তেওঁলোকে হাবিৰ আলু-কচু খাইহে ভোক গুচাবলগীয়া হৈছিলগৈ। এদিন ভকোলাৰ ভাগ কম-বেছি হোৱাত ওচৰ-চুবুৰীয়া দুই এঘৰ আদি লোকৰ সৈতে সামান্য ধৰণৰ তৰ্ক-বিতৰ্ক হৈছিল। আকাল বাঢ়ি যোৱাৰ লগে লগে তেনে বাদানুবাদ ক্ৰমে বাঢ়ি যাব ধৰিছিল। এনেই মাটি-বাৰীৰ অভাৱত খেতিপথাৰ নোহোৱা হৈ আহিছিল, সততে কলহপ্ৰিয় দুই এক লোকৰ ব্যৱহাৰ বেয়া পাই শান্তিপ্ৰিয় মিচিংসকল সাৱঁৰা মাটিৰ সন্ধানত দলবান্ধি কম ওখ পাহাৰলৈ গুচি আহিল। [১৩]

এনে লোককাহিনীসমূহৰ জৰিয়তে মিচিং জনগোষ্ঠীৰ ঐতিহাসিক প্ৰেক্ষাপটৰ বিষয়ে জানিব পাৰি। বিশেষকৈ উক্ত লোককাহিনীৰ জৰিয়তে তেওঁলোকে মুখামুখি হোৱা সামাজিক পৰিৱেশ আৰু অৰ্থনৈতিক পৰিৱেশৰ বিবিধ দিশৰ প্ৰতিফল স্পষ্ট। লগতে উক্ত পৰিস্থিতিৰ মুখামুখি হৈয়ে তেওঁলোক ভৈয়ামৰ বিভিন্ন স্থানলৈ প্ৰব্ৰজিত হোৱাৰ দিশ পোৱা যায়। কিয়নো এনে লোককাহিনীৰ জৰিয়তে সেই সময়ৰ সামাজিক, অৰ্থনৈতিক পৰিৱেশৰ ফলশ্ৰুতিত সৃষ্টি হোৱা বিবিধ বেমেজালিয়ে তেওঁলোকৰ প্ৰব্ৰজনৰ ইতিহাসক স্পষ্ট কৰে।

মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোকৰ প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কীয় আন বহুতো লোক আখ্যান বা কাহিনী পোৱা যায়। তেনে আন এক লোক আখ্যান এনেধৰণৰ—

মিচিং জনগোষ্ঠী প্ৰব্ৰজন দুটা দিশৰ পৰা হোৱা বুলি কোৱা হয়। এটা থাল চিয়াং নদীৰ ফালৰ পৰা আৰু আনটো থাল সোৱণশিৰি নদীৰ দিশৰ পৰা। এই দুই দিশৰ পৰা অহা মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোকে বিভিন্ন সংকটক নেওচি পাহৰৰ পৰা সাৱঁৰা মাটিৰ সন্ধানত ভৈয়ামত থাকিবলৈ আৰম্ভ কৰে। লোক আখ্যান বা কাহিনীত উল্লেখ থকা মতে দুয়োটা থালৰ লোকে যি দিশৰ পৰা ভৈয়ামৰ দিশে অগ্ৰসৰ হৈছিল সেই দিশক তেওঁলোকে ঘৰ-বাৰী পতাৰ ক্ষেত্ৰত ব্যৱহাৰ কৰিছিল। এটা কথাৰ প্ৰচলতি আছিল বা বিশ্বাস আছিল যে তেওঁলোকে যি দিশৰ পৰা আহিছিল সেই দিশলৈ লক্ষ্য কৰি ঘৰ সাজিছিল। অৰ্থাৎ চিয়াং নদীৰে প্ৰব্ৰজিত হোৱা মিচিং থালটোৱে পূবা-পশ্চিমাকৈ আৰু সোৱণশিৰিৰে প্ৰব্ৰজিত হোৱ মিচিং থালটোৱে উত্তৰা-দক্ষিণাকৈ ঘৰসমূহ নিৰ্মাণ কৰা এক লোক আখ্যান জৰিত হৈ আছে। ঘৰ সজা বা ঘৰ সাজিবলৈ ব্যৱহৃৰা কৰা মাৰলিত ব্যৱহাৰ কৰা বাঁহসমূহ তেওঁলোক প্ৰব্ৰজিত হোৱা দিশলৈ দি ঘৰসমূহ প্ৰস্তুত কৰে। এনে ঘৰৰ নিৰ্মাণৰ দিশৰ জৰিয়তে মিচিং জনগোষ্ঠীৰ প্ৰব্ৰজনৰ ঐতিহাসিক প্ৰেক্ষাপট আৰু লগতে তেওঁলোকৰ মাজত প্ৰচলন থকা বিশ্বাস কথা স্পষ্ট কৰিব পাৰে। ইয়াৰ উপৰিও মিচিং জনগোষ্ঠীৰ দুটা থাল থকাৰ কথাষাৰৰৰো এটা উৎকৃষ্ট উদাহৰণ কথা ক'ব পৰা হয়— কিয়নো সোৱণশিৰিৰে অহা থালটো অৰুণাচলত বাস কৰা নিচিসকলৰ এটা থাল বুলি নিচি জনগোষ্ঠীয় লোকে ঠাৱৰ কৰে। কিয়নো নিচি জনগোষ্ঠীয় লোক অৰুণাচল প্ৰদেশৰ ইটানগৰক কেন্দ্ৰ কৰি থকা বিভিন্ন অঞ্চলতহে তেওঁলোকৰ বসতি। আনহাতে, চিয়াং ফালে নিচি জনগোষ্ঠীৰ কোনো লোক বসবাস কৰা দেখা নাযায়। তেনে তথ্যৰ জৰিয়তে এটা কথা স্পষ্ট কৰিব পাৰি যে ভাষাৰ ব্যৱহাৰ বা সাংস্কৃতিক কিছু পৰম্পৰা মিলৰ দিশেৰে নিচি আৰু মিচিং জনগোষ্ঠীৰ যে এটা ওচৰ সম্পৰ্ক আছিল তাকো প্ৰমাণ কৰিব পাৰি। [১৪]

মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোকৰ সৈতে জৰিত এনে প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কীয় লোক আখ্যান বা কাহিনীৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰিব পৰা হয়।

২.৩ লোকবিশ্বাস সম্পৰ্কীয় লোক কাহিনী ঃ

নিঃব আৰু ৰঃব নামৰ এহাল ককায়েক ভায়েক আছিল। নিঃব চতুৰ হোৱাৰ বিপৰীতে ৰঃব আছিল অজলা প্ৰকৃতিৰ। নিঃবই চতুৰালি কৰি ৰঃবৰ পৰা সকলো সম্পত্তি হস্তগত কৰিছিল। তাৰ ফলত দুয়োজন ককায়েক ভায়েকৰ মাজত কাজিয়াৰ সূত্ৰপাত হৈছিল। কাজিয়াৰ মীমাংসা কৰিবৰ বাবে বিভিন্ন দেৱতা সমবেত হৈ মেল বহুৱাই। তাতো নিঃবই চক্ৰান্ত কৰি সকলো সম্পত্তিৰ অধিকাৰী হোৱাৰ সৌভাগ্য লাভ কৰে। একো ভাগ নাপাই ৰঃবই মানৰ সমাজ ত্যাগ কৰি হাবি, গছ-গছনি, পৰ্বত-পাহাৰ, নদ-নদীত আশ্ৰয় লয়। তেতিয়াৰে পৰা প্ৰকৃতিৰ সকলো সম্পদ ৰঃবৰ সম্পত্তি হিচাপে গণ্য হয়। মানৰ জাতিৰ পৰা লুকাই থাকিবৰ বাবে দয়িং চাবৰন্ নামৰ কাল্পনিক জাল তৰি ৰঃব তাৰ আঁৰত থাকিবলৈ আৰম্ভ কৰে। তেতিয়াৰে পৰা ৰঃব মানুহৰ দৃষ্টিৰ আঁৰত অশৰীৰ দেৱতা হৈ থাকিল। নিঃব পাৰ্থিব বস্তু জগতৰ অপ্ৰতিদ্বন্দ্বী গৰাকী হ'ল। কিন্তু ৰঃবৰ মনত প্ৰতিশোধপৰায়ণতা মনোভাব চিৰদিন থাকি গ'ল। গতিকে মানুহে যেতিয়াই হাবিত প্ৰবেশ কৰি ৰঃবই ভাল নোপোৱা কাম কৰে তেতিয়াই তেওঁ অপকাৰ কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰে। তেওঁ অশৰীৰী, কিন্তু মানুহৰ বিভিন্ন ৰূপেৰে ছদ্মবেশ লৈ মানুহক ফুচুলাই হাবিলৈ নি জীয়াই জীয়াই তেজ শুহি খায়। [১৫]

এই লোককাহিনীটোৰ জৰিয়তে মিচিং জনগোষ্ঠীয় মানুহৰ মাজত প্ৰচলন হৈ থকা মংগল সাধন কৰিব পৰা দেৱতা আৰু অমংগল সাধন কৰিব পৰা দেৱতাৰ সম্পৰ্কে এক ধাৰণা আছে। এইসকলক সন্তুষ্ট কৰিব নোৱাৰিলে সমাজৰ বিপদ বা বিভিন্ন অপায় অমংগলে দেখা দিয়ে। এনে অমংগল সৃষ্টি কৰা দেৱতাক কেন্দ্ৰ কৰি বহুতো লোক কাহিনী মিচিং সমাজত প্ৰচলন আছে। য'ত লোকবিশ্বাসৰ বীজ সাঙোৰ খাই আছে।

মিচিং সমাজত প্ৰচলন থকা আন এক লোকবিশ্বাস সম্পৰ্কীয় লোককাহিনীলৈ চালে বিশেষত তেওঁলোকৰ মাজত প্ৰচলন থকা এনেধৰণৰ লোক কাহিনী আছে, সেয়া হ'ল—

এটা সময়ত মেদক খেলৰ মানুহবোৰ বয়সৰ অনুপাতে মৃত্যু হোৱা নাছিল। ফলস্বৰূপে তেওঁলোকৰ নানা দুখ-দুৰ্গতি হৈছিল। এই দুৰ্গতিৰ পৰা হাত সৰাৰ উপায় বিচাৰি থাকোতে এদিন এটা বুঢ়া ছাগলী মৰিল। ছাগলীটো মৰাত সকলো মিলি তাক সৎকাৰ কৰিলে আৰু জাতিলাউৰ আঞ্জা ৰান্ধি দদ্‌গাং (শ্ৰাদ্ধ) পাতিলে। বিশ্বাস অনুসৰি সেই সময়ৰ পৰা মেদক খেলৰ মানুহ মৰিবলৈ ল'লে। তেতিয়াৰে পৰা তেওঁলোকে ছাগলী আৰু জাতিলাউ সামাজিক কাজত নলগায় আৰু নাখায়। [১৬]

মিচিং জনসমাজত সৃষ্টিতত্ত্ব সম্পৰ্কীয় লোক কাহিনী, প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কীয় লোক কাহিনী আৰু লোকবিশ্বাস সম্পৰ্কীয় লোক কাহিনী বহুতো আছে। এনে লোককাহিনীসমূহৰ জৰিয়তে মিচিং জনগোষ্ঠীৰ সৃষ্টি সম্পৰ্কীয় ঐতিহাসিক প্ৰসংগ, লগতে সমাজিক সমূহৰ বিষয়ে জানিব পৰা যায়। এনে কাহিনীসমূহতে নিহিত হৈ আছে মিচিং নৃগোষ্ঠীৰ জন্ম সম্পৰ্কীয় বহুতো ইতিহাস।

৩.০ উপসংহাৰ ঃ

মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান ঃএক অধ্যয়ন এই প্ৰকল্প প্ৰতিবেদন প্ৰস্তুত কৰা মাজেৰে নৃগোষ্ঠী হিচাপে মিচিংসকলৰ সৃষ্টি তত্ত্ব সম্পৰ্কীয় বহুতো দিশ, লগতে প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কীয় বহুতো দিশ আৰু বিভিন্ন বিশ্বাস সম্পৰ্কীয় বহুতো লোক আখ্যান বা কাহিনী সম্পৰ্কে জনাৰ সুবিধা হ'ল। ইয়াৰ উপৰিও এই লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহে মিচিং সমাজখনৰ ঐতিহাসিক প্ৰেক্ষাপট, সামাজিক সন্দৰ্ভ, অৰ্থনৈতিক সন্দৰ্ভ আৰু সাংস্কৃতিক সন্দৰ্ভসমূহৰ বিষয়ে জানিবলৈ সহায় কৰিলে।

৩.১ গৱেষণাৰ সিদ্ধান্ত ঃ

মিচিং জনসামজত মুখ পৰম্পৰাত প্ৰচলিত হৈ থকা লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ জৰিয়তে মিচিং সমাজৰ ঐতিহ্য, সাংস্কৃতিক দিশৰ মনন, লগতে সমাজখনৰ পৰম্পৰা বা ঐতিহ্য এখন স্পষ্ট ছবি লক্ষ্য কৰা যায়। সামাজখনৰ সামাজিক সন্দৰ্ভ, অৰ্থনৈতিক সন্দৰ্ভসমূহৰ মাজেৰে কেনেদৰে নিজকে আজিৰ স্তৰত নিকপকীয়াকৈ সজাই নিজকে আগবঢ়াই নিছে সেই কথা স্পষ্ট হৈছে।

গৱেষণাৰ পৰা পোৱা সিদ্ধান্তসমূহ এনেধৰণৰ—

➢ মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোক আখ্যান বা কাহিনীৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে এটা সিদ্ধান্তলৈ আহিব পৰা যায় যে মিচিং নৃগোষ্ঠীলোকৰ ঐতিহাসিক সন্দৰ্ভ অতি পুৰণি। মিচিং নৃগোষ্ঠীয় লোকৰ যি প্ৰব্ৰজনৰ ঐতিহাসিক সন্দৰ্ভ আছে তাৰ

পৰা এটা কথা স্পষ্ট যে তেওঁলোকৰ প্ৰব্ৰজিত ইতিহাসৰ দিশত অৰ্থনৈতিক সন্দৰ্ভৰ প্ৰভাৱ গ্ৰাহ। অৰ্থনৈতিক সন্দৰ্ভৰ ফলশ্ৰুতিতে মিচিং জনগোষ্ঠীয় মানুহবোৰ বিভিন্ন সময়ত সংঘাতৰ মুখামুখি হোৱাৰ দিশ স্পষ্ট। সেয়ে তেওঁলোকে সময় অনুসৰি সেই অৰ্থনৈতিক সন্দৰ্ভৰ সৈতে মোকামিলা কৰিবৰ বাবে ভৈয়ামলৈ পৰ্যবসিত হৈছিল।

➢ মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান বা কাহিনীৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে এটা সিদ্ধান্তলৈ আহিব পাৰি যে মিচিং সমাজত প্ৰকৃতি পূজা এক উল্লেখযোগ্য দিশ। কাৰণ প্ৰকৃতিক কেন্দ্ৰ কৰিয়ে মিচিং জনগোষ্ঠীৰ সৃজন বা সৃষ্টি। কিয়নো এই প্ৰকৃতিৰ কোলাতে বিভিন্ন অলৌকিক দেৱ-দেৱতাৰ বিচৰণ মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোকে বিশ্বাস কৰে। সেই বিশ্বাস বৰ্তাই ৰাখিবৰ বাবে মিচিং জনগোষ্ঠীয় মানুহৰ মাজত দেৱ-দেৱতা তথা অলৌকিক শক্তি আৰু প্ৰকৃতিক সন্তুষ্ট কৰাৰ বাবে বিভিন্ন পূজা অৰ্চনা কৰা দিশ লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ জৰিয়তে জানিব পাৰি।

➢ মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ জৰিয়তে এটা সিদ্ধান্তলৈ আহিব পাৰি যে তেওঁলোকৰ লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ অঞ্চলসাপেক্ষে কথন শৈলীসমূহৰ সামান্য তাৰাতম্য লক্ষ্য কৰা যায়। মিচিং কাহিনীসমূহত সৃষ্টি তত্ত্বৰ সৈতে জৰিত প্ৰকৃতিৰ মাহাত্ম্য বিশেষকৈ চন্দ্ৰ আৰু সূৰ্যৰ কথা ঘোষণা কৰা প্ৰয়াস দেখা যায়।

➢ মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহত বিনোদন, নীতি শিক্ষা আদি প্ৰকাশৰ বিপৰীতে ধৰ্মীয় বিশ্বাস বা সংস্কাৰৰ প্ৰতি সজাগ কৰি তোলাৰ প্ৰয়াস দেখা যায়।

৩.২ ভৱিষ্যৎ অধ্যয়নৰ সম্ভাৱনীয়তা ঃ

গৱেষণা কৰ্ম এটা পূৰ্বে ভাবি লোৱা কিছুমান প্ৰশ্নৰ আধাৰত আগবাঢ়ি যায়। অধ্যয়নৰ অন্তত সেই পূৰ্বে কৰা ধাৰণাসমূহৰ সঠিক উত্তৰো কোনোবাখিনিত স্পষ্ট নহয়। সিয়ে হ'লেও উক্ত গৱেষণা কাৰ্য সমাপণ হোৱাৰ অন্তত কিছুমান নতুন দিশৰ মুখ উলাই আহে। সময় আৰু বিষয়ৰ সীমাবদ্ধতাৰ বাবে কোনোবাখিনিত সকলো কথা আলোচনা কৰাৰ পৰা বিৰত থাকিব লগা হয়। এই অধ্যয়নৰ অন্তত মিচিং জনগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান বা কাহিনীৰ দিশত অন্যান্য বহুতো দিশকে অধ্যয়নৰ মাজলৈ আনাৰ সম্ভাৱনা পৰিলক্ষিত হয়। তেনে সম্ভাৱনীয়তাসমূহ এনেধৰণৰ—

➢ নৃগোষ্ঠী হিচাপে মিচিংসকলৰ লোক আখ্যান বা কাহিনীৰ বিষয়ে যি অধ্যয়ন কৰিবলৈ লোৱা হ'ল একে দৰে অন্যান্য নৃগোষ্ঠীসমূহৰ এনে আখ্যানসমূহৰ আলোচনাই সেই নৃগোষ্ঠীৰ ঐতিহাসিক প্ৰেক্ষাপটৰ সকলো দিশক পোহৰলৈ অনাতো সম্ভৱ হ'ব পাৰে।

➢ মিচিং নৃগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান বা লোক কাহিনী আৰু অন্যান্য নৃগোষ্ঠীৰ সৈতে তুলনামূলক অধ্যয়ন হ'ব পাৰে। এনে তুলনামূলক অধ্যয়নে নৃগোষ্ঠীসমূহৰ লোক আখ্যানৰ গঠন সম্পৰ্কীয় দিশ, সামাজিক সন্দৰ্ভ, পৰিৱেশৰ সন্দৰ্ভ আদিক স্পষ্ট কৰিব। ইয়াৰ বাহিৰেও সমগোত্ৰীয় জনগোষ্ঠীৰ লোক আখ্যান বা কাহিনীৰ ভাববস্তুৰ তুলনামূলক অধ্যয়ন হ'ব পাৰে।

➢ জনগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহে লোকসমাজত পেলাব পৰা প্ৰভাৱ আৰু সাম্প্ৰতিক সময়ত এই আখ্যানসমূহৰ প্ৰাসংগিক স্থিতি সম্পৰ্কে গৱেষণা হ'ব পাৰে।

➢ জনগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান বা কাহিনীসমূহৰ শৈলীগত বিচাৰ আৰু বিশ্লেষণৰ আলোচনা হ'ব পাৰে।

➢ জনগোষ্ঠীয় লোক আখ্যান বা কাহিনীবোৰ বিষয়গত বিচাৰ বিশ্লেষণৰ তুলনামূলক আলোচনা হ'ব পাৰে।

এনে দিশৰ সঠিক আলোচনাৰ জৰিয়তে মিচিং জনসমাজৰ বিবিধ তথ্যৰ বিবিধ সন্দৰ্ভ পোহৰলৈ অহা লগে লগে শক্তিশালী ৰূপত প্ৰতিষ্ঠা হোৱাৰ ক্ষেত্ৰতো সহায়ক হ'ব। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী

অসমীয়া ভাষাৰ গ্ৰন্থ ঃ

কাগয়ুং, ভৃগুমুণি (সম্পা.). *মিচিং সংস্কৃতিৰ আলেখ্য.* গুৱাহাটী ঃ সংশোধিত আৰু পৰিবৰ্ধিত সংস্কৰণ, ১৯৮৯

কুলি, জৱাহৰ জ্যোতি. *মিচিং সংস্কৃতি.* খণ্ড-১, ডিব্ৰুগড় ঃ কৌস্তভ প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৩

- -. *মিচিং সংস্কৃতি.* খণ্ড-১, ডিব্ৰুগড়ঃ কৌস্তভ প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৯

- -. *ব্ৰহ্মপুত্ৰ উপত্যকাৰ মিচিং সভ্যতা.* ডিব্ৰুগড় ঃ কৌস্তভ প্ৰকাশন, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১৪

গগৈ, চাও লোকেশ্বৰ. *অসমৰ লোক-সংস্কৃতি (দ্বিতীয় খণ্ড),* নগাঁও ঃ ক্ৰান্তিকাল প্ৰকাশন, ২০১১

গগৈ, লীলা. *অসমৰ সংস্কৃতি,* একাদশ সংস্কৰণ, ২০১৭, বনলতা, নতুন বজাৰ, ডিব্ৰুগড়-১

গগৈ, লীলা ঃ *অসমীয়া লোকসাহিত্যৰ ৰূপৰেখা,* বনলতা প্ৰকাশন, ডিব্ৰুগড় ২০০৮

গোস্বামী, চন্দনা ঃ *কৌয়ুম,* চন্দ্ৰ প্ৰকাশন, তৃতীয় প্ৰকাশ, ২০১৩

দলে, বিদ্যাধৰ. *কৌংয়ুম-কৌংৰ,* টেৰিক'ম প্ৰিণ্টছ্, ধেমাজি, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১৯

দলে, বসন্ত কুমাৰ. *মিচিং সমাজ-সংস্কৃতিৰ সমীক্ষা.* গুৱাহাটীঃ চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৮

দত্ত গোস্বামী, প্ৰফুল্ল ঃ *অসমীয়া জনসাহিত্য,* বাণী প্ৰকাশ, পঞ্চম সংস্কৰণ ১৯৯৮

পাটৰ, পদ্ম (সম্পা.). *জনজাতি সমাজ সংস্কৃতি,* তৃতীয় প্ৰকাশ, ডিচেম্বৰ-২০১২, ৰিংচাং প্ৰকাশ,গুৱাহাটী, ৭৮১০০৬

পাদুন, নাহেন্দ্ৰ (সম্পা.) ঃ *মিচিং লোকগীত,* মিচিং আগম কৌবাং, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৫

পাদুন, নাহেন্দ্ৰ.*মিচিং সাধু.* গুৱাহাটীঃ প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৮৮

অসমীয়া সংস্কৃতিলৈ জনজাতীয় বৰঙণি. শিৱসাগৰঃ প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৮৮

পামেগাম, তৰুণচন্দ্ৰ.*মিচিং সাধু.* যোৰহাটঃ অসম সাহিত্য সভা, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, ১৯৯৩

পাএঙাং কটকী, সোণাৰাম. *মিৰি জাতিৰ বুৰঞ্জী.* ডিব্ৰুগড়ঃ বাগ্‌চি এণ্ড ক', প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৩৫

পায়েং, যতীন. *মিচিং ভাষা সাহিত্যৰ চমু সমীক্ষা.* যোৰহাটঃ শব্দ প্ৰকাশ, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১১

পায়েং, সদানন্দ. *মিচিং জনজাতি সমাজ আৰু সংস্কৃতি.* নগাঁওঃ জাগৰণ সাহিত্য প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১১

পেগু, নোমল চন্দ্ৰ ঃ *মিচিংসকলৰ ইতিবৃত্ত আৰু সংস্কৃতি,*ভাৰতী প্ৰকাশন, কছাৰীবস্তি গুৱাহাটী

পেগু, ইন্দেশ্বৰ. *মিচিং সমাজ আৰু সংস্কৃতি.* গুৱাহাটীঃ অসম জনজাতি আৰু অনুসূচিত জাতি গৱেষণা প্ৰতিষ্ঠান, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৩

পেগু, গণেশ. *মিচিং জন-সাহিত্য.* গুৱাহাটীঃ জি.এম.কে পাব্লিকেশ্বন, প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৯৬

বেজবৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ. *বুঢ়ী আইৰ সাধু,* বনলতা, জুন, ২০২২

ভট্টাচাৰ্য্য, প্ৰমোদচন্দ্ৰ (সম্পা.). *অসমৰ জনজাতি,* তৃতীয় সংস্কৰণ, অক্টোবৰ- ২০০৮, অসম সাহিত্য সভা

মহন্ত চৌধুৰী, সুবাসনা আৰু পল্লৱী বুজৰবুৰুৱা (সম্পা.). *অসমৰ জনগোষ্ঠীয় লোকসাহিত্য,* অসমীয়া বিভাগ, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয় প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৯

শইকীয়া, নগেন. *গৱেষণা পদ্ধতি পৰিচয়,* অষ্টম মুদ্ৰণ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১৮, কৌস্তুভ প্ৰকাশন, ডিব্ৰুগড়-১

শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ. *অসমীয়া লোক-সংস্কৃতিৰ আভাস,* পঞ্চম প্ৰকাশ-২০১১, বাণীপ্ৰকাশ, গুৱাহাটী-৭৮১০০১

শৰ্মা নবীনচন্দ্ৰ ঃ *লোকসংস্কৃতি,* চন্দ্ৰ প্ৰকাশ প্ৰাইভেট লিমিটেড, পাণবজাৰ গুৱাহাটী, পৰিৱৰ্ধিত আৰু পৰিশোধিত সংস্কৰণ, ২০১৩

শৰ্মা, শশী. *অসমৰ লোকসাহিত্য,* ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্ট'ৰচ্, প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৯৩

মিচিং ভাষাৰ গ্ৰন্থ

কুম্বাং, দিৰাম (সংক). *Lugo Meng-go.* চিলাপথাৰ ঃ মিচিং আগম কৌবাং, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৭

Koman,Mg. Joyonto, Dole, Mg. Jolendro Nath (Nébingkumsu) : *Leke Do:ying,* Mising Agom Kébang, Second Edition, December, 2017

দলে, সুৰেন. *MIBU A:BANG.* গুৱাহাটী ঃ অসম জনজাতি আৰু অনুসূচিত জাতি গৱেষণা প্ৰতিষ্ঠান, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৭

পাদুন, নাহেন্দ্ৰ (সম্পা.). *মিচিং গমনু.* ধেমাজি ঃ মিচিং আগম কৌবাং, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৩

- - (সংক, সম্পা.). *মিচিং নিঃতম (প্ৰথম ভাগ) মিবু আঃবাং.* শিৱসাগৰঃ মিচিং আগম কৌবাং, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৫

- -. *চেংদৃ মেংলম কুমনাম নিঃতম.* দিচাংমুখ, শিৱসাগৰ ঃ তৃতীয় প্ৰকাশ, ২০১২

পাদুন, নাহেন্দ্ৰ আৰু দলে, বসন্ত কুমাৰ (সম্পা.). *Mising Gomnu. (মিচিং পৰিভাষা)* ধেমাজিঃ মিচিং আগম কৌবাং, গোগামুখ, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৩

গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

(ক) পিএইচ. ডি.

বিন্দু ভূষণ বৰা ঃ *দেউৰী লোকসাহিত্য ঃ এক সমীক্ষাত্মক অধ্যয়ন,* অসমীয়া বিভাগ, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৭

(খ) এম.ফিল

পৰশমণি গগৈ ঃ *মিচিং লোককাহিনীঃ পৰিৱেশ প্ৰসংগ বিচাৰ,* অসমীয়া বিভাগ, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৭

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অসমৰ কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ মাধ্যমিক পর্যায়ৰ ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ ওপৰত এক অধ্যয়ন

উদ্দীপনা তালুকদাৰ
গৱেষক
ইন্দিৰা মিৰি স্কুল অব্ এডুকেশ্ন
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ বাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়
৯৬৭৮৯৩১৭৫৭
t.uddipana@gmail.com

ড° প্রণৱ শইকীয়া
সঞ্চালক (ভাৰপ্রাপ্ত) সহযোগী অধ্যাপক
ইন্দিৰা মিৰি স্কুল অব্ এডুকেশ্ন
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ বাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়
৯৪৩৬৩৭৮৬৬৯
pranabsaikia@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

সময় আৰু সমাজৰ পৰিৱর্তনৰ প্রতি লক্ষ্য ৰাখি বর্তমানৰ বিদ্যালয় পাঠ্যক্রমসমূহ যথেষ্ট চহকী আৰু পৰিৱর্তিত। এই পৰিৱর্তিত পাঠ্যক্রম অনুসৰি শিক্ষা গ্রহণ কৰোতে বিদ্যালয় পর্যায়তে ছাত্র-ছাত্রীসকলে জীৱনৰ লক্ষ্য স্থিৰ কৰিবলৈ তথা জীৱনক প্রস্তুত কৰি ল'বলৈ নিজ ৰুচি-অভিৰুচি অনুসৰি এটা বৃত্তি অথবা পথ নির্বাচন কৰি ল'বলৈ পর্যাপ্ত পৰিমাণৰ পৰামর্শৰ প্রয়োজন। এনেধৰণৰ প্রয়োজনতে ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ মাজত এটি যোগাত্মক মনোভাব গঢ়ি তুলিবলৈ শিক্ষানুষ্ঠানসমূহে সকলো ধৰণৰ প্রচেষ্টা গ্রহণ কৰা উচিত। আকৌ যিকোনো এজন ব্যক্তিৰ বৃত্তিগত কৃতকার্যতা নির্ভৰ কৰে তেওঁৰ আগ্রহ, ক্ষমতা আৰু ৰুচিবোধৰ ওপৰত। এই গুণসমূহ বিকাশ কৰিবলৈ শিক্ষানুষ্ঠানসমূহত এটা সু-পৰিকল্পিত বৃত্তিমূলক পৰামর্শ দান ব্যৱস্থা থাকিব লাগিব য'ত তেওঁলোকে প্রয়োজনীয় সকলো তথ্য আৰু সংবাদ পাব পাৰিব আৰু তাৰ সহায়তে নিজকে প্রস্তুত কৰি জীৱনলৈ আহিব পৰা সকলো ধৰণৰ প্রত্যাহ্বানৰ সন্মুখিত হ'ব পাৰিব। এনে পৰিপ্রেক্ষিততে কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ অসমীয়া মাধ্যমৰ চৰকাৰী বিদ্যালয়সমূহত বৃত্তিমূলক পৰামর্শৰ প্রয়োজনীয়তা সম্পর্কে অধ্যয়ন কৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে আৰু এই অধ্যয়নৰ বাবে সুবিধা আৰু পূর্ণাংগ নমুনাকৰণ পদ্ধতিৰে গুৱাহাটী শিক্ষাখণ্ডৰ ১৫খন বিদ্যালয় নির্বাচন কৰা হৈছে। প্রতিখন নির্বাচিত বিদ্যালয়ৰ পৰা দশম শ্রেণীৰ দহগৰাকী ছাত্র আৰু দহগৰাকী ছাত্রীক যাদৃচ্ছিক স্তৰ বিন্যাস পদ্ধতিৰে মুঠ ৩০০ গৰাকী শিক্ষার্থী প্রতিদর্শৰূপে বাছনি কৰি লোৱা হৈছে। এই অধ্যয়ন আগবঢ়াই নিবলৈ প্রয়োজনীয় তথ্য সংগ্রহৰ বাবে Guidance need Inventory নামৰ প্রমাণিকৃত আহিলাখনত বৃত্তিমূলক পৰামর্শৰ বিষয়ে সন্নিবিষ্ট বিবৃত্তিসমূহ ব্যৱহাৰ কৰি প্রাপ্ত তথ্যসমূহ পাৰিসংখ্যিক পদ্ধতি সাধাৰণ শতাংশ আৰু দণ্ড চিত্রৰ সহায়ত বিশ্লেষণ কৰা হৈছে। এই অধ্যয়নৰ পৰা প্রাপ্ত তথ্যসমূহ উক্ত গৱেষণা পত্রত বিতংভাৱে আলোচনা কৰা হ'ল।

প্রাধান্যমূলক শব্দ ঃ বৃত্তিমূলক নির্দেশনা, প্রয়োজন, মাধ্যমিক বিদ্যালয় আৰু নির্দেশনা।

১.০ প্রস্তাৱনা ঃ জীৱনৰ প্রতিটো খোজতে সকলোবোৰ কাম সুকলমে আৰু অতি পাৰদর্শিতাৰে কৰিবলৈ হ'লে আমাক পৰামর্শ লাগিবই। বিশেষকৈ এই তীব্র প্রতিযোগিতাৰ দিনত উৎকৃষ্ট ফলাফল লাভৰ বাবে যিকোনো ব্যক্তিকে পৰামর্শ সেৱা

অতিব প্রয়োজন। দৰাচলতে আমি আমাৰ জীৱন আনৰ পৰামৰ্শৰেই আৰম্ভ কৰো আৰু এই প্রসংগত জীৱনৰ সামাজিকৰণৰ প্রাথমিক মাধ্যম হিচাপে পৰিয়ালে এক গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা পালন কৰে। এই ক্ষেত্রত Morris Ruth Stangয়ে নির্দেশনাৰ বিষয়ে মন্তব্য প্রকাশ কৰিবলৈ গৈ ব্যক্ত কৰিছে যে সজ নির্দেশনাৰ দ্বাৰা একোগৰাকী ব্যক্তিয়ে নিজ দক্ষতা আৰু উদ্ভাৱনী শক্তিৰ বিকাশ সাধন কৰি ব্যক্তিগত স্বাচ্ছন্দ্য আৰু সামাজিক কল্যাণ সাধন কৰিব পাৰে। এই নির্দেশনাই একোজন ব্যক্তিৰ আত্ম দক্ষতা বা আত্ম বিশ্বাস জগাই তুলি কোনো শুদ্ধ সিদ্ধান্ত লোৱাত সহায় কৰে। তদুপৰি নির্দেশনা সেৱাই মানুহৰ জীৱন শৈলীৰ বিকাশ ঘটাই জীৱনৰ বাস্তৱতাৰ লগত সুন্দৰকৈ মুখামুখি হ'বৰ কাৰণে প্রস্তুত কৰি তোলে। সাংগঠনিক সেৱা হিচাপে নির্দেশনা সেৱাক বিভিন্ন ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি যথা ব্যক্তিগত নির্দেশনা, শৈক্ষিক নির্দেশনা, সামাজিক নির্দেশনা, কর্মজীৱন সম্পর্কীয় নির্দেশনা, মনোবৈজ্ঞানিক নির্দেশনা ইত্যাদি আৰু এজন ব্যক্তিৰ ব্যক্তিত্বৰ সর্বাংগীন বিকাশৰ বাবে এই প্রতিবিধ নির্দেশনা সেৱাই হৈছে অত্যন্ত জৰুৰী। বিশেষকৈ মাধ্যমিক পর্যায়ৰ ছাত্র-ছাত্রীসকলক বৃত্তিমূলক নির্দেশনা সেৱাই তেওঁলোকৰ নিজৰ আগ্রহ, ইচ্ছা আৰু প্রয়োজন অনুসৰি ভৱিষ্যতৰ বাবে এটি সঠিক বৃত্তি নির্বাচন কৰিবলৈ সহায় কৰে।

বৃত্তিমূলক নির্দেশনাই ছাত্র-ছাত্রীসকলক জীৱিকা উপার্জনৰ বিভিন্ন ক্ষেত্রৰ পৰিসৰৰ জ্ঞান আগবঢ়াই আৰু সেইসমূহৰ ভিতৰৰ পৰা নিজ পছন্দ অনুসৰি নির্বাচন কৰা বৃত্তি অনুযায়ী নিজৰ কর্মজীৱন আগবঢ়াই নিবলৈ সক্ষম কৰি তোলে। আজিৰ জটিল সমাজখনত ভিন্ন বৃত্তি উপলব্ধ হ'লেও কৈশোৰ ছাত্র-ছাত্রীসকলক সঠিক দিশত পৰিচালনা কৰাটো বৰ কঠিন। এনে পৰিপ্রেক্ষিতত নির্দেশনা সেৱা নিতান্ত প্রয়োজনীয় যাৰ জৰিয়তে ছাত্র-ছাত্রীসকলে বিভিন্ন বৃত্তিৰ বিষয়ে প্রয়োজনীয় তথ্যসমূহ পাব পাৰিব আৰু তেওঁলোকে ছাত্র জীৱনতে সঠিক বৃত্তি এটি নির্বাচন কৰিবলৈ সমর্থৱান হৈ উঠিব। ইয়াৰ দ্বাৰা ছাত্র-ছাত্রীসকলেও ভৱিষ্যৎ সমাজৰ অর্থনৈতিকভাৱে সবল ব্যক্তি হ'বলৈ সক্ষম হ'ব, সেয়েহে এই অধ্যয়নৰ জৰিয়তে ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ নিজৰ ইচ্ছা, আগ্রহ, ৰুচি, অভিৰুচি অনুযায়ী উপযুক্ত বৃত্তি বাছনি কৰিবৰ বাবে নির্দেশনা সেৱাৰ প্রয়োজনীয়তা সম্পর্কে জানিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

১.১ আনুসংগিক গৱেষণা-লেখনি পর্যালোচনাঃ

মণিকা শর্মাই ২০১৪ চনত মাধ্যমিক পর্যায়ৰ ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ বাবে 'নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তা আৰু লিংগ আৰু শৈক্ষিক উদ্বেগৰ নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ ওপৰত প্রভাৱ' শীর্ষক এটি অধ্যয়ন কৰিছিল। এই অধ্যয়নৰ জৰিয়তে তেওঁ পাইছিল যে ছাত্রসকল আৰু শৈক্ষিক উদ্বেগ থকা ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ মাজত নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তা তুলনামূলকভাৱে বেছি।

পুনীয়া শকুন্তলা আৰু সন্তোষ চানংবানে ২০১৫ চনত কৰা এটি গৱেষণাৰ জৰিয়তে মহাবিদ্যালয় আৰু বিদ্যালয়ত অধ্যয়নৰত শিক্ষার্থীসকলৰ মাজত নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ পার্থক্য বিচাৰ কৰিবলৈ প্রয়াস কৰিছিল। উক্ত গৱেষণাৰ বাবে গৱেষকসকলে Guidance need inventory নামৰ প্রমাণিকৃত আহিলাবিধ তথ্য সংগ্রহৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰিছিল। সংগৃহীত তথ্যসমূহ বিশ্লেষণ কৰি পাইছিল যে নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তা বিদ্যালয়ত অধ্যয়নৰত ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ বাবে মহাবিদ্যালয়ৰ ছাত্র-ছাত্রীসকলতকৈ তুলনামূলকভাৱে বেছি। ইয়াৰ উপৰি সামাজিক মনোবৈজ্ঞানিক আৰু শাৰীৰিক দিশত নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ ক্ষেত্রত পার্থক্য পৰিলক্ষিত হৈছিল। সুৰেশ প্রভুৱেও ২০১৫ চনত প্রায় একেধৰণৰ অধ্যয়ন এটি তামিলনাড়ুৰ নামাল জিলাত কৰিছিল। এই অধ্যয়নৰ জৰিয়তে গৱেষকে উচ্চতৰ মাধ্যমিক পর্যায়ত অধ্যয়নৰত ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ ওপৰত লিংগ, স্থান, বিদ্যালয় পৰিচালনা ব্যৱস্থা, বিষয় আৰু অভিভাৱকৰ শৈক্ষিক অর্হতাৰ প্রভাৱ অনুসন্ধান কৰিছিল। উক্ত অধ্যয়নৰ জৰিয়তে এইটোৱে প্রতিপন্ন হৈছিল যে নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ ওপৰত শিক্ষার্থীসকলৰ লিংগ, স্থান, বিদ্যালয় পৰিচালনা ব্যৱস্থা, বিষয় আৰু অভিভাৱকৰ শৈক্ষিক অর্হতাই কোনো ধৰণৰ পার্থক্য সৃষ্টি কৰিব পৰা নাছিল।

বাতৰা হানিছা আৰু প্রিয়াৰি দয়ালে ২০১৯ চনত দিল্লীৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়সমূহত 'নির্দেশনা আৰু পৰামর্শ ব্যৱস্থাৰ স্থিতি' অধ্যয়ন কৰিবলৈ প্রয়াস কৰি এটি গৱেষণা কৰিছিল। উক্ত গৱেষণাত পৰামর্শদাতাসকলে নির্দেশনা আৰু পৰামর্শ ব্যৱস্থাত কিছু আসোঁৱাহ দেখুৱাইছিল যদিও বিদ্যালয় কর্তৃপক্ষই নির্দেশনা আৰু পৰামর্শ সেৱা নিয়াৰীকৈ কার্যকৰী কৰিবলৈ সু-ব্যৱস্থা গ্রহণ কৰিছিল। এই প্রসংগত বিদ্যালয় কর্তৃপক্ষই লোৱা ব্যৱস্থাসমূহৰ প্রতি অভিভাৱক, শিক্ষক আৰু ছাত্র-ছাত্রীসকল অত্যন্ত সজাগ আছিল।

ব্যক্তি বিশেষে কৰা বৃত্তি নিৰ্বাচন নিৰ্ভৰ কৰে ব্যক্তিজনৰ যোগ্যতা ৰুচি-অভিৰুচিৰ ওপৰত। এই ক্ষেত্ৰত শিক্ষানুষ্ঠানসমূহে শিক্ষাৰ্থীসকলৰ মাজত এক যোগাত্মক মনোভাবৰ জৰিয়তে নিজস্ব দক্ষতাসমূহ উদ্ভাৱন কৰিবলৈ সম্ভৱপৰ সকলো প্ৰচেষ্টা গ্ৰহণ কৰা উচিত। কিন্তু ২০০৫ চনত সৰিতা দেৱীয়ে সম্পন্ন কৰা গৱেষণাৰ জৰিয়তে পোৱা তথ্য অনুসৰি গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ অধীনৰ মহাবিদ্যালয়সমূহত ব্যক্তিগত পাঠ্যক্ৰমসমূহ উচিতভাৱে কাৰ্যকৰী হোৱা নাই আৰু এই পাঠ্যক্ৰমসমূহত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ সংখ্যা তেনেই তাকৰ। সেয়েহে এই পাঠ্যক্ৰমসমূহত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ হাৰ বৃদ্ধি কৰবলৈ বিদ্যালয় পৰ্যায়ৰ পৰাই বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ জৰিয়তে বিভিন্ন বৃত্তিমূলক পাঠ্যক্ৰমৰ পৰিসৰৰ বিষয়ে তেওঁলোকক সঠিক তথ্য যোগান ধৰাটো অতিকৈ প্ৰয়োজনীয়। কিন্তু বৃত্তিগত নিৰ্দেশনা ব্যৱস্থা কাৰ্যকৰী কৰিবলৈ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ এই নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাসমূহ জানি লোৱাটো দৰকাৰ। সেইবাবে উক্ত অধ্যয়নটোৰ জৰিয়তে কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ লিংগভিত্তিক বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বিচাৰ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

ওপৰৰ আলোচনাৰ পৰা এইটোৱে পোৱা গ'ল যে গৱেষকসকলে তেওঁলোকৰ নিৰ্দিষ্ট অধ্যয়ন ক্ষেত্ৰসমূহত নিৰ্দেশনা ব্যৱস্থাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আৰু বিভিন্ন কাৰকৰ ইয়াৰ ওপৰত প্ৰভাৱৰ বিষয়ে খুতি-নাতি মাৰি গৱেষণা সম্পন্ন কৰিছে। কিন্তু গৱেষণাসমূহত বিশেষকৈ কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ মাজত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা ফঁহিয়াই চাবলৈ প্ৰয়াস কৰা হোৱা নাই। নিঃসন্দেহে এজন ব্যক্তিৰ ব্যক্তিত্বৰ সৰ্বাংগীন বিকাশৰ বাবে বিভিন্ন দিশত পৰামৰ্শ অতিকৈ প্ৰয়োজনীয় কিন্তু মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বাবে বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনা অতিকৈ প্ৰয়োজনীয়। কাৰণ এই ব্যৱস্থাই ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলক নিজৰ পছন্দৰ বৃত্তি বাছনি কৰি কৰ্মজীৱন আৰম্ভ কৰিবলৈ দিশ প্ৰদৰ্শন কৰে। যিহেতু আজিলৈকে এই ক্ষেত্ৰত কোনো অধ্যয়ন কৰাৰ তথ্য পোৱা নাই, সেয়ে উক্ত অধ্যয়ন বৰ্তমানৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ লিংগভিত্তিক বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ উমান দিব।

১.২ সমস্যাৰ বিবৃত্তি ঃ

অসমৰ কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ চৰকাৰী অসমীয়া মাধ্যমৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ দশম শ্ৰেণীৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ ওপৰত এক অধ্যয়ন।

১.৩ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

এই অধ্যয়নৰ মুখ্য উদ্দেশ্য হ'ল কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ লিংগভিত্তিক বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বিচাৰ কৰা।

১.৪ ব্যৱহৃত শব্দ বা ধাৰণাৰ কাৰ্যকৰী সংজ্ঞা

(ক) বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনা ঃ ৰাষ্ট্ৰীয় বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনা সংস্থাৰ মতে, বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনা হৈছে এক প্ৰক্ৰিয়া, যাৰ জৰিয়তে ব্যক্তিজনে এটা বৃত্তি বাছনি কৰি ল'ব, সেই বৃত্তিৰ বাবে নিজক প্ৰস্তুত কৰিব আৰু সেই বৃত্তিত মনোনিৱেশ কৰি অগ্ৰগতি লাভ কৰিব পাৰে।

উক্ত অধ্যয়নটোত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনা বুলি কওঁতে বিদ্যালয় পৰ্যায়তে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ মাজত বিভিন্ন বৃত্তিৰ বিষয়ে পূৰ্ব আভাস দি তেওঁলোকৰ নিজৰ নিজৰ আগ্ৰহ, ৰুচি-অভিৰুচি অনুযায়ী তাৰ মাজৰ পৰা নিজৰ বাবে সঠিক এটি বৃত্তি নিৰ্বাচন কৰি কেনেদৰে নিজৰ কৰ্মজীৱন আগবঢ়াই নিব পাৰিব তাকে বুজোৱা হৈছে।

(খ) প্ৰয়োজন ঃ উক্ত অধ্যয়নটোত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজন বুজোৱা হৈছে।

(গ) মাধ্যমিক পৰ্যায় ঃ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ দশম শ্ৰেণীটো উক্ত অধ্যয়নটোত অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হৈছে।

(ঘ) নিৰ্দেশনা ঃ নিৰ্দেশনা হৈছে কোনো কাম নিয়াৰীকৈ সম্পন্ন কৰিবলৈ আৰু জীৱনৰ লক্ষ্যসমূহ সুকলমে অতিক্ৰম কৰিবলৈ অভিজ্ঞ ব্যক্তিসকলৰ পৰা লাভ কৰা উপদেশসমূহ।

১.৫ গৱেষণা পদ্ধতি ঃ

এই অধ্যয়নত বৰ্ণাত্মক জৰিপ পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰা হ'ব। প্ৰাৰম্ভিকভাৱে কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ অন্তৰ্গত গুৱাহাটী শিক্ষাখণ্ডৰ অসমীয়া মাধ্যমৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ ১৫ বিদ্যালয় সুবিধা আৰু পূৰ্ণাংগ নমুনাকৰণ পদ্ধতিৰে বাছনি কৰি লোৱা হৈছে। এই অনুসৰি মুঠ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ সংখ্যা ৬০০ জন। যাদৃচ্ছিক শ্ৰেণীবিন্যাস নমুনাকৰণ পদ্ধতিৰে নিৰ্বাচিত প্ৰতিখন বিদ্যালয়ৰ দশম শ্ৰেণীৰ পৰা ১০ জন ছাত্ৰ আৰু ১০ গৰাকী ছাত্ৰী বাছনি কৰি লোৱা হৈছে। গতিকে মুঠ প্ৰতিদৰ্শ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ সংখ্যা হ'ব ৩০০ জন।

(ক) অধ্যয়নৰ জনসংখ্যাঃ এই অধ্যয়নৰ জনসংখ্যাৰ বাবে নিৰ্বাচিত ১৫খন অসমীয়া মাধ্যমৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ

বিদ্যালয়ৰ দশম শ্ৰেণীৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলক লোৱা হৈছে। সৰ্বমুঠ জনসংখ্যা ৬০০জন।

(খ) নমুনা ঃ গুৱাহাটী শিক্ষাখণ্ডৰ ১৫খন নিৰ্বাচিত অসমীয়া মাধ্যমৰ মাধ্যমিক পৰ্যায়ৰ প্ৰতিখন বিদ্যালয়ৰ পৰা ১০জন ছাত্ৰ আৰু ১০গৰাকী ছাত্ৰীক যাদৃচ্ছিক শ্ৰেণী বিন্যাস নমুনা কৰণ পদ্ধতিৰে নিৰ্বাচন কৰা হৈছে। সৰ্বমুঠ প্ৰতিদৰ্শ ছাত্ৰ-ছাত্ৰী হৈছে ৩০০জন।

(গ) সীমাবদ্ধতা ঃ

(১) এই অধ্যয়নটো কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ চৰকাৰী মাধ্যমিক বিদ্যালয়তে সীমাবদ্ধ।

(২) এই অধ্যয়নটো দশম শ্ৰেণীৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীক লৈয়ে সীমাবদ্ধ।

১.৬ তথ্য সংগ্ৰহৰ সঁজুলি ঃ

অধ্যয়নৰ বাবে নিৰ্বাচন কৰি লোৱা ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বৃত্তিগত নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা নিৰূপণ কৰিবলৈ Guidance need inventory নামৰ প্ৰমাণিকৃত আহিল বিধ প্ৰয়োগ কৰা হৈছে। এই আহিলা বিধৰ সহায়ত প্ৰতিজন ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাসমূহ পাঁচ প্ৰকাৰৰ ভিন্ন মাত্ৰাত জুখিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰিব পৰা যায়। এই পাঁচ প্ৰকাৰৰ মাত্ৰাসমূহ হ'ল- শাৰীৰিক, সামাজিক, মনোবৈজ্ঞানিক, শৈক্ষিক আৰু বৃত্তিগত। এই আহিলাবিধত বিবৃত্তিসমূহ পাঁচবিধ ভিন্ন মাত্ৰাৰ মাজৰ তলত দিয়া ধৰণে ভগোৱা থাকে।

ক্ৰমিক নং	শ্ৰেণী বিভাগ	সমূহৰ ক্ৰমিক নং	সৰ্বমুঠ বিবৃত্তি
১	শাৰীৰিক প্ৰয়োজন	০১-১০	১০
২	সামাজিক প্ৰয়োজন	১১-২৫	১৫
৩	মনোবৈজ্ঞানিক প্ৰয়োজন	২৬-৩৮	১৩
৪	শৈক্ষিক প্ৰয়োজন	৩৯-৫৭	১৯
৫	বৃত্তিগত প্ৰয়োজন	৫৮-৬৫	০৮
		সৰ্বমুঠ	৬৫

Guidance need inventory আহিলাবিধৰ প্ৰতিটো বিবৃত্তিৰ সঁহাৰিসমূহ পাঁচ ভাগত ভগাব পাৰি। সেইবোৰ হ'ল — অত্যন্ত সঁচা, বেছিভাগ সঁচা, একেবাৰে সঁচা, কম সঁচা আৰু সঁচা নহয়। এজন ছাত্ৰ বা ছাত্ৰীয়ে প্ৰতিটো বিবৃত্তিৰ বিপৰীতে ইয়াৰে যিকোনো এটাহে নিৰ্বাচন কৰিব পাৰিব। আৰু চিহ্নিত কৰা প্ৰকাৰ বিধৰ পৰাই তেওঁলোকৰ নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা নিৰূপণ কৰিব পৰা যায়। এই আহিলাবিধৰ প্ৰতিটো বিবৃত্তি ইতিবাচক হ'লেও মানাংকসমূহ নেতিবাচকভাৱে দিয়া হয়। অৰ্থাৎ যিকোনো বিবৃত্তিৰ বিপৰীতে উচ্চ মানাংকই কম প্ৰয়োজনীয়তা আৰু নিম্ন মানাংকই অধিক প্ৰয়োজনীয়তা সূচায়। উদাহৰণস্বৰূপে যদি কোনো ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে এটি বিবৃত্তি অত্যন্ত সঁচা সঁহাৰি চিহ্নিত কৰে তেনেহ'লে এই বিবৃত্তিটোৰ মানাংক হ'ব ০, আনহাতে যদি সঁচা নহয় সঁহাৰি চিহ্নিত কৰে তেনেহ'লে তাৰ মানাংক হ'বগৈ ৮, বিবৃত্তিসমূহৰ মানাংক আহি নিম্নলিখিত ধৰণৰ-

অত্যন্ত সঁচা	বেছিভাগ সঁচা	একেবাৰে সঁচা	কম সঁচা	সঁচা নহয়
০	১	২	৩	৪

যিহেতু অধ্যয়নটোত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা নিৰূপণ কৰিব বিচৰা হৈছে সেয়েহে আহিলাবিধত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ বিষয়ে থকা ৮টা বিবৃত্তি প্ৰয়োগ কৰা হ'ব। ইয়াৰ উপৰি প্ৰথম তিনিটা সঁহাৰি অৰ্থাৎ অত্যন্ত সঁচা, বেছিভাগ সঁচা আৰু একেবাৰে সঁচা ইতিবাচক আৰু কম সঁচা, সঁচা নহয় নেতিবাচক সঁহাৰি হিচাপে ধৰা হৈছে।

(ক) তথ্য সংগ্ৰহৰ কৌশল ঃ তথ্য সংগ্ৰহৰ বাবে নিৰ্বাচিত প্ৰতিখন বিদ্যালয় গৱেষকে ব্যক্তিগতভাৱে পৰিদৰ্শন কৰিছিল।

(খ) তথ্য বিশ্লেষণৰ কৌশল ঃ সাধাৰণ শতাংশ আৰু দণ্ডচিত্ৰৰ সহায়ত প্ৰাপ্ত তথ্যসমূহ বিশ্লেষণ কৰা হৈছে।

(গ) তথ্যৰ বিৱৰণী ঃ

প্ৰথম বিবৃত্তি ঃ সঠিক প্ৰকাৰৰ মহাবিদ্যালয় পাঠ্যক্ৰম বাছনি কৰা।

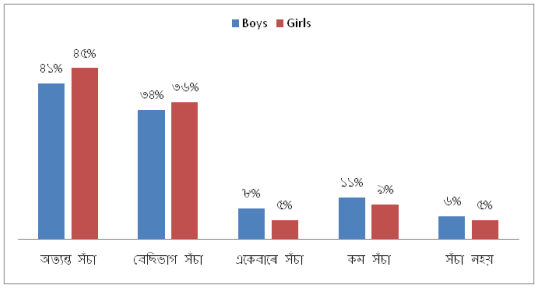

চিত্ৰঃ ১.১ উদ্ধৃত চিত্ৰই ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ সঠিক প্ৰকাৰৰ মহাবিদ্যালয় পাঠ্যক্ৰম বাছনি কৰিবলৈ বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ সঁহাৰিসমূহ শতাংশ হিচাপত পাঁচ ভাগত দেখুৱাইছে যেনে- অত্যন্ত সঁচা, বেছিভাগ সঁচা, একেবাৰে

সঁচা, কম সঁচা, সঁচা নহয়।

২য় বিবৃত্তি ঃ বিভিন্ন বৃত্তিৰ বিষয়ে জানিবলৈ

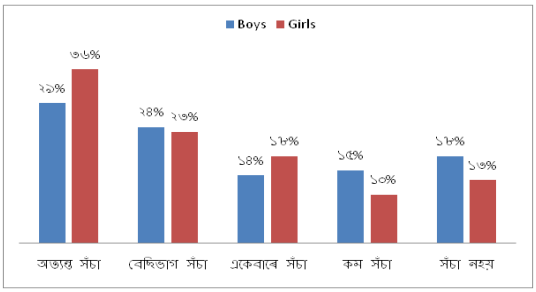

চিত্র ঃ ১.২ উদ্ধৃত চিত্রই ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ বিভিন্ন বৃত্তিৰ বিষয়ে জানিবলৈ বৃত্তিমূলক নির্দেশৰ প্রয়োজনীয়তাৰ সঁহাৰিসমূহ শতাংশ হিচাপত উল্লিখিত পাঁচটা ভাগত দেখুৱাইছে।

৩য় বিবৃত্তি ঃ আংশিক সময় আৰু স্বনিয়োগ যোগ্য চাকৰিৰ বিষয়ে তথ্য প্রাপ্ত কৰিবলৈ

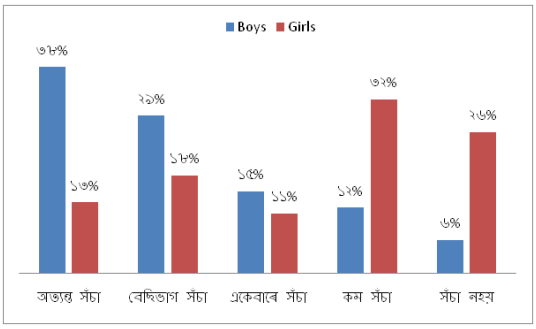

চিত্র ঃ ১.৩ ওপৰোক্ত চিত্রই আংশিক সময় আৰু স্বনিয়োগ যোগ্য চাকৰিৰ বিষয়ে তথ্য প্রাপ্তিৰ বাবে ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ সঁহাৰিসমূহ শতাংশ হিচাপত পাঁচটা ভাগত প্রদর্শন কৰিছে।

৪র্থ বিবৃত্তি ঃ ভৱিষ্যতৰ আনুমানিক বৃত্তিমূলক পছন্দত উপনীত হোৱাৰ বাবে।

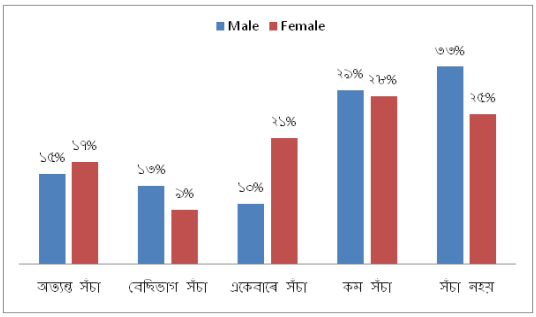

চিত্র ঃ ১.৪ ওপৰোক্ত চিত্রই ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ ভৱিষ্যতৰ আনুমানিক বৃত্তিমূলক পছন্দত উপনীত হ'বলৈ বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ সঁহাৰিসমূহ শতাংশ হিচাপত উল্লিখিত পাঁচটা ভাগত দেখুৱাইছে।

৫ম বিবৃত্তি ঃ উচ্চ/উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ পাছত উপলব্ধ বিভিন্ন কর্মজীৱনৰ বিষয়ে জানিবৰ বাবে।

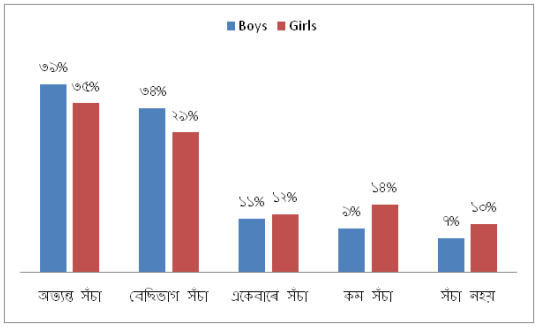

চিত্র ঃ ১.৫ ওপৰোক্ত চিত্রই উচ্চ/উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ পাছত উপলব্ধ বিভিন্ন কর্মজীৱনৰ বিষয়ে জানিবলৈ ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ প্রসংগত দিয়া সঁহাৰিসমূহ শতাংশ হিচাপত ওপৰত উল্লিখিত পাঁচটা ভাগত দেখুৱাইছে।

৬ষ্ঠ বিবৃত্তি ঃ নিজৰ বাবে উপযুক্ত কর্মজীৱনৰ বিষয়ে জানিবৰ বাবে।

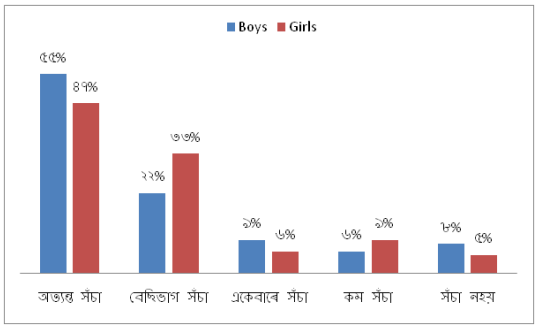

চিত্র ঃ ১.৬ উদ্ধৃত চিত্রই ছাত্র-ছাত্রীসকলৰ মাজত নিজৰ বাবে উপযুক্ত কর্মজীৱন নির্বাচন কৰিবলৈ বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্রয়োজনীয়তাৰ প্রতি দিয়া সঁহাৰিবোৰ শতাংশ হিচাপত উল্লিখিত পাঁচটা ভাগত প্রদর্শন কৰিছে।

৭ম বিবৃত্তি ঃ বিদ্যালয় বন্ধৰ দিনবোৰ সঠিকভাৱে অতিবাহিত কৰিবলৈ।

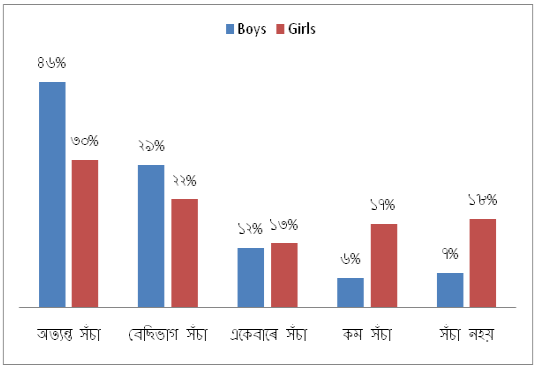

চিত্ৰ ঃ ১.৭ ওপৰোক্ত চিত্ৰই বিদ্যালয় বন্ধৰ দিনবোৰ সঠিকভাৱে অতিবাহিত কৰিবলৈ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ সঁহাৰিসমূহ শতাংশ হিচাপত পাঁচটা ভাগত যেনে-অত্যন্ত সঁচা, বেছিভাগ সঁচা, একেবাৰে সঁচা, কম সঁচা আৰু সঁচা নহয় প্ৰদৰ্শন কৰিছে।

৮ম বিবৃত্তি ঃ পকেট মানি বিচক্ষণতাৰে খৰচ কৰিবলৈ।

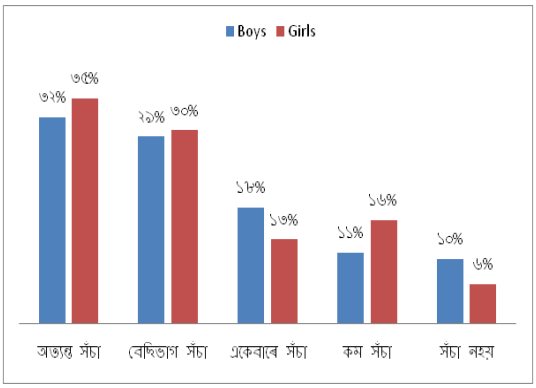

চিত্ৰ ঃ ৮.১ ওপৰোক্ত চিত্ৰই বিচক্ষণতাৰে পকেট মানি খৰচ কৰিবলৈ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বৃত্তি মূলক নির্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ সঁহাৰিসমূহ শতাংশ হিচাপত ওপৰোক্ত পাঁচটা ভাগত প্ৰকাশ কৰিছে।

প্ৰথম বিবৃত্তি ঃ

ওপৰৰ দ্বণ্ড চিত্ৰৰ তথ্যসমূহে সঠিক প্ৰকাৰৰ মহাবিদ্যালয় পাঠ্যক্ৰম বাছনি কৰাৰ ক্ষেত্ৰত বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা প্ৰসংগত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ উভয়ৰে সঁহাৰি সমূহ পৃথক পৃথকভাৱে প্ৰকাশ কৰিছে। উক্ত তথ্যৰ পৰা এইটোৰে প্ৰতিপন্ন হয় যে ৮৩% ছাত্ৰ আৰু ৮৬% ছাত্ৰীয়ে ইতিবাচক সঁহাৰি প্ৰদান কৰিছে। কেৱল মাত্ৰ ১৭% ছাত্ৰ আৰু ১৪% ছাত্ৰীয়ে নেতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে। দেখা যায় যে সংখ্যাগৰিষ্ঠ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে ইতিবাচক সঁহাৰি প্ৰকাশ কৰিছে।

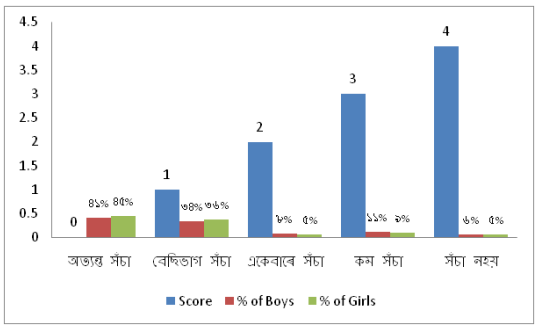

সেয়েহে উক্ত বিবৃত্তিটোৰ মানাংক অতি নিম্ন হ'ব আৰু নির্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা অধিক হ'ব। গতিকে এইটোৰে এই ক্ষেত্ৰত প্ৰতিপন্ন হ'ব যে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলক সঠিক প্ৰকাৰৰ মহাবিদ্যালয় পাঠ্যক্ৰম বাছনি কৰিবলৈ বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আছে। ইয়াৰ উপৰি ছাত্ৰীসকলৰ মাজত এই ক্ষেত্ৰত বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা ছাত্ৰসকলতকৈ কিছু পৰিমাণে বেছি।

দ্বিতীয় বিবৃত্তি ঃ

ওপৰোক্ত তথ্যসমূহে বিভিন্ন বৃত্তিৰ বিষয়ে জানিবলৈ বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ প্ৰসংগত ছাত্ৰ-ছাত্ৰী উভয়ৰে সঁহাৰিসমূহ পৃথক পৃথকভাৱে প্ৰদৰ্শন কৰিছে। তথ্যসমূহৰ পৰা দেখা যায় যে ৬৭% ছাত্ৰ আৰু ৭৭% ছাত্ৰীয়ে উক্ত বিবৃত্তিটোৰ প্ৰতি ইতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে। কেৱল মাত্ৰ ৩৩% ছাত্ৰ আৰু ২৩% ছাত্ৰীয়ে নেতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে। এই ক্ষেত্ৰতো ছাত্ৰীৰ ইতিবাচক সঁহাৰি ছাত্ৰসকলতকৈ কিছু শতাংশ বেছি। যিহেতু

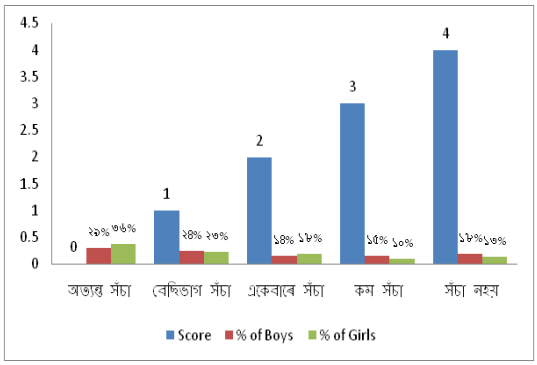

এই ক্ষেত্ৰতো সংখ্যাগৰিষ্ঠ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে ইতিবাচক সঁহাৰি প্ৰদান কৰিছে, গতিকে উক্ত বিবৃত্তিটোৰ মানাংক অতি নিম্ন হ'ব আৰু বৃত্তিমূলক নির্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বেছি হ'ব।

বিশেষকৈ ছাত্রীসকলৰ বাবে এই প্ৰয়োজনীয়তা ছাত্ৰসকলতকৈ কিছু পৰিমাণে বেছি।

তৃতীয় বিবৃত্তি ঃ

ওপৰৰ দ্বণ্ড চিত্ৰৰ তথ্যসমূহে আংশিক সময় আৰু স্বনিয়োগযোগ্য চাকৰিৰ বিষয়ে তথ্য প্ৰাপ্ত কৰাৰ ক্ষেত্ৰত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ প্ৰসংগত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ সঁহাৰিসমূহ পৃথকে পৃথকে প্ৰকাশ কৰিছে। তথ্যসমূহৰ পৰা দেখা যায় যে ৮২% ছাত্ৰই ইতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে। য'ত নেকি ৪২% ছাত্ৰীয়েহে ইতিবাচক সঁহাৰি প্ৰকাশ কৰিছে। গতিকে এই বিবৃত্তিটোৰ ক্ষেত্ৰত

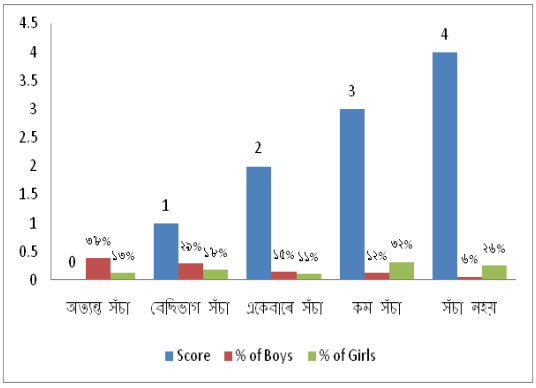

এইটোৰে প্ৰতিপন্ন হয় যে ছাত্ৰসকলৰ সঁহাৰি মানাংক অতি কম গতিকে এই প্ৰসংগত তেওঁলোকৰ বাবে বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বেছি। আনহাতে কেৱল মাত্ৰ ৪২% ছাত্ৰীয়েহে ইতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে। গতিকে এই বিবৃত্তিটোৰ ক্ষেত্ৰত ছাত্ৰীসকলৰ সঁহাৰিৰ মানাংক বেছি। গতিকে তেওঁলোকৰ বাবে বৃত্তি মূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা কম। এতেকে আংশিক সময় আৰু স্বনিয়োগযোগ্য তথ্য প্ৰাপ্তিৰ বাবে বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা ছাত্ৰসকলৰ বাবে ছাত্ৰীসকলতকৈ তুলনামূলকভাৱে বেছি।

চতুৰ্থ বিবৃত্তি ঃ

ওপৰোক্ত তথ্যসমূহে ভৱিষ্যতৰ আনুমানিক বৃত্তিমূলক পছন্দত উপনীত হ'বলৈ বৃত্তি মূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ প্ৰসংগত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ সঁহাৰিসমূহ পৃথক পৃথকভাৱে প্ৰকাশ কৰিছে। এই বিবৃত্তিটোৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰাপ্ত তথ্যসমূহৰ পৰা দেখা যায় যে কেৱল মাত্ৰ ৩৮% ছাত্ৰ আৰু ৪৭% ছাত্ৰীয়েহে ইতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে। আনহাতে ৬২% ছাত্ৰ আৰু ৫৩% ছাত্ৰীয়ে নেতিবাচক সঁহাৰি প্ৰকাশ কৰিছে। উক্ত বিবৃত্তিটোৰ ক্ষেত্ৰত ছাত্ৰ-

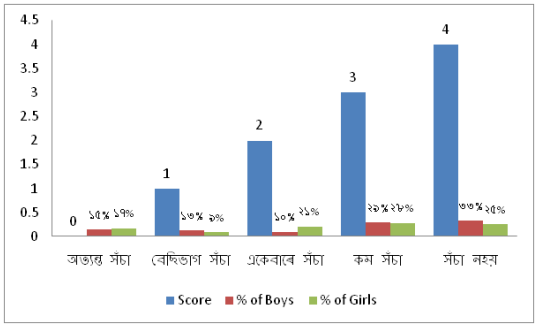

ছাত্ৰী উভয়ৰে মানাংক বেছি। গতিকে এইটোৱে প্ৰতিপন্ন হয় যে এই প্ৰসংগত ছাত্ৰ-ছাত্ৰী উভয়ৰ বৃত্তিগত নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা কম।

পঞ্চম বিবৃত্তি ঃ

ওপৰোক্ত তথ্যসমূহ উচ্চ/উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ পাছত উপলব্ধ বিভিন্ন কৰ্মজীৱনৰ বিষয়ে জানিবৰ বাবে বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা সন্দৰ্ভত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলে প্ৰকাশ কৰা সঁহাৰিসমূহ পৃথক পৃথকভাৱে প্ৰকাশ কৰিছে। উক্ত তথ্যৰ পৰা পোৱা যায় যে ৮৪% ছাত্ৰ আৰু ৭৬% ছাত্ৰীয়ে এই বিবৃত্তিটোৰ প্ৰসংগত ইতিবাচক সঁহাৰি প্ৰকাশ কৰিছে। আনহাতে ১৬% ছাত্ৰ আৰু ২৪% ছাত্ৰীয়ে নেতিবাচক সঁহাৰি প্ৰদান কৰিছে। যিহেতু সংখ্যাগৰিষ্ঠ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে ইতিবাচক

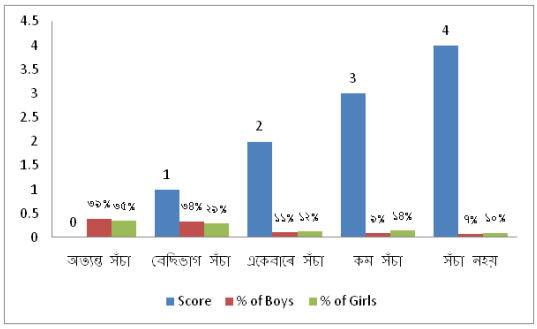

মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে, গতিকে এই বিবৃত্তিটোৰ মানাংক নিম্ন হ'ব। অৰ্থাৎ বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজন উচ্চ হ'ব। ইয়াৰ উপৰি এই প্ৰসংগত ছাত্ৰসকলৰ নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা ছাত্ৰীসকলতকৈ তুলনামূলকভাৱে বেছি।

ষষ্ঠ বিবৃত্তি ঃ

ওপৰোক্ত তথ্যসমূহে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলে নিজৰ বাবে উপযুক্ত কৰ্মজীৱনৰ বিষয়ে জানিবৰ বাবে বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা প্ৰসংগত প্ৰকাশ কৰা সঁহাৰিসমূহ প্ৰদৰ্শন

কৰিছে। এই বিবৃত্তিটোৰ ক্ষেত্ৰত তথ্যসমূহৰ পৰা দেখা যায় যে ৮৬% ছাত্ৰ-ছাত্ৰী উভয়ে ইতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে আৰু কেৱল মাত্ৰ ১৪% ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে নেতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে। যিহেতু এই বিবৃত্তিটোৰ প্ৰসংগত যোগাত্মক সঁহাৰি গৰিষ্ঠ। গতিকে মানাংক নিম্ন হ'ব আৰু

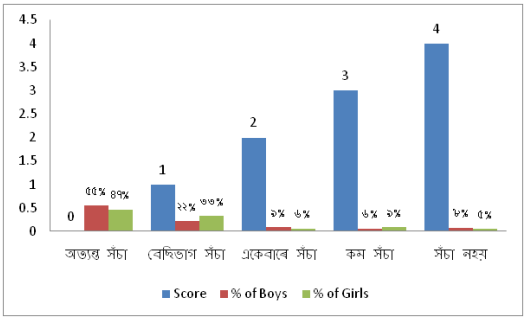

বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বেছি হ'ব। ইয়াৰ উপৰি ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ মাজত এই বিবৃত্তিটোৰ ক্ষেত্ৰত নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা কোনো পাৰ্থক্য পোৱা নগ'ল।

সপ্তম বিবৃত্তি ঃ

ওপৰোক্ত তথ্যসমূহে বিদ্যালয় বন্ধৰ দিনবোৰ উচিতভাৱে অতিবাহিত কৰিবলৈ বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ সন্দৰ্ভত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে দিয়া মতামতসমূহ প্ৰকাশ কৰিছে। প্ৰাপ্ত তথ্যসমূহৰ পৰা দেখা যায় যে ৮৭% ছাত্ৰ আৰু ৬৫% ছাত্ৰীয়ে ইতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে আৰু মাত্ৰ ১৩% ছাত্ৰ আৰু ৩৫% ছাত্ৰীয়ে নেতিবাচক সঁহাৰি প্ৰদান কৰিছে। উক্ত তথ্যসমূহে এইটো প্ৰতিপন্ন কৰে যে এই বিবৃত্তিটোৰ ক্ষেত্ৰত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বেছি। কাৰণ

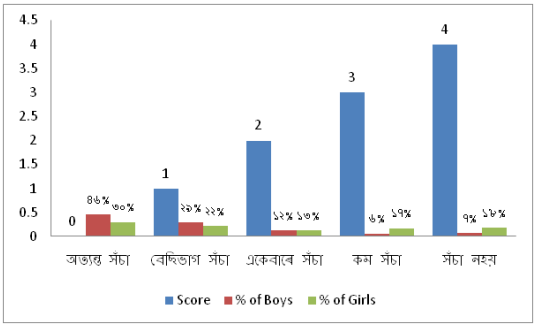

যোগাত্মক সঁহাৰি বেছি হোৱা বাবে মানাংক নিম্ন হ'ব আৰু এই নিম্ন মানাংকই উচ্চ নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা সূচায়। তদুপৰি এই প্ৰয়োজনীয়তা ছাত্ৰসকলৰ বাবে তুলনামূলকভাৱে বেছি পোৱা গ'ল।

অষ্টম বিবৃত্তি ঃ

ওপৰোক্ত তথ্যসমূহে বিচক্ষণতাৰে পকেট মানি খৰচ কৰিব জানিবলৈ বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা সন্দৰ্ভত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলে প্ৰদান কৰা মতামতসমূহ প্ৰকাশ কৰিছে। প্ৰাপ্ত তথ্যসমূহৰ পৰা দেখা যায় যে ৭৯% ছাত্ৰ আৰু ৭৮% ছাত্ৰীয়ে ইতিবাচক সঁহাৰি আৰু ২১% ছাত্ৰ আৰু ২২% ছাত্ৰীয়ে নেতিবাচক সঁহাৰি প্ৰদান কৰিছে। উক্ত তথ্যসমূহে এইটোৱে প্ৰতিপন্ন কৰে যে এই বিবৃত্তিটোৰ ক্ষেত্ৰত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বেছি। কাৰণ

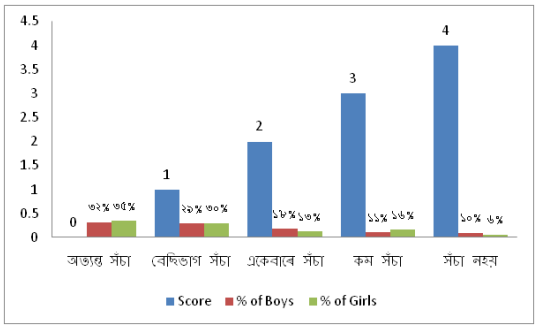

যোগাত্মক সঁহাৰি গৰিষ্ঠ হোৱা বাবে মানাংক নিম্ন হ'ব আৰু এই নিম্ন মানাংকই উচ্চ নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা সূচায়। তদুপৰি এই প্ৰয়োজনীয়তা ছাত্ৰ-ছাত্ৰী উভয়ৰ বাবে প্ৰায় সমান পোৱা গ'ল।

১.৭ ফলাফলৰ সাৰাংশ আৰু মতামত ঃ

উক্ত অধ্যয়নৰ জৰিয়তে কামৰূপ (মহানগৰ) জিলাৰ চৰকাৰী বিদ্যালয়সমূহত দশম শ্ৰেণীত অধ্যয়নৰত ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ মাজত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা বিচাৰ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। এই অধ্যয়নটো সম্পন্ন কৰিবলৈ Guidance need inventory শীৰ্ষক প্ৰমাণিকৃত আহিলা বিধত বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ বিষয়ে সন্নিবিষ্ট কৰা বিবৃত্তিসমূহ তথ্য সংগ্ৰহৰ বাবে ব্যৱহৃত কৰা হ'ল। প্ৰাপ্ত তথ্যসমূহ বিশ্লেষণ কৰাত দেখা গ'ল যে বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনা ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বাবে অতিকৈ প্ৰয়োজনীয় যদিওবা এই প্ৰয়োজনীয়তাৰ ক্ষেত্ৰত লিংগৰ ভিত্তিত কিছু পাৰ্থক্য দেখা গ'ল। এইখিনিতে এইটো উল্লেখ কৰিব পাৰি যে কেৱল মাত্ৰ চতুৰ্থ বিবৃত্তিটোৰ বাহিৰে বাকী সকলো বিবৃত্তিতেই সংখ্যাগৰিষ্ঠ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীয়ে ইতিবাচক মন্তব্য প্ৰকাশ কৰিছে। তেওঁলোকৰ এই ইতিবাচক সঁহাৰিয়ে এইটো প্ৰতিপন্ন কৰে যে বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনা তেওঁলোকৰ

বাবে অতিকৈ প্ৰয়োজনীয় হৈ পৰিছে। ইয়াৰ উপৰি প্ৰাপ্ত তথ্যসমূহ বিশ্লেষণ কৰি পোৱা গ'ল যে সঠিক প্ৰকাৰৰ মহাবিদ্যালয় পাঠ্যক্ৰম বাছনি, বিভিন্ন বৃত্তিৰ বিষয়ে জানিবলৈ ছাত্ৰীসকলৰ বাবে নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা তুলনামূলকভাৱে বেছি। আনহাতে আংশিক সময় আৰু স্বনিয়োগযোগ্য চাকৰিৰ বিষয়ে তথ্য প্ৰাপ্তি, উচ্চ/উচ্চতৰ মাধ্যমিক বিদ্যালয়ৰ পাছত উপলব্ধ বিভিন্ন কৰ্মজীৱনৰ বিষয়ে জানিবৰ বাবে, বিদ্যালয় বন্ধৰ দিনবোৰ উচিতভাৱে অতিবাহিত কৰিবলৈ বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা ছাত্ৰসকলৰ বাবে তুলনামূলকভাৱে বেছি। গতিকে উক্ত অধ্যয়নৰ পৰা এইটো প্ৰতিপন্ন হয় যে আজিৰ এই জটিল আৰু প্ৰতিযোগিতামূলক সমাজৰ ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ বাবে বৃত্তিগত নিৰ্দেশনাৰ তীব্ৰ প্ৰয়োজনীয়তা আছে। কাৰণ এই নিৰ্দেশনাই ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলক তেওঁলোকৰ ভৱিষ্যতৰ বৃত্তিৰ বিষয়ে সঠিক উমান পোৱাত সহায় কৰে আৰু ইয়াৰ সহায়ত তেওঁলোকে এটা আনুমাণিক আঁচনি তৈয়াৰ কৰি লৈ নিজৰ কৰ্মজীৱন আৰম্ভ কৰিব পাৰে। এই প্ৰক্ৰিয়াই ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ মনত আত্মবিশ্বাস বিকশিত কৰিব আৰু তেওঁলোকৰ পছন্দৰ বৃত্তিগত ক্ষেত্ৰসমূহত দক্ষতা বৃদ্ধি কৰিবলৈ কৌশলসমূহ শিকিব। সেয়েহে বহল অৰ্থত ক'ব পাৰি যে এই বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনা প্ৰদান ব্যৱস্থাই কৌশলী মানৱ সম্পদ সৃষ্টি কৰিব আৰু দেশৰ অৰ্থনৈতিক উন্নয়নত অৰিহণা যোগাব। ইয়াৰ উপৰি এই বৃত্তিমূলক নিৰ্দেশনাৰ প্ৰয়োজনীয়তা পূৰণ কৰিব পাৰিলে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীসকলৰ মনৰ আঁসোৱাহ, লক্ষ্যবিহীনতা, হতাশাসমূহ আঁতৰ কৰি তেওঁলোকৰ মাজৰ দক্ষতাসমূহ বিকাশ কৰিবলৈ এক যোগাত্মক মনোভাব সৃষ্টি কৰিব পৰা যাব। ❑

তথ্য সংগ্ৰহৰ উৎস ঃ

Kochhar, S. K.Educational and vocational guidance in secondary schools. Sterling Publishers Pvt. Ltd 1984

Ms. Batra Hanisha, Dr Pyari Dayal. "A study of the status of Guidance and counseling in Secondary Schools of Delhi."Journal of Emerging Technologies and Innovative Research, Vol 6, issue 4, 2019, pp. 569-575.Retrieved on 13thMay 2023 fromhttps://www.jetir.org/papers/JETIR1904D76.pdf

Prabu Suresh. "A Study on Guidance Needs among Higher SecondaryStudents". Journal Of Humanities and Social Science: (IOSR-JHSS) Volume20, Issue 7, PP 14-17. Retrieved on 10th January 2023 from https://www.iosrjournals.org/iosr-jhss/papers/Vol20-issue7/Version-7/B020771417.pdf

Punia, Shakuntala, and Santosh, Sangwan. "Guidance Needs Disparity in School and College Adolescent." Inter National Journal of scientific Research, Volume 4, issue10, 2015, pp. 331-333.Retrieved on 19th January 2023 from https://www.worldwidejournals.com/international-journal-of-scientific-research-(IJSR)/recent_issues_pdf/2015/October/October_2015_1492865419__102.pdf

Ramakrishnan, V. K., & Jalajakumari, V. T."Significance of imparting guidance and counselling programmes for adolescent students." Asia Pacific Journal of Research, 2(9), 102-112.Retrieved on 08th February 2023 from https://www.academia.edu/27981789/SIGNIFICANCE_OF_IMPARTING GUIDANCE_AND_COUNSELLING_PROGRAMMES_FOR_ ADOLESCENT_STUDENTS

Sharma, M. O. N. I. K. A. "Guidance needs of secondary school students in relation to academic anxiety." International Journal of Social Science & Interdisciplinary Research 3.2 (2014): pp. 33-41.Retrieved on 12th January 2023 from https://www.researchgate.net/profile/Monika-Sharma-56/publication/333966363_GUIDANCE_NEEDS_OF_SECONDARY_SCHOOL_ STUDENTS_IN_RELATION_TO_ACADEMIC_ ANXIETY/links/5e957c39a6fdcca789155fb4/GUIDANCE-NEEDS-OF-SECONDARY-SCHOOL-STUDENTS-IN-RELATION-TO-ACADEMIC-ANXIETY.pdf

Thenmozhi, C. "Vocational Guidance and Its Strategies." Shanlax International Journal of Education, vol. 7, no. 1, 2018, pp. 20–23.Retrieved on 09th March 2023 fromhttps://files.eric.ed.gov/fulltext/EJ1245230.pdf

Vashist, S.R. (1993).Perspectives in Educational and Vocational Guidance. Anmol Publication New Delhi, 1993

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

প্রেমচন্দৰ ‘প্রতিজ্ঞা’ উপন্যাসত প্রতিফলিত নাৰী বিমর্ষ আৰু সমাজ সচেতনতা

পাপৰি ডেকা
গৱেষক ছাত্রী, অসমীয়া বিভাগ
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়
ঠিকনা ঃ কাহিলীপাৰা পাৰাৰ হাউচ,
পুৰ শান্তি নগৰ, চিলাৰাই পথ
ঘৰ নং.-৪১, গুৱাহাটী-১৯
৭০০২১৯৯১৮৯
dekapapori20@gmail.com

ড° ইন্দ্রাণী ডেকা
সহকাৰী অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

প্রেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসৰ জৰিয়তে সমাজত সচেতনতা বৃদ্ধিৰ চেষ্টা কৰি আহিছে। তেওঁ উপন্যাসৰ বিষয়বস্তু নির্বাচন কৰাৰ সময়ত এইটো লক্ষ্য ৰাখে যে- উপন্যাসখনৰ কথাবস্তু বাস্তৱ জীৱনৰ লগত সংগতি থকা হওঁক, তদানীন্তন সমাজব্যৱস্থাত প্রচলিত হৈ অহা বিসংগতিসমূহ উদ্‌ঘাটন হওঁক আৰু এই বিসংগতিসমূহৰ প্রতিকাৰ কেনেকৈ কৰিব পৰা যাব আদি। তেওঁৰ উপন্যাসবোৰত তদানীন্তন সমাজখনত প্রচলিত কিছুমান কু-সংস্কাৰ, কু-ৰীতি, কু-প্রথা আদিয়ে স্থান পাই আহিছে।

‘প্রতিজ্ঞা’ উপন্যাসখনত প্রেমচন্দে তদানীন্তন সময়ৰ হিন্দু বিধৱা নাৰীৰ স্থিতি আৰু বেদনাৰ এখন বাস্তৱিক চিত্র উপস্থাপনৰ দ্বাৰা তদানীন্তন সময়ৰ বিধৱা সমস্যাক পাঠক সমাজৰ আগত দাঙি ধৰিছে। এই উপন্যাসখনৰ মন কৰিবলগীয়া বিষয়টো হৈছে উপন্যাসখনত নাৰীক সাহসী আৰু প্রতিবাদী ৰূপত প্রস্তুত কৰি নাৰীক সমাজত চলি থকা অন্যায়ৰ বিৰুদ্ধে মাত মাতিবলৈ সাহস প্রদান কৰিছে। উপন্যাসখনত প্রেমা, পূর্ণা আৰু সুমিত্রা চৰিত্রকেইটাৰ মাধ্যমেৰে তদানীন্তন সময়ৰ নাৰীৰ স্থিতি আৰু নাৰীৰ সমস্যাসমূহক প্রস্তুত কৰাৰ লগতে উক্ত তিনিওগৰাকী নাৰীৰ জৰিয়তে নাৰী সবলীকৰণৰ সপক্ষে সবল স্থিতি প্রদর্শন কৰিছে।

আমাৰ গৱেষণা কর্মৰ জৰিয়তে প্রেমচন্দৰ ‘প্রতিজ্ঞা’ উপন্যাসত প্রতিফলিত হোৱা নাৰী বিমর্ষৰ অধ্যয়ন, ইয়াৰ মাজেদি প্রকাশ পোৱা সমাজ-সংস্কাৰৰ বিভিন্ন দিশসমূহৰ আলোচনা আৰু বর্তমান সময় সাপেক্ষে তেনে চিন্তাধাৰাৰ মূল্যায়ন কৰাৰ প্রয়োজন অনুভৱ কৰিছো।

বীজ শব্দ ঃ

সমাজব্যৱস্থা, নাৰী, নাৰী বিমর্ষ, অন্যায়, সমাজ সচেতনতা

১. বিষয়ৰ বিবৃতি

হিন্দী উপন্যাস সাহিত্য জগতত প্রেমচন্দৰ আত্মপ্রকাশৰ ফলত এক নতুন যুগৰ আৰম্ভণি ঘটে। এই যুগক ‘প্রেমচন্দ যুগ’ নাইবা ‘হিন্দী উপন্যাস সাহিত্যৰ বিকাশ কাল’ বুলি অভিহিত কৰা হয়। প্রেমচন্দে আমাক প্রায় ৮৭ বছৰ আগতে এৰি থৈ গৈছে যদিও আজিও মানুহে তেওঁক মনত ৰাখিছে তেওঁৰ সাহিত্যকর্মৰ জৰিয়তে। সেয়ে প্রেমচন্দ এগৰাকী কালজয়ী লেখক। কালজয়ী লেখক বুলি তেওঁকেই কোৱা হয়, যাৰ ৰচনা তদানীন্তন প্রজন্মৰ লগতে ভৱিষ্যৎ প্রজন্ময়ো পঢ়ে। এনে তেতিয়াই হয় যেতিয়া সেই লেখকগৰাকীয়ে সৃষ্টি কৰা সাহিত্যকর্মৰ বিষয়বোৰ নতুন প্রজন্মৰ বাবেও প্রাসংগিক

হয়। মানৱ কল্যাণ আৰু সমাজ সংস্কাৰৰ বাবে নিজৰ সময়ৰ প্ৰয়োজনবোৰক যেতিয়া লেখক এগৰাকীয়ে তেওঁৰ সাহিত্যৰ মাধ্যমেৰে উত্থাপন কৰে আৰু তেনে লেখক নাইবা সাহিত্যৰ প্ৰয়োজন প্ৰতিটো প্ৰজন্মই অনুভৱ কৰে তেতিয়াই সেই লেখকজন আমাৰ বাবে সমকালীন হৈ পৰে। প্ৰেমচন্দো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়।

প্ৰেমচন্দৰ ৰচনাত তদানীন্তন সময়ৰ সামাজিক ব্যৱস্থা নাইবা অদৰকাৰী নীতি-নিয়মবোৰৰ বাবে নাৰীয়ে ভুগিবলগীয়া হোৱা দুৰ্দশাৰ চিত্ৰনো বিশেষভাৱে দেখিবলৈ পোৱা যায় যিবোৰ আজিও সমকালীন আৰু প্ৰাসংগিক হৈয়ে আছে। তেওঁ লেখনিৰ মাধ্যমেৰে সমাজত বিদ্ৰোহৰ সৃষ্টি কৰিব বিচৰা নাছিল। তেওঁৰ উদ্দেশ্য আছিল কেৱল সমাজ সংস্কাৰ কৰাহে। প্ৰেমচন্দৰ ৰচনাবোৰে তদানীন্তন সময়ৰ সমাজত মহিলাৰ স্থানৰ বিষয়ে আমাক অৱগত কৰে।

উপৰিউক্ত তাৎপৰ্যপূৰ্ণ দিশসমূহলৈ লক্ষ্য ৰাখি আমাৰ গৱেষণা কৰ্মত প্ৰেমচন্দৰ 'প্ৰতিজ্ঞা' উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰী বিমৰ্ষৰ সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰাৰ উপৰিও ইয়াৰ মাজেদি তদানীন্তন সময়ৰ নাৰীৰ সামাজিক স্থিতি আৰু অস্তিত্ব সম্বন্ধে অৱগত হোৱাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

২। তত্ত্বগত পটভূমি আৰু এই বিষয়ে ইতিপূৰ্বে হোৱা আলোচনাৰ পুনৰীক্ষণ ঃ

আমাৰ গৱেষণা কৰ্মৰ লগত সংগতি থকা বিভিন্ন গৱেষক আৰু সমালোচক-পণ্ডিতে বিভিন্ন সময়ত উত্থাপন কৰা বিভিন্ন প্ৰসংগ আৰু তেওঁলোকৰ মতামত তলত আগবঢ়োৱা হৈছে।

ৰাকেশ কুমাৰে তেওঁৰ 'मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास साहित्य में चित्रण सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं का अध्ययन' শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত প্ৰেমচন্দক আধুনিক হিন্দী সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত উপন্যাস সম্ৰাট বুলি বিভূষিত কৰিছিল। প্ৰেমচন্দে সামাজিক আৰু পাৰিবাৰিক জীৱন শৈলীৰ লগত জড়িত বিভিন্ন ঘাত-প্ৰতিঘাত আৰু সমস্যাৰ উপস্থাপনৰ জৰিয়তে তেনেবোৰ সমস্যাৰ সমাধানৰ পথো মুকলি কৰি দিছিল।

যোগেশভাই প্ৰতাপসিংগ ঝালাই তেওঁৰ 'प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी संवेदना : एक अध्ययन' শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থখনৰ জৰিয়তে ঝালাই প্ৰেমচন্দ যুগৰ নাৰীৰ জীৱনৰ প্ৰকৃত চিত্ৰ এখন উপস্থাপন কৰাৰ চেষ্টা কৰিছে।

সুনীতাই তেওঁৰ 'मुंशी प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी की संघर्ष यात्रा' শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত উল্লেখ কৰিছে যে বিভিন্ন সময়ত নাৰী বিভিন্ন অধিকাৰৰ পৰা লাঞ্ছিত আৰু বঞ্চিত হ'লেও সমাজত উদ্ভৱ হোৱা বিভিন্ন বিপদ-আপদৰ পৰা সমাজখনক উদ্ধাৰ কৰিবলৈ নাৰীশক্তিয়ে সদায় একান্তভাৱে প্ৰচেষ্টা আগবঢ়াই আহিছে। এই সকলোবোৰ যে প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসৰ মাধ্যমেৰে প্ৰকাশ কৰিছিল তাক সঠিক ৰূপত সুনীতাই নিজৰ লেখনিৰ মাজেৰে উপস্থাপন কৰিছে।

কানুভাই ৰিচচিয়া ভাই নিনামাই তেওঁৰ 'प्रेमचंद के उपन्यासों का पुनरमूल्यांकन' শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত উল্লেখ কৰিছে যে হিন্দী উপন্যাসৰ ক্ষেত্ৰখনক বাস্তৱমুখী কৰাত প্ৰেমচন্দৰ ভূমিকা লেখত লবলগীয়া। প্ৰেমচন্দে উপন্যাসসমূহ মানৱ চৰিত্ৰ প্ৰকাশৰ এক মাধ্যম বুলি জ্ঞান কৰিছে আৰু মানৱ জীৱনৰ বিভিন্ন ৰহস্যসমূহ উদ্‌ঘাটন কৰাটোয়েই তেওঁৰ মূল লক্ষ্য যেন অনুমান হয়। প্ৰেমচন্দৰ প্ৰতিখন উপন্যাসে এই অৱধাৰণাটোক যথাৰ্থভাৱে প্ৰতিষ্ঠিত কৰিছে।

মায়া ৰাণীয়ে তেওঁৰ 'प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी' শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰীৰ ভূমিকা সম্বন্ধে সবিশেষ বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱাৰ লগতে প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসৰ মাজেৰে প্ৰকাশ পোৱা নাৰী মনৰ মানসিক দিগন্ত, নাৰী মনস্তত্ব, জীৱন-লিপ্সা, মৰ্যদাপূৰ্ণ জীৱনৰ হাবিয়াস, মুক্ত অথচ দায়িত্বশীল জীৱন চৰ্যাৰ সন্ধান, নতুনক বিচাৰি চোৱাৰ মানসিকতা আদিৰ লগত জড়িত অভিজ্ঞতাসমূহ সাৱলীলভাৱে বিশ্লেষণ কৰিছে।

গৱেষক সন্ধ্যা সিংৰ 'प्रेमचंद साहित्य में नारी विमर्श' শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থখনৰ জৰিয়তে প্ৰেচন্দৰ ব্যক্তিত্ব আৰু কৃতিত্ব, প্ৰেমচন্দৰ সামাজিক আৰু সাংস্কৃতিক বিচাৰ, নাৰী চেতনাৰ স্বৰূপ আৰু বিকাশ, প্ৰেমচন্দৰ কাহিনীত নাৰী বিমৰ্শ, প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰী বিমৰ্শ, প্ৰেমচন্দৰ নাটক আৰু নিবন্ধত নাৰী বিমৰ্শ আদিৰ বিষয়ে আভাস ল'ব পৰা গৈছে।

এম আই মুল্লাই তেওঁৰ 'हिन्दी के ऐतिहासिक कथा साहित्य में नारी समस्यायें प्रेमचंद युग से सन 1960 तक' শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত নাৰীকেন্দ্ৰিক বিভিন্ন সমস্যা যেনে- যৌতুকৰ সমস্যা, বিধৱা-জীৱনৰ সমস্যা, পতিতা সমস্যা, অ-সম বিবাহ আদিয়ে কোঙা কৰি পেলোৱা তদানীন্তন সময়ৰ সমাজখনৰ বাস্তৱ চিত্ৰ অংকণ কৰাৰ উপৰিও তেনে সমস্যাবোৰ সৃষ্টি হোৱা কাৰণবোৰৰ উপযুক্ত সমাধান দিয়াৰ প্ৰয়াস কৰিছে।

গৱেষক শ্ৰীমতী কীৰ্তি মিশ্ৰাৰ '1960 से 1980 तक के उपन्यास लेखन में स्त्री विमर्श का मूल्यांकन' শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থখনত স্ত্ৰী বিমৰ্ষৰ অৱধাৰণা, সামাজিক, পাৰিবাৰিক, আৰ্থিক, ধাৰ্মিক, ৰাজনৈতিক ক্ষেত্ৰখনত স্ত্ৰীৰ স্থিতি, পুৰুষৰ লেখনিত মহিলাৰ স্থান আৰু মহিলাৰ লেখনিত স্ত্ৰীৰ স্থান আদিৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

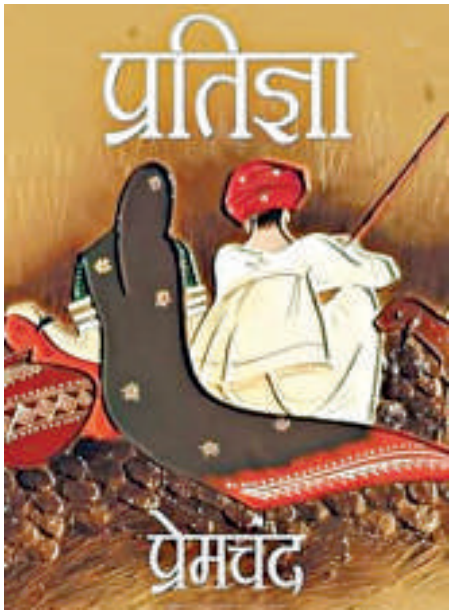

মৌচুমী সিং তিৰাৰীয়ে তেওঁৰ 'प्रेमचंद के उपन्यासों में स्त्री विमर्श : एक अध्ययन' শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰত প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত প্ৰকাশিত স্ত্ৰী বিমৰ্ষতাৰ ওপৰত আলোকপাত কৰিছে। তদানীন্তন সমাজত স্ত্ৰী-বিমৰ্ষতাই কিদৰে গা কৰি উঠিছিল আৰু তাৰ পৰা সমাজৰ কি হানি হৈছিল আৰু তাৰ পৰিত্ৰাণৰ উপায় সম্বন্ধে তিৰাৰীয়ে বৰ্ণনা আগবঢ়াইছে।

সৰিতা ৰায়ৰ 'उपन्यासकार प्रेमचंद की सामाजिक चिन्ता' শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত প্ৰেমচন্দৰ বিভিন্ন উপন্যাসত প্ৰকাশিত সামাজিক চিন্তাৰ আভাস দাঙি ধৰিছে। জমিদাৰি প্ৰথা, জাতি-ভেদ, অস্পৃশ্যতা, লিংগ-বৈষম্য, পতিতা সমস্যা, অ-সম বিবাহ, বাল্য বিবাহ আদি সামাজিক সমস্যাসমূহৰ ওপৰত কিদৰে প্ৰেমচন্দে গভীৰভাৱে দৃষ্টিপাত কৰাৰ উপৰিও এই সমস্যাসমূহ উৎপত্তি হোৱাৰ কাৰণবোৰো বিচাৰি উলিয়াই তাৰ সমাধানৰ পথ প্ৰশস্ত কৰি সমাজক এক নতুন গতি দিয়ে, এই বিষয়ে বিশদ বৰ্ণনা আগবঢ়োৱা হৈছে।

ড° ৰামবিলাশ শৰ্মাই 'प्रेमचंद और उनका युग' শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত প্ৰেমচন্দক বাস্তৱবাদী আৰু আস্থাৱান সাহিত্যিকাৰ ৰূপে প্ৰকাশ কৰাৰ উপৰিও তেওঁৰ লেখনিসমূহক ভাৰতীয় সমাজৰ বাবে যথেষ্ট প্ৰাসংগিক বুলি উল্লেখ কৰিছে। যিবোৰ সমস্যাৰ বিৰুদ্ধে প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ লেখনিসমূহৰ জৰিয়তে যুঁজ দিচিল, সেই সমস্যাসমূহ ভাৰতীয় সমাজত আদিও উমি-উমি জ্বলি আছে বুলি ড° শৰ্মাই উল্লেখ কৰিছে। ড° শৰ্মাই, প্ৰেমচন্দৰ সাহিত্যকৰ্মই বিশেষকৈ তেওঁৰ উপন্যাসমূহে আজিও তেনে সমস্যাৰ সমাধানৰ বাট মুকলি কৰি দিয়ে বুলি উল্লেখ কৰিছে।

৩। গৱেষণা কৰ্মৰ উদ্দেশ্য ঃ

আমাৰ গৱেষণা কৰ্মই তলত দিয়া উদ্দেশ্যকেইটাৰ ওপৰত ৰেখাপাত কৰিব -

১। প্ৰেমচন্দ 'প্ৰতিজ্ঞা' উপন্যাসখনত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰী বিমৰ্ষৰ সম্বন্ধে অধ্যয়ন কৰা।

২। প্ৰেমচন্দ 'প্ৰতিজ্ঞা' উপন্যাসৰ কাহিনী আৰু বিষয়বস্তু আলোচনাৰ মাধ্যমেৰে তদানীন্তন সময়ৰ নাৰীৰ সামাজিক স্থিতি আৰু অস্তিত্ব সম্বন্ধে অৱগত হোৱা।

৩। উপন্যাসখনৰ মাজেদি প্ৰকাশ পোৱা সমাজ-সংস্কাৰৰ বিভিন্ন দিশসমূহৰ আলোচনা আৰু বৰ্তমান সময় সাপেক্ষে তেনে চিন্তাধাৰাৰ মূল্যায়ন কৰা।

৪। গৱেষণা কৰ্মৰ পদ্ধতি ঃ

আমাৰ অধ্যয়ন মুখ্য সমল আৰু গৌণ সমলৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি প্ৰস্তুত কৰা হৈছে। আমাৰ গৱেষণা কৰ্মত মুখ্য সমল আহৰণৰ কাৰণে প্ৰধানকৈ প্ৰেমচন্দৰ *প্ৰতিজ্ঞা (প্ৰতিজ্ঞা)* উপন্যাসখনৰ ওপৰত ভিত্তি কৰা হৈছে। গৌণ সমলসমূহ প্ৰেমচন্দৰ প্ৰকাশিত পুথিসমূহৰ অধ্যয়ন, বিষয় সম্পৰ্কে বিভিন্নজনে লিখা আলোচনা, সমালোচনা, গৱেষণা পত্ৰ, গৱেষণা গ্ৰন্থৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে আহৰণ কৰা হৈছে।

আমাৰ গৱেষণা কৰ্মত বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। প্ৰধানতঃ মূলগ্ৰন্থ সম্বন্ধীয় বিশ্লেষণ (Textual Analysis) পদ্ধতিৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি প্ৰস্তুত কৰা হৈছে।

৫। প্ৰস্তাৱিত বিষয়ৰ আলোচনা

আমাৰ গৱেষণা কৰ্মত মুখ্য সমল আহৰণৰ বাবে প্ৰধানকৈ প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাস *প্ৰতিজ্ঞা (প্ৰতিজ্ঞা)* ৰ ওপৰত ভিত্তি কৰা হৈছে। আমাৰ গৱেষণা কৰ্মৰ মুখ্য উদ্দেশ্য হৈছে উপন্যাসখনত প্ৰতিফলিত বিধৰা সমস্যা সম্বন্ধে অধ্যয়ন কৰা। গতিকে *প্ৰতিজ্ঞা (প্ৰতিজ্ঞা)* উপন্যাসখনৰ কাহিনী আৰু বিষয়বস্তুৰ আলোচনাৰ মাধ্যমেৰে গৱেষণা কৰ্মৰ মুখ্য উদ্দেশ্যৰ পিনে অগ্ৰসৰ হ'বলৈ প্ৰয়াস কৰা হ'ল।

‘প্রতিজ্ঞা’ প্রেমচন্দৰ দ্বাৰা লিখিত এখন অদ্বিতীয় উপন্যাস। এই উপন্যাসকনত প্রেমচন্দে আদর্শ হিন্দু নাৰীৰ বাস্তৱিক চিত্র এখন প্রস্তুত কৰিছে। উপন্যাসখনৰ মুখ্য নায়ক হৈছে ‘অমৃতৰায়’। উপন্যাসখনত ‘প্রেমা’ নামৰ যুৱতী এগৰাকীয়ে অমৃতৰায়ক বহুত ভাল পায়; কিন্তু সামাজিক মর্যদাৰ বাবে অমৃতৰায়ে প্রেমাৰ প্রেমক প্রত্যাখ্যান কৰে আৰু মমে মনে চিৰজীৱন অবিবাহিত হৈয়ে থাকিব বুলি প্রতিজ্ঞা কৰে। উপন্যাসখনত ‘পূর্ণা’ নামৰ এগৰাকী বিধৱা স্ত্রীৰ চিত্রন কৰা হৈছে। ঔপন্যাসিকে ‘পূর্ণা’ চৰিত্রটোৰ মাধ্যমেৰে তদানীন্তন সময়ৰ বিধৱা নাৰীৰ স্থিতি আৰু বেদনাৰ এখন বাস্তৱিক চিত্র পাঠক সমাজৰ আগত উপস্থাপন কৰিছে। প্রেমচন্দ যে বিধৱা বিবাহৰ সমর্থক সেই বিষয়ে এই উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে অনুমান কৰিব পাৰি। এই সম্পর্কে লেখক গোপাল ৰায়ে এইদৰে ব্যক্ত কৰে —

‘वे समाज में नारी की सन्मान पूर्ण स्थिति के पक्षधर थे। विधवा विवाह के प्रबल समर्थक ही नहीं थे, बल्कि स्वयं भी उन्होंने एक बिधबा से विवाह किया था। प्रतिज्ञा में उन्होंने विधवा विवाह वाले प्रसंग को निकाल दिया।’

(ৰায়, ২০০৯, পৃ - ১৩৬)

(প্রেমচন্দে সমাজত নাৰীৰ সন্মানপূর্ণ স্থিতিক সমর্থন কৰিছিল। তেওঁ কেৱল বিধৱা বিবাহৰ সমর্থকেই নাছিল, নিজেও এগৰাকী বিধৱাক বিয়া কৰাইছিল। প্রতিজ্ঞা উপন্যাসত তেওঁ বিধৱা বিবাহৰ প্রসংগক প্রস্তুত কৰিছে।)

‘প্রতিজ্ঞা’ উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিত বিধৱা বিবাহৰ প্রসংগ উত্থাপন কৰা পৰিলক্ষিত হয়। আৰম্ভণিতে পণ্ডিত অমৰনাথ নামে এজন সমাজ সংস্কাৰকে সভা এখনত ভাষণ দি থকা দৃষ্টিগোচৰ হয়। এই সভাখনত বহুতো লোক উপস্থিত থাকে। বা,ণৰ মাজতে পণ্ডিত অমৰনাথে সভাত উপস্থিত লোকসকলক এটা প্রশ্ন কৰে যে, কাৰ কাৰ এগৰাকী বিধৱা নাৰীক বিয়া পাতিবলৈ সাহস আছে আৰু যাৰ এই সৎ সাহস আছে তেওঁ হাত উঠাওক। বিশাল সভাখনত উপস্থিত লোকসকলৰ ভিতৰত কেৱল এখন হাত উঠা দেখা পোৱা গ’ল আৰু সেই হাতখন আছিল উপন্যাসখনৰ নায়ক অমৃতৰায়ৰ।

সভা সমাপ্ত হোৱাৰ পিছত দাননাথে (অমৃতৰায়ৰ বন্ধু) অমৃতৰায়ক বুজালে যে, তুমি এনে কিয় কৰিলা আৰু তুমি যদি বিধৱা এগৰাকীক বিয়া পাতা তেতিয়া প্রেমাৰ কি অৱস্থা হ’ব আদি। কিন্তু অমৃতৰায়ে নিজৰ সিদ্ধান্তত অটল থাকিল। অমৃতৰায়ৰ এনে সিদ্ধান্তত প্রেমাৰ মাক-দেউতাক খুব অসন্তুষ্ট হ’ল। প্রেমাৰ দেউতাক বদৰীপ্রসাদে খণ্ডত এইদৰে কয় -

वह विधवा-विवाह के समर्थक हैं। समझते हैं, इससे देश का उद्धार होगा। मैं समझता हूँ, इससे सारा समाज नष्ट हो जाएगा, हम इसमे कहीं अधोगति को पहुंच जाएंगे, हिन्दुत्व का रहा-सहा चिन्ह भी मिट जाएगा। इस प्रतिज्ञा ने उन्हें हमारे समाज सं बाहर कर दिया। अब हमारा उनसे कोई संपर्क नही रहा। (প্রেমচন্দ, ২০২১, পৃ - ১০)

(অমৃতৰায় বিধৱা-বিবাহৰ সমর্থক। তেওঁ ভাবিছে যে ইয়াৰ দ্বাৰা দেশৰ উদ্ধাৰ হ’ব। কিন্তু মই ভাবিছো যে ইয়াৰ দ্বাৰা সমাজখন নষ্ট হ’ব, মানুহবোৰ অধঃপতনে যাব, ধর্ম নষ্ট হ’ব। তেওঁৰ এই প্রতিজ্ঞাৰ বাবে আমি তেওঁক এই সমাজত স্থান নিদিও। এতিয়া আৰু আমাৰ তেওঁৰ লগত কোনো সম্পর্ক নাই।)

ইয়াৰ দ্বাৰা বুজিব পৰা যায় যে, তদানীন্তন সময়ৰ সমাজখনে বিধৱা বিবাহক সমর্থন কৰা নাছিল। বিধৱা বিবাহৰ প্রসংগ উলিওৱাটোও পাপ বুলি বিবেচনা কৰা হৈছিল। তদানীন্তন সমাজখন যে নাৰীৰ প্রতি কিমান কঠোৰ আছিল তাক উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে ভালকৈ বুজিব পৰা যায়।

প্রেমাই অমৃতৰায়ক নিজৰ কৰিব নোৱাৰি যথেষ্ট দুখ পায়। কিন্তু তাই অমৃতৰায়ৰ সিদ্ধান্তক সমর্থন জনোৱাও পৰিলক্ষিত হয়। তাইৰ মতে, এজন সু-শিক্ষিত পুৰুষে যদি এনে কাম নকৰে তেন্তে কোনে কৰিব। সু-শিক্ষিত পুৰুষসকলেই যদি বিধৱা বিবাহৰ দৰে এটা সু-পদক্ষেপৰ বাবে আগবাঢ়ি নাহে তেন্তে দুর্ভগীয়া নাৰীসকলৰ ৰক্ষা কোনো কৰিব। প্রেমাইও অমৃতৰায়ৰ সিদ্ধান্তক সন্মান জনাই এটা সিদ্ধান্ত লয় যে তাই চিৰজীৱন অবিবাহিত হৈছে থাকিব।

উপন্যাসখনৰ মুখ্য নাৰী চৰিত্রটো হৈছে ‘পূর্ণা’। পূর্ণাক এগৰাকি আশ্রয়হীন বিধৱাৰ ৰূপত প্রস্তুত কৰা হৈছে। গিৰিয়েকৰ মৃত্যুৰ পিছত তাই অকলশৰীয়া হৈ পৰে। তাইৰ আপোন বুলিবলগীয়া কোনোৱেই নাছিল। অকলশৰীয়া আৰু এগৰাকী আর্থিকভাৱে দুর্বল মহিলা হোৱা হেতুকে তাইৰ জীৱন নির্বাহ কৰা কঠিন হৈ পৰিছিল। তাকে দেখি পূর্ণাৰ বান্ধৱী প্রেমা আৰু প্রেমাৰ দেউতাকে তাইক তেওঁলোকৰ ঘৰলৈ লৈ যোৱাৰ সিদ্ধান্ত লয়। কিন্তু প্রথম অৱস্থাত পূর্ণাই তাইৰ ঘৰখন এৰি যাবলৈ প্রস্তুত নাছিল, কিন্তু প্রেমাৰ দেউতাকে বহুত বুজোৱাৰ পিছত তাই যাবলৈ মান্তি হয়। প্রেমচন্দে এইদৰে ব্যক্ত কৰে -

'आश्रयविहीन अबला के लिए इस समय तिनके का सहारा ही बहुत था।' (প্রেমচন্দ, ২০২১, পৃ - ২৪)

(এনে বিপত্তিৰ সময়ত আশ্রয়হীন অবলা নাৰী এগৰাকীৰ বাবে খেৰকূটা এডাল পালেও তাইৰ বাবে বহুত।)

পূর্ণা প্রেমাৰ ঘৰলৈ অহাৰ বাবে প্রেমাৰ বৌৰেক সুমিত্রা আৰু মাক দেৱকীয়ে ভাল পোৱা নাছিল। কিন্তু দিন বাগৰাৰ লগে লগে সুমিত্রা আৰু পূর্ণাৰ মাজত বন্ধুত্বপূর্ণ সম্পর্ক গঢ়ি উঠে? সুমিত্রায়ো নিজৰ দুখৰ কাহিনী পূর্ণাৰ আগত কয়। সুমিত্রাৰ ঘৰত ধন-সম্পত্তিৰ অভাৱ নাছিল। কিন্তু গিৰিয়েকৰ স্বভাৱৰ বাবে তাই সদায় অশান্তিত দিন কটাইছিল। গিৰিয়েক কমলাপ্রসাদ অত্যন্ত অহংকাৰী, উচ্ছৃংখল, স্বার্থপৰ, কৃপন আৰু লম্পট চৰিত্রৰ। পূর্ণা ঘৰলৈ অহাৰ পিছত সুমিত্রাই কমলাপ্রসাদৰ চিন্তা কৰা বাদ দিয়ে। সুমিত্রাই নিজৰ সুখ-দুখৰ কথা ক'বলৈ পূর্ণাৰ দৰে লগৰী এজনী পায়। কিন্তু সমস্যাৰ সৃষ্টি তেতিয়া হয় যেতিয়া কমলাপ্রসাদৰ কু-দৃষ্টি পূর্ণাৰ ওপৰত পৰে। সুমিত্রাই এই বিষয়ে নজনা নহয় আৰু সেইবাবে তাই পূর্ণাক ক্ষন্তেক সময়ৰ বাবেও অকলে নেৰে। কমলাপ্রসাদে মনত এইটো কু-ভাৱ পুহি ৰাখিছিল যে, যিহেতু পূর্ণাক তেওঁলোকৰ ঘৰতেই আশ্রয় দিছে গতিকে তাইক হাতৰ মুঠিত আনিবলৈ বৰ বেছি কষ্ট কৰাৰ প্রয়োজন নহ'ব। কমলাপ্রসাদে পূর্ণাক নিজৰ আয়ত্তত আনিবৰ বাবে বিভিন্ন ধৰণৰ প্রয়াস কৰে। এই ক্ষেত্রত লেখক সবিতা ৰায়ে কয় -

'प्रतिज्ञा में भी उन्होंने विधवा स्त्री के जीवन को सौहार्दपूर्ण बनाने के लिए उसके पुनर्विवाह पर जोर दिया है। इसी उपन्यास में उन्होंने समाज में रहने वाले उन महानुभावों के दोहरे चेहरे को बेनकाब किया है, जो शराफत का मुखौटा लगाकर घृणित कार्य करने में जरा भी संकोच नही करते।' (ৰায়, ১৯৯৬, পৃ - ১৩৮)

(প্রেমচন্দে প্রতিজ্ঞা উপন্যাসখনত বিধৱা নাৰীৰ জীৱনটো সৌহার্দ্যপূর্ণ বনোৱাৰ বাবে বিধৱাৰ পুনর্বিবাহৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিছে। তেওঁ এই উপন্যাসখনতেই সমাজত থকা সেইসকল দুমুখীয়া চৰিত্রৰ মানুহৰ স্বৰূপো উদঙাইছে যিসকলে ভদ্রতাৰ মুখা পিন্ধি ঘৃণিত কর্ম কৰিবলৈ অলপো সংকোচ নকৰে।)

কলমাপ্রসাদে বিভিন্ন চলাহী কথাৰে পূর্ণাৰ মন ভোলাই তাইৰ লগত শাৰীৰিক সম্পর্ক স্থাপন কৰিব বিচাৰে। পূর্ণা ইমান সহজ সৰল আছিল যে তাই কমলাপ্রসাদৰ মিছা কথাবোৰক সত্য বুলি মানি লৈছিল।

এটা সময়ত পৰিয়ালৰ কথা পেলাব নোৱাৰি প্রেমাৰো দাননাথৰ লগত বিয়া হয়। বিয়াৰ পিছত এগৰাকী বোৱাৰী আৰু এগৰাকী পত্নী হিচাপে প্রেমাই ঘৰৰ সকলো দায়িত্ব আৰু কর্তব্য পালন কৰে। দাননাথে প্রেমাক যথেষ্ট মৰম কৰে কিন্তু অমৃতৰায়ৰ প্রতি প্রেমাৰ শ্রদ্ধাক দাননাথে সন্দেহৰ দৃষ্টিৰে চাবলৈ লয়। দাননাথে ভাবে যে প্রেমা আৰু অমৃতৰায়ৰ মাজত এতিয়াও প্রেমৰ সম্পর্ক আছে। এই সন্দেহৰ বাবেই দাননাথ আৰু অমৃতৰায়ৰ মাজত থকা বন্ধুত্বপূর্ণ সম্পর্কত দূৰত্ব বাঢ়িবলৈ ধৰে। দাননাথ আৰু কমলাপ্রসাদে মিলি অমৃতৰায়ক বিভিন্ন ধৰণে অপকাৰ আৰু মানহানি কৰাৰ প্রয়াস কৰে।

ঔপন্যাসিকে অমৃতৰায়ক এজন সমাজ সংস্কাৰকৰ ৰূপত প্রস্তুত কৰিছে। অমৃতৰায়ে এখন বনিতা আশ্রম স্থাপন কৰে আৰু ইয়াৰ বাবে প্রেমাই অমৃতৰায়ক বহুখিনি সহায় কৰে। যেনে - বনিতা আশ্রম স্থাপন কৰাৰ উদ্দেশ্য আৰু ইয়াৰ পৰা হ'বলগীয়া অনাথ স্ত্রীসকলৰ লাভৰ বিষয়ে মানুহক বুজাবলৈ সভা অনুষ্ঠিত কৰা, বিধৱা আশ্রম স্থাপন কৰাৰ বাবে চান্দা একত্রিত কৰা আদি।

'প্রতিজ্ঞা' উপন্যাসখনত ঔপন্যাসিকে বিশেষকৈ তদানীন্তন সময়ৰ বিধৱা সমস্যাক সমাজৰ আগত দাঙি ধৰিছে। প্রেমচন্দ এজন পুৰুষ হৈও নাৰীৰ মনক বুজি যিদৰে বিধৱা সমস্যা আৰু তাৰ লগত জড়িত অন্যান্য সমস্যাবোৰক উপস্থাপন কৰিছে সেয়া সঁচাকৈ শলাগিবলগীয়া। উপন্যাসখনত নাৰীৰ বেদনা, দুর্দশাক প্রস্তুত কৰি তদানীন্তন সমাজত নাৰীৰ স্থিতিৰ এখন বাস্তৱ চিত্র অংকন কৰিছে। ইয়াৰ উপৰিও ঔপন্যাসিকে উপন্যাসখনত নাৰীক সাহসী আৰু প্রতিবাদী ৰূপত প্রস্তুত কৰি নাৰী সমাজক অন্যায়ৰ বিৰুদ্ধে মাত মাতিবলৈ সাহস প্রদান কৰিছে। ঔপন্যাসিকে প্রেমা, পূর্ণা আৰু সুমিত্রাৰ জৰিয়তে তদানীন্তন সময়ৰ নাৰীৰ স্থিতি আৰু নাৰীৰ সমস্যাসমূহক প্রস্তুত কৰাৰ লগতে উক্ত তিনিওগৰাকী নাৰীৰ জৰিয়তে নাৰী সবলীকৰণৰ সপক্ষে সৱল স্থিতি প্রদর্শন কৰিছে।

কম বয়সতে বিধৱা হ'লে তদানীন্তন হিন্দু সমাজত নাৰীসকলে বহুত কষ্টৰ মাজত জীৱন অতিবাহিত কৰিব লগীয়া হৈছিল। স্ত্রী এগৰাকীৰ বিধৱা হোৱাৰ পিছত এটা নির্জীৱ শিলৰ টুকুৰাৰ দৰে অৱস্থা হয়। ঠিক তেনে অৱস্থা প্রতিজ্ঞা' উপন্যাসৰ পূর্ণাৰ চৰিত্রতো দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। পূর্ণাৰ

আশ্ৰয়হীনতা, দুৰ্বলতা আৰু সৰলতাৰ সুযোগ লৈ কমলাপ্ৰসাদে পূৰ্ণাক অপকৰ্ম কৰাৰ চেষ্টা কৰে। পূৰ্ণাই কমলাপ্ৰসাদৰ মূৰত চকীৰে কোবাই ঘৰৰ পৰা পলাই আহে। সেই সময়ত তাইৰ মনত বিভিন্ন প্ৰশ্নৰ উদয় হয় -

'अब उसके लिए कहाँ आश्रय था ? एक ओर जेल की दुस्सह यंत्रणाएँ थी, दूसरी और रोटियों के लाले, आंसुओं की धार और घोर प्राण-पीड़ा। ऐसे प्राणी के लिए मृत्यु के सिवा और कहाँ ठिकाना है ?' (প্ৰেমচন্দ, ২০২১, পৃ - ১০৪)

(এতিয়া তাইৰ বাবে আশ্ৰয় ক'ত হ'ব? হয়তো জেলত থাকিব লাগিব, এখন ৰুটিৰ বাবেও হাবাথুৰি খাব লাগিব, জীৱনৰ দুখবোৰৰ কথা চিন্তা কৰি কৰি কান্দি থাকিব লাগিব। এনেদৰে জীৱন জীয়াই থকাতকৈ মৃত্যুয়েই শ্ৰেয় নহ'ব জানো?)

পূৰ্ণা আকৌ এবাৰ আশ্ৰয়হীন হৈ পৰে। জীৱনত ইমান অপমান, লজ্জা, দুখ আৰু সন্তাপ লৈ তাইৰ জীয়াই থকাৰ ইচ্ছা নোহোৱা হয়। তাই আত্মহত্যা কৰাৰ উদ্দেশ্যৰে গংগা নদীৰ দিশে আগবাঢ়ে। কিন্তু সেই সময়তে এজন বৃদ্ধ ব্যক্তিয়ে তাইক আত্মহত্যা কৰাৰ পৰা ৰক্ষা কৰে আৰু অমৃতৰায়ৰ বনিতা আশ্ৰমৰ বিষয়ে আৱগত কৰায়। তেওঁ পূৰ্ণাক বুজায় যে, বনিতা আশ্ৰমত তোমাৰ দৰে বহুতো অনাথ, আশ্ৰয়হীন মহিলা আছে আৰু এই বনিতা আশ্ৰমত মহিলাসকলক হাতৰ কামৰ প্ৰশিক্ষণ দিয়া হয়; যাৰ দ্বাৰা মহিলাসকল আত্মনিৰ্ভৰশীল আৰু স্বাৱলম্বীও হৈছে। গতিকে তুমি বনিতা আশ্ৰমলৈ যোৱা।

বৃদ্ধ ব্যক্তিজনৰ কথামতে পূৰ্ণাই বনিতা আশ্ৰমলৈ যায়। তাই বনিতা আশ্ৰমত থাকি মানসিক শান্তি লাভ কৰে। অমৃতৰায়ৰ এই বনিতা আশ্ৰমখন কেৱল বিধৱাৰ আশ্ৰমেই নহয়, এখন প্ৰশিক্ষণালয়ো হয়, য'ত বিধৱা মহিলাসকলে তৈয়াৰ কৰা বস্তুবোৰ বিক্ৰী কৰা হয় আৰু ইয়াৰ পৰা তেওঁলোকৰ স্বাৱলম্বনৰ অনুভৱো হয়। দাননাথ আৰু অমৃতৰায়ৰ সম্পৰ্কও পিছলৈ ভাল হয়। দাননাথে অমৃতৰায়ক তেওঁ কৰা প্ৰতিজ্ঞাৰ কথা মনত পেলাই দিয়ে আৰু তেতিয়া অমৃতৰায়ে বনিতা আশ্ৰমৰ পিনে আঙুলিয়াই দি জনায় যে, বনিতা আশ্ৰমখনৰ ভৰণপোষণ কৰিব পাৰিলেই তেওঁৰ প্ৰতিজ্ঞা পূৰ্ণ হ'ব। দাননাথে বুজি পাইছিল যে অমৃতৰায়ে চিৰজীৱন অবিবাহিত হৈ থাকিয়েই সমাজ সেৱা কৰিব।

'প্ৰতিজ্ঞা' উপন্যাসখনত দেখা গৈছে যে, আৰম্ভণিতে ঔপন্যাসিকে বিধৱাৰ পুনৰ্বিবাহৰ চৰ্চা কৰিছে, কিন্তু উপন্যাসখনৰ শেষত তাক কাৰ্যকৰী কৰি দেখুওৱা নাই। বিধৱাৰ পুনৰ্বিবাহৰ পৰিৱৰ্তে বনিতা আশ্ৰম স্থাপন কৰি বিধৱাসকলক আশ্ৰয় দিয়াৰ লগতে তেওঁলোকক স্বাৱলম্বীও কৰিছে। ইয়াৰ দ্বাৰা স্পষ্টকৈ ক'ব পাৰি যে প্ৰেমচন্দে বিধৱাৰ পুনৰ্বিবাহৰ সিদ্ধান্তক সমাজৰ ওপৰত এৰিব বিচাৰিছে, কিন্তু আৰোপিত কৰিব বিচৰা নাই।

প্ৰেমচন্দৰ সময়ত বিধৱাৰ সামাজিক স্থিতিৰ বিষয়ে 'প্ৰতিজ্ঞা' উপন্যাসত ঔপন্যাসিকে উল্লেখ কৰিছে। তদানীন্তন সময়ত বিধৱাক বিয়া কৰাবলৈ সমাজৰ কোনো ইচ্ছাও নাছিল আৰু সাহসো নাছিল। এনে স্থিতিত প্ৰেমচন্দে বিপত্নীক অমৃতৰায়ক সন্মুখলৈ আনি বিধৱা বিবাহৰ সমাধান এনেদৰে প্ৰস্তুত কৰিছে যে, যাৰ প্ৰথমা পত্নীৰ মৃত্যু হৈছে তেওঁ বিধৱাক বিয়া কৰাব পাৰে।

এইদৰে প্ৰেমচন্দৰ দৰে বুদ্ধিজীৱি আৰু সচেতন লেককে বিধৱাৰ দয়া লগা অৱস্থা তথা তেওঁলোকৰ সমস্যাৰ সমাধান হিচাপে যি পথ উপন্যাসখনত প্ৰদৰ্শন কৰিছে, সেয়া সমাজৰ বাবে এক প্ৰত্যাহ্বান। প্ৰেমচন্দৰ সমাজ সংস্কাৰৰ চিন্তা ভাৱনাবোৰ তদানীন্তন সময়ৰ বাবে এক সাহসপূৰ্ণ আৰু ক্ৰান্তিকাৰী পদক্ষেপ আছিল। যিবোৰ প্ৰেমচন্দৰ দৰে লেখকেহে কৰিব পাৰিছিল।

প্ৰেমচন্দৰ মতে সাহিত্য সত্যৰ ওপৰত আধাৰিত আৰু মানৱতাৰ প্ৰতি উছৰ্গিত হ'ব লাগে। তেওঁ বিশ্বাস কৰিছিল যে সাহিত্যই পঢ়ুৱৈৰ মনক পৰিৱৰ্তন কৰিব পাৰে। ই কেৱল বৰ্তমান প্ৰজন্মকে নহয় ভৱিষ্যত প্ৰজন্মকো উদ্ধুতো কৰিব পাৰে। তেওঁ সাহিত্য সৃষ্টিৰ মাজেৰে সমাজত চলি থকা বিভিন্ন সামাজিক সমস্যা সম্পৰ্কে মানুহৰ মাজত জাগৰণ অনাৰ প্ৰয়াস কৰিছিল। এই বিষয়ে তেওঁ প্ৰথমে নিজে সজাগ হৈহে সমাজক সজাগ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছে। আমাৰ নিৰ্বাচিত উপন্যাসকেইখনৰ মাজেৰে প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যাসমূহ অধ্যয়নৰ অন্তত আমি ক'ব পাৰো যে বহুক্ষেত্ৰত পৰিয়াল, বহুক্ষেত্ৰত ৰক্ষণশীল সমাজব্যৱস্থা আৰু বহুক্ষেত্ৰত নাৰী নিজে নিজৰ পথত অন্তৰায় ৰূপত থিয় দি থকা পৰিলক্ষিত হয়। এই ক্ষেত্ৰত নাৰী জাতিয়ে নিজে নিজৰ ভিতৰত থকা শক্তিখিনিক উপলব্ধি কৰি তাৰ যথাযথ প্ৰয়োগৰ দিশে অগ্ৰসৰ হ'ব লাগিব বুলি প্ৰেমচন্দে দৃঢ়তাৰে প্ৰকাশ কৰা আমাৰ নিৰ্বাচিত উপন্যাসকেইখনত প্ৰতিফলিত হয়। সমাজৰো এই দিশত কিছু কৰণীয় আছে বুলি প্ৰেমচন্দে মত পোষণ কৰে। এইক্ষেত্ৰত প্ৰেমচন্দে কেইটামান প্ৰয়াসৰ ওপৰত জোৰ

দিয়া আমাৰ নিৰ্বাচিত উপন্যাসকেইখনত পৰিলক্ষিত হয়। সেইকেইটা হৈছে -

১। নাৰীক শিক্ষিত আৰু আৰ্থিকভাৱে স্বাৱলম্বী কৰা।
২। নাৰীৰ ব্যক্তি-স্বতন্ত্ৰতা বৃদ্ধি কৰা।
৩। নাৰী মনৰ আৰু দৃষ্টিকোণৰ পৰিৱৰ্তন সাধন কৰা।
৪। নাৰীৰ প্ৰতি সমাজৰ দৃষ্টিকোণৰ পৰিৱৰ্তন অনা।
৫। নাৰীৰ বিদ্ৰোহী কণ্ঠস্বৰ বৃদ্ধি কৰা।

৬। উপসংহাৰ ঃ

প্ৰেমচন্দ এজন প্ৰগতিশীল লেখক। তেওঁ বিংশ শতিকাৰ লেখক যদিও একবিংশ শতিকাৰ সমস্যাবোৰকো সেই সময়তে তেওঁৰ উপন্যাসত লিখি উলিয়াইছিল। আমি যদি কওঁ যে, প্ৰেমচন্দে আজিৰ পৰা কমেও এশ বছৰ আগেয়ে মহাভাৰতৰ সঞ্জয়ৰ দৰে নিজৰ দূৰদৰ্শিতাৰ জৰিয়তে ভৱিষ্যৎক দেখা পাইছিল, তেন্তে সেইটো কেতিয়াও ভুল কোৱা নহ'ব। কাৰণ, তেওঁৰ উপন্যাসত বৰ্তমান সমাজৰো বাস্তৱিক চিত্ৰ এখন দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যা উপস্থাপনৰ ক্ষেত্ৰটো প্ৰেমচন্দে প্ৰথমে নাৰীৰ মনক ভালদৰে বুজি আৰু বিচাৰ বিশ্লেষণ কৰি সমস্যাবোৰৰ সমাধান দিয়াৰ প্ৰয়াস কৰিছে।

প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰীৰ সফলতাৰ চিত্ৰ এখনো পৰিলক্ষিত হয়, লগতে নাৰীৰ সফলতাৰ জৰিয়তে নতুন দিশো প্ৰশস্ত হোৱা দেখা যায়। প্ৰেমচন্দে প্ৰস্তুত কৰা নাৰী চৰিত্ৰসমূহত আমি এগৰাকী মাঁ, পত্নী, প্ৰেমিকা, ভনী, সতীয়া মাঁ, বান্ধৱী, চৰিত্ৰহীন, পতিতা, বৌ, ননন্দ, সমাজ-সংস্কাৰক, দেশপ্ৰেমী, সেৱিকা আদি বিভিন্ন ৰূপ দেখিবলৈ পাওঁ আৰু প্ৰতিজ্ঞা উপন্যাসখনটো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম দেখা নাযায়।

প্ৰতিজ্ঞা উপন্যাসখনত প্ৰেমচন্দে কেৱল নাৰীৰ দয়নীয় স্থিতিক উপস্থাপন কৰায়েই নহয় ইয়াৰ লগতে নাৰীক পুৰুষৰ সমান অধিকাৰ দিয়াৰ কথাকো উল্লেখ কৰিছে। উপন্যাসখনত নাৰীক দুখত থকা দেখা গৈছে, কিন্তু সশক্ত ৰূপতো দেখা গৈছে। বৰ্তমান আমাৰ সম্পূৰ্ণ ভাৰতীয় সমাজে নাৰীক সশক্ত বনোৱাৰ বাবে যিবোৰ বিপ্লৱী সময়ৰ সন্মুখীন হৈছে সেই নাৰীবোৰক প্ৰেমচন্দে বহুত আগতেই সশক্ত ৰূপত প্ৰমাণিত কৰি থৈ গৈছে। প্ৰেমচন্দৰ প্ৰতিজ্ঞা উপন্যাসখনত যিখন চিত্ৰ দেখিবলৈ পোৱা যায় সেই চিত্ৰখন কেতিয়াও নাৰীৰ অনুকূল নাছিল। তথাপিও উপন্যাসখন পঢ়িলে এনে অনুমান হয় যে, নাৰীসকলে সকলো বাধা নেওচি সমাজৰ মুখ্যধাৰাক প্ৰতিনিধিত্ব কৰি আহিছে। প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ নাৰী সমস্যা প্ৰধান উপন্যাখসমসূহত নাৰীক সদায় পুৰুষৰ সমান মৰ্যদা দি অহায়েই পৰিলক্ষিত হৈছে আৰু প্ৰতিজ্ঞা উপন্যাসখনটো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম দেখা নাযায়। এনে অনুভৱ হয় যেন সমাজত মানৱীয় গুণৰ বাহক কেৱল নাৰীয়েই হয় আৰু যিসকল পুৰুষ মানৱীয় গুণেৰে সম্পন্ন, তেওঁলোকেও নাৰীৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈহে এই গুণৰ অধিকাৰী হ'ব পাৰিছে।

প্ৰতিজ্ঞা উপন্যাসখনে নাৰী চৰিত্ৰসমূহক কৰ্ম, শক্তি আৰু সাহসৰ ক্ষেত্ৰত পুৰুষৰ লগত সমান হিচাপেই প্ৰস্তুত কৰিছে; কিন্তু তেওঁ মহিলাৰ নৈসৰ্গিক অস্মিতা, গৰিমা আৰু কোমলতাক অক্ষুণ্ণ ৰাখিছে। উপন্যাসখন সেই সকলো আধুনিক মহিলা সবলীকৰণৰ চিন্তকসকলৰ বাবে এক উদাহৰণ প্ৰস্তুত কৰিছে, যিসকলে নাৰীক সশক্ত কৰাৰ বাবে নাৰীৰ চৰিত্ৰক আঘাত কৰে আৰু নাৰীৰ অস্মিতাক ক্ষুণ্ণ কৰে।

বৰ্তমান সময়তো আমাৰ পুৰুষ প্ৰধান সমাজত মহিলাসকলে ঘৰৰ বাহিৰততো দূৰৰে কথা ঘৰৰ ভিতৰতো সেই পুৰুষ প্ৰধান মানসিকতাৰ চিকাৰ হৈ আছে; য'ত নাৰীয়ে নিজৰ পছন্দ, নিজৰ ইচ্ছাৰ বলি দিবলগীয়া হয়। এই পুৰুষ মানসিকতাৰ ফলতেই বহুতো ডাঙৰ অপৰাধ, ভ্ৰূণ হত্যা, যৌতুক, মহিলা উৎপীড়ন, ঘৰুৱা হিংসাৰ সৃষ্টি হৈছে। বৰ্তমান সময়তো যেতিয়া জনতাই দামিনী, গুড়িয়া আৰু নিৰ্ভয়াৰ ওপৰত হোৱা অন্যায়ৰ প্ৰতিশোধ ল'বলৈ বাটলৈ ওলাই আহিবলগীয়া হৈছে, গতিকে এই সময়তো প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাস আৰু তেওঁৰ নাৰীৰ প্ৰতি দৃষ্টিকোণ সৰ্বাধিক প্ৰাসংগিক হৈ আছে।

মন্তব্য ঃ

প্ৰেমচন্দে 'প্ৰতিজ্ঞা' উপন্যাসখনত তদানীন্তন সময়ৰ নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যাসমূহ প্ৰস্তুত কৰাৰ উপৰিও ভৱিষ্যতে নাৰীসকলে যেনেধৰণৰ সমস্যাৰ সন্মুখীন হ'ব পাৰে বুলি সন্দেহ ব্যক্ত কৰে, সেই সন্দেহ প্ৰেমচন্দৰ পৰৱৰ্তী কালৰ উপন্যাসসমূহত বাস্তৱত পৰিণত হোৱা দৃষ্টিগোচৰ হয়। প্ৰেমচন্দৰ পৰা প্ৰেৰণা লাভ কৰি পৰৱৰ্তী কালৰ ঔপন্যাসিকসকলেও সময় সাপেক্ষে সমস্যাবোৰৰ সমাধানৰ বাবে পথ প্ৰদৰ্শন কৰে আৰু নাৰী সবলীকলৰণৰ ওপৰত যথেষ্ট গুৰুত্ব প্ৰদান কৰে। সময়ৰ পৰিৱৰ্তনৰ ফলত সমস্যাবোৰৰ স্বৰূপো সলনি হয় কিন্তু সমাজৰ অংশ হৈ থাকিবলৈ কৰা নাৰীৰ সেই সংগ্ৰামখন একেই থকা দেখা যায়।

'প্ৰতিজ্ঞা' উপন্যাসখনত নাৰী জীৱনৰ লগত জড়িত বহুকেইটা সমস্যাৰ চিত্ৰন দেখিবলৈ পোৱা গৈছে। তদানীন্তন

সময়ত প্রচলিত অ-সম বিবাহৰ সমস্যা, আর্থিক স্বতন্ত্রতাৰ সমস্যা, বিধৱা সমস্যা আদিক কেন্দ্র কৰি নাৰী জীৱনৰ ওপৰত পৰা প্রভাৱৰ বিষয়ে উপন্যাসখনত বিশদভাৱে চিত্রন কৰা দৃষ্টিগোচৰ হয়। প্রেমচন্দে নাৰী জীৱনৰ লগত জড়িত এনে সমস্যাবোৰৰ উপস্থাপন কৰি নাৰীক সজাগ কৰাৰ চেষ্টাও কৰিছে। অতীজৰেপৰা চলি অহা সামাজিক, আর্থিক, ধার্মিক, সাংস্কৃতিক ক্ষেত্রত শোষণৰ স্বীকাৰ হৈ অহা নাৰীয়ে কিদৰে বিপৰীত পৰিস্থিতিৰ সন্মুখীন হৈও নিজৰ দায়িত্ব আৰু কর্তব্য পালন কৰি নিজৰ ব্যক্তিত্বৰ পৰিচয় দিয়ে তাৰ মর্মস্পর্শী চিত্রনো প্রেমচন্দে তেওঁ প্রতিজ্ঞা উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে কৰিছে। তেওঁৰ দৃষ্টিত নাৰী হ'ল ত্যাগৰ মূর্তি। প্রেমচন্দে উক্ত উপন্যাসখনত নাৰীৰ শাশ্বত ৰূপৰ চিত্রন কৰিছে। উপন্যাসখনত দেখা গৈছে যে, তেওঁ নাৰীক মাত্র বাসনাপূর্ত্তিৰ সাধন বুলি জ্ঞান নকৰি নাৰী চৰিত্রৰ মহানতাৰ পৰিচয়ো দাঙি ধৰিছে। প্রেমচন্দৰ নাৰী বিষয়ক যি ধাৰণা, সেই ধাৰণা প্রাক্ প্রেমচন্দৰ ঔপন্যাসিকসকলতকৈ পৃথক। তেওঁৰ প্রতিজ্ঞা উপন্যাসখনত নাৰীকেন্দ্রিক সমস্যাৰ সংমিশ্রিত ৰূপৰ চিত্রন আৰু মূল্যাংকন সঠিকভাৱে কৰা দেখা গৈছে। ❑

প্রসংগ পুথি আৰু গ্রন্থপঞ্জী ঃ

গৱেষণা গ্রন্থ আৰু গৱেষণা পত্র ঃ

কুমাৰ, ৰাকেশ; (২০১৮); মুংশী প্রেমচংদ के उपन्यास साहित्य में चित्रित सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं का अध्ययन, (গৱেষণা-গ্রন্থ); http://hdl:handle.net/10603/214293 ৰ পৰা ২৫.১০.২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

কুৰিআকোজ, ৰীতা; (১৯৯৫); প্রেমচংদ के उपन्यासों में यथार्थवाद का पुन: मुल्यांकन, (গৱেষণা-গ্রন্থ); http://hdl.handle.net/10603/7375 ৰ পৰা ৫.০৯.২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

ঝালা, যোগেশ ভাই, প্রতাপসিং; (২০১১); প্রেমচংদ के उपन्यास में नारी संवेदना : एक अध्ययन, (গৱেষণা-গ্রন্থ); http://hdl.handle.net/10603/7368 ৰ পৰা ২০.০৫.২০২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

তিৱাৰী, সিং, মৌচুমী; (২০১৮); প্রেমচংদ के उपन्यासों में स्त्री विमर्श : एक अध्ययन, Tribhuvan University Journal; 32(2), 295-308: https.://doi.org/10.3126/tuj. v32i2.24725 ৰ পৰা ১৮.০৮.২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

নিনামা, কানুভাই, ৰিচচিয়াবাই; (২০০১); প্রেমচংদ के उपन्यासो का पुनरमुल्यांकन, (গৱেষণা-গ্রন্থ); htt/://hdl.handle.net/10603/59810 ৰ পৰা ১০.১০.২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

মিশ্রা, কীর্তি; (২০০২); १९६० से १९८० तक के उपन्यास लेखन में स्त्री विमर्श का मूल्यांकन (গৱেষণা-গ্রন্থ); ইলাহাবাদ ঃ ইলাহবাদ বিশ্ববিদ্যালয়; https://archive.org/details/in.ernet. dli.2015.480329 ৰ পৰা ৩.০২.২০২৩ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

মুল্লা, এম আই; (১৯৯৪); হিন্দী के ऐतिहासिक कथा-साहित्य में नारी समस्याएँ (प्रेमचंद युग से सन १९६० ई.तक), (গৱেষণা-গ্রন্থ); http://hdl.handle.net/10603/144788 ৰ পৰা ২.০২.২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

ৰাণী, মায়া; (১৯৯৬); প্রেমচংদ के उपन्यासों में नारी, (গৱেষণা-গ্রন্থ); http://hdl.handle.net/10603/114836 ৰ পৰা ৬.০৯.২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

সিং সন্ধ্যা; (২০০৬); প্রেমচংদ साहित्य में नारी विमर्श, (গৱেষণা-গ্রন্থ); http://hdl.handle.net/10603/178040 ৰ পৰা ৫.১০.২০২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

সুনীতা; (২০১২); मुंशी प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी की संधर्ष यात्रा, (গৱেষণা-গ্রন্থ); http://hdl.handle.net/10603/8849 ৰ পৰা ২০.০৮.২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

গ্রন্থ ঃ

কোহলী, নৱেন্দ্র; (২০০২); হিন্দী उपन्यास-सृजन और सिद्धान्त, নতুন দিল্লীঃ বাণী প্রকাশন।

পৰমাৰ, দীপ্তি; (২০১১); নারী বিমর্শ और नारी लेखन के सरोकार, https://www.rachanakar.org/2011/07/blog-post-7915.html?m=1 ৰ পৰা ১৬.১১.২০২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

প্রেমচন্দ্র; (২০১১); প্রতিজ্ঞা, উত্তৰ প্রদেশ ঃ ম'পেল প্রেছ।

ৰায়, অমৃত; (২০০৫); প্रेमचंद : कमल का सिपाही, এলাহবাদ ঃ হংস প্রকাশন।

ৰায়, গোপাল; (২০০৬); उपन्यास की संरचना, নতুন দিল্লী ঃ ৰাজ কমল প্রকাশন।

ৰায়, সৰিতা; (১৯৯৬); उपन्यासकार प्रेमचंद की सामाजिक चिन्ता, নতুন দিল্লী ঃ বাণী প্রকাশন।

শর্মা, ৰামবিলাস; (২০০৮); प्रेमचंद और उनका युग, নতুন দিল্লী ঃ ৰাজকমল প্রকাশন।

সিং, নামবৰ (২০১৭); प्रेमचंद और भारतीय समाज, নতুন দিল্লী ঃ ৰাজকমল প্রকাশন।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ ভ্রাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটকত ব্যৱহৃত আকাৰ-ইংগিত

নীলাক্ষি ডেকা
গৱেষক
আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য
আধ্যায়ন বিভাগ, কলা শাখা
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯১০১৭১৪৭৮২
nilakshideka210@gmail.com

ড° গীতাঞ্জলি হাজৰিকা
সহযোগী অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
আর্য বিদ্যাপীঠ মহাবিদ্যালয়, গুৱাহাটী-১৬
৯৮৬৪০৪১৮৯৫
gitanjalihazarika72@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

ভ্রাম্যমাণ নাটকসমূহ অসমীয়া নাট্যসাহিত্যৰ এক আপুৰুগীয়া সম্পদ। ভ্রাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ জন্মই অসমীয়া নাট্যজগতত এক নতুন দিশৰ সূচনা কৰে। ভ্রাম্যমাণ নাটকসমূহে অসমীয়া নাট্যশিল্পীৰ পেছাগত দিশতো সফলতা কঢ়িয়াই আনে। ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াই সর্বমুঠ ২৭ খন নাটকৰ জৰিয়তে ভ্রাম্যমাণ থিয়েটাৰক সমৃদ্ধ কৰি থৈ গৈছে। ১৯৮১ চনৰ পৰা পৰৱর্তী ১৯ বছৰত সর্বমুঠ ২৭ খন ভ্রাম্যমাণ নাটক তেওঁ ৰচনা কৰিছিল। ইয়াৰে 'জোনাক ৰাতি' নাটকখন অসম্পূর্ণ হৈ ৰৈ গ'ল। এই নাটকসমূহ ৰচনাৰে তেওঁ ভ্রাম্যমাণ নাটকক সুকীয়া ৰূপত প্রতিষ্ঠা কৰিলে। নাটকক জনগণৰ অধিক ওচৰ চপাবৰ বাবে ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াই নাটকসমূহৰ সংলাপ প্রকাশৰ ক্ষেত্রত মানব জীৱনত সততে প্রয়োগ হৈ থকা বিভিন্ন আকাৰ-ইংগিতৰ প্রয়োগ কৰিছে। আকাৰ ইংগিতে সংলাপক সবল কৰিছে। আকাৰ-ইংগিত বুলিলে মানুহে নিজৰ শৰীৰৰ অংগ-প্রত্যংগৰ জৰিয়তে ভাষাহীন ভাৱে বুজোৱা মনৰ ভাৱক বুজা যায়। চন্দ্রকান্ত অভিধানে আকাৰ-ইঙ্গিতৰ অর্থ নিৰূপন কৰিছে এইদৰে — 'আকৃতি আৰু ঠাৰ, ভাব-ভঙ্গী' (চন্দ্রকান্ত অভিধান, ৭০)। হেমকোষৰ মতে আকাৰ-ইংগিতৰ অর্থ হ'ল— 'ঠাৰে-চিয়াঁৰে বা ভাব-ভংগীৰে দিয়া সংকেত'। (হেমকোষ, ১৩০)। আকাৰ ইংগিতৰ আলোচনা প্রয়োগ ভাষা বিজ্ঞানৰ অন্তর্গত বিষয়।

বীজ শব্দ ঃ

ভ্রাম্যমাণ নাটক, আকাৰ-ইঙ্গিত, সংস্কৃতি, স্বতঃস্ফুট।

প্রস্তাৱনা ঃ

অসমীয়া নাট্যসাহিত্যৰ পাঁচশ বছৰীয়া ইতিহাস আছে। এয়া এক গৌৰোবোজ্জল অধ্যায়। বিচিত্র বিষয়বস্তু আৰু আংগিকৰ পৰীক্ষা নীৰিক্ষাৰে অসমীয়া নাট্যসাহিত্যই ভাৰতীয় নাট্যসাহিত্যৰ ভিতৰতে এক বিশেষ স্থান দখল কৰিছে। শংকৰদেৱৰ হাতত জন্মলাভ কৰা অসমীয়া নাট্যসাহিত্যই পৰিৱর্তন আৰু পৰিৱর্ধনৰ মাজেৰে আহি আজিৰ অৱস্থা পাইছেহি। সামাজিক নাটকেৰে আৰম্ভ হোৱা অসমীয়া আধুনিক নাটকে বর্তমান সময়ত পৰীক্ষা-নিৰীক্ষাৰ ফলত পৰিৱর্তিত ৰূপ লাভ কৰিছে। পূর্বৰ ধর্মীয়, পৌৰাণিক আৰু ঐতিহাসিক নাটকৰ পৰিৱর্তে বিংশ শতিকাত নতুন ৰীতি-প্রকৃতিৰে আন কিছুমান নতুন ধৰণৰ নাটক ৰচিত হয়। গীতি নাটক, কাব্য নাটক, প্রতীক আৰু ৰূপকধর্মী নাটক এনে নাটকৰ উদাহৰণ।

আধুনিক অসমীয়া নাটকৰ গতি-প্ৰকৃতি বিচাৰ কৰিলে ভ্ৰাম্যমাণ নাটকসমূহ বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰ বুলি ক'লে বিভিন্ন অঞ্চলে অঞ্চলে গৈ নাটক পৰিৱেশন কৰা বুজায়। অসমত সাধাৰণতে আগষ্ট মাহৰ মাজভাগৰ পৰা এপ্ৰিল মাহলৈকে ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰ অনুষ্ঠিত হয়। ১৯৬৩ চনৰ ২ অক্টোবৰত অচ্যুৎ লহকৰে ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ শুভাৰম্ভ কৰে। ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটক সৰ্বপ্ৰথম পাঠশালাত অনুষ্ঠিত হৈছিল। ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ যি শিল্পকৰ্ম সি হঠাৎ আৰ্ৱিভাৱ হোৱা এক নতুন সৃষ্টি নহয়। ই ক্ৰমাগতভাৱে বিভিন্ন পৰীক্ষা-নিৰীক্ষা আৰু অন্য শিল্পকৰ্মৰ পৰা সহায় আৰু সমল সংগ্ৰহ কৰি সৃষ্টি কৰা এক নতুন প্ৰক্ৰিয়াহে।'(নাট্যতত্ত্ব আৰু আলোচনা, ১৫৮) 'অচ্যুৎ লহকৰে ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰ গঢ় দিয়াৰ পূৰ্বে অসমৰ সাংস্কৃতিক জগতৰ পুৰুধা ব্যক্তিসকলৰ সৈতে আলোচনা কৰিছিল আৰু পৰামৰ্শ বিচাৰিছিল। ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰ প্ৰকৃতাৰ্থত বিভিন্ন ধাৰাৰ বিচিত্ৰ উপাদানৰ সংশ্লেষিত প্ৰয়োগৰ এক সুকীয়া ৰূপ। ই এক থিয়েটাৰী টেৰলো' (Tableu) য'ত যাত্ৰাৰ পৰিৱেশনাৰ ক্ৰম, ভ্ৰাম্যমাণ চৰিত্ৰ, স্থায়ী নাট্যশালাৰ স্থাপত্য, ঘূৰ্ণমঞ্চৰ দৃশ্যান্তৰৰ বিৰামহীনতা, বোলছবি সদৃশ গতিময়তা, ছবিৰ কেমেৰা সম্পাদানৰ কৌশল সৃষ্টি কৰা বাস্তৱ-বিভ্ৰম (illusion of reality), সৰ্বোপৰী পাশ্চাত্য থিয়েটাৰৰপেশাদাৰী আদৰ্শ— এই সকলোবোৰ উপাদান এক বৈপ্লৱিক উপাদানৰ মাজেৰে বিচিত্ৰিত হৈছে। এই সাজেৰে পূৰ্ণ ৰূপত গঢ় লৈ উঠিছিল নটৰাজ থিয়েটাৰ জন্মৰ চাৰিটামান নাট্যবৰ্ষৰ ভিতৰত।' (ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰ, ১৪৪)

ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰত দৰ্শকক আকৰ্ষণৰ দিশটোৱে অধিক গুৰুত্ব লাভ কৰে। শিক্ষিতৰ পৰা অশিক্ষিত, শিশুৰ পৰা বৃদ্ধ, গাঁৱলীয়াৰ পৰা চহৰীয়া আৰু যিকোনো পেছাৰ ব্যক্তিয়ে বুজিব পৰাকৈ ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটকৰ উপস্থাপন কৰা হয়। ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰত গেলাৰীৰ দৰ্শকেও যাতে চৰিত্ৰৰ আৱেগ-অনুভূতি উপলব্ধি কৰিব পাৰে আৰু সংলাপসমূহ স্পষ্টকৈ বুজিব পাৰে তাৰ বাবে অভিনেতা-অভিনেত্ৰীয়ে অধিক শাৰীৰিক অংগ সঞ্চালন কৰা, উচ্চ কণ্ঠত সংলাপ ব্যক্ত আদি কৰিবলগীয়া হয়। আকাৰ-ইংগিত ভাষাৰ সহযোগী বা বিকল্প ৰূপত ব্যৱহাৰ হয় (মহীয়সী মুকুৰ, পৃ ২২১)। ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ ভ্ৰাম্যমাণ নাটকসমূহ অধ্যয়ন কৰিলে দেখা যায় যে তেওঁৰ নাটকৰ সংলাপ প্ৰকাশ কৰিবলৈ বিভিন্ন ধৰণৰ আকাৰ-ইংগিতক শক্তিশালী মাধ্যম ৰূপে প্ৰয়োগ কৰি আহিছে। ভ্ৰাম্যমাণ নাটকৰ দৰ্শকে সংলাপসমূহ হৃদয়ংগম

কৰিব পৰাকৈ নাট্যকাৰে নাটকত আকাৰ-ইংগিতৰ প্ৰয়োগ কৰিবলৈ নিৰ্দেশনা দিছিল।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ 'ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটকত ব্যৱহৃত আকাৰ ইংগিত' বিষটো অধ্যয়নৰ নিৰ্বাচন কৰাৰ মূল উদ্দেশ্যসমূহ এনেধৰণৰ—

(১) ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটকৰ ভাৰ প্ৰকাশৰ ক্ষেত্ৰত আকাৰ ইংগিতৰ ভূমিকা বিচাৰ কৰা।

(২) ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটকত আকাৰ ইংগিতৰ প্ৰয়োগ বিশ্লেষণ কৰা।

অধ্যয়নৰ সামগ্ৰী ঃ বিষয় অধ্যয়নৰ বাবে প্ৰধানকৈ ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ ভ্ৰাম্যমাণ নাটক সমূহৰ সংকলন 'ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ নাট্যসম্ভাৰ' গ্ৰন্থখন গ্ৰহণ কৰা হৈছে। এই গ্ৰন্থখনত ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়া ৰচিত ২৩ খন সম্পূৰ্ণ আৰু এখন সম্পূৰ্ণ ভ্ৰাম্যমাণ নাটক সন্নিৱিষ্ট কৰা হৈছে। তদুপৰি বিষয়ৰ প্ৰাসংগিক গ্ৰন্থ, কাকত-আলোচনিত প্ৰকাশিত প্ৰবন্ধ, অপ্ৰকাশিত গৱেষণা গ্ৰন্থ আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ 'ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটকত ব্যৱহৃত আকাৰ ইংগিত' বিষয়টো অধ্যয়ন কৰোতে তথ্য সংগ্ৰহ আৰু বিশ্লেষণ কৰা হৈছে। ইয়াত বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ প্ৰয়োগ কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰ ঃ বিষয় অধ্যয়নৰ বাবে প্ৰধানকৈ ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ ৰচিত ২৩ খন ভ্ৰাম্যমাণ নাটক গ্ৰহণ কৰা হৈছে। সেইকেইখন হ'ল — 'ৰম্যভূমি', 'নীলকণ্ঠ', 'মহাৰণ্য', 'দীনবন্ধু', 'পাণ্ডুলিপি', 'আম্ৰপালী', 'অৰণ্যত গধূলি', 'মণিকূট',

'গহ্বৰ', 'গধূলি', 'অমৃত', 'বৰ্ণমালা', 'বন্দীশাল', 'দিগম্বৰ', 'স্বৰ্গৰ দুৱাৰ', 'ৰামধেনু', 'শতাব্দী', 'স্বৰ্ণজয়ন্তী', 'সমুদ্র মন্থন', 'পৰমানন্দ', 'শুভ সংবাদ', 'বিষকুম্ভ' আৰু 'অন্ধকূপ'।

মূল বিষয়বস্তুৰ বিশ্লেষণ ঃ

ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ ভ্রাম্যমাণ নাটকত স্থান পোৱা আকাৰ-ইংগিতৰ ভাগ ঃ ভ্রাম্যমাণ নাটকসমূহৰ বিষয়বস্তু, ধ্বনি উৎপাদন, ব্যৱহৃত অংগ আৰু ভাৱৰ ভিত্তিত ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ ভ্রাম্যমাণ নাটকত প্রয়োগ কৰা আকাৰ-ইংগিতক সামগ্রিকভাৱে কেইটামান ভাগত বিভক্ত কৰিব পাৰি —

(ক) বিষয়বস্তু অনুযায়ী

(খ) ব্যৱহৃত অংগ অনুযায়ী

(গ) স্ফোটন অনুযায়ী (স্বৰ্ণলিপি, পৃ ১৯)

ক) বিষয়বস্তু অনুযায়ী ঃ বিষয়বস্তু অনুযায়ী আকাৰ ইংগিতক কেইটামান বহল ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি। সেইবোৰ এনেধৰণৰ—

(১) পৰম্পৰা বা সংস্কৃতি প্রকাশক আকাৰ ইংগিত ঃ আকাৰ ইংগিতে কোনো এটা জাতিৰ সাংস্কৃতিক চেতনাৰ বর্হিপ্রকাশ কৰে। উদাহৰণ—ভাৰতীয় সংস্কাৰ অনুসৰি জ্যেষ্ঠজনক নমস্কাৰ জনাই বা বহি থকা আসনৰ পৰা উঠি সন্মান প্রদর্শন কৰে। ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ ভ্রাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ নাটক 'ৰম্যভূমি'ত মনো�ৰঞ্জন চৰিত্রটোৱে অকণৰ কথাৰ প্রতিবাদ কৰিছে যদিও প্রতি সন্মান প্রদর্শন কৰিবলৈ নমস্কাৰ কৰিছে—

মনোৰঞ্জন ঃ [নমস্কাৰ কৰি] নাই নাই নাই অকণ বাবু। (ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াৰ নাট্যসম্ভাৰ, ১৪)

ভাৰতীয় সংস্কৃতিত নমস্কাৰে কেৱল সন্মান প্রদর্শন কৰাই নহয় বিদায়ৰ ইংগিতো বহন কৰে। নাটকখনত মহানন্দই পিতৃৰ দ্বিতীয় বিবাহৰ সকলো খবৰ লাভ কৰাৰ পিছত যোগমায়াৰ ঘৰৰ পৰা বিদায় লোৱাৰ সময়ত নমস্কাৰ প্রয়োগ কৰিছে এনেদৰে—

মহানন্দ ঃ ...আপোনালোকে মোক বেয়া নাপাব। মইআহোঁ। [ফটোখন দাঙি প্রণাম কৰে। যাব খোজে।] (উল্লিখিত, ১৮)

মহানন্দৰ প্রতি লক্ষেশ্বৰহঁতৰ কোনো সন্দেহ নাই বুলি স্পষ্ট কৰাত মহানন্দই কৃতজ্ঞতাৰ প্রতীকৰূপত সংলাপ কোৱাৰ পূর্বে লক্ষেশ্বৰহঁতক সেৱা কৰিছে—

মহানন্দ ঃ [এখন হাতেৰে সেৱা কৰি] নকৰিব। (উল্লিখিত, ১৯)

অসমীয়া সমাজত নাৰীয়ে জেষ্ঠ্যজনৰ প্রতি সন্মান প্রদর্শন কৰিবলৈ ওৰণি লোৱা, চাদৰৰ আঁচল দেহৰ আগলৈ টানি লয়। 'দীনবন্ধু' নাটকত সাবিত্রী চৰিত্রই তেওঁলোকৰ ঘৰলৈ অহা বৰুৱাৰ প্রতি সন্মান প্রদর্শন কৰিবলৈ 'পিঠিৰ আঁচল ঠিক কৰি লয়'। (উল্লিখিত, ১৫৮)

'আম্রপালী' নাটকত মংগল চৰিত্রই আম্রপালীক 'আঁঠু কাঢ়ি তৰোৱালখন দিয়া' (উল্লিখিত, ২৬২)ত সন্মান প্রকাশ পাইছে।

'বৰ্ণমালা' নাটকত জয়ন্তী চৰিত্রৰ চৌধুৰীৰ প্রতি সম্ভাষণ জনাবলৈ নমস্কাৰ কৰিছে—

এগৰাকী প্রার্থী জয়ন্তী সোমাই আহে। তেওঁ চৌধুৰীক নমস্কাৰ কৰে। (উল্লিখিত, ৫০৭)

'বৰ্ণমালা' নাটকত চৌধুৰীৰ প্রতি সন্মান প্রদর্শন কৰিবলৈ ৰহমানে থিয় হৈ দিয়া ইংগিত প্রয়োগ কৰিছে।

'শুভ সংবাদ' নাটকত উপাসনা দত্ত আৰু চৌধুৰীয়ে প্রতি নমস্কাৰ জনাই পৰস্পৰে পৰস্পৰক সন্মান যাচিছে—

উপাসনা ঃ নমস্কাৰ।

চৌধুৰী ঃ নমস্কাৰ। (উল্লিখিত, ৬৬৪)

(২) ধর্মীয় আকাৰ ইংগিত ঃ 'মণিকূট' নাটকত তৰুৰ নিৰুদ্দেশৰ খবৰত তাইৰ পিতৃ হেমকান্তই ভগৱানৰ চৰণত সেৱা জনাইছে—

হেমকান্ত ঃ হে হৰি, হে হৰি ব'ল ব'ল। [উঠি বস্তু সামৰে] হে হৰি, হে হৰি দয়াময়, হে হৰি—। (উল্লিখিত, ৩৫৬)

'আম্রপালী' নাটকত দেখা যায় যে বুদ্ধৰ প্রতি আম্রপালী আৰু ৰজা আকর্ষিত হোৱাৰ ফলত তেওঁলোকে বুদ্ধৰ চৰণত শৰণ লৈছে। সেই সময়ত ৰজাই আম্রপালীৰ উপদেশ শুনি বুদ্ধৰ চৰণত শৰণ লোৱা বুজাবলৈ তেওঁ আম্রপালীৰ আহ্বানত আগবাঢ়ি যোৱা দেখাইছে—

আম্রপালী ঃ বিদায় দিয়ক সৈনিক। [কিছুদূৰ আগবাঢ়ি যোৱাৰ পিছত পোহৰে বিচিত্র ৰূপ ধৰে]

আম্রপালী ঃ আহক নহ'লে সৈনিক, আপুনিও আহক। [ৰজা মন্ত্রমুগ্ধৰ দৰে আগুৱাই যায়] (উল্লিখিত, ২৬৮)

(৩) ভাষা সহযোগী আকাৰ ইংগিত ঃ 'মহাৰণ্য' নাটকত হাত চাপৰিৰ যোগেদি ১ম ডেকাই তেওঁলোকৰ সমষ্টিৰ পৰা অজয় চৌধুৰীয়ে প্রার্থীত্ব আগবঢ়োৱাৰ খবৰ প্রকাশ কৰাত উপস্থিত

জনসাধাৰণে সমর্থন জনোৱা বুজাবলৈ হাত চাপৰি বজাইছে—

১ম ডেকা ঃ ...আজি আমি আমাৰ কাৰণে এজন প্রতিনিধি নির্বাচন কৰিছোঁ। তেখেত হ'ল অধ্যাপক অজয় চৌধুৰী। (হাত চাপৰি) এতিয়া অধ্যাপিকা সন্ধ্যা তালুকদাৰে আমাৰ এই নির্বাচন অভিযান আৰম্ভ কৰিব। (উল্লিখিত, ১১৮)

টকা বুজাবলৈ হাতৰ আঙুলিৰে ইংগিত কৰা হয়। 'দীনবন্ধু' নাটকত দীনবন্ধুৰে তেওঁৰ পিতৃৰ হাতত টকাৰ অভাৰ বুজাবলৈ এই ইংগিত প্রয়োগ কৰিছে—

দীনবন্ধু ঃ ...আচল কথা কি জানা? টকা ঢালি বজাৰৰ শাক-পাচলিৰে পাকঘৰ দ'মাবলৈ দেউতাৰ হাতত [পইচাৰ ইংগিত] আচল বস্তুটো হ'লেহে! (উল্লিখিত, ১৫৮)

'অৰণ্যত গধূলি' নাটকত ডাঃ ত্রিপাঠীৰ দীর্ঘ আয়ুস হোৱাৰ সমর্থনত বৰুণ আৰু ভাগৰতীয়ে হাত চাপৰি বজাই ডাঃ ত্রিপাঠীক উৎসাহ জনাইছে।

'বর্ণমালা' নাটকত চৌধুৰীৰ বক্তব্যৰ প্রতি সন্মান প্রদর্শন কৰিবলৈ হাত চাপৰিৰ ইংগিত প্রয়োগ কছে—

হাত চাপৰি। হাত চাপৰি চলি থাকে। পোহৰ কমি আহে। আঁৰ কাপোৰ নামি আহে। হাত চাপৰিৰ শব্দ শেষ হোৱাৰ পিছত প্রথম মঞ্চৰ আঁৰ কাপোৰ উঠে। (উল্লিখিত, ৫২৩)

'শুভ সংবাদ' নাটকত উপাসনা দত্তই প্রেমিক অবিনাশৰ সৈতে সম্পর্ক শেষ কৰাৰ সিদ্ধান্ত লয় আৰু আত্মহত্যাৰ ভাৱ মনলৈ আহে। তাই নিজৰ অৱস্থাটো প্রকাশৰ বাবে প্রয়োগ এনেধৰণৰ—

উপাসনা বহে। তাই চকু ঢাকে। অবিনাশে আঁৰ চকুৰে এবাৰ তাইলৈ চাই আলোচনীৰ পাত লুটিয়ায়। (উল্লিখিত, ৬৬৫)

'শুভ সংবাদ' নাটকত ৰঞ্জনাৰ মনোবেদনা প্রকাশ কৰিবলৈ তাইৰ সংলাপৰ মাজত 'মাত থোকা-থুকি' (উল্লিখিত, ৬৬৯) কৰিবলৈ দিয়া হৈছে।

(৪) স্বতঃস্ফুত আকাৰ ইংগিত ঃ ভবেন্দ্র নাথ শইকীয়াই ভ্রাম্যমাণ নাটকসমূহত কিছুমান স্বতঃস্ফুত আকাৰ ইংগিত প্রয়োগ কৰি দর্শকৰ বাবে নাটকীয় কাহিনী সহজবোধ্য কৰি তুলিছিল—

'নীলকণ্ঠ' নাটকত মৰমৰ ইংগিত বুজাইছে এনেদৰে—

নীলকণ্ঠ ঃ ...আজি কি হ'ল জানা প্রতিমা। ছোৱালী কলেজৰ মিটিং এখনলৈ গৈছিলোঁ। মিটিঙৰ পিছত চাহ খাওঁতে বুঢ়ী প্রফেচাৰণী এজনীয়ে ক'ৰ পৰা আহি জানো মোৰ কপালতে টপকৈ চুমা এটা খালে। আৰু কয় বোলে মই হেনো ৰত্ন। (উল্লিখিত, ৭৬)।

—নাটকখনত নীলকণ্ঠৰ প্রতি অধ্যাপকগৰাকীৰ মৰম প্রকাশ কৰিবলৈ চুমা খোৱাৰ ইংগিত প্রয়োগ কৰিছে।

খঙৰ ইংগিত বুজাবলৈ 'নীলকণ্ঠ' নাটকত উচাত মাৰি গুছি যোৱা দেখাইছে—

অনিল ঃ মুখখন ঠিকমতে চলাবলৈ শিকি লৈছাতো! [গপ্‌গপকৈ গুছি যায়] (উল্লিখিত, ৭৭)

'নীলকণ্ঠ নাটকত ওৰণিৰ ইংগিতেৰে বিবাহৰ প্রসংগ বুজোৱা হৈছে—

গোবিন্দ ঃ এতিয়া আকৌ চিন্তা কৰিছ কিয়? [ইফালে সিফালে চাই] এতিয়া অইন চিন্তা কৰ। [ওৰণি তোলাৰ ভংগীৰে] (উল্লিখিত, ৮২)

চকুপানীৰ জৰিয়তে নিজৰ দোষ প্রকাশ কৰা দেখাইছে 'নীলকণ্ঠ' নাটকত—

উৎপল ঃ দাদা! মা! মোক তহঁতে বেয়া নাপাবি [কান্দে] মোৰ হঠাতে কি হৈ গ'ল মই ক'ব নোৱাৰো। (উল্লিখিত, ৯৩)

'পাণ্ডুলিপি' নাটকত ৰাজশ্রীয়ে 'চাদৰৰ আঁচলেৰে চকু মচিলে' (উল্লিখিত, ১৮৭) আৰু ইয়াৰ জৰিয়তে তাইৰ স্বামীৰ শাৰীৰিক অসুস্থতাৰ ফলত লাভ কৰা মানসিক যন্ত্রণাৰ ছবিখন স্পষ্ট কৰিছে। নাটকখনত নিত্যানন্দই বুকুত চপৰিয়াই (উল্লিখিত, ১৯১) আত্মবিশ্বাসৰ প্রবলতা দাঙি ধৰিছে।

'গহ্বৰ' নাটকত চৌধুৰীৰ শাৰীৰিক অসুস্থতাৰ বিষয়ত মানসিকভাৱে অস্থিৰ হৈ পৰা গায়ত্রীৰ চৰিত্রৰ প্রকাশ কৰিবলৈ তেওঁ মুখ ঢকাৰ ইংগিত ব্যৱহাৰ কৰিছে—

গায়ত্রী ঃ কি সাংঘাটিক কথা— অথচ মই একো নাজানো! হে ভগৱান! [মুখ ঢাকে।] (উল্লিখিত, ৩৭৪)

'গহ্বৰ' নাটকত হাত চাপৰিৰ জৰিয়তে আলোক প্রসাদ চৌধুৰীৰ অনুৰাগীসকলে তেওঁৰ শাৰীৰিক সুস্থতাত আনন্দ প্রকাশ কৰিবলৈ হাত চাপৰি বজাইছে আৰু গায়ত্রীয়ে হাতযোৰ কৰাৰ ইংগিত প্রয়োগ কৰি সকলোকে ধন্যবাদ জ্ঞাপন কৰিছে।

আকাৰ-ইংগিতৰ জৰিয়তে খং উঠা বুজোৱা হৈছে 'গধূলি' নাটকত। নাটকখনত লক্ষীৰাম আৰু নবীনৰ দুর্লভ চিপাহীৰ প্রতি খং প্রকাশ কৰিবলৈ মাৰ-পিটৰ প্রয়োগ কৰিছে—

লক্ষীৰাম ঃ থিয় হৈ থাক? [থুতৰিত তলৰ পৰা ঘোচা এটা মাৰি] চিধা হ। কি কৰিছিলি? সিহঁতৰ কোনোবা এজনীৰ গাত হাত দিছিলি? দিছিলি নে নাই?

দুর্লভ ঃ [মূৰ দুপিয়ায়] দিছিলোঁ।

নবীন ঃ [ঠাঁচকৈ এক চৰ মাৰি] কাৰ গাত?

দুর্লভ ঃ [মূৰ জোকাৰি] নাম নাজানো।

নবীন ঃ তাইৰ সর্বনাশ কৰিলি? তই— তাইৰ সর্বনাশ কৰিলি? [তিনিবাৰ মাৰে আৰু সুধে] নক'ৰ কিয়? নক'ৰ কিয়? নক'ৰ কিয়?

দুর্লভ ঃ [মূৰ দুপিয়ায়] ওঁ। (উল্লিখিত, ৪১৭)

'বর্ণমালা' নাটকত চৌধুৰীৰ বক্তব্যক সমর্থন জনাবলৈ দয়ন্তীয়ে কেৱল মূৰ দুপিয়াইছে—

জয়ন্তীয়ে মূৰ দুপিয়ায়। (উল্লিখিত, ৫৫১)

'বন্দীশাল' নাটকত খং প্রকাশ কৰিবলৈ দাঁত কামুৰ দিয়াৰ ইংগিত প্রয়োগ কৰিছে—

উমা ঃ [দাঁত কামুৰি] কুকুৰঁত। [নামৰৰ ভেটিত সেৱা কৰি সোমাই যায়] (উল্লিখিত, ৫৮৬)

'বন্দীশাল' নাটকত মনৰ ক্ষোভ প্রকাশ কৰিবলৈ ইন্দ্রই 'বুকুত মাৰি' (উল্লিখিত, ৫৯২) ইংগিত প্রয়োগ কৰি সংলাপ ব্যক্ত কৰিছে।

'পৰমানন্দ' নাটকত ৰেণু আৰু ৰাহুলে সিদ্ধান্ত গ্রহণ কৰিবলৈ এজনে আনজনৰ পৰা ইংগিত বুজিবলৈ চকুৰে চকুৰে চাইছে—

অধিকাৰী ঃ চাবিটো দি দিয়া। [ৰেণু আৰু ৰাহুলে মুখ চোৱা-চুই কৰে।] (উল্লিখিত, ৬০৬)

'দিগম্বৰ' নাটকত কৰবীৰ দুখ প্রকাশ কৰিবলৈ 'চকু ঢাকি কন্দা' (উল্লিখিত, ৭৯৩)ৰ ইংগিত দিছে।

খ) ব্যৱহৃত অংগ অনুযায়ী ঃ

১) হাত ঃ [ওচৰলৈ আহি] কুঁৱলী, সৌ তাতে ছবি থকা কিতাপ আছে, তই ছবি চাগৈ যা। [ঠেলি দিয়ে] যা। (উল্লিখিত, ৬৯)

—ইয়াত প্রতিমাই কুঁৱলীক নীলকণ্ঠ আৰু তাইৰ কাষৰ পৰা আঁতৰ কৰিবৰ বাবে ঠেলি দিছে।

হাতেৰে বাধা দিয়া দেখুওৱা হৈছে—

গানটো শুনা যায়। মাজতে গোবিন্দই কিবা ক'ব খোজে। নীলই হাতেৰে বাধা দিয়ে। (উল্লিখিত, ৭৪)

যিকোনো বস্তুৰ পৰিমান বা জোখ দেখুৱাবলৈ হাতৰ ইংগিত প্রয়োগ কৰা হয়। 'পাণ্ডুলিপি' নাটকত ৰাজশ্রীয়ে বিজয়ৰ ঔষধ থোৱা টেমাৰ ইংগিত দিছে হাতেৰে—

ৰাজশ্রী ঃ [হাতেৰে দেখুৱাই] ইমানটোমান— পুৰণি বিস্কুটৰ টেমা এটা— সেউজীয়া। (উল্লিখিত, ২০২)

হাতেৰে পৰিমাণৰ ইংগিত কৰা হৈছে 'শতাব্দী' নাটকত—

সনাতন ঃ পাৰিম। কিমান?

সদানন্দ ঃ [হাতেৰে দেখুৱায়] সৰু চৰিয়া এটাৰ এচৰিয়ামান। (উল্লিখিত, ৯৬৪)

'বন্দীশাল' নাটকত বিৰোধ বুজাবলৈ ইন্দ্র চৰিত্রই হাত জোকাৰি ইংগিত দিছে—

হাত জোকাৰি। ড'ন ক্রাই ডটাৰ। ড'ন ক্রাই। (উল্লিখিত, ৫৬০)

'পৰমানন্দ' নাটকত চৌধুৰীয়ে ৰেৱতীক এটা দিশ বুজাবলৈ হাতৰ প্রয়োগ কৰিছে—

চৌধুৰী ঃ মানে— [হাতেৰে দেখুৱাই]— এই ফুটাটোৰে তুমি এনেকৈ এইফালে চাই আছিলা? (উল্লিখিত, ৬২৬)

নাটকখনত বলীনাৰায়ণ চৰিত্রই ৰেৱতীৰ মৰাৰ ইংগিত দিবলৈ হাতৰ প্রয়োগ কৰিছে—

মাৰিবলৈ হাত দাঙে। (উল্লিখিত, ৬২৩)

(২) হাতৰ আঙুলি ঃ হাতৰ আঙুলি ওঁঠৰ ওপৰত হেঁচি ধৰা কার্যই মৌনতা অৱলম্বনৰ ইংগিত দাঙি ধৰে। 'দীনবন্ধু' নাটকত এই ইংগিত পোৱা গৈছে—

বাণী ঃ [ওঁঠত আঙুলি দি] আৰু কথা নাই। ৰিহার্ছেলৰ সময়ত নৌ টকিং।

হাতৰ আঙুলিত গগণাৰ ইংগিত কৰা হয়। 'গধূলি' নাটকত অমলাই হিচাব কৰিবলৈ আঙুলিৰ ইংগিত প্রয়োগ কৰিছে—

অমলা ঃ তেওঁ ঠিকেই কৈছে। ৰ'বা হিচাব কৰোঁ। [আঙুলিৰ পাবত হিচাব কৰে আৰু গুণগুণকৈ] (উল্লিখিত, ৪০৫)

হাতৰ আঙুলিৰে হিচাব কৰাৰ ইংগিত দিয়া হৈছে 'অন্ধকূপ' নাটকত—

জগন্নাথ ঃ [দুটা মুঠি দেখুৱাই] কোনটো হাতত আছে ক, ক'ব পাৰিলে দি দিম।

(৩) চকু ঃ বাহিৰলৈ চাই আছিল। চকু ঘুৰাই (উল্লিখিত, ৭০)

'নীলকণ্ঠ' নাটকত গোবিন্দৰ খং উঠা বুজাবলৈ গোবিন্দৰ চকুৰ ইংগিত প্রয়োগ কৰিছে এনেদৰে—

মোহন ঃ...আৰু দাদা, আপুনি বোলে এইখন বিয়াৰ মিঠাই

আপোনাৰ নিজৰ বিয়ালৈ সাঁচিছে। [গোবিন্দই চকু ডাঙৰ কৰে] সৌ সিঁহতে ক'বলৈ পঠিয়াই দিছে। (উল্লিখিত, ৮১)

(৪) ডিঙি ঃ [গর্জি] যা বুলিছো নহয়। (উল্লিখিত, ৯৬)
ডিঙি মেলি দূৰলৈ চায়। (উল্লিখিত, ২০২)

(৫) মূৰ ঃ বাণীয়ে বায়েক ৰাণী আৰু ৰমেশৰ প্ৰেমৰ সম্পৰ্ক পিতৃৰ সম্মুখত প্ৰকাশ কৰিবলগীয়া হোৱাত তলমূৰ কৰিছে—

দীনবন্ধু ঃ কিডাল খুলি কৈছ? [ৰৈ] আচল কথা ক'? হৈছে কি একো নুলুকুৰাবি।

বাণী ঃ [তলমূৰ কৰে] (উল্লিখিত, ১৭১)

প্ৰশ্নৰ উত্তৰত হয়ভৰ দিবলৈ তলমূৰ কৰা ইংগিত প্ৰয়োগ কৰা হয়। 'সমুদ্ৰমন্থন' নাটকত এই ইংগিত প্ৰয়োগ কৰিছে—

'নিভাই তলমূৰ কৰে। গৌৰীশংকৰ বিমানৰ ওচৰলৈ যায়'। (উল্লিখিত, ১০১৫)

'আম্ৰপালী' নাটকত 'ৰজাই কিবা এটা বোটলাৰ চেলুৰে তলমূৰ কৰে' (উল্লিখিত, ২৪৮)। কাৰণ তেওঁ নিজা পৰিচয় গোপনে ৰাখিব বিচাৰিছে।

'গধূলি' নাটকত দুর্লভ চৰিত্ৰই নবীনে কৰা প্ৰশ্নৰ উত্তৰ দিম বুলি বুজাবলৈ মূৰ দুপিয়াইছে—

দুর্লভ ঃ [অৱশভাৱে মূৰ দুপিয়ায়] (উল্লিখিত, ৪১৬)

'বন্দীশাল' নাটকত ইন্দ্ৰৰ মনৰ যন্ত্ৰণা প্ৰকাশ কৰিবলৈ 'মূৰ আওজাই' (উল্লিখিত, ৫৬০) দিছে।

(৬) দাঁত-মুখ ঃ অধিক খং উঠা বুজাবলৈ 'অৱণ্যত গধূলি' নাটকত ৰাগিনীয়ে দাঁত-মুখ কৰচি সংলাপ প্ৰকাশ কৰিছে—

ৰাগিনী ঃ তুমি— [দাঁত-মুখ কৰচি] তুমি— (উল্লিখিত, ২৮৬)

(৭) মূৰ-আঙুলি ঃ 'মণিকূট' নাটকত অভাৰচিয়াৰ চৰিত্ৰই পূৰ্ণৰ কথাত সম্মতি জনাবলৈ 'মূৰ দুপিয়াই, আঙুলি ঠিয় কৰি'ছে।

(৮) মূৰ-কপাল ঃ মূৰ-কপালত হাত দিয়াৰ যোগেদি চিন্তাক্লিষ্ট মানসিকতাক বুজোৱা হয়। 'গধূলি' নাটকত লক্ষীৰামৰ চিন্তাশীল মানসিকতাক বুজাবলৈ এই ইংগিতৰ প্ৰয়োগ কৰা হৈছে—

লক্ষীৰাম ঃ ধৰ ইয়াক ছে'ছ কৰি দিওঁ।

উহ! কি কৰিলি তই? [মূৰে-কপালে হাত দি বহি পৰে।] (উল্লিখিত, ৪১৭)

(৯) ভৰি ঃ ভৰিত ধৰাৰ যোগেদি ক্ষমা বিচৰা আৰু ভৰিত ধৰা ব্যক্তিক আঁতৰাই দিয়াত ক্ষমা নকৰা সিদ্ধান্তৰ ইংগিত কৰা হয়। 'গধূলি' নাটকত দুর্লভে লক্ষীৰামৰ ভৰিত ধৰে আৰু লক্ষীৰামে তাক আঁতৰাই দিছে—

দুর্লভ ঃ মোক মাৰি নেপেলাবা। [সি লক্ষীৰামৰ ভৰিত সাবটি ধৰে। লক্ষীৰামে ভৰি আঁতৰাই লৈ গোৰ মাৰে।] (উল্লিখিত, ৪১৭)

(১০) বাহু ঃ 'বিষকুম্ভ২ নাটকত চিকিৎসকজনে ভট্টৰ প্ৰশ্নৰ উত্তৰ দিবলৈ নিজকে প্ৰস্তুত কৰা বুজাবলৈ বাহুৰ প্ৰয়োগ কৰিছে—

ডাক্তৰ ঃ ৰেল! ((বাহু জোকাৰে)) সাধৰণতে তেনেকুৱা নহয়। (উল্লিখিত, ৭৩৪)

(গ) স্ফোটন অনুযায়ী ঃ

চন্দ্ৰিকা ঃ [উৎফুল্ল] হয় ছাৰ? লগ পাব ছাৰ? [হাতযোৰ কৰে] বৰ ভাল পালোঁ ছাৰ। (উল্লিখিত, ৩৮৩)

যিকোনো দিশ স্পষ্ট কৰিবলৈ— অভাৰচিয়াৰ ঃ এতিয়া ইঞ্জিনীয়াৰ চাহাবৰ বুদ্ধি শুনি তৰুৰে কাক লেটিয়াইছে? [আঙুলিৰে দুইটাকে দেখুৱায়] (উল্লিখিত, ৩৪৩)

'গহ্বৰ' নাটকত চৌধুৰীৰ মানসিক অৱস্থা প্ৰকাশ কৰিবলৈ অস্ফুট ইংগিতৰ প্ৰয়োগ কৰিছে—

চকুপানী মচে। চৌধুৰীয়ে তাইল চায়, অইন ফালে চায়, বিভ্ৰান্ত হয়।

'বৰ্ণমালা' নাটকত সুৱৰ্ণৰ মনৰ অস্তুষ্টিৰ ভাৱ প্ৰদৰ্শন কৰিবলৈ আকাৰ-ইংগিত প্ৰয়োগ কৰিছে এনেদৰে—

সুৱৰ্ণই মুখ গম্ভীৰ কৰে। একো নকয়। বহুমানে তেওঁলৈ ভয়ে ভয়ে চায় থিয় হয়। চৌধুৰীৰ ওচৰলৈ যায়। (উল্লিখিত, ৫১০)

নাট্যকাৰ ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াই খং প্ৰকাশ কৰিবলৈ অস্ফুট আকাৰ ইংগিত দিছে এনেদৰে—

হেমকান্ত ঃ [গর্জি] কোনখন ৰসাতললৈ যাৱ গৈ থাকিবি, আগতে গাখীৰখিনি দি আহগৈ। (উল্লিখিত, ৩২৬)

'মণিকূট' নাটকত অভাৰচিয়াৰৰ অনুতপ্তৰ অনুভৱ প্ৰকাশ কৰিবলৈ প্ৰস্ফুট ইংগিতৰ প্ৰয়োগ কৰিছে—

অভাৰচিয়াৰ ঃ ...ফুলনিৰে ফুল, মন বিয়াকুল—আ হা হা! কোনে কি কৰিলে, এতিয়া কাৰ জীৱন নষ্ট হ'ল। [হঠাতে] অসহ্য। (উল্লিখিত, ৩৪৩)

অধ্যয়নৰপৰিণাম ঃ 'ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ ভ্ৰাম্যমাণ

থিয়েটাৰৰ নাটকত ব্যৱহৃত আকাৰ-ইংগিত' বিষয়ৰ অধ্যয়নৰ অন্তত দেখা গ'ল যে ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াই ভ্ৰাম্যমাণ নাটকসমূহত আকাৰ-ইংগিতৰ ব্যৱহাৰ বহুল পৰিমাণে কৰিছে। মঞ্চ নিৰ্দেশনাতো এনে আকাৰ ইংগিত সোমাই আছে। নাটক দৃশ্যমান কলা হোৱা হেতুকে নাটকত আকাৰ-ইংগিতে অধিক গুৰুত্ব লাভ কৰিছে। নাটকসমূহত দেখা পোৱা আকাৰ-ইংগিতৰ প্ৰয়োগৰ কাৰণ বিশ্লেষণ কৰি মূল পাঁচটা কাৰণ পোৱা গ'ল—

(১) নাটকৰ কাহিনী সহজবোধ্য কৰিবলৈ

(২) নাটকীয় চৰিত্ৰৰ স্বভাৱ স্পষ্ট কৰিবলৈ

(৩) নাটকীয় ঘটনাৰ স্বাভাৱিক ৰূপ বৰ্তাই ৰাখিবলৈ

(৪) নাটকৰ নিৰ্দিষ্ট সময় বৰ্তাই ৰাখি সংলাপৰ প্ৰয়োগ কমাবলৈ।

(৫) নাটকীয় ৰস বৃদ্ধি কৰিবলৈ। অৰ্থাৎ উত্তেজনা, কামনা আদি নাটকীয় চৰিত্ৰক ইংগিতৰ জৰিয়তে চৰিতাৰ্থ কৰিবলৈ দিয়া হৈছে।

অসমীয়া সাহিত্যত আকাৰ ইংগিতৰ ব্যৱহাৰ সম্পৰ্কে গৱেষণাৰ ক্ষেত্ৰ এখন পৰি আছে। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্যগ্ৰন্থ ঃ

ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ নাট্য সম্ভাৰ, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, জ্যোতি প্ৰকাশন ঃ গুৱাহাটী, এপ্ৰিল, ২০১৪

প্ৰসংগ গ্ৰন্থ ঃ

কলিতা, কিশোৰ কুমাৰ, *ভ্ৰাম্যমাণ থিয়েটাৰৰ ইতিহাস,* সদৌ অসম থিয়েটাৰ প্ৰযোজক সংস্থা ঃ ২০১১

গোস্বামী, ভূপেন (সম্পা.), *নাট্যচিন্তা নাট্যচৰ্চা,* গুৱাহাটী, ২০১৬

দাস, বাদল, *নাট্যকলা আৰু অভিনয় শিল্প,* গুৱাহাটী, ২০০০

দাস, অমলচন্দ্ৰ (সম্পা.), *অসমীয়া নাট্য পৰিক্ৰমা,* বনলতা ঃ গুৱাহাটী-১, ফেব্ৰুৱাৰী, ২০১৮

হাজৰিকা, অতুলচন্দ্ৰ, *মঞ্চলেখা,* দ্বিতীয় প্ৰকাশ, লয়ার্চ বুক ষ্টল ঃ গুৱাহাটী, ১৯৯৫

হাজৰিকা, গীতাঞ্জলি, শংকৰদেৱৰ কীৰ্ত্তন ঘোষাৰ আকাৰ ইংগিত, মহীয়সী মুকুৰ, শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ সংঘ, ২০১১

হাজৰিকা, প্ৰদীপ, *নাট্য সাহিত্য,* পূৰ্বাঞ্চল প্ৰকাশ ঃ গুৱাহাটী, ২০১১

(ক) ইংৰাজী

Boruah, B.K., *Cultural History of Assam,* Lewyer's Book Stall: Guwahati,1969

(খ) কাকত-আলোচনী

বৰা, লক্ষ্মীনন্দন (সম্পা.), *গৰীয়সী* , জুন, ২০১৭

ভূঞা, নৃপেন (সম্পা.) *বৰ্ণিল বৰাইল,* স্মৃতিগ্ৰন্থ, অসম সাহিত্য সভা, ২০১৬

হাজৰিকা, গীতাঞ্জলি, ভাষাৰ ক্ৰিয়া বিশেষণ ঃ আকাৰ ইংগিত, স্বৰ্ণলিপি, ২০১৯

लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कराकर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अत: भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2000 और अधिकतम 3000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का अनुपालन करना होग।
- शोधपत्र में क्रमश: शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल होंगे।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटीकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : .....

पदनाम : .....

पूरा पता : .....

: .....

ई-मेल : ..... मोबाइल : .....

RTGS का विवरण : .....

सदस्यता शुल्क

व्यक्तिगत		*संस्थागत*	
प्रति अंक	: रु. 100/-	प्रति अंक	: रु. 150/-
वार्षिक	: रु. 1000/-	वार्षिक	: रु. 1,500/-
आजीवन सदस्य	: रु. 10,000/-		

निर्धारित शुल्क मनीऑडर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary	: Asom Rastrabhasha Prachar Samiti
A/c No.	: 0853010182614
Name of Bank & Branch	: Punjab National Bank, G.S. Road
IFS Code	: PUNB0085320

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ◈ Date of Publication : 31st March, 2024 ◈ RNI No. ASSBIL/2009/31008

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-781032

arpsguwahati.com ✉ rastrasewak51@gmail.com ☎ 9101541395/9101541380